

श्री उपदेश रत्नाकर

(मूळ अने गुजराती ज्ञापांतर सहित)

प्रसिद्ध कर्ता,

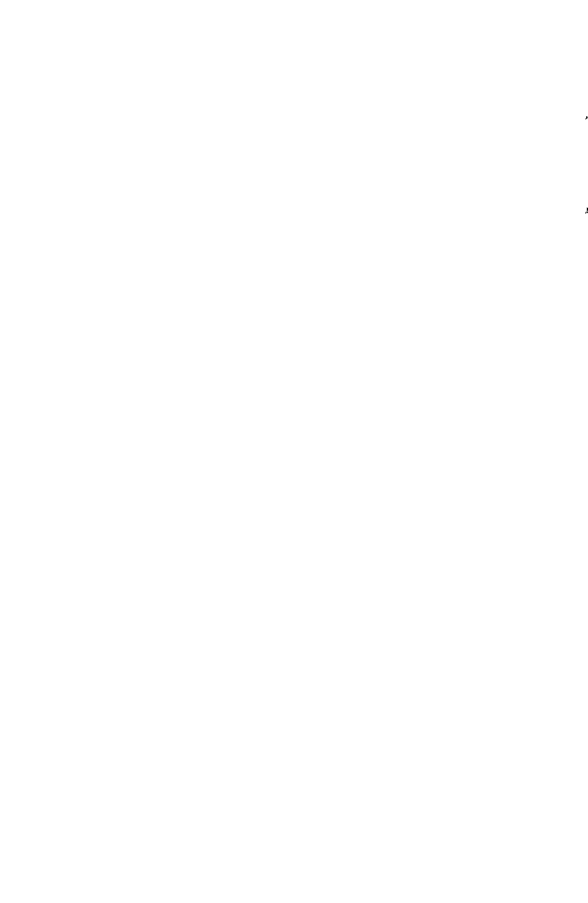
श्री खासन निकेतन

महडा.

सन १९८१

सने १९२६

कीमत रा. २-८-०



विषयानुक्रमणिका

विषय.	पृष्ठांक
प्रथम तरंग	७
द्वितीय तरंग—	४
तृतीय तरंग—	२२
चतुर्थ तरंग—	३५
प्रथम तरंग	२५
द्वितीय तरंग—	२७
तृतीय तरंग—	३५
चतुर्थ तरंग—	३७

पृष्ठांक विषय
१ अग्निष्टेने हरण करनारा धर्म उपर धर्मराजानु
६ दृष्टान्त
७

द्वितीय तरंग—

१२ ते उपर श्रेणिक राजानुं दृत्तात
तृतीय तरंग—
१७ ते उपर ' गग ' नामना पाउकनी कथा
१९ जमेज्ञा माणसनु म्म्य
२० ते उपर गोपाइकनी कथा
२१ अति रागी उपर उटपयन राजानो दृत्तात
२२

चतुर्थ तरंग—

३३ कुराग्रह उपर दोहशहक पुग्गनु दृष्टान्त
३४

विषय.
प्रथम तरंग
मगझाचरण
धर्मपंढेराहाहात्म्य

धर्मने प्रद्वग कथानो विधि

उपपत्ता आपयान अगाम्य पवा मतुव्योतु स्वप्प
ते उपर नदून नामना कोदवळनी कथा
मिथ्यात्वी जीवना राग हेयतुं विवेचन
ते उपर दुर्गभानु व्रत्तान
मोहितचिन्तविवाळा पुग्गनु अङ्कण

केटकी जातना मतुव्यो धर्मने शाधी शकता नथी
तेपतु स्वप्प

३८
३९

अनवस्थित माणस उपर एक शेडनी खीनु उदाहरण ३४ पापर उपर एक कुडवीनी कथा
ममत्तना बद्धाण ३५ मात्र सांजळेंतु ग्रहण करुवा उपर तापसनी कथा

दश प्रकारना मतुयो धर्म पाळता नवी, ते उपर
कुडीसा अने तृतराष्ट्रनेो सभ ३६

पंचम तथा षट् तरग—

धर्मपदेशनी वृष्टिधी फल उत्पन्न करवापा जीवना
छ द्युतात
पेहेला गिरिशिवरना द्युता उपर वटकनी कथा
वीजा पर्वतना जरण्याला द्युता उपर विवेचन
त्रीजा पळ्ळयकना न्याततु विवेचन
ते उपर ज्यामत्र शेडनी कथा

४१ चोथा काली जमीनना न्याततु विवेचन
४२ ते उपर आनन कापेटव विगेरे दश श्रावकोनो द्युतात
४३ पाचमा समुद्रनी छीपना द्युतातु स्वरूप
४४ उठा मणिनी स्वाणना द्युतातु स्वरूप
४५ ते उपर इद्रनागनी कथा

सप्तम तरग—

पांच प्रकारना घनाना न्याते दशविवा पांच प्रका-
रना जीवौतु स्वरूप

५२ दत्त नामना ग्रामाण मत्रीनी कथा
५३ वाय्य अने अवाय्य जीवौतु स्वरूप

अष्टम तरग—

बीजी रीते योग्य अयोग्यनो विचार अने ते उपर
सोत्तर अने कागनातु न्यात

५४ धर्मेने नष्ट करता उपर कृपित्तनी कथा
५५ ते उपर श्वान, हाथी अने हुसना द्युताते

४६
४७
४८
५०
५०

५५
५६

५९
६१

नवम तरंग—

कुक्षपुत्रु वीजु अवातर दृष्टत

उपदेशने अयोग्य एवा पुरणो उपर सर्प, जज्ञो,
व या गाय अने अत्र या गायना दृष्टतो

६४

दशम तरंग

निरूपण करु व्यर्थ छे, एवी शंकातु समाधान

एकादश तरंग—

उपरना अर्थने नद करवा माटे मेयदृष्टिनु शृष्टत

योग्य तथा अयोग्यतु स्वरूप विशेष स्पष्ट करवा
माटे पापाण, रसाद, यज्ञो, चाद्वणी, मुयरी-
नो मालो, हस, पाश्च-येयो, पशक, जळो,

द्वादश तरंग—

वीजानी, शेरो, गाय, जेगी अने आत्तीरी-
ना दृष्टतो
आत्तीरीना दृष्टतनु सविस्तर विवचन

त्रयोदश तरंग—

उपदेशने योग्य कंठ जीव होय छे, तेहु विवेचन
ते उपर सोपवतु सामान्यनी कथा
उए धर्मना तर्कने सारी रीते नहि जाणनार माणस
ए० अयोग्य छे, ते उपर कुरुचंद्र रानानी कथा
फरीवार धर्मने योग्य एवा पुरुयोना स्वरूपनु विवेचन.

६५

६६

६७

६८

६९

७०

७१

चतुर्दश तरंग—

कत्रा गुरु याग्य अन्न तथा गुरु अयेष्य, ते विपे त्रिवेचन	१००	मोर, कोयल, हंस, पाण्ड अने कागनो ए अत्रे	१००
अत्र मगारना गुरुआं उपर वैपयो, गौच, ब्रमर, त्रिवेचन	१०३	जातना पक्षीओना दृष्टोत मोर पक्षीना णत उपर मगु आचार्यनी कथा	१०३
पञ्चदश तरंग—			
गुरु अन्न श्रावक धननी पोषणतनु स्वरूप ते उपर चक्रत्व, वेडया, गृहपति अने राजाना आनृणोना दृष्टोत	१०७	वीजी यशराजागनी कथा चार प्रकारना आचरण दृष्टोते चार प्रकारना आ	१०७
जिनेश्वर नगवले कद्वेदा केटव्यापक सावध करानु स्वरूप	११०	कोनु स्वरूप ते प्रमणे वरत्त शेयना यामीपुत्रनी कथा	११०
बुगुरुनु स्वरूप	१११	धर्मनी शुद्धि उपर विवेचन	१११
बुगुरुओना दुराचरणनुं वर्णन ते प्रमणे अंगारमर्त्यक आचार्यनी संबंध	११२	सामान्य जीयोना धर्मने दुःशोने आचरणना दृष्टोते चार प्रकार	११२

षोडश तरंग—

सप्तदश तरंग—

रत्ने श्रुते आचाया. साधुओं, शक्तो अने	रत्ने दृष्टते श्रवकोना चार प्रकार	'४७
सामान्य जीवोना चार प्रकार	'३७ ते उपर सहदेवनी कथा	'४७
ते उपर श्री आर्य महागिरि मृत्तिो मय	'३९ चौथा प्रकार उपर श्री कुमारपालो मय	'४४
रत्ने दृष्टते साधुओंना चार प्रकार	'४'	

अष्टादश तरंग—

गुरु, शिव्य अने श्रवकोना वचन तथा नित्य	शिव्यना सयमा युगप्रधान श्री साधुमृत्तिना	
गेरे क्रियाओंची चार प्रकार	'४७ शिव्यनी कथा	'५१
प्रथम गुम्ना चार प्रकार	'४९ शुद्ध्य श्रवकोना चार प्रकार	'५३

नवदश तरंग—

गुरु तथा श्रवकीनी योग्यता तथा अयोग्यतातु	नटना दृष्टत उपर अगार मर्दकाचार्यनी कथा	'६३
स्वरूप	'५४ गायना दृष्टततु विवेचन	'६३
ते उपर सर्प, चोर, डाग, रणिक, र यागाय, नट,	मिना दृष्टत उपर वणजद्विमृत्तिनी तथा	'६७
गाय, मित्र, मधु, पिता, माला अने क-पट्ट-	मधु दृष्टत उपर श्रीकुमारपाल राजा अने हेम-	
ना दृष्टतो	'५४ चद्र गुम्नो प्रथ	'७१

चतुर्दश तरंग—

कदा गुरु योग्य इति च गुरु अयोग्य, त विप विवेकत	१०७	मोर, कौयव, हस, पोंपट अने कागने ए अत्रे	१००
आत्र प्रकारना गुरुआ उपर रैष्यो, रौच, इपर,	१०८	जानना पङ्कीओना दृष्टांत मोर पङ्कीना नृपत उपर मगु आचार्यनी कथा	१०३

पचदश तरंग—

गुरु अन श्रावक वनेनी योग्यतानु स्वरूप	१०९	चीत्री यशराजानी कथा	१०८
ते उपर चंचात, तेज्या, गृहपति अने राजाना आचार्यणीना नृपत	११०	चार प्रकारना आचरण दृष्टांत चार प्रकारना श्रा कोनु स्वरूप	१०९
त्रिनेश्वर जगवते कहेला केव्याएक सावध कर्मानु स्वरूप	१११	ते प्रमगे वरदच शेटना दामीपुत्रनी कथा	११४
कुमुदु स्वरूप	११२	अर्पनी शुद्धि उपर विवेचन	११६
कुमुदुओना दुशचरणदु वर्णन	११३	सामान्य जीवोना धर्मेने दुर्भेने आचरणना	११७
ते प्रमगे अंगारमर्क आचार्यनीो सर्वथ	११४	दृष्टांत चार प्रकार	१२२

षोडश तरंग—

सप्तदश तरंग—

रत्नने दृष्टते आचार्या, साधुओं, श्रावको अने	रत्नने दृष्टते श्रावकोना चार प्रकार	१४२
सामान्य ज्ञीयोना चार प्रकार	१३७ ते उपर सहदेवनी कथा	१४२
ते उपर श्री आर्य महामिनि मुस्नि सप्त	१३९ चोया प्रकार उपर श्री कुमारपालनो मवध	१४४
रत्नने दृष्टते साधुओंना चार प्रकार	१४१	

अष्टादश तरंग—

गुन्. शिष्य अने श्रावकोना रचन तथा निय	शिष्यता समया युगप्रधान श्री साधकसूरिना	
वगेरे िष्यओंची चार प्रकार	१४७ शिष्यनी कथा	१५१
प्रथम गुरूना चार प्रकार	१४९ गृहस्थ श्रावकोना चार प्रकार	१५२

नवदश तरंग—

गुरू तथा श्रावकूनी योग्यता तथा अयोग्यतानु	नटना दृष्टत उपर अगार मर्दकाचार्यनी कथा	१६३
मरूप	१५४ गायना दृष्टतनु विवेचन	१६३
ते उपर सर्प, चोर, उग, रणिक, रण्यगाय, नद,	मिना दृष्टत उपर रपन्नदिसूरिनी मथा	१६९
गाय, मिद, रधु, पिता, माता अने कष्टपट्ट-	वधु दृष्टत उपर श्रीकुमारपाल राजा अने हेम	
ना दृष्टतो	१५४ चद्र गुरूनो मवध	१७१

सर्पना दृष्टत उपर रोहितक नापना परिनामकनी कथा	१२५	पिताना दृष्टत उपर युवराजर्षिनी कथा	१२०
चौरना दृष्टत उपर वसुगाना तरफ वत्तज्ञा पर्वतनी कथा	१२७	माताना दृष्टत उपर कमल शेठना पुत्रने मतिवोध आपनार त्रीजा आचार्यनी कथा	१२१
अगना दृष्टत उपर केरगनी मालाचाला वीनामा नु दृष्टत	१२९	कल्पवृक्षना दृष्टतनु विवेचन	१२४
बणिकना दृष्टत उपर विवेचन	१३०	तेवी रीति श्रोताओना चार प्रकार	१२५
व या गायना दृष्टत उपर ज्ञातिव्याचार्यना शिष्यो नो सबर	१३२	दाजिक श्रावके वेचेना वे मुनिओनी कथा केरनाएक श्रावको गाय जेया दोग डे ते उपर । नपति शेठनो सबर	१२६
		पिताना दृष्टत उपर बननड राजानी कथा	१२९
			१२९

प्रथम जागनी विषयानुक्रमणिका समाप्त

श्री जिनाय नम

श्री उपदेशारत्नाकर.

‘ श्री सर्वज्ञाय नम. श्री गुरुभ्यो नम ’ जयश्रीप्राप्तितो मोह-रिपोरमद्यकेवद ॥
यो जगत्कृपया धर्म-मूचे त श्री जिन स्तुवे ॥ १ ॥ नाथ प्रजाना पुरुपार्थदेशानादनिष्टहत्ते-
एकरथ योऽनवत् ॥ तमादिम भूमिमृता तयार्हता । जगद्गुरु श्रीऋपज प्रचु स्तुमः ॥ २ ॥

श्री सर्वज्ञप्रति नमस्कार चात्रो, श्री गुरुत्रो प्रति नमस्कार चात्रो, जे (मोक्षरूपी) दाह्मीनी प्राप्तिथी
मोहरूपी शत्रुने जीते डे, तथा जे निर्मल केवद ज्ञानवाळा डे, तथा जेणे जगत्पर कृपा दावीने धर्म उक्तेशेडो
डे, ते श्री जिनेचर मनुनी हु स्तुति करु तु ॥ १ ॥ प्रजात्रोना स्वामी तथा (धर्म, अर्थ, काम अने मोक्ष-
रूपी) पुरुपार्थोना उपदेशाची सुखने हरनारा, तथा सुख वरनारा जे यथा छे, तेज्ज जे राजात्रोया तथा तीर्थरू-
रोया पहेवा डे,- एवा जगत्ना स्वामी श्री ऋपजदेव मनुनी अमो स्तुति करीण डीण ॥ ७ ॥

अशेषत शास्त्रिमुपधवाणां । जगत्सु कुर्वत्कृतवत्करिव्यत् ॥ यस्याभिधानं दधतेऽन्वयित्वं
सञ्जातिनेताजिमतार्थसिद्धये ॥ ३ ॥ य श्यामवर्णोऽपि वशीकरोति । ध्यात सतामीप्सितवा-
र्मद्वहसी ॥ जयाय वाह्यातरवैरिनेमि । तेमित्रिलोक सजिनेन्द्रनेमि ॥ ४ ॥ पार्श्वं सब पातु
विजार्त्तिसप्त छीपागिना सप्त जयानि जेतु ॥ य सप्तशूबायुधमसगामि-सप्तस्फटाहो-
धतनुच्छेदेन ॥ ५ ॥ श्री वर्षमानप्रचुरेय पुण्यात् । प्रवर्धमाना सुखसपदोव ॥ जगत्सु
यन्त्रासधितु नु विन्म-मृगान् दधात्यकमिपान्मृगैः ॥ ६ ॥

जे मञ्जुतु नाम (त्रणे) जगत्तोषा समस्त प्रकारे उषद्वेनी शक्ति करे जे, जेणे शक्ति करेयी जे, तथा जे शक्ति करनरु जे
(अने एवी रीते) जे पोतातु सार्धकषण धारण करे छे, ते शक्तिनाथ मञ्जु इच्छिज अर्थनी सिद्धि माटे यात्रो
॥ ३ ॥ जेतु ध्यात थरवासि आवेतु जे, एवा इयाम कात्तिवाळा पण जे मञ्जु सज्जनेनी इच्छिज सुखनी
(मोड सुखनी) चद्वर्षिने वश करे जे, तथा जे गाय अने अतरय शत्रुत्रोने नाश करनरा जे, तेमज
नणे लोक जेपने नमस्कार करे जे, ते श्री नेमि जिनेश्वर (तमारा) जय माटे यात्रो ॥ ४ ॥ खजा-
पर रहेवा सात फणोयाळा नगेंद्रना शरीरना पिपयी साते छीपोषा रहेवा प्राणीत्रोना सात जयने
जेदवा माटे जे सात शूबोवाळा हथीयारने धारण करे जे, ते पार्श्वनाथ मञ्जु तमारु रक्षण करो ॥ ५ ॥
जगत्तनी अदर रहेवा किन्नोरपी हरिणोने जाणे त्रास आपवा माटे लाडनना पिपयी जे, सिहने (पोतनी
पाले) धारण करे जे ते श्री वर्षमान मञ्जु तमारी वृद्धि पाम्नी युग सपतनु पोषण करो ॥ ६ ॥

नामादित्रैविंशदशतुर्भि-येंद्वोककालत्रितय पुनतः॥ त्रयोछिजा मुक्तिपदं ददते । सर्वेऽपि
ते सर्वविदो जयंतु ॥ ७ ॥ ध्यातापि या प्रवरकाव्यफलान्यमंदा-नदोह्वसच्छिबुधरस्वरसा-
निदत्ते ॥ श्रीजारती जगति कष्टपदोत्तव नव्या । बोधि धियं च विशदा द्विशताभिय मे ॥ ८ ॥
विश्वोत्तमैर्महिमद्विधियुणैरशौभै-र्जास्वस्तु येषु किरणैस्त्रि जानवस्तु ॥ सूक्ष्मोऽनुवति निखिला
अपिसूरयोऽप्ये । श्रीदेवसुंदरगणप्रचक्रो मुदे ते ॥ ए ॥ यैर्महेशेऽपि कविनोपलसनिजेऽस्मिन् ।
गोत्रिव्यथायि वरवोधरसोऽज्ञव सै ॥ नव्यानिमानमृतदानपरान् सुधाशून् । श्रीज्ञानसागरशुरून्
प्रणतोऽस्मि ज्ञान्या ॥ १० ॥

नाम आदिक चार निर्मल जेदेवने करीने जेओ वणे दोकने तथा वणे कालने पवित्र करे जे, तेम ससारथी
उछिन थयेज्ञात्रोने जेओ मोक्षपट त्रापे जे, ते सगळ सर्जो जयता वचो ॥ ७ ॥ ध्यान धरवाथी
पण जे, अत्यंत आनंदमा उद्वेदासमान थता विद्वानेने चाखवा दायक रसवाळा उत्तम काव्यरूपी फळोने
त्रापे जे, एवी जगतमा नवीन प्रकारनी कल्पवेदी सरखी आ श्री सरस्वती देवी मने निर्मल ज्ञान अने
बुद्धि त्रापो ॥ ८ ॥ महिमा अने दाढिमरूप सर्व विश्वोत्तम गुणोरूपी किरणोयें करीने जे सूर्यनी पेटे प्रकाशित होते
बते, बीजा आचार्यो सूक्ष्म ताराओ सरखा लागे जे, जेवा ते श्री देवसुंदरगणी महाराज (मारा) हर्ष
माटे थाओ ॥ ए ॥ आ मारा जेवा कडण पत्थर सरिखामा पण जेओत्रे पोताना वचनोरूपी किरणोयें
करीने उत्तम ज्ञानरूपी रसनी उत्पति करेदी जे, तथा अमृततु (मोक्षतु) दान देवामा तत्पर, जेवा
आ नवा चंद्र सरिखा श्री ज्ञानसागर गुरने हुं जकिपूर्वक नमस्कार करूं ॥ १० ॥

मूर्ति सुधारसमयीमिव वीङ्गमाणा । येषा सुधापद्मवसुखं ददता दृशा ज्ञा. ॥ अद्दणामवाप्य
 मतिकृत्वमुदासते ते । श्री सोमसुन्दरगणप्रजवो जयतु ॥ ११ ॥ इति स्तुत्यगणं स्तुत्वा ।
 मुनिसुन्दरसूरिणा ॥ जैनधर्मोपदेशेन । क्रियते वाक् फल्लेअहि ॥ १२ ॥ परोपकार सतत विधेय
 स्वशत्रितोह्युत्तमनीतिरेया ॥ न स्वोपकाराच्च स जिद्यते तत् । त कुर्वतेतद्दृष्टितय कृत स्यात्
 ॥ १३ ॥ स चाखिद्यानिष्टत्रियोजनेन । सर्वेष्टसयोजनतश्च साध्य ॥ इष्ट त्विहाकैटनवैरिक्कीट
 भेकातिकार्यतिकमेव सौख्य ॥ १४ ॥ तच्चास्ति मोक्षे न ज्ञेये यतोऽत्र । प्रजगुरं
 दु खयुत च शर्म ॥ जनेन मोक्षस्य तदर्थिना तत् । सम्यक् प्रसाध्योऽत्र परोपकार ॥ १५ ॥

आर्वोने अमृतनाट्टकाननामुखने आपनारा अत्रा गुरु महाराजनी, जाणे अमृत रसमय होय नहीं एवी मूर्तिने जेता
 एवा विद्याने (पोतानी) आखेनी बुद्धिपूर्वक कृतिने पापीने सतुष्ट धाय डे, ते श्री सोमसुन्दरगणी महाराज जयवता
 वना ॥ ११ ॥ ए रीते स्तुति करवा दायक गणने स्तुतिने मुनि मुन्दरसुरि जैन धर्मना उपदेशवने करीने पो-
 तानी वाणी सफल करे डे ॥ १२ ॥ पोतानी शक्ति मुनय हमेशा परोपकार करवो, ए उत्तम माणसोनी
 नीति डे, बळी ते परोपकार स्वोपकारयी कइ चिन्न नयी, अने तेयी ते परोपकार करनारे स्वोपकार
 अने परोपकार बले करेना कहेवाय ॥ १३ ॥ बळी ते परोपकार सर्व दुःखोने दूर करवायी, तथा सर्व
 सुखोने मेळवी आपायायी साधेना कहेवाय, अने एकांत तथा असल मुख तो अहीं डेककीनामायी मान्नीने त्रिणु
 सुधीने प्रिय डे ॥ १४ ॥ अने तेवु मुख तो मोक्षया डे, परतु ससारया नयी, केमेके ससारया तो दुखजगुर
 अने दुःखयाडु मुख डे, मोटे तेना अधिअोने मोक्षु नान आपीने, ते परोपकारने अहीं सम्यक् भरारे साधये जोइण ॥ १५ ॥

मोक्षस्तु दातु न करेण शमथ-स्तदर्शनीयस्तद्वास्त्युपायं ॥ उपायते. सम्यगुपासिताच्छि ।
 ज्ञेयदुषेयस्य सुवेन मिद्धि ॥ १६ ॥ तस्यास्त्युपाय. खड्ग धर्म एव । त च प्रवादा बहुधा
 वदति ॥ पृथक् पृथक् स्वस्वमतीयशास्त्रे । स्वरूपश्रिद्धेतुफडादिवान्नि ॥ १७ ॥ न ते च
 समं शिवसिद्धयुपाया. । कित्त्वेक एवाखिद्ववित्यणति ॥ सुदुर्बलौज्य मिद्धित परैस्तु ।
 मुग्धेर्विनाशुद्धगुरूपदेशं ॥ १८ ॥ अय पृथग्मृत्य तत परेज्य । प्रदर्शनीय शिवहेतुरेक. ॥
 परेऽव्यशुद्धा इति दर्शनीया प्रथमकृतिर्हास्य तथैव साध्या ॥ १९ ॥

बली मोक्ष कष्ट हाथयी आपी शशातो नयी, माटे ते मेलमयानो उपाय देवान्मचो जोइये. केमके सारी रीते साथेद्वा
 उपाययी सुले मुले उपेयनी सिद्धि चाय डे ॥ १६ ॥ बली ते मोक्षनी नापिनो उपा तो धर्मज डे, अने ते धर्मे
 अन्यदर्शनीयो पोतपोताना मतना, म्यरूप, जेड, हेतु तथा फलो आदिकोना वचनोवाळा जडा जडा शास्त्रोवने करीने
 यणा प्रकारनो कहे डे ॥ १७ ॥ बली ते सयळा धर्मो कड मोक्ष साधवाना उपायरूप नयी, परतु एक सर्वज्ञ
 मनुपुत्र मरूपेजो धर्म मोक्षसाधक छे, अने ते धर्म शुद्ध गुळ्ना उपदेश विना मुग्ध एवा अन्योने मळयो दुर्वज डे ॥ १८ ॥
 माटे मोक्षना एरु हेतुरूप एवा ते धर्मे वीजा धर्मोधी जूडो पामने देवान्मचो जोइये, तेमज वीजा धर्मो अशुद्ध डे,
 एम एण देवान्मनुं जोइये तेम तेलु अन्य धर्मोधी जडापणुं एण सिद्ध करतु जोइये ॥ १९ ॥

शिनार्थिना मंदधिया ततो नृणा-मनुग्रहार्थं विविधैर्निदर्शने ॥ व्यक्त्या विशुध्यादिभिदा
जिनोदितं । धर्मं बुधेऽन्यानपि तत्प्रसगत ॥ १० ॥ प्रारभ्यते स्वद्वयधियापि तेनो-पदेऽरत्ना-
करनामशास्त्र ॥ नानातरंगादिमयोपदेशै-र्द्वयस्वरूप स्वपरोपकृत्यै ॥ ११ ॥ विचार्यते
शक्तिरथाप्यशक्ति-र्न वै मया येन तयोर्विचार ॥ परोपकारैकरसे कल्लक-त्यत्र प्रवृत्तश्च
तेऽकहेतो ॥ ११ ॥ व्याख्यातणा बुद्धिभेदान् विभाव्य । श्रोतणामप्याशयादौकरूपान् ॥
तादृक् सामर्थ्योपकार्योपकार । जानेऽनैकरैव धर्मोपदेशे ॥ १३ ॥

माटे मोक्षना अर्था एवामदबुद्धि माणसानो अनुग्रह माटे नानामकारना दृष्टतोवेने करीने विबुद्धि आदिक जेदोने
व्यक्तितर्कक जिनेश्वर मनुए कहेवो धर्महु कहु बु, तेम ते प्रसंगे वीजा धर्मोतु स्वरूप पण हु कहु बु ॥ १० ॥
अने तेऽना माटे मदबुद्धि एवो पण हु विविध प्रकारना तरा आदिस्त्राज्जला उपदेशोनेने स्वरूपने धारण करुनारा
एवा आ उपदेश रत्नाकर नामना शास्त्रो मारा अने अन्योना उपकार माटे प्रारभ्य कर्तु बु ॥ ११ ॥
बळी (आ कार्यमा) हु मारी शक्ति अथवा अशक्तिको पण विचार करतो नथी, केमके तेनो विचार करवो,
ते परोपकाररूपी एक रसनी अदर कवक जेवो वागे ठे, अने हु तो अर्हो फक्त एक परोपकार माटेज प्रवृत्त
थयेंतो बु ॥ ११ ॥ व्याख्यान करनारात्रोना बुद्धिना जेदोने, तेमज सच्चलनारात्रोना पण अनेक प्रकारना आशयोने
जाणीने तेवी रीतनी सामग्रीने करीने अनेक प्रकारना धर्म समधि उपदेशोर्धीज उपकारीश्रोपर उपकार थाय
एव हुआणु बु ॥ १३ ॥

ऐकाहिकागमगनीरुद्धैतदन्यमिथ्यास्विन्नरुक्बुधेतरयोग्यताद्यै ॥ जेदेस्ततो नवनवै. सुकृतो-
पदेशान् । वद्ध्ये वहूनिहपरप्रतिबोधसिद्ध्ये ॥ १५ ॥ एतदृत्तछयस्य व्याख्या-व्याख्याकृता
बुद्धिजेवान् मद्मदतरविशिष्टविशिष्टतराद्यवगमरूपान् प्रकरणसिद्धातत्रिचारकश्चादिव्या
ख्येयस्वरूपान् वा, श्रोतृणामप्याशयांश्चितदनुसारेण विचित्ररूपान् विनाद्य, तादृक्
सामर्थ्येति तादृशा द्वैत्रावसरश्रोतृपुरुषाद्वैचित्र्यरूपया सामर्थ्या उपकार्याणां किं व्याख्यास्यत
इति चितानिरासेनोपदेष्ट्याणानवनव्याख्यानश्रवणप्रमोदश्रोतृणा चोपकारमुपदेशैर
नेकैर्विचित्रैरेव जाने, इति सटक. ॥ १५ ॥

अने तेद्व्यामोडे एरु दिस वाची शकाय तेवा अने तेथी अन्य आगमने अतु सरनारा अने तेथी अन्य,
गनीर अर्थोगळ अने तेथी अन्य, पुणय पापनां फळोने प्रकाश करनारा अने तेथी अन्य, तेज मिव्यात्वित्त्रांनी
अने तेथी अन्योनी जद्रकोनी अने तेथी अन्योनी, विद्वानोनी अने तेथी अन्योनी योग्यता आदिक नवा
नवा जेदेवने करीने अन्याना प्रतिबोधनी सिद्धि माडे आ कार्यमा हुं घणा सुकृत उपदेशो कहीश ॥ १५ ॥
हवे ते (तेवीम् अने चोवीम्ना आकवाळा) वने काव्योनी व्याख्या करे जे-व्याख्यान करनारात्रोना
बुद्धि जेदोने एद्वे मड अथवा वधारे मड, विशेष अथवा वधारे विशेष इत्यादिक ज्ञानरपी जेदोने, अथवा
प्रकरण, सिद्धात, विचार कथा आदिकनी व्याख्यान करा योग्य रुचिरूपी जेदोने जाणुनि तेवी रीतनी
सामग्रीवने करीने, एद्वे तेवी रीतना क्षेत्र, काळ तथा श्रोता पुरूप आदिकनी विचिंतारूप सामग्रीवने करीने,
अर्थात् उपकार करा दापक मतुष्यो प्रते शानु व्याख्यान करींशु ? एवी रीतनी चिताने दूर कर्वावने करीने
उपदेश देनारात्रो प्रते, तेज नवा नवा व्याख्यानना श्रवणवने करीने हर्ष पापनारा श्रोतात्रो प्रते नाना
प्रकारना उपदेशोवने करीनेज उपकार थाय जे, एम हु मातु बुं, एवो सम जाणयो ॥ १५ ॥

औकाहि०-तत पूर्वोक्तकारणादिहोपदेशरत्नाकराहे ग्रंथे नवनवैजैर्वहून् सुकृतोपदेशान्
 वद्वये इति योग, जेदनेव कियतो नाममाहमाह-औकाहिकेत्यादि, अेकदिनव्याख्यानाहो
 औकाहिका, एतद्वन्यशब्दस्य प्रत्येक योजनात् एतेन्योऽन्ये ह्याहिकादयः, आगमेति सूचक
 त्वात्सूत्रस्य आगमानुसारिण आगमाद्वापकाद्यर्थरूपा एतदन्ये प्रकरणविचाराद्यर्थरूपा म्त्रमत्तिप्र
 थितवृत्तगायादिरूपाश्च, गत्तरेति, गत्तीरार्यो एतदन्ये प्रकटार्थो, फलेति, पुण्यपापफलप्रकाश-
 नरूपा, एतदन्ये पुण्यपापस्वरूपकारणादिप्रकाशनरूपा; अत्रेहिकादीना चतुर्णा पदाना
 छच्छ कृत्या, तत् एतद्वन्यशब्देन बहुवचनानेन छच्छः। तथा मिथ्यात्वाना इतरशब्दस्य प्रतिपद यो
 गात्तदितरेषा मिश्रसम्यग्गृहगदीनाम्, नञ्कारणा इतरेषा कठिनादिप्रकृतीनामजिगृहीतमिथ्या
 त्वादिना तन्नास्त्रानुपदेशार्हाणा, बुधाना स्वपरशासनाऽनुगविज्ञाना, इतरेषा मुग्धादीना च,
 प्राग्बद्धे योग्या उपदेशा इति सर्वत्र विशेष्यपदाऽध्याहार

ततः प्राण्योजितपदैर्छच्छे, तेषा नावस्तत्ता, तदावैजैदे आदिशब्दाच्चाजमत्रिक्रिय-
 नाह्यणादियोग्यग्रद् ॥१५॥

अने तेथी एव्हे प्रेँ कहेवा कारणथी अर्ही, एव्हे आ उपदेशरत्नाकर नामना प्रथमा नरा नरा चेटोने
 ऋनि यणा मुद्रत उपदेशीने हु कहीश, एवो (रायनी) सवध डे. हवे तेमाना केन्द्राक चेटोनेज नाम हवने
 देवाने डे. एक त्रिवर्यमा जेतु व्याख्यान थड शके, तेवा उपदेशो त्रैकाहिक' वहेवाय ' तेथी अन्य' ए
 शब्दने दरेकनी साथे जोम्नाथी तेओथी अन्य एव्हे वे आदिक दिवसोमा जेतोतु व्याख्यान थड शके एवा
 उपदेशी जाणवा आगम ए रत्ने सूचनारू होवाथी आगमने अनुसरनारा एव्हे आगमना आह्वाना आदिना
 अर्थरूप उपदेशी जाणवा, तेमज तेथी अन्य एव्हे प्रकरणोना विचार आदिकना अर्थरूप, तथा पोतानी दुद्धिथी
 रचेता माल्य तथा गाथा आदिकरूप उपदेशी जाणवा. गच्ची एव्हे गहन अर्थोवाला, अने तेओथी अन्य एव्हे
 मगट अर्थोवाला उपदेशी जाणवा फळ एव्हे पुण्यथपना फटोने मकारानारा, अने तेथी अन्य एव्हे पुण्यपपनी
 स्वरूप तथा वारण आदिकने प्रकाशवारूप उपदेशी जाणवा. अर्ही 'अहिकादिक' चारे पेटोनी छड समास करीने
 पछी महु वचनात 'एव्दन्व' शब्दनी साथे छड सगाराकरवो. वळी मिय्यावित्रो प्रते तथा 'इतर' शब्दने दरेक
 एव्द साथे जोम्नाथी तेओथी अ य प्रते एव्दने मिश्र समग्र दृष्टिओ प्रते, तेमज चद्रको, प्रते तथा तेओथी अन्य
 प्रते एव्हे कठिन आदिक शक्तियालाओ प्रते अर्थत ग्रहण करेब, एम मिय्यावेऋनि ते शास्त्रोना उपदेशने नही
 लायक एवाओ प्रते वळी पम्ति प्रते एव्हे पोताना शासन्तु अनुकरण करानाराओ प्रते, तथा अ य शासन्तु ज्ञान
 वरानाराओ प्रते तेओथी अन्य प्रते एव्हे सुग्र आदिनी प्रते प्रेँनी पेंडे छड समास करते उते, योष्य एवा
 उपदेशी, एवी रीतना विशेष पदनी सर्व जगोण अग्र्याहार जाणवो.

पत्नी पूँ योजेता एव्दनी साथे छड समास करवो तंओनी जे चाव, ते तंओनी योचताणु कहेवाय, ते आ-
 दिक चेटोने करीने आदि शब्दयकी राजा, मन्त्रि, इन्विय, ब्राह्मण, आदिकने योष्य, एवा उपदेशीनु ग्रहण

करतु ॥ ५४ ॥

स्तुवे तमुष्ट्र विजहाति गोस्तनी-मसत्प्रज्ञार्पेनतु निदतीह यः ॥ स्वकार्यतो योऽप्युपजी-
व्य दूपये-देतै. कवेर्वाचिसमु तु धिक्खल्ल ॥ १५ ॥ कवेर्न दोषोऽयममुय यद्गिर वदत्सदोषाम
पि दोषिणीं खल्ल. ॥ रविर्न दुष्टोऽत्र यदस्य ज्ञांछिक्रि-छिपन् सुदीप्रामऽपि वेत्ति तामसी ॥ १६ ॥
स्तव स कस्यार्हति नो गण सता । विदूरसूहमार्थहृगप्यऽहो न य. ॥ परस्य दोषान् महतोऽप्य
वेद्मते । न वक्ति वा यो हृदयस्थितानऽपि ॥ १७ ॥ सदूपणास्ते न खद्वा. कथ स्यु-र्यहणति
येतान्यऽनुशास्त्रगुफ ॥ रीत्यैव सत सगुणा गुणान् धे । समततोऽप्याददते कवीना ॥ १८ ॥

ते उटनी हु स्तुति करू बु, के जे ब्राह्मने तजि आपे छे, परतु असत्य बचनोयी तेनी निद्रा करतो
नथी, बली ते खल्ल मनुष्यने धिक्कार छे, के जे पेतानी मतवप साधी होइने असत्य बचनोद्वारा क्विनी गणी-
ने दूषित करे छे ॥ १५ ॥ कविनी निर्दोष वाणीने पण खल्ल मनुष्य जे दूषणवादी कहे छे, ते कविनो दोष
नथी, परतु ते खननोज दोष छे, केम्के सूर्यनी तेज युक्त कातिने पण घूरान् जे अथकारमय जाणे छे,
तेमा कइ सूर्य दूषणवालो नथी, (अर्थात् ते घृषमज दूषणवालो छे) ॥ १६ ॥ जे सखनोनो समुह
दूरदर्शी तथा सूक्ष्म पदार्थोंने पण जोबावालो छे उता पण आश्चर्यनी बात छे के, परना महान् दोषोंने
पण जे जोइ शक्तो नथी, अथवा हृदयमा रहेबा ते दोषोंने पण जे (मुखधी) प्रकाशतो नथी,
एषो ते सज्जनोनो समुह कोनी स्तुतिने बापक नथी? ॥ १७ ॥ ते खल्ल मनुष्यो दूषण युक्त केम न
होय? के जेओ दरेके शास्त्रनी रचनामयी ते दूषणोंनेन ग्रहण करे छे, बली तेज रीतिथी सज्जनो गुण
युक्त केम न होय? के जेओ चारे बालुधी कवित्रोना गुणोंने ग्रहण करे छे ॥ १८ ॥

सतस्ते सुचिर जयतु सुतरामीके खदानऽप्यमून् ॥ शाले येऽनुपद गुणप्रकटनाद्दधु. प्रतिष्ठा
करे ॥ ये चानुग्रहकाम्येव विविधान् दोषान् गृहीत्वायवा । यादकृताहगपीदमर्थि
गुणकृद्भूयाज्जयश्रीप्रद ॥ १ए ॥

इति श्री तपागढे श्री मुनिसुदरसूरिचिरचिते जयश्रुके श्री उपदेशरत्नाकरे पीठिका
रूपे जगतीतीर्यावितार. ॥

ते सत पुरूषो घणा काल सुधि जय पामो कळी ते खव पुरूषोनी पण हु सारी रीते स्तुति करू छुं, ते सत
पुरूषो केवा डे ? तो के, जेओए (पाहे पाहे अयवा) शाखना पदे पदे सुणेने माट करीने कविने शोना
आपेनी छे, कळी ते खव पुरूषो केवा डे ? तो के जेओए जाणे कृपानी इच्छायी हेप नही तेप
विविध प्रकारना दोषेने ग्रहण करीने (कविने शोना आपेनी छे), एवी रीते कोइ पण रीते आ शात्र
(तेना) आर्थिओने गुण करुनाह तथा जय अने बड्डी देनाह याओ ? ॥ १ए ॥

“ एवी रीते श्री तपागड्डीमा श्री मुनिखुदर सूरि रच्येना जयश्रीना किहवाळा श्री उपदेशरत्नाकर
नामना ग्रयमा पीठिकारूप जगतीतीर्यावितार जाण्यो ॥

॥ अथ प्रथम तट ॥

तत्रादौ स्वेषसिद्धये समुचितेष्टदेवतानमस्कारमगद्व चिकीर्षुर्गुगादिसमयेसमग्रधर्म
कर्मव्यवस्थितिसूत्राणास्रधारश्रीऋषभदेवनमस्कारस्माद् ग्रथकार ॥ १ ॥

जयश्रीसगम रातु । श्रीमानादिविद्युर्मम ॥ सुतत्वनिधयो येन । सता दत्ता हि-
तेपिणा ॥ २ ॥

॥ अथ प्रथम तट ॥

रथा मयय पेतानो इच्छित सिद्धि माटे उचित अने इष्ट देवने नमस्काररूप मगळ करवानी
इच्छावाज ग्रथकार, युगानी आदि यमते सर्व र्मकार्यनी रचनाना मृतभार सत्वा श्री कृष्णदेव प्रभुने नमस्कार
करे डे ॥ ? ॥

जे हितेचु एवा श्री आदिनाय मरुण सज्जनेनि उत्तम तरोना चमरो आपेना डे, ते श्री आदिनाय
मरु मने जयमङ्गलीनो सगम आपो ? ॥ २ ॥

स्पष्ट ॥ धर्म दुवे इत्युक्तं प्राक्, अयं धर्मस्यैवादौ ग्रहणविधिसुप्रसङ्गणत्प्रदान-
विधि चान्निधिसु. फलप्रधाना प्रारंभा प्रेक्षावता नवति इति फलान्वितकरणपूर्वकं तच्छि-
पयमुद्यमोपदेशमाह ॥ ३ ॥

जयसिरिविडिअसुहृत्त्रे । अणिट्टहरणे तिवगसारमि ॥

ईहपरबोअहिअत्य । सम्म धममि उज्जमह ॥ १ ॥

व्याख्यान—जय सिरिति, जय. सर्वोत्कर्ष. समग्रवाद्यातरगच्छिपज्जयेन श्रीजर-
तचकवार्त्तिप्रभृतीनामिव ॥ १ ॥

उपरना श्रेयको अर्थ स्पष्ट डे " हु धर्म कडु लु एम पेहेनाज कडेनु डे, हवे आदिमा धर्मेनेज
ग्रहण करवानी विधिने, तथा उपसङ्गणथी धर्मनु दान देवानी विधिने कहेवानी इच्छामाळा प्रयकार, 'विद्या-
नेना प्रारंभो फलप्रधान होय डे' एवा हेतुथी फलने प्राट करवा प्रथेके ते धर्माना विषयवालो उग्रम समधि उप-
देश कहे डे ॥ ३ ॥

जय, बद्धमी तथा वाजित सुक्तेने देवारा, अनिष्टेने हरनारा तथा गणे वर्गोमा सारजत अत्रेवा सम्भग
धर्मेने विषे आ लोक अने परलोकना हितने अर्थे तमो उद्यम करो ॥ १ ॥

व्याख्या—जय एड्डे सर्व प्रकारे उत्कर्ष, अने ते श्री जस्त चक्रवर्त्ति आदिकोनी पेडे नहारना अने
अतरगना सयला वैरीत्रोने जीतवायी थाय डे. ॥ १ ॥

देशोत्कर्षश्च कियद्द्विपज्जयेन श्रीकृष्णमहाराजादीनामिव ॥ ३ ॥

श्रियो मणिसुवर्णाद्या राज्यादिकाश्च, नवनिधयवधयोऽत्र इत्याऽहमिच्छत्वाद्या ॥ ३ ॥

परत्र तीर्थकृत्पदसवधिन्योऽष्टमहाप्रातिहार्योदयश्च ॥ ४ ॥

जयेन युक्ता वा श्रिय प्राग्वर्णितस्वरूपा जयश्रिय ॥ ५ ॥

वाञ्छितानि सुखानि च श्रीशास्त्रिजज्ञादीनामिव, उपलक्षणाष्टाङ्गाऽतिगानि च ॥ ६ ॥

तत पदछयस्य पदत्रयस्य छठे, तानि ददातीति जयश्रीवाञ्छितसुखट, तस्मिन् ॥ ७ ॥

देशायी उक्त्य श्री कृष्ण महाराज आदिकोनी पेंडे केठ्याक शत्रुग्रोने जीतवायी थाय डे ॥ ९ ॥
द्वड्दमी अेष्टवे आा वोक्त्ता मणिसुवर्ण आदिक, राज्यआदिक, तथा डेक नवनिधि प्णैत इद्र अहमिद्र-
पणा आदिक जाणवी ॥ ३ ॥

तथा परलोक्ता तीर्थकरनी पदवी सवधि आठ महामातिहयोदिकनी द्दमी जाणवी ॥ ४ ॥
अथवा जयवने करीने युक्त अेवी जे द्दमी, के जेतु म्बल्प पूँ र्णयपमां आवेनु डे, ते जयददमी
केहेवाय ॥ ५ ॥

वळी वाञ्छित मुखो शास्त्रिजद्रादिकोनी पेंडे जाणवा, तथा उपनद्राणयी वागयी एण अधिक मुखो
जाणवां ॥ ६ ॥

पडी वने प्णेलो अथवा त्णे पदानो छद्र समास करवो तेंग्रोने एष्टवे जय, द्दमी अंन वाञ्छित मुखोने
देनारो जे धर्म, तेने निपे त्मो (उचयमस्तो) ॥ ७ ॥

तथा अनिष्ट दुःख दुःखनिमित्तं, च, आधिव्याधिव्यसनशोकेष्टवियोगोऽनिष्टयोग
दुष्टग्रहदेवताद्युपञ्चवारिद्यादि, तत् हरति, स्वाराधकगत परगतं उन्नयगतं चेत्यनिष्टहरण
स्तस्मिन् ॥ ८ ॥

तत्र स्वाराधकगत यथा सुदर्शनश्रेष्ठिधम्मिह्वविद्यापतिचंदनवालादिना शीघ्रत-
पोदानादिधर्म ॥ ए ॥

परगत यथा तीर्थकरद्विधिसपन्नमहर्ष्यादीना तादृक् तप, यथा निजस्नानजलनि-
खिलनरतिर्यक्सर्वरोगाद्युपञ्चवापहर्तुं स्वकरस्पर्शश्रीद्वन्द्वमणहृदयप्रविष्टशक्तिवित्रासि विशदद्या-
दीना च प्राग्गुञ्जवाद्याचीर्णं तप ॥ १० ॥

(कबी मे धर्म केवो डे ? तोके) अनिष्ट एतद्धे दुःख अने दुःखना निमित्तो, जेवाके आधि, व्याधि,
व्यसन, शोक, दृष्टनो (बहाइलानो) वियोग, अनिष्टनो (शुत्रुओनो) सयोग, दुष्ट ग्रह तथा देवता आदिवना उपद्रवो
तथा निर्धनता आदिक, तेने जे हरे डे, अर्थात् स्वाराधकगत दुःखने, परगत दुःखने अने उन्नयगत दुःखने जे
हरे डे ते धर्म अनिष्टने हरनारो कहेवाय, एवा ते धर्मने विपे तमो (यल करो ?) ॥ ८ ॥

तेमा स्वाराधकगतना (एतद्धे पोताना चक्रन) सक्थमा सुदर्शन श्रेष्ठ, धम्मिह्वविद्यापति तथा चंदनवाला-
आदिकोनो (अनुक्रमे) शीघ्र, तप तथा दानादिक रूप धर्म जाएवो. ॥ ए ॥

परना दुःखने हरवाना सक्थमा तीर्थकर महाराजो तथा द्वन्धिवाळा महासुनि आदिकोनो तेवा मका-
रनो तप जाएवो, जेम पोताना स्नानना जइयी सर्व मनुष्य तथा तिर्यचोना सर्व प्रकारना रोग आदिक उपद्रवने
हरनार, तथा पोताना हाथना स्पर्शयी श्री ददमणना हृदयमा पेंडेडी शक्तिने दूर करनार एवी विशदद्या आदि
कौनो पूर्व चवादिकमा करेला तपनो प्रजाव जाएवो ॥ १० ॥

उत्तयगत च यथा श्रीवर्मनृपस्य सच्चित्तादिविरति पात्राद्विदान चेति ॥ ११ ॥
 उत्तयगताऽनिष्टहरणे धर्मनृपोवाहरण यथा ॥ १२ ॥
 कमलपुरे कमलसेननृपस्य पुरोऽज्यदा नैमित्तिको छावशार्पिक इन्निङ्ग ज्ञाव्य-
 चकयत् ॥ १३ ॥

राज्ञश्चित्तानुरस्य सजास्यस्यापाढनवम्या मङ्गिकापङ्कमात्रमत्र ज्ञात ॥ १४ ॥
 सन्ध्ये प्रेक्ष्यमाण मनोरथे सहाऽवर्धत ॥ १५ ॥
 जलददृश्या जनाजलस्यद्वैम्यमजायत ॥ १६ ॥
 गत इन्निङ्ग इरिते सह जनाना ॥ १७ ॥

उत्तयगत अनिष्टने हरयाना सप्रथमा श्रीधर्म राज्ञानी सन्निच अन्विकनी विरति अने मुशान अद्विक्रमते
 दान ज्ञानु ॥ ११ ॥

ते उत्तयगत अनिष्टने हरयाना सप्रथमा अर्णजालु नीचे मुञ्ज द्यात ज्ञानु ॥ १२ ॥

अक नहानो वपनपुण्या वपनसेन राज्ञानी पसे निमित्तित्रे मनु के वार पौनो दमल पम्हो ॥ १३ ॥
 (ते साजळी) चित्तानुर धयेद्वो राजा अशान मारणी नोषेन दिवसे ज्यारे सत्ताया पेओ हतो न्यारे
 फगत मांरीनी पाव जेवमु एक गण्टु थयु ॥ १४ ॥

सत्ताएदोना जोरजेतागा मनोरथोनी साथे ते वण्टु वना वायु ॥ १५ ॥

अने तुरत गसाण वमगाथी मण्टु नण्ण थई गयु ॥ १६ ॥

अहो'ज्ञानीत्युपजहसे नैमित्तिक. ॥ १० ॥

अन्यथा चतुर्ज्ञानी युगधरयुगरागमत् ॥ १ए ॥

राजाढ्यस्त वदित्वा नैमित्तिकोक्तं कथं विघटितमित्यप्राहुः. ॥ १० ॥

युगराह अहचारयोगेन द्वादशवार्षिक दुर्भिक्षं ज्ञाव्यपि कस्यचित् पुण्यव्रतौ महता

पुण्योदयेन क्षिप्त. तत्स्वरूप यथा ॥ ११ ॥

पुरिमताडपुरे प्रवरदेवनामोच्छिन्नकुलं सवाऽऽयऽविरतत्वेन सर्वजज्ञी. अजीर्णेन कु-

ष्ठऽञ्चूत् ॥ ११ ॥

अहो' महंतो ज्ञानी' नाह एवी रीते निमित्तिज्ञानी हासी यथा वागी. ॥ १० ॥

हृवे एक दहामो त्या चार ज्ञानवाला युगधर गुरु आख्या ॥ १ए ॥

राजा आदिकोए तेमने गद्विने पृच्छु के (हे जगमान') निमित्तिज्ञानु रुहेबु केम जवु पर्यु ? ॥ १० ॥

गुरए क्यु के अहचारना योगयी वार यथानो दुःखाल परनार हतो. परतु कोऽह पुन्यवानना मोवा

पुण्योदये रीने ते दूर यथो, तेतु इत्तान नीचे मुजने छे ॥ ११ ॥

पुरिमताव नामना नगरमा जेतु कुव नए यथेतु दे, एयो भवदेव नामनो मनुष्य हमेशा अकिरनिपणायी

सर्वजज्ञी 'हतो; अने' तेयी अजीर्ण रोगे रीने ते-कुप्री यथो ॥ ११ ॥

लोकैर्धिकृतो मुनीन् हृष्टा, कथं मे कुष्ठरोग, कथं च उपशाम्यत्येष ॥ ३३ ॥
तेऽन्यथु, न ह्य अविस्तो ब्यात्माऽसंतोषतो यत्र तत्र यत्तद् यदातदा खादति, ततोऽ-
जीर्णप्रावद्येन कुष्ठादिरोगोद्भव. ॥ ३४ ॥

यदि च विस्तो भूत्वा चतुर्विधांहरपरिमाणतो भोजन कुरुषे तदा रोगद्वय श्रे-
यश्च स्यात् ॥ ३५ ॥

तत एकमन्न एका विद्वित्तिरेक शाक च प्रासुक नीरमिति परिमितभोजी बभूव,
क्रमाव्नीरोगता गत स ॥ ३६ ॥

लोकोए धिक्कारवर्षी (अके द्रहानो) मुनिभ्राने भेऽने तेभ्राने कहेवा झाल्यो के, मने कोऽनो रोग
शायी थयो? अने हेवे ते केम नष्ट थाय? ॥ ३७ ॥

त्यारे मुनिभ्राने वंशु के हे नद्र! विरतिविनानो जीव असतोषधी ज्या त्या, जे ते, अने ज्यारे
त्यारे खाधा करे ठे, अने तेथी अजीर्ण रोगनी प्रवृत्तताथी दुष्ट आदिक रोगेनी उत्पत्ति थाय ठे ॥ ३८ ॥

पाटे जो विरतिवालो यऽने चारे प्रकारना आहारोलु तु असुक परिमाणधी भोजन करीश, तो
रोगनो नाश यऽने तारु कम्पाण थयो. ॥ ३९ ॥

पढी ते एकज अनाश, अकज विणय, शाक अने अचित्त जडना परिमित भोजनवाजो थयो, अने तेथी
अनुक्रमे ते नीरोगीपणाने पाय्यो ॥ ३६ ॥

ततोऽवगतधर्ममाहाराभ्यो निष्पापवृत्त्या व्यवहरन् क्रमत प्राप कोटीमितं धनं ॥१७॥
 स्वय चोगोपचोगपराड्मुखो नियमिताहारजोजी पात्रदीनादिदानपरोऽजनि ॥१८ ॥
 एकदा उच्चिद्वसमये प्रत्यज्ञानयत्प्राप्तुकघृतादिचिर्द्विद्वामितान् महर्षीन्, प्रच्छन्नदा-
 नादिनोद्वेभ्रे च दद्विश साधर्मिकान् ॥ १९ ॥

एवं यावज्जीवमखन्तित्ततो मृत्वा सौधर्मं शक्रसामानिकोऽभूत् ॥ ३० ॥

त्यारवाद धर्मतु माहाराभ्ये जाणनि पापरहित वृत्तियी व्यापार कर्तां थकां अबुक्रमे ते क्रोडुगमे
 द्रव्य पास्यो ॥ १९ ॥

पेतं चोगोपचोगयी रहित थयो थको नियमित आहारना चोजनवाळो थइने, सुपात्र तथा
 दीन आदिकोने दान आपवामां तत्पर थयो ॥ १८ ॥

एक समये दुकाल वखते निर्दोष घृत आदिकथी दाख मुनिओने तेणे प्रतिदाज्या, तथा गुप्त दान
 आदिकवने करीने दागवो गमे साधर्माओनो तेणे उठार कर्णे १९ ॥

अथी रीते ठेक जीवित पर्यंत अखंड रीते त्त पाळ्या वाद मृत्यु पामीने सौधर्म देवदोकर्मां
 शक्रसामानिक देवता थयो ३० ॥

सावय कुडमि वर, हुज्ज, चन्द्रो । नाणदमणसमेओ ॥ भिच्छत्तमोहिअमइ । मा

रायचक्रुद्धीति ॥ ३१ ॥

इत्यादि विज्ञानयस्तत्तद्युतोऽत्र पुरे शुद्धवोधश्रेष्ठिनो व्योमद्वापत्न्या सुतो

जात ॥ ३१ ॥

नरुण्योदयेन दुर्जिह्व प्रह्वारादियोगेनोत्पन्नमपि प्रणष्ट ॥ ३३ ॥

इति गुरुच श्रुत्वा त्रिस्मितमना राजा राजन्यादिपरितृत शुद्धवोधश्रेष्ठिप्रहे गत ॥३४॥
पुत्र सर्वज्ञज्ञाण श्रेष्ठोत्सगे कृत्योपाच, जो पुणयशाद्धिन जगदाधार दुर्जिह्वचजक नमो

चरने ॥ ३५ ॥

ज्ञान दर्शने रुीने युक्त ण्या श्रावकना कुन्मा दास यदु सार, परतु मिशालयी मोहित
शुद्धिवाग श्रेवा चक्रवागी राजा यदु पण सार नयी ॥ ३१ ॥

इत्यादि, जाना चारो यलो यायी चरीने ते, आज् नगमा शुद्धवोध नामना शंउनी व्योमना
नामनी बीनी कुङ्कित्रे पुत्रणे उत्पन्न यथो डे ॥ ३२ ॥

तेना पुण्योदयने रुीने ग्रहचार आदिल्ला योगयी उत्पन्न थयेनो टुकाळ पण नाश पाय्यो डे ॥ ३३ ॥
श्रेवी रीतु गुरुु यान सांजळीने अत रुणमा आर्थये पापेनो राजा, राजपुण्यो आदिकयी
परिचर्या थको शुद्धवोध शंउने नेर गयो ॥ ३४ ॥

त्या सर्व वक्रणोपाग ते पुत्रने जोऽने श्लोथया नेसानिने ऐणे कतु के, हे पुण्यशानी ! हे जगलना
आधाररत्न ! हे टुकाळनो नाश रनाग तारा प्रत्ये नमस्कार थाओ ? ॥ ३५ ॥

त्वमेवात्र तात्विको राजा अहं तद्वारङ्गस्तवास्मीत्यभिधाय धर्मनृप इति नाम तस्य
दत्तवान् ॥ ३६ ॥

यौवने बह्वी राजकन्या परिणिन्ये स, तत्पुण्यप्रजावाच्य प्रजासु अशिवदुर्निज्ञा-
दिनामाप्यनश्यत् ॥ ३७ ॥

सदा प्रमोदाऽऽर्चित चाभूत्, सम्यक्त्वघ्नादशत्रुताराधक स युक्तजोगः क्रमाद्दीक्षासां-
दाय तद्भव एवाप्तकेवल प्राप मुक्तिमिति ॥ ३८ ॥

एव धर्मनृपस्य विरतिपात्रादिदानरूपो धर्मः स्वपरयोरनिष्ट रोगदारिद्र्यादि दुर्नि-
ज्ञादि चाहापीदिति ॥ ३९ ॥

बली तुज अहीं खरेखरो राजा हे, अने हु तो तारो कोटवाल (नोकर) हु, एम कहनि तेणे
तेनु 'धर्मराजा' अरेनु नाम पारुनु ॥ ३६ ॥

बली ते यौवन अवस्थामां घणी कन्याओंने परणयो; अने नेना पुण्य प्रजावधी प्रजामा दुःख अने
दुःखळ आदिकुं नाम एण नाश पारुनु ॥ ३७ ॥

अने हुयेशां आनन्द आनन्द एइ रयो; बली ते सारी रीते बोर त्रतोने आराधीने तथा चोगो चोग-
न्या बाद अनुक्रमे दीक्षा देइने तेज जेवे केवल ज्ञानं पायी मोडे गयो ॥ ३८ ॥

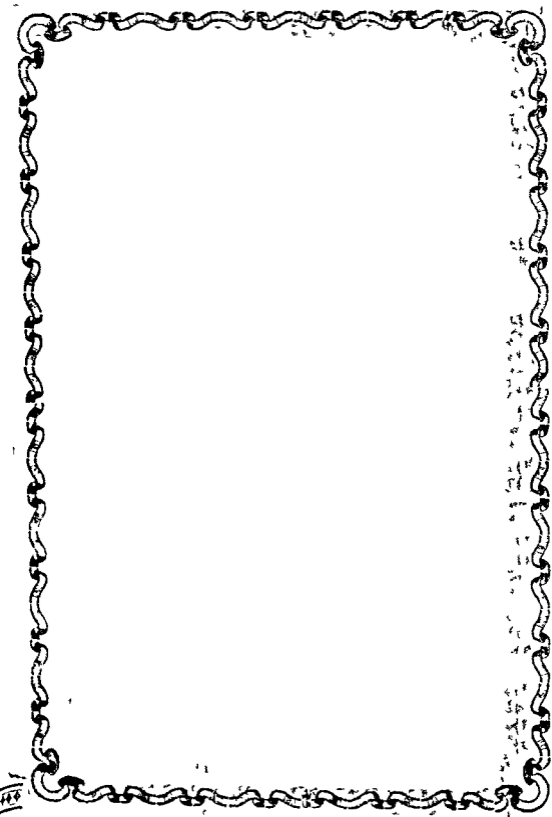
एवी रीते धर्म राजानी विरति अने सुपात्र-आदिको मत्ये दान देवा रूप, धर्म, पोताना अने परना
अनिष्टे एट्ठे रोगदारिद्र्य आदिकने तथा दुःखळ आदिकने हरी डीघो ॥ ३९ ॥

तथा त्रिवर्गो धर्मकामार्थः, तेषु सार, धर्ममूढाल्लावितरयो, तदुक्त-धर्मे सिद्धे ध्रुवा
 सिद्धि-धुम्नप्रयुम्नयोरपि ॥ दुःशयोपद्वजे सुवजा । स्रपत्तिर्दधितार्पियो. ॥ ४० ॥
 तस्मिन् धर्मे इहलोकपरलोकयोर्हितार्थं हे जग्याः, सम्मति सम्यग् विधिद्युष्ययाजाव
 शुष्या च, तथैवाराधने समग्रफडात्वात् ॥ ४१ ॥
 यद्वा सम्यगिति धर्मविशेषण, असम्यग्धर्मस्य कूटकार्यपरणस्येव अजिह्वपितृफडा-
 ऽनर्पकत्वात्, ततश्चैवविशेषणे सम्यग्धर्मे उद्यच्छतेतिगार्थार्थं ॥ ४२ ॥

कवी ते धर्म केवो हे ? तौके धर्म, काम अने अर्थ रूप जे त्रिवर्ग, तेषां सारशूल हे, केवके अर्थ
 अने कामतु मूल धर्म छे. कथु हे के-धर्मनी सिद्धि हतेते उते अर्थ अने कामनी निश्चये सिद्धि थाप हे, केवके
 दूय मळवायी दही अने घीनी मासि मुत्तन हे ॥ ४० ॥

एवी रीतना ते धर्मेने विपे आ लोक अने परलोकना हितने मांड हे जळ्यो' सम्यग् प्रकारे शुद्ध विधियी
 तथा शुद्धजावयी (तमो मयल करो) केमके तेवी रीते धर्मतु आराधन करवायी समस्त फळ पळे हे ॥ ४१ ॥
 अथवा 'सम्यग्' ए धर्मतु विशेषण जाणवु. केमके असम्यग् धर्म खेत्य सिक्वानी पेटे इच्छिन फलने आपी
 शक्तो नयी, माटे अवी रीतना विशेषणवाळ्य सम्यग् धर्मेने विपे तमो मयल करो? अवी रीते गाथानो
 अर्थ जाणवो. ॥ ४२ ॥

॥ अवी रीते पंडेसो तला ममात्त वयो ॥



अथ द्वितीयस्तरंगः

अथास्य परमरहस्यचूतस्य धर्मस्य ग्रहणविधिमाह ॥ १ ॥

जुगेहिजुगपासे । सो पुण जुगो गहिजाए विहिणा ॥ सपुन सुह फडो ज । एव
चिअ अन्नहा धर ॥ २ ॥

हवे आ छट्टए साखाळा धर्मेने ग्रहण करवानी विधि कहे छे ॥ १ ॥

बळी ते धर्म योग्य मनुष्यो योग्यनी पासे योग्य रीते विधि पूर्वक ग्रहण करे छे, केमके एवी रीते योग्यता पूर्वक
ग्रहण केळो धर्म सपूर्ण शुच फडने देनारो छे, अने जो तेवी उदढटो एट्ठे अयोग्यतापूर्वक ग्रहण करवापा आनि, तो अ-
शुच फड देनारो थाय ॥ २ ॥

छात्राग्राध्याख्या—जुगेद्विति, स पुनर्धर्मो योग्यैर्गृह्यते योग्यानामेव दीयत इत्यर्थ ॥३॥
बद्धिर्मद्वप्रज्ञान जज्ञमपिहि योग्य एव पात्रे निधीयते. नत्वयोग्ये तत्राऽन्यर्थफल-
त्वात् ॥ ४ ॥

किं पुनर्जन्मसहस्रसंचितात्मद्वटुणातापव्यापत्तिविच्छेदहेतुर्म., ॥ ५ ॥
त दुक्त-आमे धर्मे निहत्त । जहा जज्ञ त धरु विणासेइ ॥ इअ सिधंतरहस्सं ।

अप्पाहार विणासेइ ॥ ६ ॥

तत्रा जुगपसेत्ति, योग्यानामेव पाश्र्चे गृह्यते. नत्वयोग्याना जज्ञवत् ॥ ७ ॥

द्वार गाथानी व्याख्या—वळी ते धर्म योग्य मतुप्येयीज ग्रहण कराय डे, अर्थव् योग्योप्रत्येज देवामा
आवे डे ॥ ३ ॥

केमके ज्यारे वहारना मेळने योनारु जळ पण योग्यज पात्रमा रखाय डे, परतु अयोग्यमा रखातु नथी. केमके
अयोग्यमा राखनाथी निरुपयोगी फळगळु थाय डे ॥ ४ ॥

त्यारे हजारो ज्योना संचित करेडा अतग भेद, तुणा, ताप अने दुःखेनो नाश कराना हेतुरूप धर्मनी शु
चात करयी ? ॥ ५ ॥

कहयु डे के, जेप काचा यनामा नाख्यु पाणी ते धर्मानो नाश करे डे तेप आ सिद्धतनो रहस्य पण अ-
योग्यनो नाश करे डे ॥ ६ ॥

वळी ते धर्म योग्योनी पसेज ग्रहण कराय डे, परतु जज्ञनी पेडे अयोग्यनी पसंयी ग्रहण करातो
नथी ॥ ७ ॥

यदुक्त—चारित्र्येण विहीन । श्रुतवानपि नोपजीव्यते सद्भि । अतीतजडपदरिपूणे । कुत्र-
 जैश्वर्यादकूप इव ॥ ८ ॥
 सो पुण जुगोत्ति, स पुनर्धर्मो योग्य एव श्रुते, नत्वयोग्यो हिसाद्विद्युप प-
 रिषोढकवत् ॥ ए ॥

तथा गहिज्जए विहिणत्ति, श्रुते विधिनेव, नत्वविधिना, न खलु जडमपि प्रति-
 कूले कदसे सक्रामतीति ॥ १० ॥
 विधिश्चात्र विनयवहुमानादि, उक्त च—सीहासणेनिसन्न । सोवाग सेणिओ न-
 रवारिदो ॥ विज्ज मग्गइ पयओ । इअ साहु जणस्स सुअविणओ ॥ ११ ॥

क्यु उं रे-चारित्रि विनातो ज्ञानवान् पण, सज्जनोंची आदर प्राप्तो नथी, कोनी पेंडे' तो के
 शीनन जनथी इरेवा एवा पण चानदाना इवालो कुनीनो जेस आदर कता नथी तेस ॥ ८ ॥
 यली ते र्म योग्यज ग्रहण कृतो, परंतु स्वाचना व्रतनी पेंडे हिसात्त्रात्ति द्रवणयने अयोग्य
 धर्म ग्रहण करवो नही ॥ ए ॥
 यली ते धर्म विधिपूर्वकज ग्रहण कराय अ, परंतु अत्रिनिथी ग्रहण करालो नथी, केसके पाली पण
 उथा गनाया इरी शकतु नथी ॥ १० ॥

अही विधि एटवे विनय तथा बहु मान आत्तिक जाणतु क्यु उं रे-सिहासनपर वेंडेवा चानननी
 पासेयी श्रेणिक राजाअं धिया मागेवी ठे; माटे पवी रति साधुजने श्रुतनो विनय कल्लो ॥ ११ ॥

श्री श्रृंगिण्यभधायं—राजपुत्रनगरे श्रीश्रृंगिक उमापति, नेहणा गङ्गी ॥१२॥
 अन्यरांभेदिनीजकश्रेयणाया गरुन्नेनथपञ्चदहनिवासमनोरथमजिह्वपटनयकुमार॥१३॥
 ननेऽनयसत्री तादृक्स्वनाथिमदृश्या ब्रमन मंजोचित सुखद्वाना नरमेतसजा
 श्रीव ॥ १४ ॥

नायमनधिष्ठायक उपातास्त्रियोल्लसिप्या धियाऽवधार्य तदधिष्ठायकसागच्छुमुपना-
 सत्रयमत्तनीत ॥ १५ ॥

तुष्ट मुर समाचष्ट, निष्टत्वसौ समाश्रम, सर्वसुकवनाद्बुतमेतस्मज रत्नमय मीधं
 भिगाम्ये ॥ १६ ॥

श्री श्रृंगिक राजानुं वृत्ता नोपे मुनय उे—राजपुत्र नाम्ना नगरमां श्रृंगिक नामे राजा इतो, तेनी च-
 दया नामे राणी ह्यौ ॥ १७ ॥

एक द्विगमे ने पद्मला गर्ज्जिन एक यज्ञराजा पद्म युद्धमा ग्हेरानो पनोरथ यथो, ग्रने ने यान राजाप,
 अत्ररागामने जल्पाती ॥ १८ ॥

नेधी अनयामार पवीण नेरा स्थन्ने मोटे रत्नमां दमत्तां थरा स्थत चापक एक उत्तम चक्षुणोपाटु ग्द
 पोपु ॥ १९ ॥

आ जया युक्त नेरा अश्रिण्यरु विला हेतु १ जोऽए, गृ उगानिक्ती बुष्टिथी ज्ञानीने, तेरा अश्रिण्यरने
 पापारा मोटे नेणै वग उपाताम ह्यौ ॥ २० ॥

नेधी तारा यथेसा डेरे रगु ते, आ पाप स्थानने पारे एमन रहेरा ने, हृ क्ते मयं ह्युता सीचिताजो एक
 यत्रा अद्वय रत्नमय मंदेस ज्ञानी प्रापीश ॥ २६ ॥

एवमस्त्वित्युस्वा यावत् सचिववर पुरमद्वमकार्पीत्तावदेक्षिष्ट जवनकेकस्तत्रं वि-
मानश्रीविरुधि निपन्न सर्वसुवनोपेत ॥ १७ ॥

तथाविधसौध निध्यायाधिक धन्यमन्यस्तछन रक्षितुमन्नद्विह वप्रमकारयत्, गङ्गा-
काश्च न्ययुक्त तथा, यथा पङ्क्तिणोऽपि तत्र प्रवेश नाऽन्नजतेति ॥ १८ ॥

अन्यदातत्रैव पुरे श्रपत्रप्रेयसी गुर्विणी स्वर्नतुश्रूतफद्वास्वाढवोहदमवादीत्, अकालाश्चा-
भ्राणा स, सर्वतुर्कवने च तानि सति, पर न केनाऽप्युपयेनायते ॥ १९ ॥

एतज थात्रो ? एम रुहीनि जेडनामा ते उजम परीनारसा गयो, तेद्वामा तेषे एक थन्नरात्रो स्मिान जेवी
शोचागळो तथा सर्वे स्तुना वगीचावागे तयार थयेनो मेंह्ल जेयो ॥ २० ॥

एवी रीतना मेंह्वने जेइने ते पोताने अधिक धन्य मानरा वागयो, तथा ते तननी रक्षा माटे
तेण डेरु आराश सुधि प्हेते प्यां क्रिडो स्नायो, तथा त्यां प्वा तो चोक्तीनरो गळ्या के जेवी
पकीडो पण तेमा पेतवाने अशक्त थया ॥ २१ ॥

हवे एक त्रिक्से तेज नास्मा एक चासाननी वी गर्जवती थद, नेणे पोताना चर्तारं कथु के
मने आगाना फळो ग्वातानो नेहडो उत्पन्न थयेनो डे, हवे ते समये आगानी स्तु नहोली, परतु सर्वे
स्तुवाला ते वनमा आवात्रो डे, पण वोड पण उपपथी ते मत्री शके तेम नथी ॥ २२ ॥

इति ध्यात्वा श्रपाक सुधीर्विप्राहृदि स्थितएवावनामिन्या विद्यया शाखासाम्कृष्य
चूतान्युपादे ॥ ३० ॥

निशि उन्नामिन्या विद्यया यथास्थान तां न्यास्थपद्य, पूरयामास च दोहद प-
न्या ॥ ३१ ॥

अथारङ्गा प्रातः शाखा फलरहिता प्रेक्ष्य साशंकमनसः कथयामासुर्महापते ॥३२॥
देव गताऽनाद्यभिज्ञानं नेह्यते कस्यापि, फलानि तु केनाप्यात्तानि शाखायाः।
य एव गृह्णीयात् कथं तस्माद्गङ्गाणीय वनमिति ॥ ३३ ॥

तत् श्रुत्वामत्रीडमादिशन्मेदिनीपतिः, पचपङ्कडिनातश्चौर स्वशिरो वाऽप्येरिति ॥३४॥
एष विवरीने ने उच्यते बुद्धिबला चापहो किञ्चानि यद्दाराज रहति अस्नामिनी विधाये करीने
मालीने खरीने आताम्रो ब्रह्म द्वीया ॥ ३० ॥

यली गत्रिये उन्नामिनी विधाये करीने योग्य स्थानके ते मालीने रावी, अने अत्री रीति पोतानी
स्त्रीने दोहलो तेणे सप्रणे कर्यो ॥ ३१ ॥

पछी चोकीदारोए मनात्मा ते मालीने फल सिलानी जोहने मनमा शका द्यावीने राजाने कलु के, ॥ ३२ ॥
हे स्वामी कोइतु आवमा गवानु चिह्न तो देवातु नथी, अने शाखासामी फल तो कोइये एए द्वीया
दे, अने एवी रीति ने चोरी थाए, तेयी वननी केस रक्षा करवी ? ॥ ३३ ॥

ने साजलीने राजात्रे अचयकुमार मरीने हुकूम कर्यो के, पाव, अथवा उ डिमोनी अंदर चोणे हानर
का नाह तो तां माणु आपणु पर्यो ॥ ३४ ॥

॥ १५ ॥

तस्करस्तु मर्षीदीर्न स्वाऽप्यऽनूद् हृगोचर, ॥ १५ ॥

अन्यथा स्वचिद्देवायतने पूर्वर्गागणसगतान् जनान् सुग्व्यनटामप्राप्ताया अत्रय
श्रेचे ॥ १६ ॥

वसतपुरे जीर्णश्रेष्ठी नि.स्व, तदगजा विवाहसामग्र्यऽयोगाद् बृहत्पत्रूत्, जने-
ऽपि बृहत्कुमारीति नाम प्राप्सिष्यत् ॥ १७ ॥

सा वरार्थं कामदेवमसूजयत्, अन्यथा निशि पुष्पार्थं मत्त्रये प्रविष्टा, मात्त्रिकेन
उक्ता च चौरि कि ते कुर्वे ॥ १८ ॥

साऽवोचत्, कुमार्यस्मि मा कोऽप्युच्छति न, तेन पुण्याण्यादाय काममर्चाभि ॥ १९ ॥

हवे चोर तो मत्रीनी नमरे क्यायें पण पड्यो नही ॥ १५ ॥

एक दिवसे नोईक नेमदिसमा (नृत्य वस्त्रे) मुग्ग नही हजू आर्षी नहोती, तेखाया पंहेवेथी
रागदुपमां आर्षीने पेंडेना बोकोने अचयकुमारें कळु के, ॥ १६ ॥

वसनपु नामना नगरमा वीर्णेशठ नामें एक निर्यत मनुष्य वस्तो हतो. तंती एक पुत्री, ज्ञान्ती
साम्प्री नही मलयथी मोठी थड, अने तेथी झोसोमा ते 'बृहत्कुमारी' ना नामथी प्रसिद्द थड ॥ १७ ॥

ते वर मळवा मोटे कामदेवने प्रजया झाली, एक दिवसे रात्रिण पुष्पो देया मोटे ते रागमा गड,
त्या मात्रीण तेणीने कळु के, अरे चोर हु तार शु करु ? ॥ १८ ॥

त्यारें तेणीण बह्यु के, हु कुमारी लु, मने कोड पण पणतु नथो, मोटे पुष्पो देवने हु कामदेवने
पण ३ ॥ १९ ॥

मात्रिकोऽवददूढा सती चेत् प्रथमं समातिकमेष्यसि तदा त्वां मुचे यथेष्टं च

पुष्पाणि गृह्णाणिति तदभ्युपगम्य गृह्णता ॥ ३० ॥

परिणीता च मृतचार्येण केनापि धनिना, वासगृहावसरे च प्रतिज्ञात पत्युः प्रो-
चे तेन प्रह्विता च निशि मन्त्रये याती दृष्टा साङ्गकारा चौरैः ॥ ३१ ॥

तेर्द्विमाणा च स्वदृत्तातमुस्त्वा वक्षमानाया वाञ्छित कुर्यात्त्याग्यात् ॥ ३२ ॥
तेर्द्विसृष्टाचात्रे राक्षस असनोद्यत वीद्वय स्वदृत्तात निवेद्य व्यावृत्ता मा चक्षयेरि
त्याचव्यौ ॥ ३३ ॥

पछी माझीए क्यु के, परणा याद जो पहेडा हु मारी पास आवे, तो हु तने जोरु, अने तारी
खुशी मुजस हु पुष्पेने ग्रहण कर? पडी नेवात स्वीकारिने ते घेर गइ ॥ ३० ॥

पछी जेनी ह्री मी गयेवी छे, एवा कोइक धनवान पुग्प साथे ते पण्णी, पछी वास खुवना
जती बेलाए पोते जे प्रतिज्ञा करेही हती, ते वात तेणिए पोताना नर्तारने जणानी, तेणे गजा आपवाची
ते रात्रिए रागमा आचरणो सहित जवा दागी, तेद्वामा चोरणे तेणिने टीडी ॥ ३१ ॥

तेओ ज्यारे तेणिने परुन्वा वाग्ग्या, ज्यारे तेणिये स्वदृत्तात जणार्बिने क्यु के, पाछा बलवा तमल
वाञ्छित करजो ॥ ३२ ॥

पछी तेओए तेणिने रजा आपवाची ते आगल चाडवा दागी. एद्वामा चक्षणे करवाने तयार
थयेडा ओक राक्षसेने जोइने तेणिए पोतानु वृत्तात तने निवेदन क्यु, अने क्यु के, ज्यारे हु पाछी बकु
ज्यारे तुं माहे चक्षणे करजे ॥ ३३ ॥

तेनापि मुक्ता मन्त्रये प्रापत् कथमागतेत्यारामिकेण पृष्टा स्वधृत्तातमादितोऽवादीत्,
या पत्या चौरै राक्षसेन च मुक्ता ग्रहिता च सा न सामान्येत्यामृश्यारामिकस्तौ
व्यसृजत् ॥ ३५ ॥

सद्यो व्यावृत्ता ता वृत्तांत पृष्ठमात्रिकादऽपि कथं द्वीन स्यामित्युस्त्वाऽमु-
चक्ष्वाक्षस, मात्रिकाराक्षसाभ्या मुक्तेत्यमुचश्चौरा अपि ॥ ३५ ॥
साजगरणा स्वगृहागताअवगतवृत्तातेन चर्त्रा गृहस्वामिनी कृतेति जो बोका वि-
चार्य वदत, जर्तुमात्रिकचौररक्षसा क साहसिक इति ॥ ३६ ॥

पछी तेणे पण ओंरुवाथी ते रागभा गद, त्या माळीत्रं पुरुषु के कम अथी? त्यारे तेणीए पोतानु
वृत्तात पेहेवेथी करु. त्यारे माळीण विचार्युं के, जेणीने पतिण, चोरोण, तथा गदसे पण जोनी दीधी उ,
ते वी सामान्य होय नही, पण विचारि तेणे पण जोनी दीधी ॥ ३४ ॥

पडी तुल पाडी वळंनी प्वी तेणीने वृत्तात पृडीन, माळीथी पण हुं केम नीच थाल? एम
रुहीने गदसे पण तेणीने जोनी दीधी, वळी माळी तथा राक्षसे जोनी एम धारी चोरोण पण जोनी दीधी ॥ ३७ ॥
अथी रीते आचूणणे सहित ते ज्यारे पंताने घेर पाडी अथी, त्यारे तेणीना सामीण तेणीनु
वृत्तात जाणीने गरनी मात्रिक वनाथी, पांटे हे वाको! तयां विचारिने म्हो के, जर्तार, माळी, चोर तथा
राक्षसाहेथी साहसिक तेण ॥ ३६ ॥

तत प्रशशसु सेर्यां जर्तार, चौराश्च तस्करान्, ओढरिका राड्डस, पारडारिका मा-
श्लिक चेति ॥ ३७ ॥

ततश्चौरप्रशसकत्वेन श्रपाक तस्करं विडन् मन्त्रीडुरवाडीत्, कथमग्रही राम्राणीति
वद, विद्ययेत्युक्ते तां राज्ञे प्रयत्न जिजीविसुश्चेत् ॥ ३८ ॥

तत सिंहासनोपविष्टाय राज्ञे दत्ते स्म ता विद्या पाणपतिः, नतु सक्राता सा
मनागऽपि ॥ ३९ ॥

तत. सचिववचसा नृत्यनिविष्टो नृपति सिंहासननिपण पाणपति विद्यामथ्रं
यते स्म, सद्य संक्रमति स्म च सेति ॥ ४० ॥

त्यारे ईर्यावाळा डोको तेणीना जर्तारनी प्रशसा करावा दाग्या, चोरो चोरोनी प्रशसा करावा दाग्या,
उदरजसियो राड्डसने वखाणवा दाग्या, तथा परही जोगमनरा मळीने वखाणवा दाग्या ॥ ३७ ॥

फळी चोरनी प्रशसा करावधी ते चानळने चोर जाणीने मन्त्रीशरे तेने कळु के ते आवाओ शरी ते
ग्रहण कर्या ? ते कहे त्यारे चानळे कळु के, विद्याधी ग्रहण कर्या, त्यारे अजयकुमार तेने कळु के, जो
तारे हवे जीववानी इच्छा होय, तो ते विद्या तु राजानं आप ? ॥ ३८ ॥

फळी ते चानळ सिंहासनपर वेडेवा राजाने ते विद्या आपवा दाग्यो, पतु जरा पण ते विद्या
राजाने आवी नही; ॥ ३९ ॥

त्याखाद मन्त्रीना वचनधी राजा पृथ्वीपर नीचे वेडो, अने ते चानळने सिंहासनपर वेसाने तेनी
पासेधी ते विद्या तेणे माणी, के तुल आवनी गई ॥ ४० ॥

एव ग्रहणे हेतुमाह—सपुत्रसुहृदफलो ज एव चियत्ति, यदित्यव्यय हेतो ॥ ४१ ॥
यस्माद्येतेरेवमेव पूर्वोक्तचतु प्रकारशुद्धयेव गृहीतो धर्मः सपूर्णशुभफल सपूर्ण-
सुखफलो वा भवतीति ॥ ४२ ॥

अत्रैव व्यतिरेकमाह—अन्नहा इहरत्ति, अन्यथा योग्यत्रयाऽमिदने अविधिना वा
गृहीति इतरदिति अशुभफलोऽफलो भोगराज्यादिमात्रफलो वा भवतीति गार्थ्य ॥ ४३ ॥

इति द्वितीयस्तरगः ॥

हवे एवी रीते (प्रवे कया मुजव) धर्मने ग्रहण करवामा हेतु कहे डे—‘सपुत्र सुहृदफलो ज’—
अहीं यन् ए हेतु अर्थया अव्यय डे ॥ ४० ॥

कारणके एवी रीते एट्ये पूर्व कहेडी चार प्रक़ारनी शुद्धिवके करीनज ग्रहण केलो धर्म सपूर्ण
शुभ फलवालो अथवा सपूर्ण सुखफलवालो पाय डे ॥ ४२ ॥

हवे तेषाज व्यतिरेक कहे डे—अन्यथा एट्ये योग्य एवा नणे* नहीं मळ्वायी, अथवा अवि-
धिप्रर्क तेने ग्रहण करवायी, ते अशुभफलवालो अर्थात् तात्किकफल विनातो, अथवा फलत भोग अने राज्य
आदिक फलवालो पाय डे, एवी रीते गार्थाने अर्थ जाणवो ॥ ४३ ॥

॥ इति द्वितीयस्तरग ॥

* धर्म धर्मप्राहक अने धर्मदाता.



इति द्वितीयस्तंभः समाप्तः

अथ तृतीयस्तरंगः

योग्या एव धर्माधिकारिण इत्युक्त, योग्यस्वरूप चाऽयोग्यस्वरूपनिरूपणे सुज्ञानमिति
प्रथमत उपदेशाऽयोग्यानाह ॥ १ ॥

रत्तो दुहो मुढो । पुंवि बुग्गाहिओ अचत्तारि ॥ उवये सस्स आणरिहो ।
अहवा इसण्हि वुज्झति ॥ २ ॥

योग्य मनुष्योऽर्पना अतिकारीओ ढे, एम प्रेवं कहेवु ढे, हवे ते योग्यनु स्वरूप अयोग्यनु
स्वरूप निरूपण करवायी सारी रीते जणाय ढे, माटे पहेवा उपदेशेने अयोग्य एवा मनुष्योनु स्वरूप कहे ढे ॥ १ ॥

रागी, छेपी, मूढ तथा प्रथमयीज जमवेत्तो, ए चार जातना मनुष्यो उपदेशेने ज्ञायक होता
नयी, अथवा तेओ (कोई पण प्रकारना चत्तार आदिक) अतिशयोधी पोष पामे ढे ॥ २ ॥

रक्ता रागी, या हि यत्र भ्वाचरुक्त स तदायान् दीधानाप उल्लेख्यत्र पर्याय, अत्र
 क्त, ज जस्स पिअ ततस्स सुदर रुवगुणविमुक्कपि ॥ मुत्तूण रयणहारं । हरेण सप्पो-
 कअओकडे ॥ न तु गुणदोषविवेकपुरस्सरं यथावस्थ वस्तुस्वरूप तद्वचरवत्तथाहि ॥ ३ ॥

मगधेषु क्वचित्सन्निवेशे नन्दनो नाम तद्वचर, तस्य प्रथमश्रीद्वितीयश्रीनाम्न्यौ
 पत्न्यौ ॥ ४ ॥

द्वितीयश्रिया रक्त, स तद्ग्रहएवतिष्ठति, अन्यदोऽगमत् प्रथमश्रिया ग्रह, रचि-
 तश्च तयोचितो मज्जनाद्युपचार ॥ ५ ॥

रक्त एतन्वे रागी, जे मनुष्य जे कर्कसा रागी होय, ते तेना दोषेने पण गुणरूपेन जुए ठे कयु ठे
 के—जे जेनं प्रिय-होय ते तेनं सुदर दारों ठे, पछी ते जेके रूपगुण विनंतु-होय, जेम महोदेवे रत्नोने हार
 तजीने सर्पेने कड्यां धारण-कर्यो ठे कळी तेजे रागी माणस कोटवाळनी पेडे गुणदोषना विवेचनपूर्वक यथार्थ
 रीते वस्तुना स्वरूपे ज्ञानी शक्तो नथी, ते कोटवाळनु उदाहरण नीचे मुजव ठे ॥ ३ ॥

मगधदेशमा कोर्क गाममा नदन नामे एक कोटवाळ हतो, तेने प्रथमश्री अने द्वितीयश्री नामनी
 वे स्त्रीओ हती ॥ ४ ॥

ते कोटवाळ द्वितीयश्रीमा आसक्त हतो, अने तेथी तेनाज पर्यां ते रहतो हतो, एक दहाहो ते
 प्रथमश्रीने धर गयो, अने तेथी तेणीए तेनो स्नानआदिक उचित-सत्कार-कर्यो ॥ ५ ॥

प्रयुणित च नानाव्यजनयुणोपेत नोजन, पर सुदरमपि न बहुमत किमपि तच्चि-
त्ते, उक्तवाश्च ॥ ६ ॥

किं चुल्यते द्वितीयश्रिया यन्न राद्ध, तदानय किमपि तच्छेदमन, शाक, तत प्र-
थमश्री सपत्नी शाकमयाचिष्ट ॥ ७ ॥

तयोक्त नाद्य राष् कुत शाक, आगत्योक्तं तद्ववराय, पुनरुन्त तेन, किञ्चिदुच्छ-
रिताद्यपि मार्गय ॥ ८ ॥

पुनर्गत्वाऽमार्गयत्प्रथमश्री, कर्मकरेभ्यो दत्तमित्युच्छरितमपि नास्तीति प्रत्युवाच स-
पत्नी ॥ ९ ॥

बली नाना मकारता शाकबालु सुदर नोजन तेणीए तैयार कर्यु, परतु ते उत्तम नोजन पण तेना
मनने कई पण रत्यु नहीं, अने तेथी ते कहेवा दाग्यो के ॥ ६ ॥

द्वितीयश्रिये जे रायु नथी, ते शु खाई शकाय ? माटे तेणीने येरथी कंदरु शाकजात्री बाव ? पही
प्रथमश्रिये (पोतानी) शोक पासे जई शाक माग्यु ॥ ७ ॥

तेणीये कस्यु में आज राथ्यु नथी, माटे शाक क्याथी होय ? पही ते प्रथमश्रिये पाछ आचिनि ते हकी-
कत कोट्याळने कही, त्यारे फरीनि कोट्याळे कस्यु के, ज कइ बयु घटयु होय ते मागी बाव ? ॥ ८ ॥

त्यारे बली प्रथमश्रीए त्यां जइने माग्यु, त्यारे बली 'शोके एवो जवाव आयो के, जे कई बयु
दहू, ते पण चाकरोने देई डीबु, माटे ते पण नथी ॥ ९ ॥

तदपि व्यङ्ग्यपरत्यये, यत्किञ्चित्काजिकप्रायमप्यानय तन्निलयादित्यद्वयपञ्च स. ॥१०॥
 तत कपायिता सा गत्वा वहि सद्यो व्युत्सृष्ट वत्सगोमय तुवरीचणकमिश्र गृ-
 हीत्वा किञ्चित् सस्कृत्य, तद्गृहादानीतमिति वदत्युपनिन्द्ये ॥ ११ ॥
 तद्वारस्तुद्यो जुंजानोऽजाणीत, अहो मिष्ट, अहो रसविशेष, अहो सु-
 स्त्रीगुण इति ॥ १२ ॥
 एष स्त्रीरस्तो यथा गुणदोषविवेकपराङ्मुख तथा य मन्वच्चिदर्थने रक्त स त्रि-
 शिष्य गुणदोषो न विवेचयति ॥ १३ ॥

पत्नी ते वात पणं तेणे पोताना स्वामिने जणावी, त्पारे क्ली तेणे कलु के, जे कइ कानी जेवु पण
 तु तेने धेयथी दाव' ॥ १० ॥

पत्नी तो क्रोधायमान थयेह्नी ते प्रथमश्री बह्दार जइने तुरततु कंहु तालुं वातमानु डाण, के जेमा
 तुबर अने चणा मिश्रित थयेह्ना हता, ते दइ आवी, अने तेने जरा (मरी मसादायी) स्वादिष्ट बनानीने,
 तथा पतिनी पासे दोइ जइने कलु के, आ हु छितीयथीने धेयथी दावी हु ॥ ११ ॥

(ते साजळी) खुशी थयेह्नी कोटवाल ते डाण स्वातो थको कहेवा दाग्यो के, अहो' कंहु मीहु
 डे' तेमा रस केतो आवेडे' अहो उत्तम स्त्रीनो केतो गुण डे' ॥ १२ ॥

अथी रीते स्त्रीमा रक्त थयेह्नी ते कोटवाल जेम गुण दोपतु विवेकपूर्वक विवेचन करी शक्यो नही,
 तेम मनुष्य, के जे कोइक दर्शनमा रक्त थयेह्नी डे, ते गुण दोपने समजीने तेतु विवेचन करी शकतो नथी ॥ १३ ॥

यदुम्तं, कामरागस्नेहरागा—वीपकरनिवारणौ ॥ दृष्टिरागस्तु पापीयान् । दुःखेद
सतामपि ॥ १४ ॥

अपि च, मिथ्याकञ्जकमखिनो । जीवो विपरीतदर्शनो ज्ञवति ॥ श्रद्धते न च धर्मः ।
मधुरमपि रस यथा ज्वरित ॥ १५ ॥

इति ॥ छिष्ट, क्रोधमानाऽतिरेकवान्, यो यत्र छिष्ट स तस्य गुणानपि दोषतयैव
पश्यति ॥ १६ ॥

इति तद्विषयत्वेनोपदिश्यमान छिष्टस्यात्महिततया परिणामसुन्दरमपि न कर्ममैचि-
द्गुणाय, प्रत्युत्तोपदेष्टुरनर्थ्यापि ज्ञवति दुर्बोधननृपस्यैव ॥ १७ ॥

बहु डे के कामराग अने स्नेहरागने रेकवा तो संदेवा छे, परतु पापी एवो दृष्टिराग उच्यमाने
एण खोन्वो मुखेन पने डे ॥ १४ ॥

बली पण, ज्वरवागे मनुष्य जे मधुर रसने पण मधुरतस्किं जाणी शकतो नथी, तेम कियत्त्व-
रूपी कञ्जकयी मतीन थयेवो मनुष्य विपरीत दर्शनवालो थाय डे, तथा धर्मपर श्रद्धा करतो नथी ॥ १५ ॥
इति ॥ हवे छिष्ट एखे डेपी । अर्थात् क्रोध अने मानना अतिशयवालो जाणवो, जे मनुष्यनो जेनापर
इए होय डे, तेना गुणाने पण दोषोत्तरीकेन जुए छे १६ ॥

माटे ते सबथी डेपीने जो उपदेश देवामा आवे, अने ते उपदेश तेना आत्महितपणे जोके परिणामे सारो
होय, तोपण तेने कष्टपण गुणकारक थड शकतो नथी, परतु उनगे दुर्बो भन राजानी फेरे उपदेश देनागने ते बुक-
शानकारक पण थाय डे ॥ १७ ॥

तथाहि—वनवासे त्रयोदशवर्ष्यासत्क्राताया राज्यबुद्धे कुरुनि पांशुपुत्रे सह विप्र-
हारजे बुटुंदवद्वहमार्यातिविरस विज्ञाद्य सधये श्रीकृष्ण प्राप दुर्योधनातिक ॥ १८ ॥

अत्रोक्तिप्रत्युभित्तविस्तर, यावत्—इहप्रस्थ यवप्रस्थं । माकढी वारुणावत ॥ देहि मे
चतुरो ग्रामान् । पचम हस्तिनापुर ॥ १९ ॥

इत्थ पचग्राममार्गणे सधिकरणे च दुर्योधनोऽभ्यधत्त—सूच्यग्रेण सुतीद्वेणेन । या
सा ज्ञिद्येत मेडिनी ॥ तदर्थं न प्रदास्यामि । विना युद्धेन केशव ॥ २० ॥

तत पुनर्नारायण.—सद्विधो विजयो युद्धे । प्रधानपुरुषद्वय ॥ उपायत्रितयादू-
र्ध्व । तस्माद्युध्येत पन्ति ॥ २१ ॥

ते दुर्योधन राजानु दृष्टात कहे छे—वनवासमा तेर वर्षो सपूर्णं यथा वाद राज्यना दोनी एवा कुरुओ पा-
नुना पुत्रो साथे ज्यारे वनाइ करवाने तैयार थया, त्यारे श्रीकृष्णे विचार्युं के, कुडुमक्षेश परिणाम सारो नबी,
एम विचारि ते सधि मोटे दुर्योधनपोस गया ॥ १८ ॥ अही सवाल जवाव नीचे मुजब डेः—

इप्रस्थ, यवप्रस्थ, माकंडी तथा वारुणावत ए चार गाम तथा पाचसु हस्तिनापुर गाम आपो ? ॥१९॥
एवी रीते पाच गामनी दागणीपूर्वक सधि करवानु कहेता दुर्योधने कहु के, हे केशव' तीद्विण एवा
सोईना अग्र जागधी जेट्डी पृथ्वी जेदाय, तेथी अरधु पण युद्ध कर्यो विना आपु नहीं ॥२०॥

त्यारे फरीने श्रीकृष्णे दुर्योधनने कहुं के युद्धमा विजय थवो तो संदेहवालो डे, अने वळी तेथी
उचम पुरपोनो नाश पाय डे, मोटे विद्वान् माणसे तो (शाम, टाम अने जेट) ए त्रण उपायोंने अजमा-
व्या गदज डेवटे युद्ध करवुं जेइए ॥२१॥

असंस्थानो मानाथः । समेनापि हतो भृशः ॥ आमकुञ्जमिवाञ्जिच्वा । नावतिष्ठेत
शक्तिमान् ॥ २२ ॥

इत्यादि नीतियुक्तिस्तात्रद्विदानुशास्तिगोचरीचक्रे दुर्योधनः । यावत्सकुह्वस्तं बहु
सज्जोऽनवत् ॥ २३ ॥

तथा चाज्यधु आकेशग्रहणान्मित्र—मकार्याद्विनिवर्त्तयेत् । कृष्ण सुयोधन प्राह ।
यावत्त बहुमुद्यत ॥ २४ ॥

ततः पचग्रामाऽर्पणात्सकद्वराज्यद्वाराण स्वकुञ्जक्यकरणादि च कुरुणा सुप्रतीत-
मेति ॥ २५ ॥

सधि नहीं करना एरो मानाथ मनुय शक्तिवान् होय तो पण सामान्य शत्रुवने अत्यन्त हत महत्
थयो उतो काचा धरनी पडे चागी जः स्थिर रही शक्तो नथी ॥ २२ ॥

इत्यादि नीति तथा युक्तिग्रामे स्त्रीनि श्रीशरणे दुर्यात्मन उक्त न्यामुधी हितशिक्षा आपी के
ज्यमुधे । ते श्रेयथमान थः तेने गधवने तेषां थया ॥ २३ ॥

बळी कथु उ र. उक्त वाट परकृत्वा मुधी करीने पण पित्रेने अर्पणार्थी अष्टकावयो, एवी रीते ज्या-
मुधी तेने वाभाने उद्यमवत् थयो. न्यामुधी कृष्णे दुर्यात्मने समजायो ॥ २४ ॥

पडो पाच गांमो नहा आपवाची तेना सर्व राज्यतु हरण थयु, तथा नवी रीते कुम्भाना कृत्तनो
द्वय थयो, इत्यादिक वृत्तात मसिद्धन उे ॥ २५ ॥

नतश्च श्रीकृष्णेऽपि प्रतिबोधदायिनि उत्तानेऽव्यैहिके हितार्थं यथा पांडुपुत्रेषु छिद्य
स दुर्योधननृपतिर्नाऽबुध्यत हितं, प्रत्युत श्रीकृष्णेऽपि ब्रधनाद्यचित्तयत गव शासने छि-
द्योऽपीति ॥ १६ ॥

मूढो मोहोपहतचित्तवृत्ति, स हि नाऽवधारयति यथावस्थित उस्तुतस्त्व, नापि परां क
श्रद्धन्ते गगाव्यपाठकवत् ॥ १७ ॥

तद्यथा अस्ति द्वाटदेशे भृगुपुरे गगाव्य पाठक स बहुशिव्यपाठनांपाजितधनो बृहत्त्वे
परिणिन्द्ये ॥ १८ ॥

माष्ट एवी रीते पात्रवो प्रत्ये द्वेषाब्जो एवो ते दुर्योधन राजा, प्रतिबोध आपनार तथा आ द्वाक
सप्रधि हितेच्छु एवा श्रीकृष्णे समजाव्या उता एण पोतानु हित समज्यो नही, अने उद्वेगो श्रीकृष्णेने पण
जेम वापवानो विचार तेणे क्यो, एवी रीते शासननी अदर द्वेष राखनास्ते पण जाणवो ॥ १६ ॥

मूढ एवमेव मोहवी हणयेवी डे मनोवृत्ति जेनी एवो, एवी रीतेने ते मूढ माणस स्वरेखर यथार्थ
रीते वस्तुतत्त्वेने जाणी शकतो नयी, तेम गग नामना पाठकनी पेंडे अन्ये कहेजा उस्तु तत्त्व पण श्रद्धा
करतो नयी ॥ १७ ॥

ते गग पाठकल्ल वृत्तान नीचे मुजव डे:- द्वाट देशमा भृगुपुर नामना नगरमा एक गग नामनो पाठक
हते, ते गगा शिष्येने जणवीने तथा, तेयी धन उपार्जन करीने बृहत्पणामा परण्यो ॥ १८ ॥

तद्गार्या तरुणी, सा नर्मदाऽपरतटवासिनि कस्मिंश्चिद्युंसि रता प्रत्यह निशिघटेन नर्मदामुत्तीर्थं याति ॥ ३९ ॥

नर्तुश्चित्त रङ्गती मायाविनी दिवा काकेभ्यो विजेमीतिवक्ति ॥ ३० ॥

ततो वद्वि कुर्वन्त्यास्तस्या रङ्गायै गत्रान् रङ्गपालान् दत्ते ॥ ३१ ॥

पाठकेनाऽमुकमाह्वयेत्युक्ता च वक्ति, नाऽहमनुव्येण सम वस्तु वेद्वि, तत स स्वयमेवाह्वयति ॥ ३२ ॥

तत्रैकेन त्रोग्नेणाऽचिति, नखद्वेवतदार्जवद्वङ्गाण, यत ॥ ३३ ॥

तेनी स्त्री लुषान हती, अने ते नर्मदाने सांभे क्लिारे वसता एवा मोडक पुरपर आसक्त हती, तेथी हमेशा रात्रिण घराने आधारे नर्मन नदी उत्तरीने जती हती ॥ ३९ ॥

पोलाना चर्तारुतु मन राग्वती थकी ते कपटी स्त्री तेने एम कहेती हती के, न्तिसे एण हु कागना-ओथी करु हु ॥ ३० ॥

अने तेथी यद्विगल रूती वेडाए तेणीनी रङ्गा पाठे ते पाठक निशात्रीआत्रोने चोकी पाठे राखतो हतो ॥ ३१ ॥

थळी ते पाठक ज्यारे तेणीने कहे के, तु अमुक माणसने चोड्याय, त्यारे ते म्हंती के, मने मनुज साये चोनावानु आवस्तु नथी, पछी ते पाठक पोतेज तेने चोनावतो ॥ ३२ ॥

पडी त्या एक निशाळीण विचार्यु के, आ कइ तेणीनी सखतानु दड्डण नथी, केमके ॥ ३३ ॥

अत्याचारमनाचार—मर्याजर्वमनार्जव ॥ अतिशौचमशौच च । पइविधं कूटल-
क्षणम् ॥ ३४ ॥

ततस्तस्याश्चराचरं विद्वोकयता रात्रौ दृष्टा सा नर्मदामुत्तरती, कुतीर्थेनोत्तरतश्चो-
रान् मकरेण शहीतान्, किं कुतीर्थेनोत्तरत, सप्रत्यपि मकरस्याङ्गिणी पिधत्तेति ज्ञाणती
च ॥ ३५ ॥

चितितं च अहो स्त्रिया साहसं अन्यदा बह्विधिधानाऽनसरे काकरङ्गार्थमाग-
तेन प्रत्यभिज्ञाता, उक्तं च ॥ ३६ ॥

अति आचार, अनाचार, अति अर्जवपणुं, अनर्जवपणु, अति पवित्रपणु अने अपवित्रपणुं, अने उ
मकरे कपट्यु बह्णु छे ॥ ३४ ॥

पछी ते निशाळीओ तेणीनी हिद्वचाइ तपासवा द्वाग्यो, तो रात्रिए नर्पदा उत्तरती तेणीनि तेणे
मोद, तेमज खराब आरोधी उत्तरता चोरने मगरपच्छे फकनवायी तेओने कहेवा द्वागी के, ते खराब आरोधी
केम उतगो छे ? हजु पण मगरमच्छनी आवेते दक्की राखो ? ॥ ३५ ॥

ते सवकु जोझे ते निशाळीए विचार्यु के, अहो ! ह्रीडु साहस केंडु छे ? पछी एक बखते बक्षिदान
करती वेळए कागनाओतु रक्षण करावा माटे तेज निशाळीओ आव्यो, अने तेणीनि चेताववा माटे तेणे
क्युं के ॥ ३६ ॥

द्वित्र्या कागाण वीहसि । रत्ति तरसि नम्मय ॥ कुत्तियाणि य जाणासि । अ-
धीण ढक्काणिअ ॥ ३७ ॥

नया शक्तियोचंद्दश एव झोकस्वजात्रो मुष्टि कुर्विति मुक्कमत पर नर्मडातरण-
मिति ॥ ३८ ॥

नतश्चञ्चलतया तेनेव अत्रेण सम जातोऽस्या सवध ॥ ३९ ॥

अन्यदा निर्गद्वताये देशातरगमनाय त अत्र प्रतिपाद्य ग्रामातरे गते जर्त्तरि यद्दे
मृतकञ्चवरमानीयाऽग्निना सस्कृत्य च निशि तेन सम प्रस्थिता ॥ ४० ॥

द्विसे तो तु गगनबाधो रोहे अे, अने रात्रिण नर्मदा तरे अे, तेमज खसय आरात्रोने पण जाणे
अे, नया (मगली) आखोना यत्तने पण जाणे अे ॥ ३७ ॥

(ते स्रजळी) तेणीने शका थवायी तेणीण कहु के, एवज दुनियानो स्वजाव होय के, ए चान तु
मुट्टीया गब? आजयी म नम्या तरानु ओरुयु ॥ ३८ ॥

पढी चचनपणामे रुग्निने तेज निशाळीआनी साये तेणीनो सपथ थयो ॥ ३९ ॥

पढी एक दाहामे बुटापणा माटे तेणीण देशातर जवा माटे ते निशाळीआने सपजब्यो, तथा ज्यारे
तेणीने जर्तार कोइ वीजे गाम गयो हतो यारे रग्मा एक मरण पामेना महुपयु मुहुट्टु दावीने तथा तेना
था अग्निस्कार रुग्निने, रात्रिण ते निशाळीआनी साये ते परदेश चाहती थड ॥ ४० ॥

श्रातरागत पतिर्दृष्ट तस्वरूप, हामृता प्रियेति भृशं मेव कृत्वोर्ध्वदेहिककार्याणि
विधाय तदस्थीनि गृहीत्वा गगा प्रति प्रस्थित ॥ ४१ ॥

यमुनातटे शत, दृष्टश्च तत्र तिष्ठत्या पाणमास्यते तेन अत्रेण सम विरक्तीचूतया
तैवेव नार्पया स ॥ ४२ ॥

जानानुतापया च तथा प्रकाशित तस्यात्मस्वरूप यायातथ्येन ॥ ४३ ॥

पात्रक ग्राह, अनुहरसे ता, कित्वेतानि तदस्थीनि, विविधाचिज्ञानरुचनेऽपि ए
तानि तदस्थीनीत्येव वदन् न प्रतिपाद्यते ॥ ४४ ॥

प्रजाते तेषीनो स्वामी आब्यो, अने ते स्वरूप' ज्यो, त्यो अरे' मारी प्रिया मृग्यु पामी. प्प गणो मेद क-
रीने तथा पत्नी तेषीनां प्रत कार्यों करीने, तेषीना हानका वेडने गंगा मत्ये जवा प्रयाण क्यु ॥ ४५ ॥

अनुक्रमे यमुना नदीने काडे ते पहुँच्यो, अने त्यां तेज निशालीअ्यानी सांयं उ मास याद रिक्त यडने ग्हेवी
तेज वीए तेने जीयो ॥ ४६ ॥

पयात्तप यययी तेषीए तेने पांतानु मरेखर सग्य प्रकाशित क्यु ॥ ४७ ॥

त्यारे पाउके क्यु के, तेषीना जेरी तु दागे डे, परतु तेषीना तो आ हानका रया, पत्नी तेषीए यणा प्या-
णो क्यो, अनां पण ' आ तेषीना हानका रया' एमज क्हेतो थको तेषीनी वात ते न म्बीकागवा बाग्यो ॥ ४८ ॥

ततो दर्शितस्तया स डात्र. दृष्टेऽपि तस्मिन्नाह, एष तादृश प्रतिजाति, परमे-
तानि तदस्योनि ॥ ४९ ॥

तत सा खिन्ना तमऽत्यजत् इति, एवंविधस्य मूढस्य सुगुरुपदेशोऽपि न कस्मैचि-
त्फलाय ॥ ४६ ॥ तदुक्त—उदितौ चद्रादित्यौ । प्रज्वलिता दीपकोटिरमद्भापि ॥ नो-
पकरोति यथाधि । तयोपदेशस्तमोधाना ॥ ४७ ॥

पूर्वं व्युद्ग्रामहितस्तु वस्त्वस्तु परीक्षाज्ञोऽपि तादृग्व्युद्ग्रामावशाच्चिपरीत्याच्चि
निविष्टबुद्धि गोपालकवत्, तथाहि ॥ ४८ ॥

पत्नी तेषीए ते निशालीअने देवाड्यो, तेने जोया उता एण ते कहेया हाण्यो के, ते तेना जेवो देवाय
डे, एतु आ रयां तेषीना हाणका ॥ ४९ ॥

पत्नी तेषीए स्वेऽपमिने तेने तनी दीश्रो, एवी रीतना मूढने सुगुरुलो उपदेश एण कऽफऽन्यक धतो
नधी ॥ ४६ ॥

कथु छे के—चद्र अने सूर्य उग्या हाय तेम निर्मल एवा क्रोभो दीवा प्रगट कर्या होय, एतु ते जेम अथ
मनुष्यने उपकार करता नथी, तेम मोहाध मनुष्यने उपदेश एण उपकार करतो नथी ॥ ४७ ॥

प्रथमधीज जमात्रेवो माणस, जके ते वस्तु अथवा अवस्तुनी परीक्षा करवामा समर्थ होय, तोपण
तेवी रीतना जमात्रेवथी गोवाऱनी पेंडे विपरीत वडाग्रहयुक्त बुद्धिवालो थाय डे, ते कहे डे ॥ ४८ ॥

राजपुरे गोचारणोपलक्षितधन एको गोपाल, तन्मित्र स्वर्णकार स च ज्ञा-
पित स्वयन्तोपार्जन गोपालेन ॥ ४९ ॥

अवोचच्च स्वर्ण कारयेति, गोपाल प्राह, त्वमेव कुरु स्वर्णकारस्त्वाह नाह
करिव्ये, अन्येन कारय ॥ ५० ॥

त्वमेन कुरु, कि बहुनेत्यादित्वादिन गोपाल पुनराह नाकिधम वयस्य प्रीति-
रावधोश्चिरार्जिता, प्रीतिद्वेष्टकारकश्च शोक ॥ ५१ ॥

यत.—परवसणहृरिसिद्धमणा । मुहमहुरा पिष्ठ्यो नसणसीद्विा ॥ वहवे उत्रहा-
सगरा । कडिकादो दुजणसहावा ॥ ५२ ॥

एतत्तु चोपदेशोऽस्मात्तु गणेश्वरानि परतु तद्वेत्ते अथ जेणे णो एक गोपालीओ इतो, तेनो
इति ॥ ५३ ॥

इति ॥ ५४ ॥

याप दे, पडी नेण

रहु महनारी आपनि कनु के,

महद् ज्ञेयस्य कारणमर्थ, यत—यद्भिच्छिद्रुवा प्रीति । तत्र श्रीणि निवार-
येत् ॥ विवादमर्थसवध । परोक्षे वारदर्शन ॥ ५३ ॥

इति वचनात्, तन्मे तच्छिष्ये सावादी एतामपि ज्ञावप्रीतिमवेद्वि अन्येन कारय,
नत्ररमह परीक्षयिग्यामीति ॥ ५४ ॥

गोपात्र—नेत्र जयेत, विमह रचित्र न वेद्वि, स्वर्णकार—वेस्मि त्व कित्तु
विपसो शोक इति ॥ ५५ ॥

यत्री प्रीति तुष्टयतु माहाड सण पसा डे, वंपरुं जो गानी प्रीतनी इच्छ करी होय, तो
त्या निवार, अन समी वान्नेयक, तथा परोक्षे . (तेनी) स्त्रीनि मळवानु, ण त्रण वास्तो सवी नहीं ॥ ५३ ॥

एतु नतिवचन उ मात् आ मयं यान्ने तारे मने न रहेतु, आष्टवी पण तु ज्ञाप प्रीति ज्ञाणने,
तथी तु ने वीजा सोनार पासे सगर? यत्री जा, हु तेनी परीक्षा स्त्री आपीडा ॥ ५४ ॥

त्यारे गावालीण रतुने. एम न थाय, शु हु तारु मन ज्ञाणतो नवी? सोनारे कतु के, तु तो ज्ञाणे
डे, परतु दुनिया पुरी डे ॥ ५५ ॥

गोपाद्म — किमस्माकं लोकेन स्वर्णकार — तथापि लोकास्वप्नात् दर्शयामि ते, ततः स्वर्णकृता बुद्ध्यमेवाऽकारि कटक्युग्म, सौवर्णमेक रीरीमय चान्यत् ॥ ५६ ॥
 अर्पित सौवर्णं, जणितश्च गोप, दर्शयित्छटे, कययेश्चासुकस्य स्वर्णकारस्येदं की-
 दृश किञ्च वञ्चते इति ॥ ५७ ॥

ततोऽनेन तथा कृते कथितं त्रिणिर्निरिदं हेम, इयञ्च वञ्चत इति, ज्ञापित च
 स्वर्णकृत, द्वितीयदिने च द्रव्यज्ञेनेण रीरीमयमर्षयित्वाऽच्यधाधि, अद्येतन्ममेत्युभवा
 दर्शय ॥ ५८ ॥

त्यारे यत्नी गोवालीए कहु के, मारे दुनियानु शु काम डे? सोनारे रुहु के, तोपण हुत्ते दुनियानो
 मज्जव देवाहु, पडी ते सोनारे एरु सोनानु अने वीशु पीतल्लनु एम ते सरया रुवा म्नाव्या ॥ ५६ ॥
 पडी तेमायी सोनानु रुहु गोवालीअने आपीने कहु के आ तोरे (वेपारीनी) दुकाणे देयान्हु,
 (अने माए नाम आप्या विना) कहेहु के, आ अमुक सोनारानु मनपेनु डे, ते कहु डे? तथा तेनी शु किमत
 थाय डे? ॥ ५७ ॥

पडी तेणे तेम रुग्नायी वेपारीअए रुहु के आ कहु सोनानु डे, तथा तेनी आइडी किमत
 थाय डे, पडी तेणे ते वत सोनारणे जणायी; पडी पीजे डिमसे ते सोनारे हाथचाझाकीषी तेने पीतल्लनु
 कहु उदचयी आपीने रुहु के, आज हवे आ माए मनवेनु डे, एम कहिने तु देवान्जे? ॥ ५८ ॥

तत समुद्यस्तत्परावर्त्तमविदन्नदृश्यच्छणिज, उचुश्चामी रीरीमयमिद, न कि चिद्व्रजने इति ॥ एए ॥

ज्ञापित स्वर्णकृत् उंचे च दृष्टो द्वाकस्वजाव., गोपाद्व — स्वमेव स्वर्ण कूर्पिनि ॥ ६० ॥
ततस्तच्छन सर्वं गृहीत्वा रीरीकटक कृत्वा तस्यार्पित, तडुक—पासा वेसा अग्नि जज्ञ । उग उरुर सेनार ॥ ए दस न हुइ अर्पणा । मरुत बहुअ विज्ञान ॥ ६१ ॥
अन्यदा परिद्वित तद्गोपेन दृष्ट केनापि, नणितश्च रे मित्रेण ते रीरीमय कटक कृत, अहो सुपितोऽसि, अन्यैरपि तयोक्ते प्रतिवक्ति ॥ ६२ ॥

पती ते त्रिचगै सुग गोवालीओ ते रुतला केरुफाने नहीं जालनि वेपगीओनि देवाकरा नागो, त्यां वेपरीओण क्यु के, आतो पीतन्तु ते, आता क० एण पैसा पठे तेम नयी ॥ एए

पती ते मल गोवालीए ते मोलसे जणारवायी, तेणे क्यु के, जेयो तं दुनियानो स्यजत ? पती गोवालीण क्यु के, हेरे तो तुज भुवर्णनो गणनि मने क्ली आप ? ॥ ६० ॥

पती ते मोनारे तेनु मयटु धन देउने पीतन्तु कहु करीनि तेने आप्पु, क्यु डे के—पासा, पैया अग्नि, जन, उग, उरुर, सेनार, गल्पो, मरुत अने पिनामो, ए दशे आपणा न होय ॥ ६१ ॥

एक दहामो गोवालीण ते कहु पहेंयु, अने तेइए ते जोवायी तेने क्यु के, अरे ! तग मित्रे तो आ पीतन्तु कहु म्नाय्यु ते, अहो ! तु उगयो बु, पीनाओए एण तेम कहेवायी तेओने गोवालीओ कहेया वायो के ॥ ६२ ॥

वेदस्यैहं यादृगेतत्, किं व. परित्तसिकरणेन, ते कपायितेकक, रे निरूपय, मात्मान
वचयस्व ॥ ६३ ॥

गोप — निरूपित मया, यूयमात्मान निरूपयतेत्यादि, एष पूर्व व्युद्गमाहितो यु-
क्तमथुक्त न विवेक, एव य कुञ्चुतिव्युद्गमाहित सोऽपीति निदर्शितो व्युद्गमाहित ॥ ६३ ॥
एते चत्वार उपदेशस्याऽनर्हा इति, अहंवा इत्येवमिति, अयवाऽतिशयेन चत्वा-
रोऽपि बुध्यते ॥ ६५ ॥

जेषु ते डे, तेषु डु आणु डु, तेषां रीजा मोक्षनी अडेमाऽऽशामडे कर्षी ओक्षे ? त्पारे नेत्राण-
युस्ते धर्षेन क्ली कणु के अरे ! तु जे तो खरो, तु पोते न उगा ? ॥ ६३ ॥

गोवाळीण कणु के, में तो जेषु डे, तपो तमार सनाळोनी, इत्यादि, एवी रीते पेहेडेचीज
जमायेनी ते गेवाळ कहेवा एवा योग्य रचनेने पण जाणी शक्यो नईं, तेष जे कुशाखयी जमोडो होय,
ते पण युक्ते जाणी शकतो नयी, एवी रीते पेहेडेची जमावेना मनुष्यतु उदाहरण कणु ॥ ६४ ॥

एवी रीते उपर वसुवेना ते चारे जातना मनुष्यो उपदेशने क्षापक नयी, अथवा अतिशयोक्ते करीने
ते चारे प्रकारना मनुष्यो पण योग्य एवी शकते डे ॥ ६५ ॥

तत्राऽतिशय आधिक्य जातिस्मरणराज्यादिसद्यस्फुल्लप्रसिद्धीनिविद्याचमत्कारादि सुरादिभिः सकटपातनादि च ॥ ६६ ॥

तत्र रक्तस्याप्यतिशयात्प्रतिबोधे निदर्शनमुदायननृपः, तथाहि—रीतजयपत्तने पृथ्वीपतिक्रुदायनस्तापसधर्मरक्त ॥ ६७ ॥

तत्राऽन्यदाऽगमत् पोतवणिगेक, प्राभृतयञ्च पृथ्वीपतये गोश्रीर्षचदनदफ, व्यङ्ग्ययञ्चेह देवाधिदेवस्य प्रतिमा कर्तव्येति कथयित्वा देवेन ममैतत्समर्पितमिति ॥ ६८ ॥

त्या अतिशय एतन्ने अधिकरण, अने ते जातिस्मरणज्ञान अथवा राज्यआदिकृती प्राप्तिरूप धर्मना तुल्यफलनी प्राप्तिरु नेत्वा, रिधा चमत्कार आनिक, तथा देवता आदिकोर्धी तु खया पान्ना आनिकरूप जाणवु ॥ ६६ ॥

त्या रक्तने पण अतिशयधी प्रतिबोध थामा उदायन राजानु दृष्टत जाणवु ते नीचे सुजव डे—वीतजय नामना नगमा उदायन नामे राजा हतो, अने ते तापमोना मर्मा आसमत हतो ॥ ६७ ॥

एक दहानो ते नगमा एक बहाणवडी व्यापारी आव्यो, अने तेणे राजाने एक गोश्रीर्षचदननु द्याकणु जेट करु, अने विनति करिके मने आ काण देवताण एम रुहाने आणु डे के, आमाधी देवाधिदेवनी मारत बनासवी ॥ ६८ ॥

राज्ञापि पुरे चातुर्विधान् मेदयित्वा श्रावयित्वा च त्रिणिगुप्तमादिष्टा वनकुट्टका,
इह देवाधिदेवप्रतिमा कुर्वतेति ॥ ६ए ॥
कृतेऽधिवासने त्रणित ब्राह्मणैर्देवाधिदेवो ब्रह्मा, तस्य प्रतिमा कुरुत, बाहित कु-
त्राणं न तु वहति ॥ ७० ॥

अन्येरजाणि, विष्णुर्देवाधिदेव, तथापि नवहति, एव स्कन्दरुद्रादिदेवजाणनादि ॥ ७१ ॥
इतश्च सिद्धं जोजनपाके प्रजावतीराडया प्रहिता दासी नृपस्याकारणाय, सा तु सुखिता-
स्ति अस्माक पुनरीदृशः। समयो वर्त्तत इत्यजाणि दास्या मुखेन राज्ञी प्रति ॥ ७२ ॥

राजाए पण नगरमाथी चारे विद्यात्रोमा परगामी पन्ताने एकडा करीने तथा तेत्रोने तथा व्यापारीतु कहेतु
सतळ्याचीं कडीआरात्रोने हुकूम कर्या के, आमथी देवाधिदेवनी मृत्ति वनावो ? ॥ ६ए ॥

पडी शुज महूर्त्तआदिकनी क्रिया कर्या याद ब्राह्मणोए कटु के, देवाधिदेव तो ब्रह्मा डे, पाटे लेनी
प्रतिमा करो त्यारे तेपर कुहानो लगाव्यो परंतु कुहाने चाट्यो नही ॥ ७० ॥

त्यारे बीजात्रोए कटु के देवाधिदेवतो विष्णु डे, परंतु कुहानो चाट्यो नही, एवी रीति कार्तिरूप,
महादेव इत्यादि देवोना नामो दीथा ॥ ७१ ॥

पट्टनामा स्मोइ तैयार थवाथी प्रजावती राणीए राजाने वंज्ञावरा पांटे दासीने मोकनी त्यारे राजाण
दासीने महोनेथी राणीने कहेवगव्यु के, ते गणी तो अत्र्यारे सुबी थड वेडी डे. अत्रे अमारे तो आलो
समय वर्त्ते डे ॥ ७२ ॥

निवेदित तथा राइये, तत प्रजावत्यवक् अहो मिथ्यात्वमोहिता देवाधिदेवमपि न
शृण्वति तत सा नृपानुज्ञया स्नाता कृतकौतुकमगदा शुक्रवस्त्रपरिधाना वद्विपुष्पधूप
कतुच्छुकहस्ता सदस्यागत्याह ॥ ७३ ॥

देवाधिदेवो वर्धमानस्तस्य प्रतिमा क्रियतास्थिरुमते वाहित कुटारः, एकघात एव छि-
धाचूहात दृष्टा च पूर्वनिर्मिता सर्वादिकारचूषिता जगवतो वर्धमानजिनस्य प्रति-
मा ॥ ७४ ॥

स्थापिता च राज्ञा गृह्णासन्ने नव्यकृते चेत्ये, अष्टमीचतुर्दशयो प्रजावती जन्मत्या स्व
यं नृत्य करोति राजापि तदनुवृत्त्या मुरज वादयति ॥ ७५ ॥

पत्नी ते दासीए ते यत राणीने जणावी, त्योर प्रजावतीए ग्नु के, अहो' मिथ्याश्री ग्नु इणवा द्योमो
देवाधिदेवे एण सात्तलता नथी, पत्नी ते राजानी आज्ञाथी रानन ररीने तथा कौतुकमगद रमीने. तथा श्वेत इवो
पेट्टीने यळि, पुप तथा ऋ थाणु हाथमा लेइने सत्तामा आवी रहेवा द्यागी के ॥ ७३ ॥

देवाधिदेवतो र्धमानप्रद दे, गोदेतेनी प्रतिमा रगो? एम रहेता बुहानो चनाथो, तो एरु वाएज ते काष्टना
ये डुरुना थया, अने तेमा पूर्वथीज र्धनेनी तथा सर्ध आरूणोथी शोचिती थयेनी जगयान श्री वर्धमान प्रजुनी
प्रतिमा जोयामा आवी ॥ ७४ ॥

पत्नी राजाण ते प्रतिमा पोताना परनी नजनीक नग कर्वा मद्रिमा स्थापन करी, पत्नी आउम
चौत्से प्रजावती गणी जक्षिथी पोले नाच करे दे, तथा राजा एण तेने अनुसरतो मृदग रजाये दे ॥ ७५ ॥

अथवा नृपेण नृहंल्या राडया शिरडवाया न दृषा, उरपात इति कृत्वा व्यप्राचिताऽ-
चून्नुप स्पञ्चितश्च मुरजध्वनिः ॥ ७६ ॥

अथा देवी. ततो राजाह, मामप उरपातो दृष्टस्ततः स्वञ्चितोऽस्मि उक्त प्रजाव-
त्या, जितमतस्पदौर्न जेतव्य मरणात् ॥ ७७ ॥

अथवा पुन रताता प्रजावती देवपूजार्थं शुद्धवस्त्रे अनाययत् ॥ ७८ ॥

एक दहानो राजाए नाचनी एवी राणीनी मस्तकती अया न दीडी, नेवी कःक इत्यात डे,
एम विचारी राजा ध्याहुठ चित्तमलो पयो. अने तेवी मृदगना नाडया स्ववना थड ॥ ७६ ॥

वती ते वागण्यी राणी स्पृमान थद, त्यारं राजाए कथु के, तु सोप नहीं का ? में इत्यात जौयो,
अने तेवी मने स्ववना थड डे, त्यारे प्रजावतीए कथु के, जैनमतेने माननागओए मृदुथी म्नु न
जोडण ॥ ७७ ॥

वती एक दहानो प्रजावती राणीए स्नान स्मिने देवप्रभा मोटे ने शुद्ध वस्त्रो मगान्या ॥ ७८ ॥

आनीयमाने च ते अतरा कौसुंजरागरक्ते इव सञ्चते, राड्या दर्पणे पश्यंत्या उप-
नीते च रुद्रा च सा, देवायतन प्रविशत्या किममंगल मे करिष्यसि, किवासयंहंप्रवेशि-
न्यहमिति जणित्वा च आनेत्री दर्पणेनाजघान ॥ ७ए ॥

प्राणैरमुच्यत सा, ततोऽचितयडाङ्गी, चिरानुपाक्षित जन ममाद्य प्रथमं व्रत,
एषोऽपि मसोत्पात, ततो नृप व्यजिज्ञपत्, युष्मदनुज्ञाताऽह प्रव्रजामीति ॥ ७० ॥
नृप स्माह यद्विमा सख्यं वैधयिष्यसीति तनस्तथा प्रतिपद्ये नृपेणाऽनुमता सा-
प्रव्रजतीति ॥ ७१ ॥

ते वक्रो बह आकते इत मार्गमा जाणे कमुची रागला घऽ गया अने आरीसामा जोती एवी
राणीनी पासे (ते मल) बारी स्याप्या तेवी ते क्रोयायमान घऽने ते वक्रो वाचनार दासी प्रत्ये कहेवा ज्ञानी
के, देवमद्विषमा प्रवेश करती एवी मने शु तु अमगव करावा माटे इच्छेत्? शु आ समये हुं वासञ्चुवनमा प्रवेश
करायानी हु? एष रुहनि ते वाचनार दासीनि आरीसो मार्या ॥ ७ए ॥

अने तेवी ते नसीना प्राण गया, त्यारे राणी विचारवा ज्ञानी के, गणा कालथी पाळेतु पेहेदु
नत में आने नाग्यु माटे आ एण मागर उत्पात घयो, तेवी ते राजने विहिसि करावा ज्ञानी के, जो
आप मने अनुज्ञा आपो तो हु दीक्षा बेटे ॥ ७० ॥

त्यारे राजाण ऋगु के, जो तु मने उत्तम धर्मने योग आपवानु कमुव करे, तो हु रजा आयु,
पुत्री तेणीण पण नेम करयानु स्त्रीकरणवाची राजाण अनुमति आपवाची दीक्षा लीधी ॥ ७१ ॥

पमाण्सी समयमाराध्य वैमानिकेवगमत, ततो नानारूपैर्नृप बोधयामास, पर तापसन्नको राजा न प्रतिबुध्यते, ततोऽचिंतयद्देव ॥ ८२ ॥

तापसेषु रक्तोऽय तेपा गुणानेव पश्यति, यतः—रत्ता पिच्छनि गुणे । दोसे पिच्छति जे विरजति ॥ मञ्जस्त्यच्चि अयुरिसा । दोसे अ गुणे अ पिच्छंति ॥ ८३ ॥

तत कयमपि तापसेषु विरक्ती करोमि, यथा तेपु विरक्तो जिनधर्म सम्यगवबुध्यते, ततस्तापसत्रेप पुष्पफद्महस्त प्रप्तो नृपसमीप ॥ ८४ ॥

ॐ मास पर्यंत समय पाळीने ते वैमानिक देवबोक्कमा गद्द, पळी ते देवस्ये थयेंतो राणीनि जीव नाना प्रकार्ना ह्येा वने करीने राजाने प्रतिबोधता झाय्यो, परंतु तापसोनो जक्त एवों ते राजा प्रतिबोध पाय्यो नहों, त्यांरे ते देव विचार्युं के ॥ ८२ ॥

तापसोमा रक्त एवो आ राजा तेओना गुणोनिज जुए डे, केमके रक्त माणसो गुणोने जुणडे, तथा विरत माणसो ओपोने जुए डे, अने म यस्य मनुष्यो तो ओपोने अने गुणोने रक्तेने जुए डे ॥ ८३ ॥

मष्टे कोइ पण रीते हु तेने तापसोमा विरत करू, के जंयी तेओमा विरत थड्ने जंतर्धने ते सारी रीते जाणी शके, पळी ते देव तापसोनो नेप देख्ने, तथा हाथमा पुष्प अने फळ देख्ने राजा पासे आव्यो ॥ ८४ ॥

फलमेक राजेऽर्पितमतीवमनोहर, राजा घ्रात सुरचितरमिति, आलोक्ति सुर-
पमिति, आस्वाडित अमृतरसोपममिति, पृष्टस्तापस वैवेतादृशि फलानि सन्नवति ॥ ८५ ॥
तापस—इतो नातिदूरसन्ने तापसाश्रमे, नृप—दर्शय मे त तापसाश्रम, ताश्चत-
रुन, तापस—एद्येकाकी ॥ ८६ ॥

ततो राजा मुकुटाद्यद्वकृतश्चक्षितः, तापसेन सह दृष्ट तादृगुवन, तापसाश्र-
माश्च ॥ ८७ ॥

शृणोति च तत्र मिथो मन्त्रयतस्तापसान्, यथैप राजैकाकी सर्वाद्विकार, तदेन-
हत्वा शृङ्गीमोऽस्याऽचरणानीति ॥ ८८ ॥

पडी तैणे राजने एक अत्यन्त मनोहर फल आयु, राजाए ते मुन्यु, तो अत्यन्त युगधी द्वायु-
जोयु तो उत्तम रपवाळु द्वायु, चाग्यु तो अमृत सरखा रसवाळु द्वायु, पडी तापसने प्रज्यु के आवा फजो
यया उत्पन्न थाय डे ? ॥ ८५ ॥

तापसे श्यु के, अर्हायी नजडीकज तापसोना आश्रममा थाय डे, त्यां गजाए श्यु के, मने ते
तापस आश्रम तथा ते वृक्षो देखाव ? तापसे क्यु के, तु एकनो आव ? ॥ ८६ ॥

पडी राजा मुकुट आदिकधी शोनायमान यडेन तापसनी साये चाड्यो, तो तैवुज वन ज्ञान तापस-
आश्रमो जेया ॥ ८७ ॥

पडी त्या तापसोने परस्पर एवी बालो करता साजग्या के, आ राजा सर्व अनकारोधी जृषित थयेजो
एरबो डे, माडे तेने दृणीने तेना आचूषणो आपणें वेड देइए ॥ ८८ ॥

नीतो नृप पश्चाच्छ्रितः; तावत् कोकूयित तापसेन, धावन धावत पञ्चायित एष
ग्राह्य, धावितास्तापसा. हत हतेति जणत ॥ ७ए ॥

नश्यश्च नृयोऽपश्यदेकं महच्छनं श्रृणोति च तत्र मानुपाज्ञापं, शरणमत्रेति मत्वाऽ-
म्रत प्रेङ्गाचक्रे चंचमिव सोम, कदर्पमिव सुरूपं, नागकुमारमिव सुनेपथ्यं, बृहस्पतिमिव
सर्वशास्त्रविशारद, बहुना श्रमणादीना मध्यगत धर्ममाख्यांत गुरुं ॥ ८ए ॥

शरण शरण इति जणश्च गतस्तत्र, गुरुणा जणित च न जेतव्यमिति नृष्टितो-
ऽसीति जणित्वा प्रत्युगुस्तापसा, राजापि तेषु विपरिणत ईषदाश्वस्तोऽच्यूत् ॥ ९ए ॥

राजा ररीने पाछे मळ्यो, एड्यामा तापसे पोकाग क्यो के, दोने ? दोने ? आ नाशी जाय डे,
माटे नेने पकरुचो जोइए, पडी ते तापसो मारो ? मारो ? एम चोत्रता दोनत्रा द्याग्या ॥ ७ए ॥

पडी राजाए नासता थका एक महोड चन जोयु, अने त्या मळ्यनो शण्ड साजळ्यो, अर्हो मने
शरण मळ्यो, एम जाणीने ज्या आगळ जुए डे, त्या चड सरखा शात, कामदेव सरखा उत्तम रपवाळा, नाग
कुमार सरखा उत्तम वेपवाळा, बृहस्पतिनी पेडे सर्व शास्त्रेना जाण तथा यणा मुनि आदिकोनी वच्चे वेसीने
भ्रमापदेश देता एया गुरुमहाराजने तेणे जोया ॥ ८ए ॥

पडी शरण ! शरण ! एम कहंतो थको ते राजा त्या गयो, त्पारे गुए क्यु क तमारे मरुं
नहीं, हंवे तु बुड्यो, एम कही तापसो एण पाडा गया, राजा एण ते तापसो प्रत्ये निरक्त थंने जरा शात
थयो ॥ ९ए ॥

फलमेक राजेऽर्पितमतीवमनोहर, राज्ञा घात सुरञ्जितरमिति, आद्योक्ति सुर-
पमिति, आस्वादित अमृतस्लोपममिति, पृष्टस्तापस क्वेतादृशि फलानि सन्नवति ॥ ८५ ॥
तापस—इतो नातिदूरासन्ने तापसाश्रमे, नृप—दर्शय मे त तापसाश्रमं, ताश्चत-
रुन, तापस—एद्येकाकी ॥ ८६ ॥

ततो राजा मुकुटाद्यलकृतश्चक्षित, तापसेन सह दृष्ट तादृगुवन, तापसाश्र-
माश्च ॥ ८७ ॥

शृणोति च तत्र मिथो मन्वयतस्तापसान्, यथैष राजैककी सर्वादिकार, तदेन-
हत्वा शहीमोऽस्याऽन्नरणीति ॥ ८८ ॥

पडी तेणे राजाने एक अत्यत मनोहर फल आणु, राजाए ते सुशु, तो अत्यत युगरी वाणु,
जोडु तो उत्तम रणवाळु बाणु, चाणु तो अमृत सरवा रसवाळु बाणु, पडी तापसने प्रजयु के आवा फां
या उत्तम थाय डे ? ॥ ८५ ॥

तापसे क्यु के, अहीयी नजडीकज तापसोना आश्रमण थाय डे, त्यारे राजाए क्यु के, मने ते
तापस आश्रम तथा ते वृक्षो देखार ? तापसे क्यु के, तु एकनो आव ? ॥ ८६ ॥

पडी राजा मुकुट आदिकयी शोनायमान घडेन तापमनी साये चाड्यो, तो तेजुज वन अने तापस-
आश्रमो जेया ॥ ८७ ॥

कळी त्या तापसोने परस्पर एवी चतो करता सान्नख्या के, आ राजा मर्व अनकारोधी वृषित येयेदो
एकनो डे, मोटे तेने हणीने तेना आनृपणा आपणे देड देडण ॥ ८८ ॥

जीतो नृप पश्चाच्छ्रद्धित, तावत् कोकूयित तापसेन, धावत धावत पद्मायित एष
ब्राह्म, धावितस्तापसा. हत हतेति जणत्. ॥ ८ए ॥

नश्यश्च नृपोऽपश्यदेकं महच्छनं शृणोति च तत्र मानुषाक्षापं, शरणमत्रेति मत्वाऽ-
म्रत प्रेक्षाचक्रे चक्षमिव सोमं, कंदर्पमिव सुरूप, नागकुमारमिव सुनेपथ्य, बृहस्पतिमिव
सर्वशान्त्रविशारद, बहूना श्रमणादीना मध्यगत धर्ममाख्यात गुरुं ॥ ९ए ॥

शरण शरण इति जणश्च गतस्तत्र, गुरुणा जणित च न जेतव्यमिति छुटितो-
ऽसीति जणित्वा प्रत्युगुस्तापसा, राजापि तेषु विपरिणत ईपदाश्वस्तोऽनृत ॥ ९ए ॥

राजा रुरीने पाजे मज्यो, एदद्याम तापसे पैकार कर्यो के दोने ? दोने ? आ नाही जाय अे,
माटे तेने एकनचो जेइए, पडी ते तापसो मारो ? मारो ? एम बोवता दोरुवा द्याग्या ॥ ८ए ॥

पडी राजाए नासतां चक्रा एक महोद न्न जेओ, अने त्या मनुयलो शष्ट साजज्यो, अही मने
शरण मज्यो, एम जाणीने ज्या आगळ जुए अे, त्या चट्ट सरखा शात, कामदेव सरखा उचम रपवाळा, नाग
कुमार सरखा उचम वेपवाळा, बृहस्पतिनी पेडे सर्व शास्त्रेना जाण तथा पणा मुनि आदिकोनी बच्चे केसीने
धर्मोपदेश देता एवा गुन्महारजने तेणे जेया ॥ ९ए ॥

पडी शरण ! शरण ! एम कहेंतो चको ते राजा त्या गयो, त्यारे गुरए क्यु क तमारें मरवु
नही, हंचे तु बुट्यो, एम कही तापसो पण पाडा गया, राजा पण ते तापसो प्रत्ये विरक्त घडने जग शात
घयो ॥ ९ए ? ॥

धर्मश्च कथितस्तस्य गुरुणा, प्रतिपन्नश्च तेन, प्रजावतीदेवेन च सर्वं प्रतिसहृत,
राजात्मानं सिंहासनस्थमेव पश्यति ॥ ए३ ॥

देवेन च नन्न स्येनाऽज्ञाणि, सर्वमिदं त्वप्रतिबोधार्थं कृतं मया, धर्मं तवाऽवि-
ध्नं न्नवत्त्विति, अन्यत्राप्यापदि मां स्मरेत्सिन्धुस्त्वा स्वपदं प्रापेति ॥ ए३ ॥

इति रक्तस्याऽतिशयात् सुरेण सकटपातरूपात् धर्मप्रतिबोधे श्रीउदयननृपस-
वध. ॥ ए४ ॥

एव छिद्रस्य कमठासुरस्य श्री पार्श्वजिने कायोत्सर्गस्ये निर्गन्धजघ्नाद्युपसर्गकारिणो
धरणरूपप्रणीतताहगधिद्वेषजापनादिना ॥ ए५ ॥

पत्नी गुरुरे तं धर्मं सन्नद्यव्यो, वेणे पणं ते अग्नीकारं कर्ष्यो, पत्नी ते प्रजावती देवे आ सख्यो
सेन पाछो सहरी ब्रीधो, त्यारे राजा पोताने सिंहासनपरं उन्नो ज जाग्यो ॥ ए५ ॥

पत्नी ते देवे आकाशमा र्ह्नीने तेने कर्षुं के, आ सख्यु मे तने प्रतिबोधया पाटे कर्षुं हतु, हवे
तने धर्ममा निर्दिष्टपणु यात्रो ? बळी फरीने पण जो तन कष्ट पने तो मारु स्मरण कर्जे ? एम कह्नीने
ते देवे पोताने स्थानक ग्यो ॥ ए६ ॥

एवी रीते रक्तने पण ते देवे सक्रम्य पाद्वारुण्य प्रतिशययी र्मलो प्रतिपन्न देवाम्ना श्री उदयन राजानु
उदाहरण जाणवु ॥ ए४ ॥

एवी रीते ईषी एवो कम्ठासुर, के जेणे काउसगमा रेहवा एवा श्री पार्श्वमन्नुपर अत्यंत जज्ञवरसाववा
आदिकलो उपसर्ग करेनो हतो, तेने धर्णेद्रे कोला तवा आक्षेप तथा अय एवाम्ना आदिकमन करीने प्रतिबोध
जाणवो ॥ ए५ ॥

पापवृद्धिर्नृपस्य च युद्धवधादिरूपाः पापो देव राज्यादिसकलश्रेय. समीहितप्राप्तिरिति वादिनो धर्मक्षेपिणाः सुवृद्धिमत्रिणा कामघटदिव्यद्वकृतसर्वोपचवापहारिचामरवन्यात्रयपाणिग्रह-

णदिव्यपद्वयकश्चेतरक्तकण्णवीरकवाछयराज्यादिसद्यसुधर्मफलाप्राप्तिदर्शनेन प्रतिबोध ॥ ए६ ॥ पूर्वजन्त्रे किञ्चिद्विराधितर्धमतया धर्मे मूढस्य च मेतार्यदिः सुरैः सकटपातनादिभिः, कमदस्य चोपहासादिना, कुञ्जकारटद्विदर्शनादिग्रहवतो निधानप्राप्त्या पूर्व व्युद्ग्राहितस्य च भृगुपुरोहितपुत्रछयस्य साधुपात्राऽहाराचारदर्शनजजातिस्मरणेन प्रतिबोधश्च निदर्शनीय ॥ ए७ ॥

रत्नी पापवृद्धि राना, के जे युद्ध तथा वध आदिकरूप पापपीन राज्यआदिक सकल कन्याए तथा इच्छित प्राप्ति थाय ठे, एम कहेंनागे हुतो, तथा वर्मनां द्वेष कर्नारो हुतो, तेने मुमुद्धि मत्रिए धर्मना तुल फलनी प्राप्ति देनारुता रूप कामरु, देवताइ झाकनी, सर्व उपद्रवने हुग्नार चामर, एण कन्याओतु पाणिग्रहण, देवताइ पद्मग, सफेट तथा दान्न झावनीओ तथा मज्ज आदिकनो दान्न वतावीने प्रतिबोध आपेनो ठे ॥ ए६ ॥

पूर्व जन्मा वर्मनी कडक निराग्ना करवायी धर्षणा मुठ एवा मेतार्य आदिकनो देवाए सकटमा पाग्ना आदिकयी प्रतिभेदा ठे, कळमेने हासी आदिकपी प्रति बोधो ठे, कुञ्जानी दानने जोषना आचिग्रहवाळने निधाननी प्राप्तियी प्रतिबोधो ठे, पंहेदेयी नमोवेदा एवा भृगुपुरोहितना र्शने पुरोने साधुना पात्र, आहार तथा आचार देवानिने जातिम्मरण-उत्पन्न कर्मानि प्रतिभेदा ठे, एम जाणतु ॥ ए७ ॥

रक्तादीना दुर्बल—बोधिकतामिति विज्ञाव्य जव्यजना ॥ माध्यस्थ्य धत्त यतो ।
धर्म सुव्रजो जयश्रीद ॥ ए० ॥

माटे एवी रीति ते रक्त आट्टिकोने योग थवो दुर्बल डे. एवु जणनि हे जव्यजनो । नमो म-
ध्यस्थ्यावेने धामण कपो ? जेवी तमेने धर्म सुव्रज तथा ज्ञानदुर्बलनि देनागे थाप ॥ ए० ॥

॥ एवी रीति व्रीजो तरग समाप्त थयो ॥

इति तृतीयस्तंभः समाप्तः

अथ चतुर्थस्तरंगः

पूर्वतरंगे चत्वार उपदेजस्याऽयोग्या प्रतिपादितास्तत्र मूढस्य ज्ञेदरूपान् पुनर-
योग्यान् कतिचिदाह ॥ १ ॥ मूत्रम्—अणमद्विओपमत्तो । वह्निरकुशुवोमसो अ
कुगहन ॥ पामरसम सुअमित्त—ग्गाही धम्म न साहति ॥ २ ॥

पर्वना तरंगमा यार उपदशन अयाग्य म्या तेषा मूढता ज्ञेत्त्प कानक अयोग्येषु फरीने वर्णन रुडे
॥ १ ॥ मूत्रनो अर्थ—अनमत्थात्तात्ता, प्रमादी र्हेग कुन् जेयो, कडाग्रही, पामर सरिखो, तथा शुन
मात्र ग्रहण मरनागे एत्नी जालना मनुष्यो पण मने सात्री शक्ता नयी ॥ २ ॥

यनाश्रितद्वयं धर्मं न माधयतीत्ययोग्या उपदंशस्येति संदक ॥ ३ ॥ तत्राऽन-
 वस्थितो त्रिभिध्यासगचटुश्चित्तोऽभ्यिरामनश्च श्रेष्ठियुहिणीघ्नू, तत्राह्नि॥४॥
 श्रीपुरनगरे वसुश्रेष्ठी, पत्नी गोमती, पुत्रो धनपात्र कमाडुपरने पितरि व्यतीते शोकेऽ
 न्यदा क्यून्नि सह कउहायने गोमती ॥ ५ ॥ उक्तगजेन कि त्वेदानीं यद्वचिंतया,
 धर्मं कुरु अहं नमजाकरोऽस्मि, न चाऽनाकर्णितोऽत्र यथेते धर्म, यदु धर्म ॥६॥
 यदु गयकाग्नि. शान्धवाचक, प्रगेन्ने वाचनां, उवाचिगड् गोमती ॥ ७ ॥

अनाश्रयात्वा आदिक मयुष्यो मने मारी शरत्ता नयी, गटे नेओ उपदेशने द्वायक नयी, पणो
 मय ७ ॥ ३ ॥ त्या अनाश्रयात्वायं एदने शेतनी वीनी पेडे नाना प्रकारना व्यासगयी चपटचिंतालो तथा
 अशिर आमनाओ जाणयां, ते शेतनी वीनु उडाहरण रुडे ३ ॥ ४ ॥ श्रीपुर नामना नगरया यदु नामे
 शेट हुतो, ते गोमती नामे वी हती, अने धनपाळ नामे पुत्र हुतो, अनुक्रमे पिता मृदु पाय्ये अने
 तथा नेनो शोण पण मुराते अने, एक दहाणे गोमती वहुओ साये रतेश करया द्यायी ॥ ५ ॥
 त्यां पुजे मयुं के, हने नारे पत्नी फिर करयाली शी जरडे, तु तारे धर्म यत्न कर हु नाग हुमने
 नारे वु, रती श्राय र्ण्यापिना धर्म धारण करी शकतो नयी, मोडे तु धर्महु हवे श्रायण कर? ॥ ६ ॥ पत्नी
 शाप पांनमाने धरेन रोमाओ, अने शाप यथाया मरुदु, गोमती पण सानळया पेडी ॥ ७ ॥

नीम उवाचेति यावद्गणित तावत् प्रतोऽयामर्धप्रविष्टशुन दूरात् हामिहा-
 न्ति नृण्युत्तस्थौ ॥७॥ मृदा दौवारिकाय, किञ्चिज्जट्टिपत्वा स्वल्पवेद्यया पुनरा-
 ग्लोपविष्टा, नीम उवाचेत्यथयत् कथक ए ॥ तावद् दृष्टो महानसासन्ना
 मार्जारी, दूरात् त्रिरि त्रिरि वदत्युदस्थात्, अरुयत् सूषकारिकायै, पुनरुपाविङ्कत्
 ॥१०॥ नीम उवाचेति अत्रोच्युस्तकवाचक, अत्रातरे बुटितो वत्स, उत्थिता बुबु
 इति जट्टपती कुच्छा वत्सपादाय, न्यविङ्कत् पुन ॥१॥ नीम उवाचेति यावद्दूचे वाचक,
 तावत् काकाकाका इति कोलाहलपरा पराद्भुम्भयभूत्, अरुयत् कर्मकरीभ्यः, एव
 याचकागमनादिविपि पुन पुनरुत्थानादि एवमतिक्रात प्रहरो गत पुस्तकवाचक ॥११॥

जट्टनामा कथा वाचनार जट्टजीए कथु के 'नीम उवाच' एतन्नामा नेनीमा अरथ प्रवेश करेवा कुतराने जेज्जे
 त्रयीज ते हाम हाम कली उनी थइ ॥७॥ पडी छापळ प्रत्ये क्रोध करीने तथा कत्क वरनीने नुगज
 पाडी आवी वेडी. एतने वळी जट्टजीए कथा शिकू करी के 'नीम उवाच' ॥ ए ॥ वळीण्ठ्यामां
 गोप्तीए रसेना नजनीक नीजानीने जोः, तेयी द्रयीज डीडी कली उनी थः, तथा रसोइ करनारी
 प्रत्ये क्रोधयमान थः, अने पाळी आवीने वेडी ॥ १० ॥ त्यारे वळी जट्टजीए कथा शरु करी के 'नीम उवाच
 एतन्नामा वाग्नो बुटी गयो, ते जोः बु बु काती उडी, अने गोवाळ प्रत्ये क्रोध करीने पाडी आवी वेडी ॥ ११ ॥ व
 ली जट्टजीए कथुके 'नीम उवाच' एतन्नामा तो ते गोपती वा का का एवा कोवाहाव करती थकी पाइ सुवी थ
 इ, अने दासीअ प्रत्ये क्रोध कला लागी एवीरीते याचकना आगमन आदिक वक्तेने एण वाचनार उडी, अने एवीरी-
 ते एक पहेर नीकळी गयो तेयी पुस्तक वाचनार जट्टजी तो धेर सीथावी गया ॥ १२ ॥

प्रातः पुनरागतं, पर तदापि प्रकार स एवेति खिन्नो गत स तथा चोक्तं—
 अणवद्वि अस्स धम्म । माहु कडिजदि सुट्टु वि पिअस्स विअायं होइ सुह ।
 विजाय गिअमंतस्स ॥ १३ ॥ अह्यधिम्महि च, अप्युद्धसद्धब्धिनिधिः प्रवोधयेइ
 बहुपदेशैरपि कोऽनवस्थितं ॥ जेतुं तडिद्धहिमल्ल न पुब्बरावत्तोऽपि धाराशतल्ल
 झकोटिञ्चि ॥ १४ ॥ इति ॥ प्रमत्तो विषयकपायविकथानिच्चादिप्रमादद्वा-
 वितचेतन, स च धर्मं न बुध्यते, प्राग्जवच्चत्तुविप्रमहर्षिप्रतिबोध्यमानब्रह्मदत्तच-
 क्रयादिवत् ॥ १५ ॥

बळी प्रजाते फत्तिने जटजी पथार्या परतु ते दिवसे पण तेज हाड्ड जोया, तेथी विचारा जटजी तो थाकी थाकीने चाल्या
 गया बळी कणु छे के—प्रिय एवा पण अनवस्थित एट्ठे व्यग्र चित्तवाला मनुष्यने उत्तम एवो पण धर्म सज्जामां नही,
 केमके बुजेवा अग्निने धपवायी उबडड मोहोसु खराव थाय ठे ॥ १३ ॥ तळी अमोए पण कणु ठे के—जेनी पासे
 ल्हास्थिअनो जमार उद्धंतासमान थइ रहेडो ठे, एवो पण कोण मुनि धणा उपेसोयी पण अनवस्थित चित्तमालने
 प्रमोयी शके तेम ठे ? (अर्यात कोइ नयी) केमके पुंकारवर्च मेर पण पोतानी संकमो, डालो तथा क्रोमो गमे धाराओयी
 पण विजळीनी अग्निने उरावोने समर्थ नयी ॥ १४ ॥ इति ॥ प्रमदी एट्ठे विषय, रूपाय, विकथा तथा निद्रा
 आदिक प्रमाद युक्त चित्तमालो जाएवो, अने ते पूर्वजनना जाइ एवा चित्रपहर्षिंथी प्रतिबोधिता ब्रह्मदत्तचक्री आदिकनी
 पेडे धर्मेने जाणी शक्तो नयी ॥ १५ ॥

तदुक्त—चित्ते प्रसादनिभृते । धर्मकया स्थानमेव न अचते ॥ नीद्वीरके वाससि ।
 कुङ्कुमरागो डुराधेय ॥ १६ ॥ साहाजारत्तेऽपि, एकदा मथुराया समागत
 दुर्वासस मुनि प्राह धृतराष्ट्रनृप, मुने मस्युत्राणा दुर्योधनादीना धर्मशिक्षा दद-
 स, यथा ते पाशुपते सह न कञ्चहायते ॥ १७ ॥ मुनिराह—नेत्रागमपुराणोक्ति—
 युक्तिवास्यशैत्तरपि ॥ दश ममे न बुध्यते । वृतराष्ट्र निशम्यता ॥ १८ ॥
 मत् प्रमत्त उन्मत्त । श्रात क्रोधी बृहृङ्कित ॥ त्वरमाणश्च चीरुश्च । बृहृथ
 कामीत्वमी दश ॥ १९ ॥ इति ॥ बधिरकुटुवंनोपमायस्य स बधिरकुटुवोपम, सोऽ-
 प्युपदेशाऽनर्ह, बधिरकुटुवसवधो यथा ॥ २० ॥

कटु उ के—प्रमाथो हरेना चित्तमा र्म कयाने म्यानज मरु नयी, केमके गलीथी रोना यत्पर
 मनुमानो रा चनी शक्यो नथी ॥ १६ ॥ पट्टाहारात्तथा पण कथु डे के, एक यन्ते मपुराण आवेना दुर्वास
 मुनिने असाष्ट गजाए कथु के, हे मुनिराज ! माग आ दुर्योधन आदिक पुराणे तपो धर्म शिक्षा आपो? के जेयी
 तेयो पापयो सांघे रदेश न करे ॥ १७ ॥ मुनिए कथु के, हे भृगवाट राजा ! दश प्रकरना मनुष्यो संकनो गमे ने-
 दोना, आगमोना, पुणोना तथा युक्तिओना वाग्योयी एण प्रतिगोम धामी शक्यता नथी (ते दश प्रकारना मनुष्यो
 कया कया छे?) ते तपो साज्जलो? ॥ १८ ॥ मनेमत्त, प्रमादी, उबठ, याकेनो, जेथी, जुगयो, उतवलना मर्ष
 गळो, मीरुण, बोली तथा ममी, ए दश प्रकारना मनुष्यो प्रतिगोम पापता नथी ॥ १९ ॥ इति ॥ वेहेग कुटुमनी
 सांघे डे उपमा जेने एवो मनुष्य वेहेग कुटुमनी उपमावळो कहेनाय, अने ते पण उपदेशने वायक नथी, ते वेहेग
 कुटुमनो सपर नीचे मुजव ॥ २० ॥

पूरकग्रामे स्थविरः, स्थविरा, सुत, स्तुपा चेति वधिरकुटुबमवात्सीत्. सुतो हृदमवा-
हयत्, पश्चिकैरन्यदा पयान वृष्ट. प्रवाच ॥ ११ ॥ ममैतौ गृहजातौ वृषौ, न वृषौ
वृष्टामः कथय पयानमिति पुनस्तैरुक्तेऽवदत्, सर्वो वेति ग्रामश्चेन्न, प्रत्ययस्ताहि ग्राम
व्रजाम. ॥ १२ ॥ वधिरोऽयमिति विचित्र्य गतास्ते, तावन्नक्तमानेपीज्ञार्या, अवादीत्,
तदग्रे श्रुगितौ वृपनावधेति ॥ १३ ॥ साऽवक् सखवणमववाण वा शुभन्मात्रा राह्,ि
किमह वेन्नि, उचं स.. निराकर्षमह पथिकास्तान् ॥ १४ ॥

पूरक नामना गाणा एक नोसो, नोसी, पुत्र अने पुत्रनी बहु, ए चारं मतु योनु मेंहेर कुटुब वसतु हतु, तत्रो-
मायी पुत्र हल खेकतो हतो, एकदहानो केदद्याक संभारुओए तेने मार्ग प्रद्यो, (त्यारे ते मेंहेरो होपायी) कहे गढायो के,
॥१२॥ अरे' आतो मारे रे' जनमेवा यद्वो अरे, पश्चिओए कतु के, अयो तारा यद्वो मारे पृउता नयी, पगु प्रमोने तु मार्ग
ज्ताम ? एवी रीते तेओए फरीने कहे ते 'जे ते कहेवा वाय्यो के अरे' ते (मारा वद्वनी हकीज्ते) आखुं गाम जाणे ॐ, जो
तमोने रगतरी न थती होय तो चात्रां गाम्पा जःण ॥ १२ ॥ अरे' आ तो मेंहेरो अरे, एम विचारिने तेओ चाय्या गया,
एद्वामा तेनी ह्री * चात दावी, त्यारे तेनी आगः ने कहेवा नाग्यो के, आजने यद्वोने चिन्ह कर्यो ॐ ॥ १३ ॥
त्यारे ते पण (मेंहेरी होपायी) मंहेवा दापी के, आ चात—ओजन दुणवाट्ट के दुण पिनानु तमारी माण रा यु अरे,
एसा हु शु जाणु ? त्यारे ते कहेवा दाग्यो के, मे आजने ते पथिओनि हाकी कहाय्या अरे ॥ १४ ॥

* प्रसिद्ध शब्द चात के ओजन अरे जनगर शःट नवो बाणे ॐ

जायेंचे, मम कोऽधिकार, गृहागतोऽगदद्रूपस्वरूप स्वमातु सा कर्त्तनकर्मकृत् प्रोवाच
 श्रद्धाण वा स्थद्व वास्तु, स्थविरस्य वन्न न विव्यति ॥ १५ ॥ स्तुपाऽज्ञापिष्ट को मेऽ-
 धिकारो दावणे, श्वश्रू—गत स्थविरस्य श्रद्धाणवन्नसमयः स्तुपा—सर्वचितापरा
 श्वश्रू, नाह वैक्षि गृहव्यापारं ॥ १६ ॥ श्वश्रू—परिहितानि बहुकाज्ञ स्थविराण
 श्रद्धाणानि, त वृत्तात स्थविरं, प्रतिजगाद स्थविरा, तिवरज्ञाधिकारी सोऽप्यारयत्
 ॥ १७ ॥ नाहमेकमपि तिवमक्षि, स्थविरा—स्तुपा मधैवमज्ञायत स्थविर,—मिथ्यैवा-
 ऽदायि त्वया ममाज्ञ न रक्षिष्याम्यतस्तिद्वान् इत्यादि ॥ १८ ॥

क्षीए कथु के, (बुण माटे) मारो शु अधिकार डे? पडी धेर आरीनि तेणे पोतानी माने ते वळदोनु वृत्तात
 कथु, (ते समये) ते रु कातवानु काम करती दती, अने (ते पण वेंहेगी होवायी) कहेवा चागी के, मुतर अत्रे जीणु थाय
 के जातु थाय, मोसातु वल्ल थरो ॥ १५ ॥ पुतनी बहुए कथु के, बुण नात्वयमा मारो शु अधिकार छे? सातु बोळी,
 हवे ते मोसाने जीणा मुतरनाकपना पेंहेवानो वल्लत गयो, बहु बोळी के, सर्व कामनी सामुने फिकर होय, हु घना
 काममा काड न जाणु ॥ १६ ॥ सामुए कथु, मोसाए तो घणो वल्लत आछा कपना पेंहेयो, पडी ते वृत्तात मोसीए मोसाने
 कथु हवे ते मोसो त्वना रक्षणो उपरी हतो, तेथी ते पण कहेवा दावणो के ॥ १७ ॥ हु तो त्वनो एक
 पण दाणो खलो नथी, मोसी बोळी के, मं तो वहुने एम कथु, मोसो मोव्यो के ते मारापर
 जूतुज कलक चनायु डे, हवेथी हु त्व साचवीश नही, इत्यादि ॥ १८ ॥

एव योऽप्यश्मिन्पुष्टिद्वन्द्वदनुत्तापते स्वात्तिमायाऽनुसर्षेव स वधिरकुटुंबोपम, य-
दागम — ॥ १ए ॥ अन्न पुष्टो अन्न । जो साहइ सो गुरुण वधिरुद्र ॥ न
य सीसो जो अन्न । मुण्ड अणुनासए अन्न ॥ ३० ॥ इति ॥ कुस्सितो
ग्रह . इदमित्यमेवेत्याव्यययुक्तत्वाधिविचाराऽनुपेक्ष एकांतात्तिनिवेश . सोऽस्यास्ती-
त्यसौ कुग्रहवान् लोहग्राहकरवत्, तथाहि— ॥ ३१ ॥ चत्वारो नरा धनार्जना-
योत्तरापत्रे प्राप्ता , उपार्जितधना द्यौही . कुशी कारयित्वा ता . स्वीकृत्य च स्वदेश-
प्रति प्रस्थितवतः ॥ ३२ ॥

एवी रीते ने कः कहेवाची, सासो कः उन्मोज उचार आपे डे, ते पोताना अन्निमापने अनुसरानो रेहरा कुडन
वेवेन जाणवे-प्रागपम पण क्यु डे के ॥ १ए ॥ अने प्रडे कः, अने तेनो उचार कः अे ज्योज आपे डे, ते
गुरु नहीं, पण रेहरा जेवे तेने जाण्यो' वणी ते शिय पण नहीं, के वे अन्य आणे, अने तेनो उचार
कः अन्यज आपे ॥ ३० ॥ इति ॥ कुस्सित जे ग्रह, ते कुग्रह कहेपय, अर्थत् आ आपज डं, एवी रीते
लाज, हाजि, आपक जासक तथा युक्त अयुक्तपणा आद्रिस्ता विचगनी अपेक्षा . कर्गो विना, एकात जे
वत्राग्रह ते कुग्रह कहेपय, अने तेनो उग्रह जेने होय ते दोखरु देगा मनुयनी पेडे कुग्रहवालो कहेपय,
ते उदाहरण कहे डे ॥ ३१ ॥ चार मनुष्यो जन कपावा मोटे उचार तरक चाल्या, धन मेलरीने, तथा बोख-
रुनी कोणो कसावीने, अने ते डेडेने पोताना देश तरक चाल्या ॥ ३२ ॥

अतराटव्या निधानीकृतास्ताम्रमयी कुशीर्द्विधा गृहीतवन्तो वौहीहृज्जिह्वा, तुर्य
 पुननेत्रति, वक्ति च, एको ग्रह पुरुषाणामिति ॥ ३३ ॥ एव रौप्यसौवर्ण-
 कुशीप्राञ्चनीवेऽपरे प्राचीनपरित्यागेन विशिष्टग्रहणे बहुशो जणयमानोऽपि तुर्यो नै-
 त्त्रात्प्रकनत्याग, नाऽत्रैत्र हित चेतसीति ॥ ३४ ॥ एव बहूपदिष्टोऽपि य स्व-
 कदाग्रह न मुचसि सोऽनुपेदेऽय, यदुक्त—कुम्भग्रहगृहगृह्याण । मुढो जो देइ
 धम्मउवएस ॥ सो चाम्मासीक्खिअर—वय—णमि खवेइ क'पूर ॥ ३५ इति ॥

एतन्ने वनमा वट्टेनी यावानी काशोने जोऽने, झोखम्भनी जेम्भी ते ग्रहण करी, परतु चोथा मनुष्ये तेम
 ते मन्वानु इच्छु नहीं, अने तेथी तेणे क्तु के, पुरपोण पोतानी एरुज वात राखवी जोऽये ॥ ३३ ॥
 एनी रीति म्पानी तथा सोनानी कोशो प्रगट् हेतं जे. मीजाओण तेने पेहेवी कोश जेम्भने त्रा उत्तम
 कोश होय मोंटे एण समजाया, परतु ते चोथा मनुष्ये पेहेवा ग्रहण करेवी कोशने तजवानु इच्छु नहीं,
 अने एनी रीते तेणे पोतानु हित मनमा विचायु नहीं ॥ ३४ ॥ एनी रीति एणो उपदेश नेवाथी एण जे
 पोतानो कदाग्रह झोम्भतो नयी, ते एण उपदेशने वायक नयी, क्तु जे के—जेम्भोने कदाग्रहम्पयी ग्रहे ग्रहण
 करेवा छे, तेवा मनुष्योने जे मट् माणम म्भोपदेश अपि जे, ते चाम्तु खानार क्तगना महोनामा कप्रर नाखवा
 जेत्तु के दे ॥ ३५ ॥ इति ॥

पामरो लोकप्रसिद्ध, तस्य सम, पामरस्वरूप च कथानकाद् ज्ञेय, तच्चेद, तथा-
 हि शास्त्रग्रामे कश्चित्कौटुविकः, तस्य शरदि पत्र शालि, कर्मकर गवेपयता च
 तेन दृष्टो जिज्ञां ब्रमन् पामर एक ॥ ३६ ॥ जोजितो दधिकूरेण, जणितश्च
 यदि मे कृपित्वनादि करोपि तदा नित्यमीदृग् जोजयामि, तेनोक्त करोमि, परं
 न वेद्मि कय क्रियत इति ॥ ३७ ॥ कौटुविकेनोक्त शिड्यामि अन्येनोक्ते
 एवमस्तु, कौटुविक. प्राह यथयाह करोमि तत्त्वयापि तथैव कार्य, तेनोक्तम-
 स्त्वेव ॥ ३८ ॥ तत पामरस्य नीरघटमर्षयित्वा अगणिकां दृहीत्वा प्रवृत्त ज्ञेय
 प्रति, गत्वा च तत्र जिज्ञा कौटुविकेन अगणिका ॥ ३९ ॥

पामर (एदृशे समज विनातो) अने ते ज्ञोकोषा प्रसिद्ध अे, तेना सरखो, वळी तं पामरु सरूप रुयार्थी
 जाणवु, ते नचि मुजव अे, ते रुहे अेः—शास्त्रि नामना गाम्मा मोक्ष कुडवी रहतेो हतो, शब्द रुनुमा तेना
 (खेतसमा) कमोट पाकी, तेथी ते कोऽ चाकाने शोभवा दाग्यो, एदृशमा जिज्ञा मोटे स्वकता एरु पामरने तेणे
 जोयो ॥ ३६ ॥ तेने दहीं चात खराव्या, अने पछी तेने रुनु के, जो तु मारा खेतरनी कापणी आदिकतु राम
 करीश, तो हु तेने हमेशा आवु खरावीश, त्यारे तेणे कबु के, हु करीश, पणु रेम कबु? ते हु जाणतो
 नयी ॥ ३७ ॥ कौटुविके कबु के, हु तेने शीव्वावीश, त्यारे ते पामरे रुनु के, गहु साण, पडी कौटुविके तेने रुनु
 के, जे कऽ हु जेवी रीति करु, ते तारे पण तेवी रीति करवु, त्यारे पामरे रुनु के, गहु साण ॥ ३८ ॥ पडी
 ते पामरने पाणीनो यमो आपीने, तथा पोते अण एकतु करवानी पामरी वेडने खेतरे जवा दाग्यो,
 त्या जःने ते कौटुविके ते पामरी खेतसमा फरावी ॥ ३९ ॥

अपरेण द्विसौ घटो जग्न, सृष्ट कौटुविक, प्रतिरुष्ट परोऽपि, तान्ति कौटुविकेन,
प्रतिताडित. सोऽप्यनेन, ज्ञान युक्त, कुद्वित कौटुविक कथमपि नष्ट ॥ ४० ॥ न-
इयतश्च वृद्धादौ ज्ञान परिधानवत्त्र, अन्येनापि पृष्टत आगच्छता स्वकीयजोडयित्वा मु-
क्त, प्राप्तो ग्रामछार कौटुविक ॥ ४१ ॥ नग्नत्वात् परिधानार्थं गृहीत तेनोडकार्य
गह्वत्या पत्न्या उत्तरीयाशुक, अपरेण परिधानाशुकमपि जयविबद्ध प्रविष्टो गृहको-
णके कौटुविको, अपरोऽपि तदन्यस्मिन् ॥ ४२ ॥ यावन्मिद्वितो द्वोक्त, किमे-
तद्विति कौटुविको दर्शयति पामर, सोऽपि तमेवेत्यादि तत स कथमपि प्रज्ञापितो
लोकनेति ॥ ४३ ॥

ते जोड़ पेवा पामरे पण रमो फलाब्धो, तेथी ते ज्ञानी गयो, त्यारे कुडुनी तेनापर गुम्से थयो, त्यारे पामर पण
तेनापर सामो गुम्से थयो, कौटुविके तेने मायो, तो पामरे पण तेने सामो मायो, एरी रीते रजे वच्चे माग मारी चाथी, पडती ते
कुडुनीने मार पम्नाथी ते केमे करीने त्याथी जाग्यो ॥ ४० ॥ ग्द्व्यामा पामरे पण पोतातु धोतीयु सहीने (वृक्षपर)
(धोतीयु) वृक्ष आन्किम वग्नी रबु, ते जोर पाउळ आयना पामरे पण पोतातु धोतीयु सहीने (वृक्षपर)
युकी दीवु, पडती डेक्के ते कुडुवी गामने दरवाजे आब्यो ॥ ४१ ॥ तथा नग्न होवाथी तेणे पोतानी स्त्रीने
सामधो ग्रहण कर्या, के जे पाणी जरवा माटे त्याथी जती हती, ते जोड़ पेना पामरे तेणीने यामरो पण जोड़
बीधो, पडती ते कुडुवी जयन्तीत थडने घरना खूणामा जराड गयो, त्यारे पामर पण त्या बीजा खूणामा जड वेडो ॥ ४२ ॥
पडती एत्नामा लोको एकठा थड गया, अने पूडयावाग्या के, आने शु डे? त्यारे कुडुवी पामरने देवाम्ना वाप्या, अने
ते पामर पण कुडुनिने देवाम्ना जाग्यो, इत्यादि पडती ते पामरने बोक्कोण केन्नीक महेनेत समजाब्यो ॥ ४३ ॥

एव कर्त्तव्याकर्त्तव्याद्युपदेशेऽपि तद्विषयाद्यनञ्जिज्ञ. पामरसमोऽनुपदेश्यः तदुक्त यस्य नास्ति स्वयं प्रज्ञा । शास्त्रं तस्य करोति किं ॥ बोचनाच्या विहीनस्य । प्रदीपः किं करिव्यति ॥ ४४ ॥ इति ॥ तथा श्रुतमेव गृह्णातीति, श्रुतमात्र ग्राही, न तंत्रयुक्तिज्ञ-तापसवत्, तथाहि—स्वचिद्ग्राभे कश्चिद् छिज पापनीहस्तापसत्व प्रपेदे, श्रुतं चा-नेन कृपया धर्म इति, ग्वानोऽचूत् कोप्यन्यदा तापस ॥ ४५ ॥ उत्पन्नस्तस्य सं-निपात., वास्तिं शीत वारि, क्वापि गतेष्वन्यतापसेषु रोगिणा नव्यतापसस्य पार्श्वे शीतं वारि प्रार्थित, कृपया धर्म इति कृत्वा इत्त ॥ ४६ ॥

एवी रीति अमुक कार्य करवा योग्य ठे, अमुक कार्य करवा योग्य नयी, इत्यादिक उपदेश आण्यो होय, तोपण तेना विषय आदिकने नही जाणनारो एवा ते पामर सरवो मनुष्य उपदेशने लायक नयी, क्यु ठे के—अने पोतानेज अक्कन्न नयी, तेने शास्त्र श्रु करी शके ? केमके जे आखोयी अंध ठे, तेने दीपक श्रु करी शके ? ॥ ४४ ॥ इति ॥ वळी जे फक्त सान्नेळ्हेज ग्रहण करे, ते दुतमानग्राही म्हवेवाय, अने तेवो मनुष्य तापसनी फेजे तन्युक्ति जाणी शकतो नथी, ते तापसतु उदाहरण कहे ठे, कोइक गाममा कोइक आत्मण रहेतो हतो, ते पापयी मरतो होवायी तेणे तापसणु अगीकार कर्तुं, वळी तेणे सान्नेळ्युहतु के, दयावने करीने धर्म थाय ठे, पडी एवामा एक दहानो कोइक तापस माडो परयो ॥ ४५ ॥ अने तेने सन्नियत थयो, तेयी तेने ठंहु पाणी आप्तु वध करवाया आव्यु हतु; पडी वीजो तापस त्याधी क्याक जते ठते ते रागीए ते नवा तापस पासे ठंहु पाणी माग्यु, त्यारे ते नवा तापसे विचार्यु के, दयाधी धर्म थाय ठे, एम विचारी तेणे तेने ठंहु पाणी आप्तु ॥ ४६ ॥

तेन प्राप्तोऽतिमज्ञेय गेगी, आकुष्टश्च नव्यतापसोऽपरे, रे मूर्खं हतोऽसौ त्वया, किं वा
 न सन्नाव्यमज्ञानिन इति ॥ ४७ ॥ चिन्तितं च तेन अज्ञान्यह, तत् ज्ञानमधीये,
 श्रुतं च तपसा ज्ञानाऽवाप्ति, यत — तपसेन प्रपश्यति, त्रैलोक्ये सचराचर, इति तत्स्वा-
 धीन तप करोमीत्यनाग्याय कस्यापि गतो गिरिगुफा, प्रारब्ध तप फलादेरपि त्या-
 गेन ॥ ४८ ॥ अतिगतेषु च कियत्स्वपि दिनेषु पीडितं ह्युधा, कडगतप्राणश्च
 प्रेङ्कितस्तद् गवेपणपरैस्तापसे उक्तं च, न त्वद्वित्य तप क्रियते, समाधानं हि मूढ
 धर्मस्येति ॥ ४९ ॥

अने तेथी ते गेगी याणु वष्ट पास्यो, त्यारे रीजा तापसो ते नवा तापसपर गुप्से थया के, अरे !
 मूर्ख ! ते तो तेने मारी नाग्यो, (पडी तेओए निचार्यु के) अज्ञानी शु नथी करतो ? ॥ ४७ ॥ पडी
 ते नरा तापसे निचार्यु के, हु अज्ञानी हु, मोटे ज्ञानलो अभ्यास कर, वडी नेणे सन्नत्यु हुतु के, तपथी
 ज्ञान मळे डे, नेमके तपवाथीज चराचर एवा नेणे बोक्के जोड राकाय डे, मोटे जेथी ज्ञान मळं, ण्यो तप हु
 कर, एम निचारी कोऽने कया यिसा ते पर्वतनी गुफामा गयो, अने त्या फळआडिकनो पण त्याग करीने
 तेणे तप तपया माड्यो ॥ ४८ ॥ एरी रीते नेटनाक दिगसो गया नाड, ते कुथारी हु'व पापया धार्यो,
 अने तेना याणु मळे आब्या पटनामा तेनी शोम मोटे निकळेवा तापसोए तेने जेणो, अने तेने कहु के,
 अरे ! आय तम न थाय, धर्मनु मूळ तो सत्याधान ए'ने सभयाम, रेहेवापणु डे ॥ ४९ ॥

तत समाधाने यत्न करोमीत्यगमद् ग्राम स, क्षेत्रे च पूजा नृक्तजनैश्च, किय-
 श्चिर्दिनेर्द्वैवर्धं च इव्य ज्ञातस्वरूपैश्च धूर्तैः प्रारब्ध परिचय, गतस्तद्विश्वास,
 आग्यातश्च स्वान्निमत समाधानमृदो धर्मस्तपुर ॥ ५० ॥ द्वयोपायैश्च तैर्ग-
 णिकाढोकनादिप्रयोगेणपहृत तच्छन, ज्ञातश्च लोकैर्निर्घाटितश्चेति ॥ ५१ ॥ एव
 श्रुत्मात्रमाही वचननाचार्याऽनालोचक शास्त्रोपदेशानामर्ह, यदुक्त—विचारसा-
 रा अपि शास्त्रवाचो! मूर्खैर्ह्यहीता विफलीभवति ॥ मितपचग्राम्यदरिद्रदारा ।
 कुर्वत्युदारा अपि किं कदाचित् ॥ ५२ ॥

(ते साक्षली तेषे विचार्यु के) हेये हु समाधान माटे यत्न करू, अत्र विचारि ते माममा गयो, अने
 त्या नृक्तजने तरफची तैने सत्कार मळ्यो, केटवक दिवसे धन पण मेळव्यु, एट्यामा ते वृत्तात केट्याक उगोने
 मातुम पन्व्याथी, तेओए ते तापमनो परिचय करावा माड्यो, तापस पण तेओनो विधासी थयो, अने तेथी
 तेणे पोते स्वीकार्दो समाधान मूळगळो धर्म तेओनी आगळ कही सचळव्यो ॥ ५० ॥ ते उगोए पण
 उपाय मय्याथी, तेनी पोसे वेडयाने मोकड्या आडिक प्रयोगेचने करीने तंहु धन हरी व्हीथु; पडी ते बालनी
 दोकाने मातुम पन्व्याथी, तेओए ते तापसने रुहानी मेऱ्यो ॥ ५१ ॥ एवी रीते फक्त साचळेवुज ग्रहण कर-
 नारे मनुष्य रचनना जावार्थने नही विचारनारे होवाथी शास्त्रना उपेडयाने जायक नथी, कहु डे के-पुढोए
 ग्रहण करेदी उत्तम विचारवाळी एवी पण शास्त्रनी वाणी निफळ थाप डे, केमके उदार एरी पण जो तु
 राधनारी एवी गामनीआनी दस्त्रि श्री शु कर्तापि पण कंड उदारता करी शके डे? ॥ ५२ ॥

ये चाऽत्रिपयज्ञाऽविशेषज्ञाऽमतिमच्छूयाद्दयोऽप्ययोग्या अथातरेषु प्रतिपादितास्ते-
 ऽप्येतेऽत्रैवातर्जवतीति न पृथगुक्ता इति ॥ ५३ ॥ नानाविधानऽयोग्यानिति मत्वा
 धर्मत्वमुपदिशत ॥ योग्यैवेव यत् स्यात् । शुद्धज्ञा ज्ञावारिविजयश्रीः ॥ ५४ ॥

॥ इति चतुर्थस्तरग ॥

ककी विषयने नहीं जाणनाग, विशेषने नहीं जाणनाग, निर्बुद्धि तथा शूय आदिकोने वीजा प्रयोमा
 जे अयोग्य जणव्या ठे, तेअनां पण आनी अरज सप्तवेश धाय छे, माटे तेअने जूटा पानी वया
 नथी, इति ॥ ५३ ॥ एवी रीते विविध प्रकारना अयोग्य मतुप्योने भयानमा ज्ञेने, योग्यो प्रत्येज र्मनां उपदेश
 आपो ? के नेवी जाव शत्रुअनां विजय कनारी बहमी सुवज पाय ५४ ॥

॥ एवी रीते चोथो तरग समाप्त थयो ॥

इति चतुर्थस्तंभः समाप्तः

अथ पंचमस्तरंगः

योग्याऽयोग्यानेव दृष्टतेराह—मूलम्—गिरिसिर पणाल मरुश्रद्ध । कसिणावणि
जलाहिसुत्तिमणियाणी ॥ धर्मोवएसवासे फलजणणे जीवदिदृता ॥ १ ॥ धर्मोपदेश-
वृष्टो फलजनने च, जीवदिदृत्ति जीवाना दृष्टता गिरिसिर प्रभृतय पइ जवति, पष्टी
लोप प्राकृतत्वात् ॥ २ ॥

वल्की ते योग्य तथा अयोग्येनेज दृष्टतो इदं क वदे ठे—मूलनो अर्थ-धर्मोपदेशनी वृष्टि होते अते, तेनु
फळ उत्पन्न करवासा गिरिसिखर, पणालिका, चरम्यद्ध, दृष्टणवृत्ती समुद्रनी वृष्टि, तथा मणिनी खाण सरखा
जीवोना दृष्टतो जाणवा ॥ १ ॥ धर्मोपदेशनी वृष्टि होते अते फळनी उत्पत्ति माटे जीवोना गिरिसिखर आदिक
व दृष्टतो अं, अर्ही प्राक्तन जाणा होवायी वही विनक्तिनो बोप यथो अं ॥ २ ॥

यथाहि जज्ञधरवर्षणे सति स्थानविशेषेण फलजननाऽजननादिविये पट्टप्रकारता दृश्यते, तथा गुरुपदेशेऽपि योग्याऽयोग्यजीवरूपस्थानविशेषेण प्रतिबोधोद्दिष्टरूपफलदाज्ञादिपेक्षा विज्ञाव्यते ॥ ३ ॥ एतदेव प्रत्येक ज्ञात्रयति, गिरिशिर पर्वतशीर्षं शिलादिरूप ॥ ४ ॥ तत्र यथा जज्ञदजज्ञ स्वल्प बहु बहुतर वा पतित सत् सद्यो बुद्धित्वा याति, न तु द्वाणमपि भिद्यति, दूरेर्भेदः, तथा केषुचिज्जीवेषु धर्मोपदेशोऽप्येवमेव प्रमादादिनाऽवज्ञोपयोगात्प्रव्यञ्चित्त्वादिना चाऽनवधारणेनैव निष्फल एव स्यात् ॥ ५ ॥

वस्साद वर्षते अने स्थानविशेषे स्त्रीने फलनी उत्पत्ति तथा अनुत्पत्ति आदिक्रमा विषयमा जेम ठ प्रकारो देवायेंठ, तेम गुरुना उपदेशमा एण योग्य अयोग्य जीवरूप स्थान विशेषे स्त्रीने प्रतियो आदिक्रम जे फल ज्ञान आदिक, ते एण ठ प्रकारनो देवाय ठे ॥ ३ ॥ ह्ये तेज दरेक प्रकारु स्वप्न कहे ठे, गिरिशिखर एद्वे फयर आदिकरूप पर्वतु शिखर जणवु ॥ ४ ॥ तेपर पर्वेनुं थोदु, यणु अथवा वधारे यणु एवु वस्सादनुं पाणी जेम तुरतज दली जाय ठे, अने कणयण एण थोदुनु नयी, तथा दूर गयायी उबट्टी अदर चिन्तना थाय ठे, तेम केद्वानु जीवो प्रत्ये धोपदेश एण एवीज रीते प्रमाद आदिके करीने तथा अब्झा, बीजी वान्तमा उपयोग तथा विद्वध चित्तपणा आदिक्रमे करीने तेमज नहो अवधारण करवावने करीने ज्यारे निष्फल जाय ठे ॥ ५ ॥

कृत पुन परिणति, श्रवण तु वहिर्दृत्स्या पारतत्यादिनाऽजिमानादिना वा स्याद् बहु-
 कवत्, तथाहि—॥ ६ ॥ क्वचित्सन्निवेशे छिजन्मा बहु धर्मं श्रावयति, स तु त-
 ल्कघटिका चञ्चती विस्मत् इव प्रेङ्गते ॥ ७ ॥ कियदुपदिश्योवाच छिज, ज्ञात
 तत्त्वमिति, बहुस्वाच ज्ञात, छिज—कथ, बहु—तत्रैषा कउघटिकाऽनवरत चञ्चतीति॥७॥
 छिज—रे मूर्ख कि तत्रैतया, किञ्चिच्छस्तु निरूप्यते, बहु—एव करिष्यामीति छिज
 पुन कियदुपदिश्याऽऽम्नाङ्गीत्, निरूपित किञ्चित्, बहु—निरूपित, छिज—कथं ॥ ए ॥

त्यारे तेनु परिणमनापणुं तो स्याधीज थाय ? मात्र महारना देखावस्ये परतत्रपणा आदिकथी अथवा
 अजिमान आदिकथी गुरुकनी पेंडे श्रवण थाय, ते गुरुकुनु उट्टाहरण वहे डे ॥ ६ ॥ कोइरु गाममा एक
 ब्राह्मण एक वाळकेने मं सरळाववा लाग्यो, त्यारे ते वाळक तो चानता एवा ते ब्राह्मणना गळाना काउहाने
 आश्रय जेनु जाणीने जेवा नाग्यो ॥ ७ ॥ केउबोफु उपदेशी दीया याद ब्राह्मणे ते वाळवने बहु के, ते कइ
 तत्व जाण्यु ? त्यारे ते वाळके जवाव आय्यो के, में जाण्यु डे वाळणे पूर्यु शु जाण्यु त्यारे वाळके बहु के, तपारा
 गळानो काउबो जरा पण थोभ्याविना चानतो रथो हतो, ए में जाण्यु ? ॥ ७ ॥ वाळणे कथु के, अरे मूर्ख ! तेनु तारे
 शु मयोजन हटु ? कइक तत्व जोबु जोइए, वाळके कथु के, हवे हु तेम करीश. वळी ब्राह्मणे फरीरे केउबोफु उपदेश
 देइने पुठ्यु के हवे केम कइ तत्र जाण्यु ? वाळके कथु हवे जाण्यु, ब्राह्मणे प्रउयु शु जाण्यु ? ॥ ए ॥

बटुः—यावत्स्वया किञ्चिद् ज्ञाणित, तावद्वितो दरात् कीटिकाः सप्तशतानि सप्तोत्तराणि निर्गतानीति, छिज - रं मूर्ख कि तवैताञ्चि, यदह व्याख्यामि तत्रैव किञ्चिच्चित्तय ॥ १७ ॥ बटुः—ऋष्याभ्येवं, छिज, कियदुपदिश्य पुनराख्यत् रे कि चितितं, बटुः- कदा त्वमित उत्यास्यसीति चितित, ततस्यव्रतः स छिजेनेति एव कादसौकरिसौकरि- कादयोऽकादयोऽव्यवोदाहरणानीति ॥ १ ॥ पण्डित्ति पर्वतस्यैव पापाणमयं नदीनिर्जरो- तरणमार्गात्मक जिह्वाकाररूप, मासादादीना वा जज्ञनिर्गमार्धरूप प्रण्ड ॥ ११ ॥

त्यारे बालके कथु के, जेदनीवारम। तमे कृत् कथु, तेदनीवारसा आ दरमाथी सातसो सात कीनीओ निरुळी हती. ब्राह्मणे कथु के, अरे ' मूर्ख ' तेनु तारे शु प्रयोजन हतु ? हु तने जे वड कहु बु, तेमज रुद तत्व विचार ? ॥ १७ ॥ बालके कथु के ठीरु हवे तेम करीश, बळी ब्राह्मणे केदुत्तोक उपदेश दीधा वाड कथु के, अरे ' हवे कः विचार्यु ? ' तारे ते बालके जवान आप्थो के, हवे तमे अर्होधी तयारे उउगो ? ए में विचार्यु के, पती ते ब्राह्मणे तेने तजी दीधो, एवी रीते अर्हो काद सौकरिक आ दिरुना उदाहरणो पण गाणवा. ॥ ११ ॥ पण्डिका एद्वे पर्वतोज पत्तनो जीवादि आकाररूप मार्ग, के ज्याथी नदीनु ऊरण उतरे वे, अथवा मेहद्व आदिकोनी पाणनि जगना मार्गरूप खाल गाणवी ॥ ११ ॥

तत्र हि जलजल खलहलकारि दृश्यते जलदे स्थितेऽपि कियत्समयं वहति, पर न
 कापि जलपरिणतिः, जलव्यपगमे माईवचवत्वाकुरोत्पस्याद्याविज्वनात् ॥ १३ ॥ एव
 केचिज्जीवा शुभ्रत कथागाथाश्लोकादि परोपदेशनाद्यर्थ स्वपाडित्यख्यापनार्थं वाऽवधा-
 रयत्यधीयते च, न तु तेपा हृदयेषु किमपि परिणमति ॥ १४ ॥ कपायमिध्यात्वादि
 नितिज्ञात्मकमाईवपुण्यमनोरथाद्यज्ञावात्, बहुविधकथकनटपुस्तकतृताकवाडिव्यासागा-
 रमईकाचार्याडिवत् ॥ १५ ॥ इति ॥

तेवी प्रणाविक्रामा मेषु वरसादनु खबहल करतु पाणी देवाय डे, वरसाद रही गया वाट पण केट्टीक
 वार मुधी ते बधा करे डे, परतु तेमा जळ उरी शकतु नथी, अने एवी रीते जळ निकळी गया याड
 तेमा कोमळता, जीनाम के अकुराओनी उल्पत्ति आदिक होइ शकतु नथी ॥ १३ ॥ एवी रीते केट्टवाक
 जीयो रुरूप कहेवा कथा, गाथा तथा श्लोक आदिक परने उपदेश देवा मोटे अथवा तो पोतानी पन्तिहाइ
 जणावरा मोटे धारी रावे डे, तथा जणे डे, परतु तेओना हृदयमा कइ पण परिणमनु नथी ॥ १४ ॥
 केमके तेओने कपाय, तथा मिथ्यात्व आदिमने तजवानी इच्छारूप कोमळता तथा पवित्र मनोरथ आन्कितो
 अज्ञार हाय डे, कोनी पेंडे? तो के विविध प्रकारनी कथा म्हेंनार नट, पोथी माहेवा रीगणानी नेतु
 वाचनार व्यास, तथा अगाग मईक आचार्यनी पेंडे जाणवा ॥ १५ ॥ इति ॥

ममथद्वन्ति, मारवश्यद्वेषु स्वदृष्या वृष्टिः. सिक्तास्वेव विद्वीयते, न तु ज्ञायतेऽपि, बहुतरा-
द्विवृटो सामान्यतृणानां करीरशमीवनखमादीना तरूणा चपलमुद्गादिना धान्याना
च प्रायो नीरसानामेवोद्गमः ॥ १६ ॥ न च दूर्वादीनामाभ्रराजादनकड्डीनाद्वि
केरीपूगनागवड्डीचाङ्गादितसुवीरुथा शाल्विगोधूमोदधान्याना, गुमखमशर्करा-
दिहेतुकेशुवाटिकादीना वा प्रायः सरसाना समुत्पत्तिः ॥ १७ ॥ एव केपुचिञ्जीविषु
स्वदृषे गुरूपदेशे न काचिस्परिणतिः १८ ॥

परस्थल एतन्न मारवाग्नी चूर्मी, के जेमा थयेञ्जी स्वदृष वृष्टि रंतीभाज समाइ जाय डे, अन्नं जणती एण
नथी, अने क्कच त्या जो वथारे वृष्टि पाय तं, सामाय प्रकारुं वास, केर, सीजन आदिक वृद्धो
तथा चोला मग आदिक था यो, एम प्राये करीने रस रहित पदार्थानी उत्पत्ति पाय डे; ॥ १६ ॥ परतु
प्राये करीने रसवाला एवा दुर्वा (श्रो) आदिक वाग्नी, आग, रायण, केळ, नाळीयेरी, सोपारी,
नागसेव तथा द्राङ्ग आदिक वृद्धो तथा वेदानीअनी, चोखा, गहु आदिक धान्योनी, अयवा गोल,
खान तथा साफर आदिकना हेतुरूप एवा सेदानीना नाढ आदिकनी उत्पत्ति श्ती नथी
॥ १७ ॥ एवी रीते केट्याक जीयोने रस्य गुरूपदेश मळते छते. कइ एण धर्म परिणमतो
नथी, ॥ १८ ॥

बहूपदेशो तु किञ्चिद् ज्ञावोत्पत्त्या दाक्षिण्यादिना वा जिनगुरुनामनाऽनतकायाऽनृद्ध्या-
द्विद्वक्त्राणस्थत्वादिनाऽनियमनसंस्कारगुणनसाम्पायिकावयवकादीना स्वदृष्यजावचित्तैका-
ग्र्याच्चाव्यसम्यग्गुणियनादरादिनाऽदृष्यफलात्वेन नीरसाना कियतां प्रतिपत्तिरनुष्ठितिश्च
स्यात् ॥१९ ए॥ न तु दृढज्ञावादिनिर्महाफलात्वेन सरसाना शुद्धदर्शनदेशवितिसचित्तप-
रिहारब्रह्मव्रतसर्वविरत्यादीना ॥ १० ॥ ते च क्रियासञ्चया पुद्गलपरावर्त्तेन, मुहूर्त्तमपि
सम्यक्चपरिणत्याऽर्धपुद्गलपरावर्त्तेन, क्रियाऽभ्यासादिना ज्ञावतरे, कदाचित् सम्यग्-
ज्ञानक्रियाज्ञानादिना स्वदृषैरपि वा जैवेर्मुक्तौ गामिन एव, तत्कालमनुजव्यतरादिज्ञावा-
श्च प्राप्तुवति श्यामलवर्णिगुवत्, तथाहि—॥ ११ ॥

रुली तैने जो धणो उपदेश देवामा त्राये, तो पडी करूक जाव उपपन्न श्वाधी अथवा दाक्षिणता
आदिकरने करीने जिनने तथा गुरुने नमस्कार करवामा तथा अनतकाय अने अन्नक आदिक रुप स्पृवाहिंसा
आदिकना नियममा, नमस्कार गणयामा, तथा सामागिक अने आवश्यक आदिकमा थोना जाय, चित्तना एकाग्रप
णानो अज्ञाव तथा सम्यग्विधिना ज्ञानादर आदिकपणाय करीने अदृष्य फलरूपे वेदवीक नीरस त्रियात्रोनो स्वी
कार तथा तेओतु अनुगणन थाय डे, ॥ १९ ॥ परतु दृढ ज्ञाव आदिकवेने करीने महान् फलरूपे श्वाही रसवाली पूर्वी इद्व
समकीत, देश वित्ति, सज्जिनो त्याग, नमस्कार्य त्त, तथा सर्व वित्ति आदिक रुप त्रियात्रोनो स्वीकार तथा
अनुगणन तेओ करी शक्ता नयी ॥ १० ॥ रुली तेओ त्रियानी रचिते करीने पुद्गलनपरावर्त्ते, तेमज मुहूर्त्तमान स-
मकीतनी प्राप्तिथी अर्धपुद्गलनपरावर्त्ते, तथा क्रियाना अच्यस आदिकवेने करीने ज्ञावतरमा, तेमज कदाच सम्यग् ज्ञान
अने त्रियाना ज्ञान आदिकवेने करीने थोना ज्ञाथो पाण मोद्गामीज होय छे, तथा तत्कालज मतुल्य तथा व्यतर
आदिकना ज्ञाने श्यामल वर्णिकनी पेटे प्राप्त थाय डे, ते श्यामलवर्णिकनु उदाहरण वहे डे—॥ ११ ॥

कमलापुर्यां कुञ्जधरश्यामलावणिको बहुधनौ, अन्यदोद्याने क्रीन्ति गतौ, तत्राक्रद
 श्रुत्वाऽप्रतो गह्वतौ धनेश्वरेभ्यसुतं मलयचङ्ग पौन्यचार्यान्नि सह क्रीन्त सर्पदष्ट
 ददशतु ॥ ११ ॥ तावत्तत्र चारणश्रमण प्राप. विद्याधरवृद्ध च, तत्र धनेश्वरे
 ण पुत्रञ्जिज्ञा देहीत्यन्यर्थित. कोऽपि विद्याधर., तेन च मुनिपदरजसोजीवितो मल-
 यचद्र ॥ १३ ॥ स च कस्मान्मेज्ञापकोऽयमित्यादि प्रश्नयन् पित्रा निवेदित्वाऽ-
 शेषवृत्ततो मुनि ननाम, मुनिरज्ञाणीत् त्तो कुमार एकाहिविषनाशेऽपि मोहा-
 हिविषविधुरोऽसि ॥ १४ ॥

कमलापुरीमा घणा धनवाला कुळधर अने श्यामल नामना वे व्यापारीओ हता. एक समय तेओ
 क्रीना करवाने उद्यानमा गया, एदनामा त्या आक्रद यतो सान्कलीने जेवा तेओ आगळ जाय ठे, तो सोळ
 खीओ साथे क्रीना करता एवा धनेश्वर शेत्रना पुत्रने तेओए जेयो, के जेने सर्प करड्यो हतो ॥ ११ ॥
 एदनामा त्या कोइ चारण मुनि तथा विद्याधरोनो समूह आयो, त्या धनेश्वर शेत्रे कोइक विद्याधरने प्रार्थना
 करी के, मने पुत्रञ्जिज्ञा आयो? त्यारे ते विद्याधरे मुनिना चरणनी रजथी मलयचद्रने जीवतो कथो ॥ १३ ॥
 त्यारे ते मलयचष्टे पुत्रुयु के, आ भेवावको शा माटे थयो ठे? त्यारे तेना पिताण तेने सपट्ट वृत्तात जणव-
 वायी, तेणे मुनिने नमस्कार कर्था, त्यारे मुनिए तेने कथु के, हे कुमार! तारा एक सर्पना उंभनो नाश तो
 थयो छे, परतु हतु मोहरूपी सर्पना जेरथी तु व्याकुळ थयेंतो तु ॥ १४ ॥

अष्टमद्वयस्थानफणो रत्नरत्नौघ्रसन्नो ह्यस्यन्नयन्नीमदृष्टो मोहमहाविपथरो रौघ्र
 एतेन दृष्ट जगद्व्यज्ञानगरद्व्याहत न किञ्चिच्छ्रिताऽद्विहे चिन्तयति युष्मात्रिक एवा-
 पनयति तन्मोहविप ॥ १९ ॥ ततस्तद्विनाशो यतस्वेति, शुभमत्यसादात्तदपि न-
 दृयति विधिमुपदिशतेति कुमारेणोक्ते पुनर्मुनिस्त्रयच सस्यव्रतमद्वेष्टे द्विविधजिज्ञासा-
 नपूर्व यतिधर्ममत्रो देय इति ॥ १६ ॥

ते मोहकूपी महान्न चयसर सर्प आत्र मदना स्थानोरूपी फणावात्रो, रति अरतिरूपी चयसर जिज्ञायालो,
 हास्य तथा न्यस्यपी न्यकर दाहावात्रो वे तेणे मखेनु जगत अज्ञानरूपी जेग्यी हणायु यत्रु रुड पण हित अहित निचारी
 शक्यु नयी, ते मोट्मपी सर्पना जेस्ने गुरुमपी भववादीन फक्त दूर करी शके डे ॥ १९ ॥ मोटे ते मोहकूपी सर्पना
 जेरनो नाश कराना मोटे तु प्रयत्न कर? त्यारे ते कुमारे वयुके, आप साहेमनी कृपायी ते पण नाश पामशे, मोटे
 ते जे दूर ररवानी विधि आप साहेम रतवो? त्यारे फरीने मुनिण क्यु के, सम्यक्त्वकूपी मदनया ते प्रका-
 रती * शिद्राना आपानपूर्वक साधुधर्मकूपी मनो प्रयोग करवो, ए तेनी विधि डे ॥ १६

तत स पौन्यचार्याञ्चि सह प्रववाज, तत्साहस दृष्टानेके प्रात्रजन्, कुञ्जधरोऽपि
 श्रद्धार्थं प्रपन्न., श्यामदास्तु न प्राबुध्यत, कुञ्जधरो मैत्रीसफ़सतायै धर्मं प्रति-
 पिपादयिषु श्यामद्व गुरुपाश्र्वं पुन पुनर्नयति, धर्मं श्रावयति ॥ २७ ॥ क्रमात् कि-
 यन्नियमप्रतिपत्ति चक्रे स, सामायिकमेक यत्नात् करोति, सामायिकावसरे च क्रमा-
 छिक्रयाद्विप्रमादपर कुञ्जधरेण शिक्षितोऽयं मञ्चिप्रैङ्गीति द्र्यते हृदि ॥ २८ ॥
 तद् ज्ञात्वा तेनेपेक्षित क्रमान्मृतो दिव्यदृषष्टि. सुरो जडे, नत्र त्रात्वा शिवं
 गमी ॥२९॥ कुञ्जधरस्तु शुद्धधर्मपर शक्तसामानिको नूत्वा विदेहेषु सेत्स्यतीति ॥३०॥

पडी तेणे पोतानी सोळ खीत्रो सहित डीका डीरी, वळी तेंतु साहस जोऱ्ने त्या अनेक मनुष्योण
 डीका डीधी, कुञ्जरे पण श्रासक धर्म अगीकार कर्यो, परंतु श्यामद्वने गोत्र द्याव्यो नही, तेथी कुञ्जधर पोतानी
 मियाइ सफ़द्व करत मांड श्यामद्वने धर्म पमाचवने अर्थ यारयार गुण पासे वेइ जाय डे, तथा धर्म मज्जलने
 डे ॥२७॥ अनुक्रमे केद्वाराक नियमो स्वीकारवानु तेणे कथे, जतनाथी सामायिक करे डे, पडी अनुक्रमे सामायिक समये
 ते रिकथा आदिक प्रमादमा पन्वा द्याव्यो, त्यारे कुवथरे तेने (तेप नही करवा माटे) शिग्यामण आपी परंतु आ मारा
 डित्रो गुण डे, एम विचारी मनमा छुजाया द्याव्यो ॥ २८ ॥ ते जाणीने कुञ्जधरे तेनी उपेक्षा करी अनुक्रमे गृह्यु
 पामीने ते सत्य कृद्विवागे देवतोक्ता देवरूपे उग्नन्न थयो, नत्र चमीने ते मोडे जशे ॥ २९ ॥ कुवथगतो शुद्ध धर्ममा
 त्पर थयो, अने उक्ते शक्तसामानिक देव थइने महाविदेहकेतया मोडे जशे ॥ ३० ॥

कसिणवणिति, कृष्णावन्यामुपद्रवणाडुर्वररूपया कुम्भणसुराष्ट्रमालवकादिसवधिन्या
यथा स्वदपायामपि वृष्टौ किञ्चित् किञ्चित् बहुष्टौ तु बहुडुर्वादिनृणाना सहका-
रादितरुणा आङ्गिकुवाटादीना शाङ्गिगोश्रमादीनां ग्रन्थाना च प्राय सरसानामे-
वोत्पत्ति ॥ ३१ ॥ तथा केयुचिञ्जीवेषु स्वदपेऽपि गुरुपदेशे श्रुते बोधियरिणिति
स्यात्, ततश्च शुद्धदर्शनदेशधिरतिसचित्तपरिहारब्रह्मवतादीनां चाववाढ्यां विभिर्महा-
फलत्वेन सरसानेव प्रतिपद्यतेऽनुत्तिष्ठति च ॥ ३२ ॥

कृष्णाश्रमी षट्त्रयं उपनङ्गण्यथी जंभा सारी रीते उत्तम भ्रमरानु धान्य आदिक पाकी शकै,
परी वृकण, मुराङ्ग तथा मातवा आदिकनी लहरारूप चूमी जालवी, के जंभा जंभ शोभी गुष्टि हाते डने
पण कर्क क.क निपजे छे, अने घणी वृष्टि हेते जे नो दुर्वा (घो) आदिक गसनी, आरा आदिक
वृङ्गोनी, ब्राह्म तथा सेननीना वानो आदिकनी तथा चावन अने घउ आदिक धायोनी, एम प्राये ऋषिने
रसयुक्त प्नायौनीज लयति धाय डे ॥ ३१ ॥ तेम केटनाक जीवो प्रने योमो पण गुम्नो उपदेश सारुवाची
बोपि वीजनी प्राप्ति धाय डे, अने तेवी तेओ रमयुक्त एवा शुद्ध सम्पन्न, देशगिति, सचित्तनो परिहार
तथा नमचर्यप्रतआन्तिकेने, चावनी दटना आदिकत्वेने करीने अगीकार करे छे, तथा तेओतुं अनुष्ठान
पण करे डे ॥ ३२ ॥

ते चासन्नसिद्धिका सप्ताष्टाद्विजैवैस्तुतीयजन्वे वा मुक्तिगामिन एव श्रीऋष्यज्जशानि
 नेमिपार्श्वश्रीमहावीरजिनाद्यज्वधनसार्थवाह्श्रीपिण्डपृथनधनवतीमरुचूतिनयसाराद्विवत्
 ॥ ३३ ॥ आनदकामदेवादिदशश्रावकवच्छा, आनदादीना स्वरूप चेद ॥ ३४ ॥
 वाणिअगामपुरमी । आणदो नाम गिहवई आसी ॥ सिवन्दा से मजा । द-
 ससदसगोउद्धा चउरो ॥ ३५ ॥ निहिववहारकइतर । उणेषु कणयकोन्निवार-
 सग ॥ सो सिखीरजिणोसर—पयमूद्धे सावओ जाओ ॥ ३६ ॥

अने तेओ श्रीऋष्यज्जदेव, शक्तिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ, तथा श्रीमहावीर मरुचुना (अरुन्धमे) पेहेद्धा
 चवना धन सार्थवाह, श्रीपिण्डराजा, धनधनवती, मरुचूति तथा नयसार आदिकोनी पंडे नज्जीक सिद्धिवाळा,
 अथवा सात, आठ जेचे, अथवा त्रिजज जेचे मोद्दगामी थाय ठे, ॥ ३३ ॥ अथवा आनद तथा कामदेव
 आदिक दश श्रावकोनी पंडे जाणवा, ते आनद आदिकोतु स्वरूप नीचे मुजव डे ॥ ३४ ॥ वाणिल्य गाम नामना
 नगरा आणद नामे एक गृहपति हतो, तेने शिवन्दा नामे छी हती, तथा तेने दश हजार गायोना चार
 गोकुचो हता ॥ ३५ ॥ निधान, व्यापार तथा व्याजे मळीने तेनी पास वाग्गोम सोना मोहोगे हती, अने
 ते श्रीवीर मरुचुना चरण कमथमा श्रावक थयो ॥ ३६ ॥

चपाइ कामदेवो । नछानजो सुसावगो जाओ ॥ उग्योउद अठरस—रुचणको-
नीण जो ससी ॥ ३७ ॥ कासीण चुदण्णिपिआ सामानज्जा य गोउदा
अठ ॥ चउवीसकणयकोनी । सट्ठाणसिरोमणी जाओ ॥ ३८ ॥ कासीइ
सुरादेवो । धन्ना नज्जा य गोउदा उच्च ॥ कणयठरसकोनी । गहिअवओ सा-
वओ जाओ ॥ ३९ ॥ आदन्निआणयरीण । नामेण चुद्वसयगओ सहो ॥ बहुदा
नामेण पिया । रिद्धि से कामदेवससा ॥ ४० ॥

वणनगरीमा कामदेव नामने उचम श्रावक हते, के जेने चउ नामे खी हती, तथा उ गोकुडो
हता, अने ते अठार नोन सोना मोहरोले म्पणी हते ॥ ३७ ॥ काशीनगरीमा चुदनी पिया नामे श्रावक
हते, तेने इयाण नामे खी हती, तथा आठ गोकुनो हता, अने चौबीस नोन सोना मोहरो लेनी पामे हती,
तथा ते श्रावकोमा शिरोमणि हते ॥ ३८ ॥ वकी काशीनगरीमा युगदेव नामे श्रावक हते, तेने धन्ना नामे
खी हती, तथा छ गोकुनो हता, अठार नोन सोना मोहरो लेनी पामे हती, तथा ते नतथारी श्रावक
हते ३९ ॥ आनन्निका नगरीमा चुटनशतरु नामे श्रावक हते, तेने बहुदा नामे खी हती, तथा तेनी काम-
देव जेनी रुद्धि हती ॥ ४० ॥

कपिद्वयपट्टणमी । सद्दो नामेण कुडकोद्विअओ ॥ पुस्ता पुण तस्स पिआ । रिद्धि
 सिरिकामेदेवसमा ॥ ४१ ॥ सहदापुत्तनामा । पोद्दासमी कुद्दाइ जाइओ ॥ ऋज्जा-
 य अग्गिमित्ता । कचणकोनी अ से तित्ति ॥ ४२ ॥ चउवीसरुणयकोनी
 गोउद्व अण्ठेव राजगिह्नयरे ॥ सयगो ऋज्जा तेरस । रेवइ अरुसेसकोनी-
 ओ ॥ ४३ ॥ सावथीनयरीए नवणीपिअ नाम सहओ जाओ ॥ अस्सिणि
 नामा ऋज्जा । आणंदसमो अ रिद्धिण ॥ ४४ ॥

ऋषिचपुर पाणमा उरुकोद्विक नामे शकक हतो, तेने पुण्या नामे स्त्री हती, तथा तेनी रिद्धि पण
 काण्ठेव शकक जेद्वी हती ॥ ४१ ॥ पोद्दासपुण्या सहदापुत्र नामे शकक हतो, ते जातलो कुंजार हतो
 तेने अन्नमित्त नामे स्त्री हती, तथा तेनी पासे ण क्रोर सोना मोहारे हती, ॥ ४२ ॥ बली राज्यही
 नगरीमा चोरीस क्रोर सोना मोहारेगळो तथा आठ गोकुडबळो शकक नामे शकक हतो, तेने तेरे स्त्रीओ
 हती, * तेमायी रेत्तीनी पण आठ क्रोर सोना मोहारे हती ॥ ४३ ॥ शकस्ती नगरीमा नदनीपिता नामे
 शकक थो. तेने अश्विनी नामे स्त्री हती, तथा ते रिद्धिवे करीने आनठ शकक सरंवा हतो ॥ ४४ ॥

* तेमां रेवतने आठ क्रोर अने वक्कीनी स्त्रीओने एक एक क्रोर सोना मोहारे हती. (जूओ
 उपासग-भाग)

सावत्यीविच्छब्दो । इतगपिअ नाम सहस्रोपचरो ॥ फणुणिनामकदत्तो आणदसमो अ
 रिद्धि ॥ ४५ ॥ एते दशापि समवसरणे प्राप्ता प्रथमत एव श्रीवर्धमानस्य देशना भुत्वा
 प्रतिबुद्धा सम्यग्भवूद्वा द्वादशवर्ती प्रपेदिरे ॥ ४६ ॥ तत्र पचमव्रते सर्वोपामपि
 प्राविद्यमानाधिकपरिग्रहनियम सप्तमव्रते त्वानवस्य अश्वमे शतपाकसहस्रपाक-
 तैले, स्नाने जलकूजाष्टक, दत्तशोधने ज्येष्ठमधू, वस्त्रे कौमश्रुग, विद्वेषने धुसृण-
 श्रीवस्त्रे, आचरणे मुञ्जिका, कुसुमे पुंरुरीक मादतीदाम च, धूपेऽगुरु, सूपे कदा-
 वमुद्रमापा नक्ते कदमशाब्धि घृते गोघृत, खाद्ये घृतपूरखनादि शाके सौव-
 स्तिक, धान्यशाके वटकादि, तावृद्धे कपूरैलाइवगादि, फले द्वीरामद्वक नीरे
 गगनोदकमित्यादि, एवमन्येषामिति नियमप्रतिपत्ति ॥ ४७ ॥

बळी सावत्या नारीनो गृहेवासी द्वातकपिता नामे उत्तम श्रावक हतो, तेने फाळ्युनी नामे बी हती,
 तथा ते पण ऋद्धिवेदे करीने आनद श्रावक सखो हतो ॥ ४५ ॥ ए दशे श्रावको समवसरणमा आब्या, अने
 प्रथमज श्रीवर्धमान प्रभुनी देशना सारळीने तेओ प्रतिशोध पाभ्या, तथा सम्यक्त मूठ यार ततो तेओए अगी
 कर्यो ॥ ४६ ॥ तेमां पाचमा नतमा ते सयलाओए प्रथमयी जेट्रो परिग्रह हतो, तेयी अग्निनो नियम कर्यो,
 सातमां नतमां आनदश्रावकने मर्दनमा शतपाक अने सहस्रपाक तेव, स्नानमा आठ घना पाणी, दातणमा जेडी
 मर, बहमां वे रेशमी कपडां, विद्वेषनमा केशर चदन, आचूणणमा वॉटी, पुष्पमां कमल अने मादानीनी माजा,
 धूपमा अग्र, टाळमां कवाच, मग, अरुद, जोजनमा कपोदना चावड, घीमा गायनु घी, खाद्यमा घेवर खार आदिक,
 शाकमां सोवस्ति (वनस्पति विशेष) धान्यनां शाकमा वरा आदिक तावृद्धमां कपूर, एवची तथा इतींग आन्वि
 एवी रीते बीजाओनो पण नियमनो स्वीकार जाणवो ॥ ४७ ॥

दशानुरपि विशतिवर्षाण्येव वर्षं आराधित, तत्र चतुर्दशवर्षानंतर पङ्क वर्षाणि
 सर्वग्रहचिन्ताव्यापारपरिहार कृत ॥ ४८ ॥ एकादशप्रतिमाराधनाद्विबहुडु-
 ष्करतपस्त्रिक्रिया निर्ममिरे, मासिकसङ्खेखनापूर्वमनशन प्रपेदे ॥ ४९ ॥ ग्रंतेऽव-
 धिज्ञानमुत्पादि, आनन्दवर्जमन्येपा देवपरीक्षा वञ्चय, एव दृढतया धर्मसाराध्य
 सौधमं पृथक् पृथक् विमानेषु चतुर्पद्यायुषो दशापि देवा अन्नवन् ॥ ५० ॥
 ततश्च्युत्वा महाविदेहेषु राजानो श्रुत्वाऽवसरे दीक्षामादाय केवल मोक्ष च
 प्राणस्थतीति ॥ ५१ ॥

एवी रीति ते दशे श्रावणे ए वीस र्प पयत धर्म आरायो, तेमा एण चौद वर्षे पडी उ
 वर्ष मुनी सप्तरी घननी चिंतानो तेओए त्याण कर्यो हतो, ॥ ४८ ॥ वळी तेओए अगीयाण प्रतिमात्रोने आर-
 धन करमा आदिक एणो आकरी तप क्रिया कमी हती, तथा एण मासनी संखेयना पूर्वक तेओए अन-
 शन कर्धु हतु ॥ ४९ ॥ उधेदे तेओने अवधिज्ञान उत्तन्न यतु हतु, आनन्द शियाय नीजाओनी देवोण
 परीक्षा एण करी हती, एनी रीति दृढतायी र्म आरागीने ते दशे सौधमं देवज्ञोक्कमा जडा जडा
 विमानोमा चार पत्योपपना प्राशुव्यमाळा देवो थया ॥ ५० ॥ त्यायी चवीने महाविंदह क्षेत्रमा राजाओ थडेने,
 तथा अस्सरे दीक्षा दे-ने केवलज्ञान ओने मोक्षपद पामसे ॥ ५१ ॥

जडहिसुत्ति, जडधिशुक्तिकासु सजीवासु, जडदे गर्जति वर्षति च स्वनावाद्ध्वं
 मुख विकास्य स्थितासु स्वातिनङ्ग्रेयावतो यादृशा अणव स्रद्धा वा जडजडविदव
 पतति, तादृशानि तदुदरेषु मौन्तिकानि भवति ॥ ५२ एव केषुचिदुत्तमेषु जीवेषु गुरवो
 यादृशानि यानि वचनान्युपदिशति, तानि तथैव परिणमन्ति, तदनुष्ठानफलानि च भ-
 वति ॥ ५३ ॥ 'उवसमन्विगसवरेति' पदत्रयश्रोत्रनुष्टातृचिद्धातीपुत्रवत, 'मिष्टं शुजे-
 अश्व, मुह सुणअश्व, दोगखिओ अप्पा कायव्यो, इति पदत्रय पित्रोक्तश्रुत्वा त्रिद्वोचन-
 मन्निपाश्र्वत्तदर्थमवगम्य च तथैवानुष्टातृसोमवशाद्द्वेषात्. एते चासन्नसिद्धिका,
 तृतीयादिससाष्टातर्त्तवैर्मुन्तिकामिनस्तद्भवमुक्तिगामिन एव वा सन्नवति ॥ ५४ ॥

जन्मद्विभुत्ति एते सभुद्रनी बंधो, के जेओ जीखळी होय डे, तथा जेओ सन्नापयीज रसाद
 गामते तथा रसते बते उचा मुय फामिने गेहनी होय डे, तेमा स्याति न्दममा जेद्धा अने जेमा नाना
 अथवा मोश रसादना जळ विडु पदे डे, तेवा तेओना पेट्मा मोतीओो थाय डे ॥ ५२ ॥ एवी रीते
 केन्नाक उच्चम जीयो पते गुरओो जेमा जे वचनो उपेये डे, ते तेजाज पण्णामे डे, अने ते प्रमाणे अनु-
 ष्ठानना फलोत्पादा थाय डे ॥ ५३ ॥ (कोनी पेटे ? तोके) उपशम, त्रिकेक अने सवर ए ऋण पनेने
 सन्नरनार तथा ते प्रमाणे अनुष्ठान रनार चिद्धाती पुतनी पेटे, अथवा 'मीठु करीने खावु, गुरये गुरु
 तथा लोकमिय आत्मा करंगे' एवी रीतना पिताण वेहद्धा ऋणे वचनो साज्जलीने, तथा त्रिद्वोचन मत्री पासं
 ची तेनो अर्थ जाण्णिने तेन प्रमाणे अनुष्ठान करनार संपन्नमु प्राप्पणनी पेटे, एवी रीतना मनुष्यो नन्दीक
 सिद्धिवादा, अथवा रीजाथी मामी सात आठ अन्नसुग्गिमा मोशे जनारा अथवा तेज डे मोशे जनाग सन्नवे डे ॥ ५४ ॥

मणिखानिनि, मणिखानिपु यथा द्रव्योऽद्यतेजसोऽपि जज्ञदज्ञविद्व पतिता
 बृहत्तरमहातेजस्कचित्तमणिप्रमुखरल्लोत्पत्तिवृद्धिहेतवो भवति ॥ ११ ॥ तथा केषु-
 चिज्जिवेषु स्वल्पान्यपि पान्थियोपदेशवचनानि महाज्ञानदर्शनचार्त्त्ररूपबोधे समुत्पत्त्ये
 वृद्धये च महाशुभाऽनुष्ठानाय च भवति ॥ १६ ॥ यथा श्रीवर्धमानजिनन वेदार्थ-
 मात्रकग्रन गीतमादिषु, यथा च श्रीजिनैस्त्रिपदीमात्रार्पण सर्वगणधरेषु, यथा वा ज्ञो अणो-
 गपिस्त्रिधा एगपिस्त्रिंशो द्रुमुमिच्छद्, इति वचनमिच्छनागे, तत्स्वरूप यथा ॥ १७ ॥
 वसतपुरे धनश्रेष्ठिनो गृह सायोंच्छिन्नममानुष कृत, इंद्रनागो नाम दारकः, स दु-
 हितः, स च क्लुधितो ग्नान पानीयादि मार्गयति ॥ १८ ॥

मणिखाणि, एतन्ने मणिनी खण्डोपा जेम नाना अने अटप तेजवाळा, एवा एण जळविद्विआ
 पनने ज्ञे, मोदा अने महा तेजवाळा चित्तमणि प्रमुख रल्लोत्पत्ति तथा दृढिना हेतुरूप थाय डे ॥ ११ ॥
 तेप केदवोक जीणे प्रत्ये अटप एवा एण पन्निताऽ चरेखा उपदेशना वचनो महाज्ञान, दर्शन तथा चार्त्त्ररूप
 बोधिनीजनी उत्पत्ति तथा दृढि मोटे अने महा शुभ अनुष्ठान मोटे थाय डे ॥ १६ ॥ जेम श्रीवर्मान
 मनुषु गीतम आन्तिकोने रुहेडो वेदनो अर्थ मात्र, तथा सर्व गणधरो प्रत्ये जिनैःशरोतु मात्र त्रिपदीनु आपणुं,
 अथवा ' हे अनेक पिन्वाळा ! एक पिन्वाळे तने जोवाने इच्छे डे,' एवी रीततु इन्द्रनाग प्रत्ये कहेतु वचन
 जाणुवुं. ते इन्द्रनागनु दृत्तत नीचे सुजव डे ॥ १७ ॥ वसतपुरमा मरकीए धनश्रेष्ठिनु घर मनुष्य रहित सुतु
 रुई, त्या इन्द्रनाग नामनो छोकरो कवी गयो, ते चूख्यो धवायी ग्तानी पामिने पाली आदिक मागवा लाग्यो ॥ १८ ॥

यावत्सर्वान् मृतान् पश्यति छारमपि ब्रोकैः कष्टकैः पिहित, तत्र शुनश्छिद्रं निर्गत्य
 पुरमन्धे कर्षणेण चिक्का हिनते, ब्रोकैस्तस्य दत्ते, एव स सवर्धते ॥ ५९ ॥ इतश्चैक
 सार्थयाहो राजशहगलुकामो घोषणा कारयति, ता श्रुत्वा स सार्थेन सम प्रस्थित, तत्र
 तेन सार्थे कूरो बन्धु, स लुको न जीर्ण, छिनीपत्रिनेऽजोर्णतो न चिक्कामटित ॥ ६० ॥
 सार्थयाहेनाऽन्विति नूनमुरोपिनेऽय, ततोपद्विबने सार्थयाहेन तस्य बहुस्तिग्ध च दत्त,
 स तदजीर्णाद् ब्रोकैः दिवसो स्थित ॥ ६१ ॥

एतन्मः सयः, अने मरेन। जणनि ब्रोकैण तेनु दार कः, अयोनी दकी दीबु, तेयी कुरानी पेडे
 तेपायी मार्ग करीनि ते इद्रनाग यहार निकट्यो, तथा हायपा रूपर वेदने नगपा ते चिक्का। मागवा द्वाग्यो,
 ब्रोकैः तेने देया द्वाग्य, अने एवी रीति ते द्रुद्धि पामवा द्वाग्यो ॥ ५९ ॥ एतन्मा एरु सार्थयाहे
 राजशही जत्रः माटे घोषणा कारी, ते सान्नीन ते इद्रनाग ते सार्थनी साये चानतो घयो, ते सार्थया तेने
 चात स्वावा पत्थ, ते तेणे त्याग, पण पत्थ नही, अने तेयी अजीर्णने ब्रुधि वीजे दिसे ते चिक्का
 करया गयो नही ॥ ६० ॥ त्याहे सार्थयाहे विचार्यु के, खरेखर तेने उषवास ह्यो, पत्ती नीजे दिवसे
 सार्थयाहे तेने घणा घी आदिक्याल्लु चोमन दीबु, अने तेना अजीर्णयी तेने दिवसो मुत्री दुरयो रेवा ॥ ६१ ॥

सार्थवाहो वेत्ति एष पष्टकृत, ततोऽस्य श्रद्धा जाता, अपरदिवसे ब्रमन् सार्थवाहे-
नाद्वारपित, गतदिनयो कि नागत, तुष्णीके तस्मिन् ज्ञातं नूनमेव पष्टजोजीति
॥ ६२ ॥ ततस्तस्य बहु इत्त तेन, पुनर्द्वौ द्विवासावजीर्णेन स्थितः, पष्टजोजीति
लोकोऽध्यादवानभूत्, ततो निमत्रयमाणस्याऽप्यऽन्यस्य पिन न शुक्लति, द्वोको
चणत्येव एकपिनिक इति ॥ ६३ ॥ सार्थवाहेनाऽजाणि अन्यस्य माप्रहीर्यावन्न-
गरं गम्यते तावदहमेव दास्ये, प्राप्तो नगर, सार्थवाहेन निजग्रहे तस्य मत्त. कारि-
त, तत स शिरो मुनयित्वा कापायिकवस्त्राणि परिधत्ते ॥ ६४ ॥

त्यारे सार्थवाहे जाण्यु के, एणे उठ कर्यो हरो, तेथी तेने (तेलापर) अद्या घत्त, यीजि दिवसे
(जिज्ञा माटे) ज्यारे ते जपया दाण्यो, त्यारे सार्थवाहे तेने चोत्रावीने प्रउयु के, गया वे दिवसमा तु केम न आण्यो,
त्यारे ते गौन रेंहेयायी तेणे जाण्यु के, खरेबर आ उठ कलारो डे ॥ ६२ ॥ तेथी तेने तेणे घणु आण्यु, वळी
अजीर्ण थावायी तेने दिवस थोनी ग्यो, अने त्यारथी आ उठउठतु पारणु कलारो डे, एम जणवायी
दोको तेनो आदर सत्कार कया दाण्या, पडी वीजा दोको तेने निमत्रण करे, तोपण ते चोत्रानो पिन ग्रहण
करे नही, त्यारे दोको कहेवा दाण्या के, आ एरु पिनो डे ॥ ६३ ॥ पडी सार्थवाहे तेने रुयु के, हवे ज्या-
सुधी आणणे नगरमा जड्ये, त्या सुधी तारे वीजानो पिन हवेथो नही, हुंज तेने आपया करीश, पडी ते
नगरमा पड्योच्यो, त्या सार्थवाहे पोताना घरमा तेने मत्त करती आण्यो, अने त्यारथी ते मत्तक मुनवीने जगवा
वड्यो पहेरया दाण्यो ॥ ६४ ॥

लोकके रयातो जात, शनै शनै सार्थवाहस्यापि पिरु नैड्ढति, अन्यस्य गृहे न याति, तत पारण्डिने तस्य लोक स्वय चक्रमानयति ॥ ६५ ॥ एकस्य प्रती-
 ङ्ढति, ततो लोको न वेत्ति, कस्य प्रतीष्टमिति, ततस्तज् ज्ञातु जेरी कृता य-
 स्यात् तत्तान्निताया जेर्या शेषा वदते ॥ ६६ ॥ एव याति काङ्क्षे राजगृहे नगरे
 श्रीवर्धमान समवसृत साधवो चिद्दार्थ्य सदेशयतो जगत्ता चणिता, मुहूर्त्त नि-
 ष्ट, यतोऽनेपणाऽधुना, तस्मिन् शुके चणिता गड्डत ॥ ६७ ॥

पडी तो ते छुनियामा मसिद्ध थयो, ग्रने तार्थवाहना पिरुने पण न इड्डवा द्वाग्यो, चीजाने
 घरे जाय नहीं, तेथी पारणाने द्विवसे लोकाने पतेज तेने मांटे चोजन द्वापवा वाग्या ॥ ६५ ॥ तेओपाथी
 एकतु ते ग्रहण करवा वाग्यो, तेथी लोकाने जणववा न वाग्यु के, तेथे फेनु चोजन ग्रहण कर्यु, पडी
 ते जाणवा मांटे तेओए एरु जेरी न्तवी, पडी जेनु चोजन ते ग्रहण करे, ते माणस ज्यारे ते जरी
 नगरे, त्यारे चकीना बोमो पाज यळी जाय ॥ ६६ ॥ एवी रीते केटनोरु काळ गया तद गजग्रही
 नगरीमा श्रीवर्धमान मच्छु समोसर्था, त्यारे साधुओ जिज्ञा मांटे ज्यारे ओनेश मागवा द्वाग्या, त्यारे जग-
 वाने तेओने म्हु के, एक मुहूर्त्तवार सतुर करे ? केमके हमणा ग्रनेपणा ३, एटने अमुजतो आहाग मळे
 म्हु डे, पडी ज्यारे ते इटनाने चोजन करी ज़ीधु, त्यारे जगवाने साधुओने कतु के, हंवे गोचरी
 जाओ ॥ ६७ ॥

गौतमश्चोक्तो मम वचनेन त ज्ञेय, अनेकपिन्निक एकपिन्निकस्त्वाद्युक्ति-
 ति ॥ ६० ॥ ततो गौतमेन तथा ज्ञेयतो रुद्रः, यूयमेनेकानि पिन्नातानि आहार-
 यत, अहमेकं पिन्नां ज्ञेयं, ततोऽहमेकपिन्निक ॥ ६१ ॥ मुहूर्त्तान्तरादुपशान्ताश्चतयति,
 नैते मृपाज्ञाधिण, कथं नु ज्ञेयदेव, हु ज्ञातोऽर्थः, ज्ञागयनेकपिन्निक, यतो य-
 द्विने मम पारणक तद्विन्मनेकानि पिन्नातानि क्रियते ॥ ७० ॥ एतेऽप्यहृतम-
 कारितं ज्ञेयते, तत्सत्यमुक्तमिति चित्तयन् जाति स्मृत्वा प्रत्येकजुष्टो जात, अध-
 यन् ज्ञापित्वा सिद्ध इति, एते च तद्ज्ञमसिद्धिका एवेति ॥ ७१ ॥

पत्नी ज्ञागयने गौतम स्मार्पिते कथु के, मारा वचनधी ते इन्द्रागने जदने कहे के हे' अनेक पिन्ना
 ग्रहण करनारा एक पिन्ना ग्रहण करनारो तने जौवाने इच्छे छे ॥ ६० ॥ पत्नी गौतम स्मार्पिण तेने तेम
 कहेवाधी ते जौधायमान थयो, अने कहेवा वाग्यो के, तमो तो संकनो गमे अनेक पिन्नातु जेजन करो ओ,
 अने हु तो एक पिन्नातु जेजन कर तु, माटे हुज एक पिन्नातु तो तु ॥ ६१ ॥ पत्नी मुहुत्तं वाट
 ज्ञात थागधी ते विचारवालाग्यो के, आ साधुजी जनुतो जौवे नहीं, अने एतते केम थाय? अरे? हवे मने मातुम
 पन्नु, हुंज अनेक पिन्नातु थद शकु तु, वेमके जे दिवसे मने पारण होष जे, ते दिवसे संकनो मने पिन्ना (मारे
 माटे) करवाया आवे जे ॥ ७० ॥ एज्योतो कोइए नहीं करेव तथा नहीं करावेव पिन्ना जेमे छे, तेधी तेमणे सत्य
 वतु जे, आ प्रमाणे चित्तवतो ते इन्द्रग जातिरक्षण इति ज्ञान प्राप्त करीने अरेक दुष्क द्यो अने अर्थजनेन ज्ञापित
 करी ते सिद्ध थद गयो. एज्यो तदर्थ सिद्धवाजज जे ॥ ७१ ॥

॥ ५३ ॥

एतेषु षड्भेदेषु जतुषु प्रथमे द्वये त्याज्या., मरुस्थद्धादिसदृशो पुचतुषु चोपदेष्टव्यमिति ॥ ७२ ॥ पौढेति विदित्वा नरचिदोऽग्निमाग्निमसमैर्बुधैर्नव्य ॥ नत्र रिपुजयश्रिया स्या—दासन्नमव्ययसुख यत् ॥ ७३ ॥

॥ इति षष्टस्तरग ॥

अने त्रा साधुआं तो नहीं करेदु अने नहीं करावतु जेजन से डे, मोटे गौतमस्वामीण मने सत्य बुडु डे, एम विचारला तेने जातिस्मरणज्ञान थायाथी ते प्रत्येक बुद्ध थयो अने अत्रायन ङणीने सिद्ध थयो ॥ ७२ ॥

एवी रीते त्र प्रकारना मनुष्यना भेदो जाणीने विद्वानोए, उच उच जेदो जेवा थतु, के जेवी ससार-रूपी शत्रुने जीतयानी बद्धमीवने करीने मोक्षमुख नज्नीक आवे ॥ ७३ ॥

॥ एवी रीते छदो तरग समाप्त थयो ॥

इति पद्यस्तरंगः समाप्तः

अथ सप्तमस्तरंगः

पुनर्घटदृष्टतेन योग्याऽयोग्यानेवाह—मूढास्—सुह असुह दब्धवासिश्च ॥ वसमा-
ऽवसमा अ वासिश्चा य घना ॥ सुहअसुह धम्मवास । पकुच्च जीवाण डि-
दृता ॥ १ ॥

वकी पण रत्ताना दृष्टत करीनि योग्य तथा अयोग्येनुज स्वरुप कहे डे.—पूळनो अर्थ-शुचि अर्थ-शुचि वासित थयेत्ता, तथा अशुचि अव्ययी वासित थयेत्ता, तेमज म्वानी करी शक्य तेवा अने खानी न करी शक्य तेवा तथा नहा वासित थयेत्ता, एम पान प्रकारना रत्ताओ जाणवा, ते प्रमाणे शुचि अने अशुचि णी धर्मनी वासनने अपेकीने जीवना दृष्टते जाणवा ॥ १ ॥

इह घटा छिधा, वासिता अवासिताश्च, वासिता अपि छिधा शुभ्रद्रव्यवासिता
 अशुभ्रद्रव्यवासिताश्च ॥ २ ॥ तत्र ये कर्पूराऽशुरुचदनादिभिर्द्रव्यैर्वासितास्ते शुभ्र-
 द्रव्यवासिता., ये पुन पक्षाकुलशुभ्रसुरतेष्वादिभिर्वासितास्तेऽशुभ्रद्रव्यवासिता.,
 उन्नयेऽपिपुनछिधा, वास्या अवास्याश्च ॥ ३ ॥ तत्र ये द्रव्यातरसत्रये पूर्ववास
 त्यजति ते वास्या, इतरे अवास्या., अवासिता नाम ये केनापि द्रव्येण न वा-
 सिता, एते पंचघटा ॥ ४ ॥ सुहृथसुहृथस्मेत्ति, शुभ्र. सम्यग् जीवदयादिमूढ-
 स्वेनोन्नयद्वोकहितो जेनो धर्म ॥ ५ ॥

अर्हो घना रे प्रकारना छे, एक वासिनि थयेद्वा अने बीजा नहीं वासिनि थयेना, वासिनि
 थयेना एण रे प्रकारना जाणया, शुभ्र द्रव्ययी वासिनि थयेवा अने अशुभ्र द्रव्ययी वासिनि थयेद्वा, ॥ २ ॥
 तेमा जे कपर, अगुरु, तथा चदन आदिक द्रव्योयी वासिनि थयेद्वा छे, ते अशुभ्रद्रव्यवासिनि महेवाय, तथा
 जे सुगळी, दासण, मडिरा तथा तेन आदिकयी वासिनि थयेना छे, ते अशुभ्रद्रव्ययी वासिनि कहेवाय; वळी तेओ
 वने पात्रा रे प्रकारना छे, ग्वाली करी शकाय तेवा अने ग्वाली न करी शकाय तेवा. ॥ ३ ॥ तेमा
 जे बीजा द्रव्यना सवथयी पूर्वनी वासने तने छे, ते खात्री करी शकाय तेवा, कहेवाय, अने तेयी उद्घटा न
 खात्री करी शकाय तेवा कहेवाय, तथा अवासिनि एट्ठे जे कोइ एण द्रव्ययी वासिनि थयेना नयी. ए पांचे
 जातना घमाओ ॥ ४ ॥ शुभ्र धर्म एट्ठे सम्यकन तथा जीवदया आदिकना मलयणाये करीने वने लोकमा
 हितकारी एवो जैन धर्म जाणवो ॥ ५ ॥

तद्विपरीत पुनरशुन, तयोर्मास वासन, प्रनीत्य जीवानां दृष्टता जयति, तयाहि
 —जीवा अपि द्विधा वासिता अयासिताश्च ॥ ६ ॥ तत्राऽवासिता ये केनापि
 दर्शनेन न वासिता, तदाकाङ्क्ष एव च बोधयितुमारब्धा, श्रीवर्धमानदेशनाप्रतिबु
 द्धात्मिकरूपेधकुमाराद्विवत् ॥ ७ ॥ वासिता अपि द्विधा, सम्यग्धर्मण मिथ्यात्वा-
 दिना च, उन्नयेऽपि च द्विधा, वास्या अयाम्याश्च, तत्र ये सुपुर्मादिसामग्र्या मिथ्या-
 त्वाद्विवासना वसन्ति, तेऽशुनधर्मवासना प्रतीयवास्या ॥ ८ ॥ श्रीइन्द्रचूल्याद्येकादश-
 गणधरश्रीप्रज्जमशय्यजमसिद्धसेनगोविदवाचकश्रीहरिन्नद्धसुरिधनयानपन्निताद्विवत् ॥ ९ ॥

अने तेंवी विपरीत ते अशुन र्म जणयो ते येनेनी यामनांने आश्रीने जीवोनां ष्टलह्य चाप
 ते, ते कहे डे —जीयो पण वे प्रकारना डे, एक यासित ने वीजा अवासित ॥ ६ ॥ तेमा अवासित ए-
 टने कोऽ पण दर्शनेवी जे वासिा थयेना नयी, अने तेज ववेर जेअने प्रनिबोधा मानेया डे, एया श्रीर्म
 मानवजुनी देशनायी प्रनिबोध पामेना अतिपुक्क तथा पेमरुमार आदिकनी पेडे ज एवा ॥ ७ ॥ वासित
 पण वे प्रकारना डे सम्पण र्मयी वासित थयेना अने, मिथ्यात्वआदिकयी यासित थयेना, वडी ते येने
 पण वे प्रकारना डे वामीशकाय एवा अने न वामीशकाय तेवा, तेमा जेआ मुपुरुआदिकनी सामग्री हेते
 डेने मित्र-पालआदिकनी यामनांने वमी नावे डे, तेओ अशुन धर्मनी वामनांने आश्रीने वामी शकाय तेवा डे, ॥ ८ ॥
 अने तेवा श्रीइन्द्रचुति आदिक अण्यर गण्यरो श्रीप्रज्जवस्वामी, शपञ्चस्वामी, सिद्धसेनञ्चिाकर, गोविद
 वाचक, श्रीहरिन्द्रसूरि तथा धनपालपन्निताद्विक मरवा जणया ॥ ९ ॥

ये च सुगुर्वादिसामग्र्यामपि मिथ्यात्वाद्यशुभधर्मवासं न व्रमति ते पुनरवास्याः, श्री-
कादाकमूर्खिचनऽऽप्रतिबुद्धतद्भ्रुमिणीनगरीशदत्तनृपादिवत् ॥ १० ॥ * तु-
रुमिण्यां दत्तनामनाह्यणमत्रिणा राज्यं स्वायत्तीकृत्य जितशत्रुनृपं निष्कास्य स्वय
राज्यं कुर्वता पुण्यार्थं बहवो यागा कृता ॥ ११ ॥ तत्र मातुङ्गकालकाचार्या-
गमनमातृप्रहिततत्याश्वदत्तनृपागम, धर्मोक्तौ यागफलप्रप्तने नृपेण कृते, जीवन्मयाधर्म,
पुन पृष्टे हिंसा दुर्गतिहेतुः ॥ १२ ॥

रती जेओ मुगुरु आदिहनी सामथ्री मऊने डवे पण मिथ्यात्त आदिक अशुभ धर्मनी वासनाने
तजता नथी, तेओ न रामो शक्य तेवा केहेवाय छे, अने तेवा श्रीकालिक गूरिना कवनथी नहीं प्रति-
बोध पोमना तेमना जाणैज एवा तुर्मिणी नगरीना स्वामी नत्तराग आदिकनी पेडे जाणया ॥ १० ॥
* तुर्मिणी नगरीमा दत्त नामना ब्रामण मत्रिए राज्य स्वाधीन करीने, तथा जितशत्रु राजाने कहारनी मुकीने,
पोने राज्य कत्वा मान्यु, तथा पुण्य मटे तेणे गणा यहो कर्या ॥ ११ ॥ ते नाममा तेना मामा कादाकाचार्य
पयार्थो, ल्यारे दत्त राजनी माए भोक्तनयायी, ते दत्त राजा तेमनी पासे आब्यो, र्म सबधि चर्वाया यइना फळ
माडे राजाण प्रभन कत्वायी आचार्यजीए जीवन्मयाधर्म धर्म कथो, फरीने पृत्रायी आचार्यजीए कथुं के, हिंसा
ए सुर्गतिनो हेतु छे ॥ १२ ॥

* आ कथा एक प्रतिमा छे, अने बीजी मतिमां नथी आयी.

पुनर्वच आह, वक्र मा वदतु, यागफल कि, ततो मृत्युमाश्रित्योक्तं नरकगति, द-
त्तेनोक्तमह नरके यास्यासि, गुरु, ---क सदेह ॥ १३ ॥ कदा, ससमे दिने, कय-
केलाचिज्ञानेन, सुखेविदूयातात्, दत्तेनोक्त त्व मय यास्यसि, गुरु—देवलोके ॥ १४ ॥
तेन स्टेन रक्षिता, सप्तदिनानतर मारणादि चित्तयित्वा, तत स्व सर्वं पुर सशो-
ध्यावासे स्थितोऽष्टमदिनत्रमेण बहिरश्वारूढो गुरुराण्य मारणार्थं गड्डनगाढवपुश्चि-
तार्दिनेन दृष्टमाक्षिप्त्वेन पुरीष कृत्वा कुसुमत्याग ॥ १५ ॥ तदुपर्यश्चाह्विघातोद्धव-
छिद्रमुखप्रवेशेन नरकगमन निश्चित्य द्वोऽरेव कुक्षिपाकेन मारित, गुम्न स्वर्ग
गता, इति दत्तनृपकथा ॥ १६ ॥

गती त्चे कष्ट के, तपो आफो जयाव नहा आपो? यकनु फल शु डे? ते कहां? त्पारे पुरुने
आश्रीने आर्यावीप कष्ट के, नरकगत डे, त्पारे दत्ते कष्टुं के, शु हु नरकमा जत्सा? गुरूप कष्टु के, एमा
शु सदेह डे? ॥ १३ ॥ त्पारे त्ते पछु के, स्यारे? गुरूप मधु सन्नेपे दिसे त्ते कष्टु के केवी गीने अने
शु पयाणयी? गुरूप कष्टु सुखवा पिण पदयायी, त्पारे दत्ते फरीने पछु के, तु यया जत्सा? त्पारे गुरूप
कष्टु के, हु देवतोक्त्सा जत्सा ॥ १४ ॥ फली तेणे कोधायमान यद्, सात दिवस वाट' गुरुने मारया आद्रिकनो
विचार करीने त्या राया, पडी तेपोने आछु नगर साफ करावीने मेहेटया रबो, तथा आठया दिस्सना अपयी
वहाग निरुची रोमपर चनी गुरुने मारया माटे जवा हाणयो, एटनाया (मार्गप) घण्टीज देह चिनायी पीनयेवा
एक दृष्ट मानीये जोणे फरीने ऊपर पुण्येयी विष्टने डाकी वीधी ॥ १५ ॥ तेपर घोमनोपण हागयायी
तेमायी पिण उडजरीने ते दत्तना सुखया पनी, अने तेधी तेला नरके जमानो निश्चय करीने लोकोपज नेने रीगती
रीयावीने मानी नाण्यो, तथा गुर महाराज रोगे पयायी, एवी रीते इत राजानी कथा जाणवी ॥ १६ ॥

ये पुनः कुयुर्वादिगत्या सम्यग्दर्शनचारिश्चादि वसति, ते शुद्धधर्मवास प्रतीत्य गाम्या, बौद्धसगत्येकविंशतिक्रमोऽहंछर्मत्यागिश्चिह्नसूत्रिशिष्यपपश्चात्तदुपज्ञद्वि-
तविस्तराप्रतिबुद्धश्रीसिद्धर्षिवत् ॥ १७ ॥ ये तु कुयुर्वादिक्सगतावपि सम्यग्दर्शन-
चारिश्चादि न वसति, ते शुद्धधर्मवास प्रतीत्याऽवाम्याः, श्रीश्रावञ्चापुत्रगुरुप्रतिबो-
धितशुकपरिव्राजकशिष्यमुदर्शनश्रेष्ठिवत् ॥ १८ ॥ तेषु ये शुद्धधर्मवास प्रतीत्य
वाम्याः, अशुद्धधर्मवासं प्रतीत्याऽवाम्याश्च ते उक्तये अयोग्याः. शोषास्त्रयो योग्याऽ-
ति ॥ १९ ॥

यत्नी जेभ्रो कुगुर आदिकनी सगतिवी सम्यग् दर्शन तथा चारित्र आदिकने वपी नखे डं, तंत्रो शुद्ध
धर्मनी वासनाने आश्रीने वामी शकाय तेवा कंठवाय डे, अने तेवा रोद्धोनी संगतिवी एकत्रीसवा जैन र्मनो त्याग
करानर श्री हरिन्नचमृरिना शिष्य, तथा पाठ लयी श्रीहरिन्नशरिए र्केवी द्वात्रिंशत्तराथी प्रतिबोध धार्येवा श्रीसि-
द्धर्षिनी ऐडे आणवा ॥ १७ ॥ यत्नी जेभ्रो कुगुरुआदिकोनी कुसगति होते अते पण सम्यग् दर्शन तथा चारित्र
आदिकने वपता नथी, तेभ्रो शुद्ध धर्मनी वासनाने आश्रीने न वामी शकाय तेवा वंहेवाय डे, अने तेवा श्रीश्राव-
ञ्चापुत्रगुरए प्रतिबोधेवा शुक्परिव्राजकना शिष्य मुदर्शन शेरनी ऐडे जाणवा ॥ १८ ॥ तेभ्रोमा जेभ्रो शुद्ध ध-
र्मनी वासनाने आश्रीने वामी शकाय तेवा तथा अशुद्ध धर्मनी वासनाने आश्रीने जेभ्रो न वामी शकाय तेवा, एम
वन्ने प्रकारना अर्थे प मनुष्यो डे, अने वाक्तीना नण प्रकारना योग्य मनुष्यो डे ॥ १९ ॥

इति निबुध्य घटोपमया स्फुट ।तनुभृतो बुवि पचविधान् बुधा.॥ सुकृतवासमवाप्त्य-
तयोत्तम ॥ श्रयत दुर्जयकर्मजयश्रिये ॥ ३० ॥

॥ इति सप्तमस्तरग ॥

एवी रीते रत्नानी उपमायी गगना पाच प्रकारना मनुष्योने प्रगट रीत नाएनि हे विद्वानो नरमी
शक्याय एवी रीते धर्मनी उन्नप वासनानो, दुर्जय एवा कर्मोने जित्वानी दडमी माटे आश्रय कर्णे ॥ ३० ॥

॥ एवी रीते सात्तमो तरग जाणवो ॥

इति सप्तमस्तरंगः समाप्तः

अथ अष्टमस्तरंगः

पुनरपि नग्यतरेण योग्याऽयोग्यविचारमाह ॥—जह वरजज्ञने अ सेरे । वायस
साणेनहसमाश्रण ॥ चायद्विहणासिअथरइ । सुगुरुएसे तह जिआण ॥ १ ॥

फरीने पण वूदा मकरयी योग्य अयोग्यनो विचार कहे ठे गृह्णनो अर्थ—जेम उत्तम जळयी जरेला
तळावया कागना, कुतरा, हाथी तथा इस आदिको अलुग्रमे त्याग, चाटवानु, तपि तथा स्नेह वतावे ठे, तेम सुगुरना
उपदेश प्रत्ये जिवितु स्वल्प जाणवु ॥ १ ॥

व्याख्या—यथा वर निर्मदं जड तेन भृते सरसि वायसश्चानङ्गहसादीना (मकार प्राकृतत्वादद्वाङ्गणिक, प्राप्तानामित गम्य) त्यागो लेहनमाशिततारतिश्च क्रमाद् भवति (विभक्तिकोप प्राकृतत्वात्) ॥ २ ॥ तथा सुगुरूपदेशेऽपि अधमादीना जीवाना त्यागाद्यो भवतीति पिनाय ॥ ३ ॥ अथैतद् जाव्यते, यथा निर्मदजडपूर्णे महासरसि वायसस्तृपातुरोऽपि प्राप्तो न जड भवति, न च वर्ण्यतमद्वतापादिव्यप- गमार्य स्नाति ॥ ४ ॥

व्याख्या—जैम उच्यते एतद्दे निर्मल जळयी जरेवा तळावमा कागना, कुतरा, हाषी तथा हस आदिकोनी (अर्हा प्राकृत जापा होमायी मकार अद्वाङ्गणिक डे, माध ययेजाओने एतद्दु अ गहाहा जाणवु) अनु- रूपे त्याग, चाटवानु, वृष्टि तथा स्नेह चाप डे, (प्राकृत जापा होवायी विभक्तिको डोप ययो डे) ॥ २ ॥ तेम सुगुरना उपदेशमा पण अधमआदिक जीवोनी त्याग आदिक चाप डे, एवी रीतने समुदायार्थ जाणवे ॥ ३ ॥ हेचे तेतुं वर्णन करे डे, जैम निर्मल जळयी जरेदां मोटा तळावमां गयेनी तृपातुर कागनां पण पाणी पीलो नधी, तेमन शरीरे रडेदा येड तथा ताप आदिकने डू करवा मोटे स्नान पण करतो नयी ॥ ४ ॥

क्रितुत्तरयस्या जनस्तानादिमद्विनकियज्जन्मभूतेषु गोपदेषु क्लृप्त्रविज्ञाद्विषु आविन्न
जन्न स्वल्प पिबति, नारीशिर स्थत्रिमन्नजन्नभृन्वधटाद्विषु वाऽशुचिचतुङ्केपेण जन्न-
विनाशयति, नतु स्वय तृष्यति ॥ ५ ॥ तथा केचदधमा जीवा अन्नियहीत-
तीव्रमिथ्यात्ववास्तनावशाद् बहुन्नरुमतादिहेतुकप्रमादादिवशाद्वा श्रीजिनधर्म छिप्यतो
दयाद्विगुणविशुद्धश्रीसर्वज्ञागमज्जन्मभूते महासरस्तुऽन्ये सुगुरुपदेशेऽपि हस्तिना मार-
येत्ततु जिनन्तम प्रविशेदित्यादिकुशास्त्राण्युच्चारयतोऽन्नित्नापमहूर्वाणास्येजति,
द्वोहखुरोरौहिणेयपूर्वावस्थादिवत् ॥ ६ ॥

परतु ते तर्जानि पाशसना म्यान आदिकथी मनीन धयेना एवा केऽनारु पाणीधी चरेत् नाना
व्योचीयामा अथवा स्वराय गान्ना आन्निमोभा रद्देवा गन्ना पाणानि स्व-प पीये डे, अथवा स्त्रीना मस्तकर
रद्देवा निर्मल जळथी चरेत्वा यन्ना आन्निमोभा पोलानी गटी चाच नावनिने ते जळने गामे डे, परतु पीने गुण
यता नधी ॥ ५ ॥ तेम केऽन्वारु अथम जीवो मारण करेवी एवी तीत्र फियात्त्वनी वासनाना वगथी, अथवा
चरे कभीपणा आन्निना हेतुरूप मयात् आदिकना मशथी श्री जनधर्म मत्ये छेप करता थका, दया आदिक
गुणोधी शुद्ध एवा नी सर्वज्ञ मशुना प्ररूपेना आगमोरूपी जळथी चरेत्वा, अने महान् तळाव सरया मुगुन्ना
उपदेशने विरे 'हायोधी मराड न्तु सार परतु जिनटुगमभा मवेश करवो नहीं' इत्यादि कुशास्त्राने उच्चारता
थत्ता अन्निवापा नहीं करीने ते सदुपदेशनो त्याग करे डे, (कोनी पेडे ? तो के) बोहखुर तथा रौहिणेय चोनी
पूर्व अकथ्यानी पेडे ॥ ६ ॥

* गोपद—गायना पगना ममाण, नाना

कदाचिच्च परेष्य श्रीगुरुव्रतकथाभ्रंशोकवचनादिसारस्य प्रवाद श्रुत्वा गोप्यदाडितुद्व्य-
 न्यस्तं श्रुतपूर्वविद्यया शृण्वति ॥ ७ ॥ काका इव जलघट श्रोतुहृदयबोधसपि-
 मिथाकुतर्कादिजिर्वितर्कयति विनाशयत्यपि, अथवा गोप्यदाज्ञपाश्वस्थादिषु रति
 कुर्वते, गच्छनिर्गतेषु नारीशिर स्थघटजड्वसमेषु मरीच्यादिषु कपिद्यादिवद्भ्रति दधत-
 स्तद्धर्म च विनाशयति ॥ ८ ॥ तत्रकपिद्वोडाहरण यथा-इहवे जगद्दे इमीसे
 उसन्पिणीए जगद्देचक्रवृद्धिसुओ मरीक्षनाम जगवओ उसन्नसामिस्त देसण सुत्ता
 पन्निबुद्धो पव्वइओ ॥ ए ॥

बही कदाचित् रीजा पासेयी श्री गुरुए कहंदा रुया, ओक तथा वचनो वोरेला सारना प्रवाद हो
 रुवाड) ने साचळीने जेणणे प्रथम श्रण रुई डे एसा ग्वाबोचिया जेना पाम-यादिक पासेयी ते यत्ने साचळे डे ॥७॥
 तेपज सागनाओ जेप जजना रमने, तेम साचळनाराओना हृदयना बोधने पण सोदा कुलर्के आदिक र्के रुनी, नि
 तर्के डे तथा नष्ट पण करे डे, अथवा नाना ग्वाबोचीया सरना पाल-यादिको प्रत्ये अचिज्ञाप मेर डे, अने गट्टी
 निकळी गयेना एवा खीना मस्तकपर रहेवा रमना जळ सरवा मरीचि आदिको प्रत्ये रूपिज आदिकनी पेंडे रचि र
 रता थका तेना रमने नष्ट करे डे ॥८॥ त्या रूपिजनु उदाहरण नीचे मुजमे डे -आज जगतकोमया आ उस्तरपिणीमा जस्त
 चक्रवर्तिने पुत्र, के जेनु मरीचि नाम हतु, तेणे जगमान् श्री कृपण्देव स्वामिनी देशना साचळीने प्रतिबोध पामी दी-
 द्या बीधी ॥ ए ॥

? श्रुतपूर्व वैस्ते श्रुतप्रमाणः तेष्यः ।

ज्ञप्ति आणिए एगारसगाणि, कियतमवि समय पाळिअ सामन्न, कळिठकम्मोदएण
जाओ से अन्हाणपरिस्सहो ॥ १० ॥ तकाळोचिअसुच्छजावणयाए पवत्तिअ प-
परिवायगद्विग, तथा च श्रीआवश्यकनिर्मुक्तौ ॥ ११ ॥ समणा तिदरु-
विरया द्दत्याडिगायापटूक तत्स्वरूपोपदर्शक, विहरइ सम जगवया, देनेइ साहुधम्म,
पुन्डिओ क्किलु ममेरोसोत्ति निदइ अप्पाण ॥ १२ ॥ उवसते उवणेइ साहूण,
अन्नया धम्मकहाण अब्बित्तो कविओ उवेणीओ साहुण, नरुच्चइसे, जपिअ
मणेण अल्लमे इमिणा, किमेरय चैव धम्मो न पुण तुहसासणे ॥ १३ ॥

अगारे अगोने तेणे अन्यास कथा, तथा मेट्टोफ काळ सुवि तेणे सावुपण पाट्यु, परतु रिउए
कर्माना उदयथी तेने अज्ञान परिसह थयो ॥ १० ॥ अने तेथी तेणे तक्काळ उचित शुद्ध जावनाने करीने
परित्राजकोगा प्रतीत्यु, तेमज श्री आवश्यक निर्मुक्तिमा पण कथु डे के ॥ ११ ॥ सावुओ नए दन्नेनी
विरतिपाळा होय छे, इत्याडिक उ गाथापा तेनु स्वल्प देवान्यु उे पडी ते मरीचि मजुनी साये विवस्वा द्वायो,
सावुधर्माने उणेशवा वाग्यो, वळी जो बोइ प्रडे के, तमारो धर्म आचो केम डे? त्यारे ते पोताने लिन्वा द्वाणे
॥ १२ ॥ ज्यारे कोइ प्रतिबोध पापे त्यारे तेने सावु पापे डेइ जाय, फक द्दहामो वपिन नामे पलुय तेनी
धर्मकथाथी प्रतिबोध पाप्यो, अने तेथी तेने सावु पासे ते बोइ गयो, परतु तेने ते सावुनो म्मे र्म्यो नहीं,
तेथी तेणे (मस्तिने) कथु के, मारे आ सावुधर्मनी जर नयी, शु अर्हाज धर्म डे? अने तपारा शास-
न्मा धर्म नथी ? ॥ १३ ॥

अणरिहोएसोत्तित्रावं नाउण, ममाधिकज्ज पेक्किचारणेति समाद्धोचिउण जपिअ-
मणेण कविद्धा इत्यति इह्यपि ॥ १४ ॥ दुज्जासिएण वट्ठिओ ससारो पब्बाविओ क-
विद्धो साहिओ किरिआकद्धावोत्ति, एवमाइ गयतराओ नेअमिति ॥ १५ ॥
अत्र वायससदश कपिल्ल; महासरस्तुदय सुगुरुपदेश परित्यज्य घटजद्वसमे मरी-
चिवचने रत्तिकारित्वात्, तथा स घटजद्वमिव निर्मल स्वल्प सम्यक्प्ररूपणादिक मरी-
चैर्धर्म कविद्धा इत्यपि इह्यपि इत्यादि दुरतससारकारणावितथप्ररूपणादिहेतुचवना-
दिना विनाशितवाञ्छेति ॥ १६ ॥

ते साचल्ली मरीचिए जाएतु के, आ साधुधर्मेने अयोग्य ठे, एम जाएनि, तथा मोरे पण एक वैयाच कम्मनारनी
जरर ठे, एम पण विचारीने तणे कपिवने वहु के, हे कपिल्ल अही पण धर्म ठे अने, मोरे त्या पण धर्म ठे ॥ १४ ॥
एवी रीतना दुर्जापितथी मरीचिनो ससार वयो, पडी कपिल्लने तणे दीक्षा आपी, तथा क्रियानो समूह पण शिख-
व्यो, इत्यादिक विशेष दृष्टात वीजा श्रयथी जाणी देवु ॥ १५ ॥ अही कागना सखो कपिल्ल जाएवो, अने तणे
महान् तळात्र सरखा सुगुरना उपदेशने तजीने घनना जत्सरखा मरीचिना वचनमा अनिज्ञाप कर्यो, अने तेम करीने
घनना जत्सरखा निर्मल अने स्वल्प सम्यक् प्ररूपणादिकरूप मरीचिना धर्मेने, 'हे कपिल्ल' त्या पण धर्म ठे अने
अही पण ठे, इत्यादि दुस्त ससारना वारणरूप जे जूवु प्ररूपण आदिक तेना हेतुस्वरूप थवा वने करीने, तणे ते
धर्मेने विनाश पण कर्यो ॥ १६ ॥

ते चाऽऽज्यया इरुजध्या विराधितधर्मत्वेन दुर्लभबोधिका दुर्गतिवच्छायुःका वा जवति
 ॥ १७ ॥ साणत्ति, यथा श्रान तृपातुरोऽपि तादृशे सरसि प्राप्तो, यदि प्राप्तोति
 तदा गोपदादियु, चेत्सरसि मुसमेवाग्रत कृत्वा ब्रह्मनं करोति, न तु यथेष्ट घुटघुट्टे
 पिवति ॥ १८ ॥ न च स्नानादि कुर्वते, तथा केचिज्जीवाः अनचिगृहितनिध्यात्वा
 जिनधर्मे माध्यस्थ्यादिनाजस्तादृशे गुरुपदेशे सारस्यादिना किञ्चिदजिज्ञापकुर्वाणा अपि
 अधिकविरतिदानमिथ्यात्प्रिस्वजनलोकापवादादिज्ञियाऽधिक सपूर्णमुपदेशे न शृण्वति
 ॥ १९ ॥

रती तेरा मनुज्यो अरुज्य, इरुज्य तथा धर्मे विरोध्याथी दुर्लभ बोधवाळा अरुज्या दुर्गतिमा नो वा
 आयुष्यवाग थाय डे ॥ १७ ॥ श्रान एतने मुत्तरो जो के वृपातुर होय तोऽएण रेवा इदान सरोसर एत्ये ज्तो
 नथी, अने रताच जाय तो पण नाना स्वाभोचीयां आत्किमा जाय डे, अने तेम नही तो रतादमा इरुनेज
 अगानी करीने चळ्या करे डे, परतु यथेष्ट गीते एत्ये इच्छा मुजय इरुने इरुने ते पाणी पीनो नथी ॥ १८ ॥
 तेम स्नान आदिक पण करतो नथी, एवी रीते केत्तारु जीवो मित्याः नो आऽएट नही वरीने जिनधर्मा
 मध्यस्थपणा आदिकेने चजता थका तेवी रीतना गुरना उददेशमा साऽएणा आदिवरुने वरीने वाक अजिब्या-
 पने सरता थका पण, आत्कि विरति, दान, तथा मित्याः वी एवा रगा मएसोना अरुवद आदिवना चरथी
 अधिक तथा मरण उपदेश सानठता नथी ॥ १९ ॥

किन्तंरातरा सरसकथाद्भोकादि वियत् शृण्वति अथधारयति च, क्रियता बोधि
 तृप्तिमान्बुवत्यनुतिष्ठति च ॥ ३० ॥ ते च धर्मान्यासवशाच्छिष्य्य दुर्गतिं नाप्नु-
 नति, तां पाप्मा अपि पुनर्बोधिं व्रजन्ते, गोचूतिवसुचूतिविप्रच्छयवत् ॥ ३१ ॥ इत्युक्ति,
 यथा गजस्वपातापाधाक्रान्तस्तादृशे सरसि प्राप्तोयथेष्ट जलपानेनाशितता तृप्तिं करोति,
 स्वस्य रत्नानजलज्जहीनादिना मद्भतापापहार च ॥ ३२ ॥ पर स्नात्वा निर्गतो भूल्या-
 रत्नान् सरटयति, पुनःपुन रत्नानखरटनादि कुर्वते, तथा केचिज्जीवा मध्यमनावा
 गुरुपदेशे सम्यग् शृण्वन्त्यवधारयत्यनुतिष्ठति साह्लाढ तर्प्यन्ति, मिथ्यात्वविषयतृणा-
 कृपायादित्तापमद्भापहारेण शुद्ध्यति च ॥ ३३ ॥

परतु नच्चे रसयुक्त रुचा श्लोक आदिक केश्युक साचले डे, तथा धारे डे, तथा केट्याक बोध-
 रपी तृप्तने पापे डे, तथा ते मुज्ज अमुष्टान पण रे डे ॥ ३० ॥ अने तेवा मनुष्यो धर्मान्यासना वश्या
 विशेष प्रकारे दुर्गति पाप्मा नथी, तथा पापे तो पण फलाने योग पापे डे, (कोनी पेडे? तो के) गोचरति तथा
 तदुचरति नापे वे द्वाभ्योनी पेडे ॥ ३१ ॥ हेने इज एने हाथी. तपा तथा ताप आदिकथी यातुळ थयो
 एता तेरा तळासा जाय डे, तथा इच्छा मुज्ज अलपानवके करीने तृप्ति करे डे, वेगज स्नान तथा जळ
 कर्मा आदिगवके करीने पोताना देव तथा तापने दूर पण रे डे ॥ ३२ ॥ परतु स्नान रूपो वाद वहाण निरुळने
 दुळथी पाडो पोताने गरके डे, एम वाधवार स्नान तथा रम्यी खरमावाणु करे डे, एवी रीते केट्याक जीवो म यप
 आरुक्ता थया एता गुप्ता लुडदेडेने सम्यग प्रकारे साचले डे, अवधारे डे, ते मुज्ज अमुष्टान करे डे, अने तप करी
 हर्ष सहित तृप्ति पापे डे, तेरज मिथ्यात्व, विषय, तृणा तथा वपाय आदिकरूप ताप अने मेवना विगुश्याी शुद्ध
 पण थय डे ॥ ३३ ॥

परमऽदृढचित्ततया पुनस्तादृशसामग्र्या कृतीर्थिकवचनश्रवणादिना तदनुष्ठानाऽनुरागा-
दिनातत्तपोविद्याचमत्कारादिना विषयतृष्णाबह्वारत्नादिना आत्मानं धूढ्येव मन्दिन-
यति ॥ ३४ ॥ पुनर्युरुपदेशस्नानोक्तपखरटनादि च कुर्वाणा मनुष्यगतिहीनसुरग-
त्यादिनायोग्य पुण्यकर्मोपाजयति, पूर्वगाथाप्रथितश्यामद्ववणिगवत् ॥ ३५ ॥ केचित्तु
बहुज्ञानाऽऽपखरटनादि कुर्वाणा उत्तमसुरायुरपि वध्नति आसन्नसिद्धिकाश्च जवति
॥ ३६ ॥

परतु चित्तु दृढपणु नहीं होवायी करीने तेवी सामग्री शब्दते डते कुतीर्थोत्रोना वचनना श्रवण आदिक
वने करीने, तथा तेओना अनुष्ठानना अनुराग आदिकवने करीने, तेमज तेओना तप, विद्या तथा चमत्कार आ
दिकवी विषय, तपणा तथा घणा आरज आदिकवने करीने, जाणे धूमयी होय नहीं, तेम पोताने मन्दिन करेहे ॥
३४ ॥ बळी गुरना उपदेशरूप स्नान करे डे, तथा बळी धूमयी खरभाया आदिकपणु करे डे, अने तेम करता यका
मनुष्य गति नीच देयाति आदिकने योग्य पुण्यकर्म उपार्जन करे डे, कोनी पेंडे तो के, पुरनी गाथामा वर्णवेद्या
श्यामनवणिकनी पेंडे ॥ ३५ ॥ बळी केव्वाकतो घणु स्नान अने अनप खरभावापणु करता यका उत्तम नेवप
णानु आयु पण यणे डे, अने नदनीक मोडक पापवावाग पण थायडे ॥ ३६ ॥

हसन्ति, हसो यथा नादश्च सर संप्राप्य तत्रैव वसन् रति कुर्वते, निर्मलजलपान-
स्नानमृणालचक्राणादिना सरस्यैव तत्परिसरे वा तिष्ठन् शैल्यपाविड्यसुखान्यनुभवन्
रजोमद्भाऽपाविड्यतापात्र विदति ॥ १७ ॥ तथा केचिज्जीवा सद्गुरुरूपदेश श्रुत्वा
तत्रैव रति कुर्वाणा मनोवाक्कायैस्तदनुध्यानतदनुगतसूत्रार्थोच्छ्वरक्षणनतदनुष्ठित्यादिभि-
स्तदेव परिशीलयन्तो मिथ्यास्त्विवचनश्रवणोद्भवधर्माऽस्थैर्यादिमाहिन्यबह्वारत्रादिपापज-
वभ्रंशोशादितपात्रानुभवति ॥ १८ ॥ उत्तरोत्तरज्ञानदर्शनदेशविरतिसर्वविरत्यनुष्ठाना-
दिचिरासन्नसिद्धिका एव भवति, तस्मिन्नेव ज्ञेये छिन्तिथे वा ज्ञेये सिद्ध्यति,
आनन्दादिश्रीवीरश्रावकदशवत् ॥ १९ ॥

बली जेम हस तेषु तल्लव पामिने त्याज वसतो यको आनन्द करे डे, तेमज निर्मल जळनु पान स्नान तथा
कमळना चद्राण आनिक पूर्वक तळवमाज अथवा तेनी आसपासना प्रदेशमा रखो यको, तेमज शीतलता अने
पवित्रताना मुबोने अनुभवतो यको रज, मेद तथा अपविता अने तापने जाणतो नथी ॥ १७ ॥ तेम केद्वेदाक
जीवो सद्गुरुनो उपदेश सादळीने तेमाज अजिहाप करता यका मन, वचन अने कायावर्के करीने, ते मुजम
यान, ते मुजम सूत्रार्थ उद्वार, अच्युस अने ते मुजम क्रिया आदिकधी तेमुज परिशीलन करता यका मिथ्या-
स्त्रिओना वचनेने साजळवायी उत्तरन थयेदा धर्मनी अस्थिरता आदिक मेन, घणा आरज आदिकनु पाप,
तथा ससारना कवेदश आदिक तापने अनुभवता नथी ॥ १८ ॥ तेमज उत्तरोत्तर ज्ञान, दर्शन, देशविरति
तथा सर्वविरति आदिकना अनुष्ठान आदिक वने करीने नजद्रीक सिद्धिवाळज थाप डे, तथा तेज नये अथवा
वीजे जेवे मोडे जाप डे, (कोनी पेडे ? तोंके) श्रीवीर प्रभुना आनन्द आदिक दश श्रावकोनी पेडे ॥ १९ ॥

परमऽदृष्टचित्ततया पुनस्तादृग्मामग्न्या कुतीश्रिकवचनश्रवणादिना तदनुष्ठानाऽनुरागा-
 द्विनातत्तपोविद्याचमत्कारादिना विषयतृण्णावह्वारज्जादिना आत्मान धूद्येव मद्भिन-
 यति ॥ २४ ॥ पुनर्युग्पदेशस्नानोक्तरूपखरटनादि च कुर्वाणा मनुष्यगतिद्विनीसुरग-
 त्याद्विप्रायोग्य पुण्यकर्मोपाजयति, पूर्वगाथाप्रथितश्यामद्ववणिभवत् ॥ २५ ॥ केचित्तु
 बहुज्ञाद्वनाऽप्यखरटनादि कुर्वाणा उत्तमसुराथुरपि वधन्ति आसन्नसिद्धिकाश्च न्नवति
 ॥ २६ ॥

परतु चित्तु दृढपणु नहीं होवाची फरिनि तेवी सामग्री मळते ठेते कुतीश्रिओना वचनना श्रयण आदिक
 वने करिनि, तथा तेओला अनुष्ठानना अनुराग आदिकवने करिनि, तेमज तेओला तप, विद्या तथा चमत्कार आ
 दिकची विषय, तृण्णा तथा गणा आरत्न आदिकवने करिनि, जाणे इमची होय नहीं, तेम पोताने मद्भिन करेहे ॥
 २४ ॥ वळी गुरना उपदेशरूप स्नान करे डे, तथा वळी इमची खरनावा आदिकपणु करे डे, अने तेम करता थका
 मनुष्य गति नीच देयगति आदिकने योग्य पुण्यकर्म उपार्जन करे डे, कौनी पेडे तो के, पूर्वनी गाथाया गणिवेवा
 न्यामववणिक्नी पेडे ॥ २५ ॥ वळी केड्याकतो गणु स्नान अने अटप खरनावापणु करता थका उत्तम तेप
 णानु आयु पण गथे डे, अने नदनीक मोडू पासवावाग पण थायडे ॥ २६ ॥

हसन्ति, हसो यथा तादृग्ं सर सप्राप्य तत्रैव वसन् रति कुलते, निर्मलजलपान-
स्नानमृणालचक्रणदिना सरस्येव तत्परिसरे वा तिष्ठन् शैल्यपावित्र्यसुखान्यनुभवन्
रजोमद्वाऽपावित्र्यतापात्र विवर्ति ॥ १७ ॥ तथा केचिज्जीवा सद्गुरुरूपदेश श्रुत्वा
तत्रैव रतिं कुर्वाणा मनोवाक्कौयैस्तदनुद्धानतदनुगतसूत्रार्थोष्कारजणननदनुष्टित्यादिभि-
स्तदेव परिशीलयतो मिथ्यास्विवचनश्रवणोद्भवधर्माऽस्थैर्यादिमाद्भिन्ववह्वारजादिपापघ्न-
व्यद्वेशादितपाद्भानुभवति ॥ १८ ॥ उत्तरोत्तरज्ञानदर्शनदेशविरतिसर्वविरत्यनुष्ठाना-
दित्तिरसन्नसिद्धिका एव भवति, तस्मिन्नेव ज्ञेये छितीये वा ज्ञेये सिध्यन्ति,
आनन्दान्दिश्रीवीरश्रावकदशावत् ॥ १९ ॥

बली जेम हस तेवु तलाव पामिने त्याज वसतो यको आनन्द करे डे, तेमज निर्मळ जळनु पान स्नान तथा
कमलना चद्राण आदिक पूर्वक तलावमाज अथवा तेनी आसपासना प्रदेशमा रबो यको, तेमज शीतलता अने
पवित्रताना मुखेने अनुभवतो यको रज, पेव तथा अपवित्रता अने तापने जाणतो नवी ॥ १७ ॥ तेम केद्रवाक
त्रीबो सद्गुरुनो उपदेश साधलीने तेमाज अनिहाप करता यका मन, वचन अने कायावने ऋनि, ते मुजव
यान, ते मुजज सूर्यार्थ उदार, अचयास अने ते मुजज क्रिया आदिकयी तेमुज परिशीलन करता यका मिथ्या-
त्वित्रोपाना वचनेने साजळवाथी उत्पन्न थयेजा धर्मनी अस्थिरता आदिक भेद, घणा आरज आदिकुं पाप,
तथा ससारना क्लेश आदिक तापने अनुभवता नवी ॥ १८ ॥ तेमज उत्तरोत्तर ज्ञान, दर्शन, देशविरति
तथा सर्वविरति आदिकना अनुष्ठान आदिक र्मने करीने नमदीक सिद्धिवालाज थाय डे ; तथा तेज ज्ञेये अथवा
वीने ज्ञेये मोड्के जाय डे, (कोनी पेडे ? तोके) श्रीवीर मधुना आनन्द आदिक दश श्रावकोनी पेडे ॥ १९ ॥

श्रीमदुवायनदशाणंनक्षत्रशुक्रपरिब्राजकाऽज्ञोन्नितसुदृशनश्रेष्ठिकुमारपाद्मचूपद्मादिवद्वा
 ॥ ३० ॥ आदिशब्दाद् दृष्टतचतुष्टयेऽपि प्रत्येक योजितादशुचितमपकैकरुचि-
 ग्रामशुकर, स्नानाथरुचिवोकुट निर्मद्वपकिन्नजज्ञोजयसमानरुचिमहिप, सरोनद्येकपरिश्री-
 ज्ञनरुचिचक्रवाक्कादिदृष्टता अपि ज्ञेया ॥ ३१ ॥ एव दृष्टतोपदेशमधिगम्य शि-
 नार्थिचिरुत्तरोत्तरदृष्टतासदृशे सर्वशक्त्या चाव्य चव्यजीवैरेन शिवसुखसपद. करत-
 द्बलुडिताएव सुप्रापा चवतीति ॥ ३२ ॥

अथवा श्रीमान् उच्यते, दशाणंचन्द्र, शुक्र परित्राजकयी नहीं कोजेवा मुदशीन शेष तथा कुमारपाल
 राजा आदिकनी पेटे जाणया ॥ ३० ॥ आदि शब्दयी ते चार दृष्टतोमा, अनुक्रमे दरेकनी सोये जोरुनामा
 आवता अत्यंत गदा काट्यनी रुचिवाला गमनामा मूरु (चंद्र) स्नान आदिकनी अरुचिवाले योकरुने, निर्मल
 अने कादवावाला एम एवे जातना जनमा तुल्य रुचिवालो पाभे, तलाव तथा नदीना जननाज परिशीजननी
 रुचिवालो चक्रवाक, इत्यादि दृष्टतो पण जाणया ॥ ३१ ॥ एवी रीते दृष्टतोना उपदेशने मोक्षना अर्था चलय
 माणसोए उत्तरोत्तर दृष्टत सरस्वा सर्व शक्तियी यवु, के जेयी मोक्षसुखनी सपटाओ जाणे हृद्येळीमां होयती
 होय नहीं, तेम सुवच थाय ॥ ३२ ॥

इधुत्तरोत्तरनिदर्शनसंनिज्ञा नो । तद्व्योचामा जवत सदगुह्यकृतटाके ॥ येनाप्य
संस्कृतिसुधानि जयश्रीयाऽष्ट—कर्मद्विषा विद्वसथाद्वायमोद्वेज्जडस्या ॥ ३३ ॥

॥ इति तपश्रीमुनिमुंदरस्रगिरिविरचिते उपदेशरत्नाकरे अष्टमस्तरगः ॥

एवी रीति हे उत्तम जन्य दोको ! तमो सदगुह्यनी बाणीरूपी तलावमा उचगेत्तर (माग) दृष्टत सरवा
थाओ ? के जेवी समारना मुको पामीने. आडे कपोरूपी त्रुओनी ज्यद्वमीतके करीने अइय एवी मोकरूपी
द्वडमी माये तमो विवास कये ॥ ३३ ॥ “ एवी रीति तपगन्जाला श्रीमुनिमुंदर सृगिण रचेवा उपदेश रत्ना-
कर
यम ”

इति अष्टमस्तरंगः समाप्तः

अथ नवमस्तरंगः

पुनर्भयतरेण योग्याऽयोग्यानेवाह—मूढाम् सप्य जवृगा वजा । वज्रगवीसंनिहा चउह
जीवा ॥ परिणमइ जेसु सव्यं । विसतारिसनासपयम्बं ॥ १ ॥

वज्र प्रकाशं करिनि योग्य तथा अयोग्योत्तुज स्वरूप वहे डे—मूढनो अर्थः—सर्प, ज्वो, वयागाय,
तथा अबया गाय, सखा चार प्रकारना जीवो होयडे, के जेअने आपेवु सगळु कडे उेर. तदप, नाश तथा
द्वरूपे परिणामे डे ॥ १ ॥

सर्पों, जड़ोंका, वध्यागों अंध्या च एतत्सन्निजाश्चतुर्धा शिष्या जीवा वा ज-
 वति, सारुष्यनिरूपणार्थमुत्तारार्थमाह ॥ ३ ॥ परिणामश्ल्यादि, येषु प्रदत्त सर्वं
 क्रमाद् विपतादृशनाशपयोरूप परिणामतीति पिनार्थ ॥ ३ ॥ तत्र यथा विपभृतां
 सशर्करदुग्धादेरपि पान विषयैव कल्पते, एवमेकेषा जीवाना शिष्याणा वा सुसु-
 रोहिता सारा विविधा अप्युपदेशा सर्वेऽपि दूरे गुणा, प्रत्युताऽनर्थपरंपरायै जवं-
 ति ॥ ४ ॥ यथा श्रीपाश्र्वजिनेशहितवचनानि पचान्निसाधनपरस्य कमठपे ॥ ५ ॥
 आह च—मूर्खैरपम्वचोधिश्च । सहाद्वापश्चतु फल ॥ वाचा व्ययो मनस्ताप—
 स्तारुन दुष्यवादन ॥ ६ ॥

सर्प, जलो, वयागाय, तथा अकथ्यागाय, तेऽग्रे सरवा चार मकारना शिष्यो अथवा जीवो हो-
 यते, हेरे तेऽग्रेषु तुल्यणु देवान्नामादे उत्तरार्द्धं कहे ॥ ५ ॥ जेअने आप्णु सर्व कऽअनुक्रमे जेर,
 तदुपणु, विनाश तथा दूयस्ये परिणमेडे, एवो समुत्पयार्थ जाणवो ॥ ३ ॥ तेमां जेम जेरी प्राणीअने
 आप्णु सावर सहित दूध आऽदिकनु पान पण जेरस्पेज थायडे, तेम केऽद्वक जीवोने अथवा शिष्योने आप्णवा
 सुगुत्ना हितकारी अने उत्तम एवा नानामकारना सर्व उपदेशो पण, गुणो तो दूरे ग्या, परतु उवद्य दोषोनी
 श्रेणि उत्पन्न करनारा थाय डे ॥ ४ ॥ जेम श्रीपार्श्वमन्नुनां हितकारी वचनो पचानि तापनारा कमठ प्रत्ये थया
 तेम ॥ ५ ॥ कसु डे के—काचा बोधवाला अने मूर्खोनी सावे आवाप करवायी वचनोने व्यय, मनने गेद,
 तापना तथा अमर्षवत्प मम चार मकारना फलो थाय डे ॥ ६ ॥

अन्यत्राप्युक्त—नाज्नाम्य नाम्यते दारु । न शस्त्र क्रमतेऽश्मनि ॥ सूचीमुग्ध्या इ-
 वाऽशिष्ये । नोपदेश सुखावह ॥ ७ ॥ तथाहि—अ्वचिष्यते ज्ञानरयूय शीता-
 दितं खद्योतं गुंजा वाऽग्निधिया शुष्कतृणपणैराबाध प्रसार्यं सुजाद्यगानि तापम-
 नोरथसुखमनुभवति ॥ ७ ॥ तत्रैक शाखामृगो मृश शीतार्त्तस्तन्मुहुर्मुहुर्धमति, सूचि-
 मुखी पक्षिणी तत्रासन्ना प्राह ॥ ए ॥ जह मा विद्वश्य, नाय वह्निः, गुंजाद्येतत्,
 पुन पुन कथने तेन ज्ञानेण रुपा शिवायामास्फाड्य सा हतेति ॥ १० ॥
 एवविधा. शिष्या जीवा वा सर्पसदृशा इति ॥ ११ ॥

दीजी जगण् पण ऋषु डे के, न नमात्री रुनाय तेषु दृक् नमात्री शकतु नथी, तेमज पत्यपर हथी-
 यार चाली शकतु नथी, तेथी रीते कुशिय मत्ये आप्त्यो उपदेश, सूचीमुखीपक्षिणीना उपदेशानी पेटे मुक्कारी
 थतो नथी ॥ ७ ॥ ते सूचीमुखी पक्षिणितु उदाहरण नीचे कहे डे कोरेक वनमां उनीधी पीनयेडु वाड-
 राओतु टोळु पतगीआ अथवा चणोडीओने आंननी मुच्छिथी मूका पदनाओथी डाकीने, तथा पोताना हाय
 आडिक अचयवोने पसांने तापना मनोरथ सवधि मुक्कने अनुनेवे डे ॥ ७ ॥ त्या एक वाडरो उनीधी अत्यत पी-
 नीत थयो थको तेने वारवार अंभे डे; पट्टामा त्या नज्जीक रहेली सूचीमुखी पक्षिणी (सूयरी) तेने
 कहेवा लागी के ॥ ए ॥ हे जह, वृथा प्रयत्न न कर ? आ कइ अग्नि नथी, आ तो चणोडी आडिक छे, एवी
 रीते वारवार कहेवोधी ते वाडरो गुस्से थडने, तेणने पत्यपर पखाने मारी नावी ॥ १० ॥
 माडे एवी रीतना शिष्यो अथवा नीचे सर्प सरावा डे, ॥ ११ ॥

तथा यद्ब्रह्मज्ञोक्तसो यादृश रक्तादिकं पिवति तादृशमेवोदरगत धारयति, न पुन परिणामांतरं किमपि प्रापयति ॥ १२ ॥ एवमेके जीवा. श्रीगुरुवर्यदेवादि यथाश्रुत धारयति न पुनविशेषवोधजनकत्वापाठनेन परिणामांतरं प्रापयति, साधुज्जिर्नटो न विद्वोम्यत इत्युक्ते नटीविद्वोकिमुन्यादिवत् कुत्रपुत्रकवच्च ॥ १३ ॥ तथाहि एकस्मिन् पुरे एका स्त्री नर्तारि मुसे दधुपुत्रं परग्रहकर्माद्विचिरजीवयत्, स सुतो वर्धमानो मातरं पृच्छति, कथं मम पिता आजीविका कृतवान् ॥ १४ ॥ माताह अन्नगलेन, स आह अहमप्यन्नगामि, साह न जानास्यन्नगिणु, स आह कथमन्नगम्यते? ॥ १५ ॥

बही जैम जलो जेउ रुधिग आदिक-पीये ठे, तेजु पोताना पेटनी अदर ते धारी राखे ठे, परतु तेमा कइ एण जातनो ते फेरफार करी शकती नयी ॥ १२ ॥ एवी रीते केन्द्राक जीवो, जेम सान्द्रयो होय तेम श्री गुरनो उपदेश आदिक धारी राखे ठे, परतु विशेष प्रकरना बोधने उत्पन्न करवा के करनि परिणामातरे प्राप्त करी शकता नयी, (कोनी पेटे? तोकें) साधुओए नट न जोवो एम क्या छा नटीने जोनार साधुओनी पेटे, तथा कुनपुनी पेटे ॥ १३ ॥ ते कुद्वपुत्रु श्रुत कहे ठे—एक नगरमा एक स्त्री, पोतानो स्वामी गुजरी जवायी पोताना नाना पुत्रने बीजाना घरसा काम आदिक करनि उठरवा दाम्नी, पत्नी ज्यारे ते पुत्र महोडे धयोत्यारे तेणे पोतानी माने पुत्रयु के, मारो पिता केवी रीते आजीविका करतो? ॥ १४ ॥ त्यारे माताए वबु के, कोइनी सेवा करनि ते आजीविका चनावतो हतो, त्यारे पुते वबु के, हु एण त्यारे कोनी सेवा करू, त्यारे माताए वबु के, तु हजु सेवा करवात जाणतो नयी, पुते वबु केम सेवा कराय? ॥ १५ ॥

साह विनय कुर्गीया, कीदृशो विनय इत्युक्ते पुन साह, योऽर कर्त्तव्यो,
नीच चक्रमित्य, उंदोऽनुवर्तिना जाव्यमिति ॥ १६ ॥ तत सं नृप कचिदवन्नगितु
नगर प्रति प्रतस्ये, अतराद्धे अनेन व्याधा मृगप्रहणाय रह स्या दृष्टा, गाढस्वरेण
योत्कारो जणित ॥ १७ ॥ त श्रुत्वा मृगाखस्ता., ते. कुद्वित, सद्भवे कथिते
मुक्त., जणित च यदेदृशं प्रेक्षेया, तदा रहो नीर्गेतव्य ॥ १८ ॥ ततस्तेन
रजका दृष्टा, ततो रह शने शनैर्याति, रजकाणा च प्राण् वल्खाणि क्रियते तैर्गूढ-
पुहया निशुकाश्चौरप्रचारविज्ञोकनाय ॥ १९ ॥ तैश्चौर इति कृत्वा वध, सद्भवे
क्रथिते मुक्त, तैर्नणितं च, एवविधे शुद्धं जवस्विति वाच्य ॥ २० ॥

त्यारे माताए कयुं के, तारे विनय कालो जोऽये वली पुत्रे पूछु के, विनय केको हेय? तयारे तेणीए
के, जुहार कालो, धारे रहिने चानहु, तथा (शेजनी) इच्छा मुजव वर्त्तु ॥ १६ ॥ पढी ते कोऽर राजानी
सेवा माटे नगर प्रस्ये चाड्यो, वचचे मर्गमां तेये हरिणैने पकरवा माटे गुध रीते रहेवा पाराधिओने दीडा,
त्यारे मोय अवाजयी तेणे जुहार कयो ॥ १७ ॥ ते सान्जने हरिणे चमय्या, तेयी पागधिओए तेने मायो
तया खरी वल कहेवायी छोड्यो; अने वली कयु के, ज्यारे आबु जो, त्यारे गुप्त रीते हळवेयी जावु ॥ १८ ॥
पढी तेणे घोमीओने जाया, त्यारे गुप्त रीते ते धारे धारे जवा दाय्यो, हवे घोवीओना प्रयमयीज वखो चोराता
हता, तेयी तेओए चोरानी तपास माटे गुप्त माणसो राख्य हुतां, ॥ १९ ॥ तेओए तेने चौर जाणने बर्पो खरी
वाल कया वाद ओड्यो, अने कयु के, ज्यारे आम होयें तयारे शुद्ध चाओ? एम कहेवुं ॥ २० ॥

ततोऽप्रे बीजान्युव्यते, तेन तत्र जणित शुद्ध जन्तु, तैरपि हत., सद्भावै कथिते
 मुक्त, उक्त च ॥ २१ ॥ ईदृशे बहु जवत्वियुच्यते, अन्यत्र मृतक नीयमानं दृष्ट्वा
 वदति, ईदृश बहु जन्तु ॥ २२ ॥ तत्रापि हतो मुक्तश्च, तथैव उक्त च, ईदृशे ज-
 च्यते, एवविधस्यास्यत वियोगो जन्तु, अन्यत्र विवाहे जणति अस्यत वियोगो जन्तु
 ॥ २३ ॥ तत्रापि कुटितो मुक्तश्च, तथैव उक्त च, ईदृशे जण्यते, नित्यमेवविधानि
 प्रेङ्गध्व, शाश्वत च जन्तुत्वैतत् ॥ २४ ॥ अन्यत्र निगन्तवद् दम्भिक दृष्ट्वा जणति, नि-
 त्यमेवविधानि प्रेङ्गस्व, शाश्वत च जन्तुत्वैतत्, तत्रापि हतो मुक्तश्च, तथैव जणित
 ॥ २५ ॥

पत्नी आगल चानता बीजो वाववामा आवता हता, त्या तेणे क्यु के, शुद्ध चात्रो ? तेओए पण तेने
 माया, खरी पीना कर्पायी ओड्यो, अने क्यु के ॥ २१ ॥ आवे सभे घणु चात्रो ? एम कहेवाय, पत्नी बीजी
 जगोए मरनु हेर जन्तु जेने तेणे क्यु के, आतु पणु चात्रो ? ॥ २२ ॥ त्या पण मार पड्यो अने लुट्यो,
 अने वळी तेने क्यु के, आतु हेए त्यारे एम कहेतु के, आवानो अस्यत वियोग चात्रो ? वळी बीजी जगोए
 विवाह थतो हतो, त्या जः क्यु के, अस्यत वियोग चात्रो ? ॥ २३ ॥ त्या पण मार पड्यो, अने ओड्यो, तेमज
 शीव्यणु के, ज्यारे आतु होय, त्यारे एम कहेतु के, आवा कर्पां हपेसा जुओ ? तया आतु शाश्वतु चात्रो ?
 ॥ २४ ॥ वळी बीजी जगोए वेदीथी वपेना उगीदराने जेने क्यु के, आतु हपेसा तु जे ? तया आतु शाश्वतु
 चात्रो ? त्या पण मार पड्यो, अने ओड्यो, तया क्यु के ॥ २५ ॥

एवविधे द्वयु मोक्षो जन्वत्वित्युच्यते, अन्ये भिन्नसघाटक कुर्वन्ति तत्र ज्ञाति, द्वयु-
मोक्षो जन्वतु, तत्रापि हतो मुक्तश्च ॥ १६ ॥ तथैव क्रमादिकं ग्रामाधिपतिपुत्रमा-
श्रितस्त सेवते, अन्यदा दुर्भिक्षे तस्य गृहे रब्धा सिद्धा, ग्रामाधिपचार्यया ज्ञातितः स,
याहि सन्नानमध्यात् शब्दायस्व स्वामिन ॥ १७ ॥ यतो रब्धा शीतदा अयोग्या
जन्वति, तेन गत्वा तत्रैव गण्डेश्वर ज्ञातित, स, द्वजित; गृहगतैत तेन तान्त्रितो ज-
ज्ञातश्च, ईदृशे कार्ये ज्ञाने. कर्णे कथ्यते ॥ १८ ॥ अन्यदा गृह प्रदीप्त, ततो गत्वा कर्णे-
ज्ञाने. कथयति यावत् तावत् गृह सर्वं प्रज्वलित, तान्त्रितो ज्ञातितश्च ॥ १९ ॥

आहु ज्यारं हंग त्यारं प्य कहेतु के, जतदी बुटकारे पात्रो? एटनाम मोरक दोकां मित्रेने एकडा
करवानु करे डे, त्यां जइ कथु के, जतदी बुटाणु पात्रो? त्या पए तेने मार पड्यो, अने बुट्यो ॥ १६ ॥
एवी रीते अनुक्रमे एक गापना म्वामिना पुत्रनो आश्रय करीने तेनी सेवा करवा वागपों, एक वलत हुकालमा
तेने घेर राव तैयार करी हती, तेवी गापना म्वामिनी स्वीए तेने कथु के, तु जा? अने सताना दोको माहेवी
तारा शेठने बोवानी बाव? ॥ १७ ॥ केपके राव उनी तथा अयोग्य घर जाय डे, त्यारं तेणे त्या जन्ने मोटा
अवाजयी ते मुजब कथुं ते सानळी शेठने जाज आबी, तथा घेर आवीने तेने पायों, अने कथु के, आवा काममा
धारेवी कलमां कहेतु ॥ १८ ॥ एक बलते घरां आग झाली, तेवी जन्ने धारेवी जेटनामा काममा कहे डे, तेटनामा
तो आहुं पार बळी गथु; ते बलवे पए तेने मार पड्यो, अने शिवाणु के ॥ १९ ॥

एवविधे आत्मैव नीरमादौ कृत्वा गोजक्ताद्यपि क्षिप्यते, ययाऽग्निविधायति
 ॥ ३० ॥ अन्यथां वेणीं धूपयतस्तस्य शिरसि गोजक्तं क्षिप्तमित्यादि ॥ ३१ ॥ य-
 थैप कुडपुत्रो यथाश्रुतमेवाऽवधारयत वचन, न तु तदभिप्रायविषयविशेषाद्यवबुद्ध-
 वान् ॥ ३२ ॥ एव श्रुतमात्रग्राहिणो वचनविषयतात्पर्याद्यनभिज्ञा जीवा जट्टो-
 कसदृशा इति, यथाच सा जट्टोका शूद्राप्रयोगादिना पीत रुधिर निश्चैत्यमाना
 परिणामे ड खिनी भवति ॥ ३३ ॥ तथा तेऽपि इहापि ड खिन स्यु पटे पटे
 दृष्टातीकृतकुडपुत्ररुवेदेव परत्रापि चेति ॥ ३४ ॥

ज्यारं आयु थाय त्यारं पौतेज पाणीवी मानी गयना त्वाण युग एण उपर नाखु, के जेयी आग
 बुही नाप ॥ ३० ॥ एक खले श्रेष्ठ पौते पोतानो चोदनेो मता हता, ते यत्ते तेमना मदाकर वेणे गायतु
 खाण फँडु, इत्यादि ॥ ३१ ॥ एवी रीते जेप ते कुमपुरे जेडु मान्तु हतु, तेडुज रचन थारी राखु हतु,
 परतु तेना अनिपयना विषय सबधि च्छेत्ते ते जाणी शस्यो नहीं ॥ ३२ ॥ एवी रीते फक्त सोनळेमुज ग्रहण
 करानाग, तथा रचनेना विषयना जावार्ये आत्किने नहीं जाणता, जीनेजळे सरखा जाणवा, यली जेप ते जळे
 शूल बोचवा आदिकना मयोगवने करीने पीधेतु रुधिर नीचेनाती थकी परिणामे डु तौ थाय डे ॥ ३३ ॥ तेप ते
 जीवो एण उर मुजम द्युणत्वे कडेना कुमपुरती पडे आ होक अने पात्रोकरा पण पगते पगते डु तौ थाय
 डे ॥ ३४ ॥

वक्ष्येति यथा वक्ष्याया गोर्दुग्धार्यार्थिना बहुविधसरसधृतादिकचारिधान्यकार्पसिका-
दि बह्वपि दीयमान निष्फल्ल दुग्धाद्यकारित्वात् ॥ ३५ ॥ तथा केषाञ्चिज्जीवानां
बहुविधा अपि सुगुरुपदेशा निष्फलीज्वन्ति ब्रह्मदत्तचक्रयादीनामिव तदुक्तं—
॥ ३६ ॥ उवएससहस्सेहि वि । बोहिज्जतो न बुजहार्ह कोई ॥ जह वज्रदत्त-
राया । उदायनिव मारत्रो चैव ॥३७॥ इति ॥ तथा अबंध्याया धेनो पुनर्यथा यत्
किञ्चित् तृणाद्यपि दत्तं दुग्धादितया परिणमति, एव केषाञ्चित् स्वल्पमपि गुरुपट्टि
महाफलाय कल्पते ॥ ३८ ॥ उपशमविवेकसंश्लेषेति त्रिपद्यपि चिदातीतुत्रस्येव, व-
दुपिन्नित्रा एगपिन्नित्रो दष्टु मिड्डई, इति वचनमिच्छनागस्येव, यात्रज्जीवमनाकुट्टि-
रसमाकमिति वचन धर्मरुचेरिव चेति ॥ ३९ ॥

कथा पृथ्वे जेम बाजणी गायने दूधनो अर्थो मनुष्य गणा प्रकारना सरस ती आदिक चारो गान्य
तथा कथास आदिक घणु आपे ठे, तोपण दूध नहीं बरबाधी ते जेम निष्फल जाय ठे ॥ ३५ ॥ तेम केट्टाक
जीवोने गणा प्रकारना सुगुरना उपदेशो पण ब्रह्मदत्त चक्री आदिकोनी फेजे निष्फल थाय ठे, ते माटे म्हुं
ठे के ॥ ३६ ॥ ब्रह्मदत्त राजा, तथा उदार्याने मारनाग मनुष्यनी, जेम हजारोमे उपदेशोधी बोध देइये, तोपण
केट्टाकोने उपदेश लागतो, नथी ॥ ३७ ॥ इति म्ळी अकय गायने जेम जे कड यास आदिक देवामा आवे ठे, अने
ते दूधरूपे परिणमे ठे, तेम केट्टाक मनुष्योने अटप एवो पण गुरोने उपदेश महान् फलदायक थाय ठे ॥ ३८ ॥
जेम 'उपशम, विवेक अने सक्' ए त्रण पदां चिदाती पुनने, तथा 'हे बहु पिन्नाला! एक पिन्नालो तने जोवाने
इच्छे ठे' एव वचन जेम इन्द्रनाग प्रत्ये, तथा हेक जीवित पर्यंत अनारजिपणु त्रमरु एवु वचन धर्मरुचि प्रत्ये ॥ ३९ ॥

विषभृदादिनिदर्शनतो गुणा—ऽगुणजमतरमित्युपदेशग ॥ अग्निनिबुध्य यतेत सुधी-
गुणा—द्यन्तिसमीड्य विमोहजयश्रिये ॥ ४० ॥

॥ इति तपाश्रीमुनिसुन्दरसुरिविरचिते श्रीउपदेशरत्नाकरे नवमस्तरग ॥

एवी रीते उपदेशनी अतर रहेला गुण तथा अद्यगुणयी उत्पन्न यता अतसेने जेखाळा आदिकला उदा-
हरणयी जाणनि, उत्तम बुद्धिबान् माणसे गुणो आदिकने जोडेने मोहनो जय करवानी ब्रह्मी माणे गल करतो ॥ ४० ॥

॥ एवी रीते तपणच्छाळा श्रीमुनिष्ठरसूस्त्रीए रचेना श्रीउपदेशरत्नाकर नामे प्रथमा नवमां तग समाप्त थयो ॥

इति नवमस्तंभः समाप्तः

अथ दशमस्तरंगः

उच्चयद्वोकपुत्रावहस्य सम्यग्धर्मस्योपदेश सर्वत्र गुणावह एवेति तदारभे योग्याऽ-
योग्यस्वरूपनिरूपण व्यर्थमित्याशङ्कानिरासाय आह ॥ १ ॥

एते दोषमा मुक्ताकारा एवा सम्यग् धर्मो उपदेश सर्व जगत् गुणकारीज छे, एतन्मात्रे तेना आ-
रजमा योग्य अयोग्यना स्वरूपे निरूपण कर्तुं व्यर्थ के. एवी रीतिनी आशङ्कना दूर कर्वा माटे हवे कहे वे ॥ १ ॥

मृद्वस्—जिह्वाजिह्वजराद्सु । होइ जहा इकमेव गोखीर ॥ गुणदोसप्यखत्तिकरं
सुहृगुरुत्रयण तद् जीणसु ॥ १ ॥ जीर्णाऽजीर्णज्वरयोः, आदिशब्दात् पित्तश्रे-
ष्मादिषु च, यथा एकमेव गोक्षीर क्रमात् गुणदोषोत्पत्तिकरं त्रयति, जीर्णज्वरे
पित्तादौ च गुणकर, अग्निवज्वरे श्रेष्मादौ च दोषकर ॥ ३ ॥ तथा गो-
दुग्धवत् माधुर्योद्विगुणमुन्नयदोषकहितावहं, सम्यग् धर्मनलैकप्ररूपक सुगुरुवचन
जीवेषु योग्याऽयोग्येषु क्रमात् गुणदोषोत्पत्तिकर स्यात् ॥ ४ ॥ जीर्णमिथ्यात्वमोह-
नीयादिकर्मतया योग्येषु गुणकर, श्रीवर्धमानजिनवचन श्रीइच्छतूल्याद्विज्विन्न, श्रीश्राव-
चापुत्रसूरिवचन सुदर्शनश्रेष्ठिशुकपरिव्राजकाद्विज्विन्न च ॥ ५ ॥

मूलनो अर्थ.—जीर्ण तथा अजीर्ण तत्र आदिक्रमा, एकत्र एव गुण गायतु दूध, जेम गुण अने दोषनी
उत्पत्ति करनारु ठे, तेम जीवो मत्से शुन्न गुरुतु वचन एण गुणदोष करनारु ठे ॥ १ ॥ जीर्ण तथा अजीर्ण ज्वरसा,
आदि शब्दयी पित्त तथा श्लेष्म आदिक्रमा एण, जेम एकत्र एव गायतु दूध, अतुक्रमे गुणदोषनी उत्पत्ति करनारु
थाय ठे, अर्थात् जीर्णज्वर तथा पित्त आदिक्रमा जेम ते गुणकारी ठे, तथा नवा तासा अने श्लेष्म आदिक्रमा
दोषकारी ठे ॥ ३ ॥ तेम गायना दूधनी फेडे मरुला आदिक गुणोत्पादक, वने दोषकारी ठे, तथा नवा तासा अने एक सम्यग्
धर्मने मरूपनारु एवु सुगुरुतु वचन, योग्य तथा अयोग्य जीवो मत्से अतुक्रमे गुणदोषनी उत्पत्ति करनारु थाय ठे ॥ ४ ॥
अर्थात् जीर्ण थयेता एवा मिथ्यात्व मोहनीयादिक कर्मणायें करीने योग्यो मत्से गुणकारी थाय ठे; (कोनी
फेडे ? तो के) श्री वर्धमान मरुतुं वचन जेम श्री इंद्रचूनि आदिको मत्से, तथा श्री यावचापुत्र आचार्यतु वचन जेम
सुदर्शन शेट तथा शुकपरिव्राजक मत्से ॥ ५ ॥

बहुद्वतत्कर्मतया योग्यतामनासेषु च दोषोत्पत्तिकर, यथा श्रीपाश्र्चजिनस्य हितो-
पदेश पचाग्निसाधनादिकप्रानुष्ठानपरे कमवतापसे, ततो योग्याऽयोग्यपरीक्षा फल-
वतीति ॥ ६ ॥

॥ इति श्रीतपागंडे श्रीमुनिसुदरस्त्रिविरचिते श्रीउपदेशरत्नाकरे दशमस्तरा समाप्त ॥

बकी चारे कर्मापणाथी योग्यत्वां नही प्राप्त थयेना मनुष्यो मत्ये ते दोषनी उत्पत्ति करनार थाय डे,
जेप श्रीपार्थमन्नुनो हितोपदेश, पचाग्नि साधन आदिक कष्ट क्रियाया तत्पर थयेना कठतापस मत्ये थयो, माटे योग्य
अयोग्यनी परीक्षा फलवाती डे ॥ ६ ॥

॥ ण्वी रीते श्री तपागंडमा श्री मुनिदुदरस्त्रिजीण रचेवा श्री उपदेशरत्नाकरमा दशमो तरा समाप्त थयो ॥

एकादशस्तरंगः

पुनरस्यैवार्थस्य दृढीकरणायान्न—मूत्रम्—इकात्रि मेहबुद्धी । मणिमुत्ताविविहयन्नफ-
बन्हेज ॥ स्यणागराद्सु जहा । सुहयुक्तवयण तद् जीणसु ॥ १ ॥

बळी तेज अर्थने दृढ करवा मांटे कहे ठे.—पूळो अर्थाः—जेम एतज एवी मेफनी दृष्टि रलाकर आदिकोंने
किं, मणि, मोती, विविध प्रकाराना धान्य तथा फळोना हेतुरूप थाय जे, तेम जीरो प्रत्ये शुद्ध गुणुं यवन
जाणु ॥ १ ॥

यथा एकापि भेष्यष्टि रत्नाकरे रोहणा—चन्दादौ, आदिशब्दान्मुस्ताफझाकरे ता-
 अपर्यादौ विविधान्यफझाकराद्विषु च क्षेत्रविशेषेण, विविधाना उत्तममध्यमाथमा-
 दीना मणीना मुस्ताफझानां धान्याना फझानामुपलक्षणादन्येषामपि विविधौषध्या-
 दीना च निष्पत्तिहेतु ॥ २ ॥ तथा सद्गुरुवचन जीवेषु उत्तमोत्तमाद्विषु स्वस्वयो-
 ग्यताद्यनुसारेण मणिमुस्ताफझादिसमथर्मादिफझासिद्धिहेतुर्भवति ॥ ३ ॥ तथा चो-
 म्त—आम्ने निवे सुनीयें कचवरनिचये श्रुन्तिमभ्येऽहिवक्त्रे। औषध्यादौ विपद्गौ गुरु-
 सरसि गिरौ पाशुचूकृष्णचूस्यो ॥ इच्छुक्ते कषायडुमवनगहने मेघमुमन यथात्र—
 स्तृष्टत्यात्रेषु दत्त गुरुवचनत्रव वाग्यमायाति पाक ॥ ४ ॥

तेषु एक ण्वी एण मेघनी चृष्टि, रत्नाकर्या, ण्वेत्रे रोहणाचल आदिक्या, आदि शब्दयी मॉनोओनी
 इया उत्पत्ति थायडे, तेषा, नाश्राणी नदी आदिक्या तथा इनेन विशेषकरिने ज्या नाना प्रकारा नाय तथा फल
 आदिको उत्पन्न थाय डे त्या, नाना प्रकारा उत्तम, मयम आदिक मणिओनी मोतीओनी धान्येनी, फळोनी
 तथा उपनक्षत्राणी विविधकारनी ओपधि आदिक अन्यकारनी वस्तुओनी एण उत्पत्तिना हेतुए थाय डे ॥
 १ ॥ तेष सद्गुरु वचन एण उत्तमोत्तम आदिक जीवो मत्ये पतियेतानी योग्यताने अनुसारे, मणि तथा मोति
 आदिक सखा थं आदिक फळोनी उत्पत्तिना हेतुए थाय डे ॥ ३ ॥ कळुडे के—आरापर, बीरमापर उत्तम-
 तीर्थमा, कचराना डगमा, ओषमा, सर्पना सुखमा ओपरी आदिक्या, जेरी इक्षर, मोग तळावमा, फर्तपर सफेन
 तथा ज्याम चूसीपर, सेननीना वाढमा तथा कषायना वृक्षोवाळा घाटा वनमा, वरसाडनु पाणी जेस विविध प्रकारा
 पात्र उपनोरे छे, तेष गुरुना सुखगी निरुक्तेनु वाक्य पावो मत्ये देवायी फळने पात्र थाय डे ॥ ४ ॥

ततो योग्यस्वरूपं सभ्यगत्रधार्यं योग्यात्रेवोपदेज्यमिति ॥ ५ ॥

॥ इति एकादशस्तंभ. समाप्त. ॥

माते योग्य मनुष्यवु स्वस्य सारी गीते ज्ञानीनि योग्यो प्रलेज उपदेश देवो ॥ ५ ॥

॥ एषी रीते अग्यामो तंभ समाप्त थयो ॥

एकादशस्तंभः समाप्तः

अथ द्वादशमस्तरंगः

इदानीं प्रकारातरेण योग्याऽयोग्यस्वरूपप्रकटनाय आगमगाथाभेवाह—मूलम् ॥—
सेद्व घण कुन्गचाद्वणि । परिष्णण हस महिस मेसे अ ॥ मसग जद्वुग विराद्वी
जाहग गेन्नेरि आन्नीरी ॥ १ ॥

हवे वीजा मकारयी योग्य तथा त्रयोप्यनु स्वरूप द्वाद क्वा माटे आगमनी गायन कहे ठे, मूलनो
अर्थ.—माशेद्व पापाण अने वरसाद, घनो, चाद्वणी, मुक्कीनो माळो, हस, पानो, घेटो, मशक, जलो, वीद्वानी,
शेरो, गाय, जेरी तथा आन्नीरी, (पटनां उदाहरणो जण्णमा) ॥ १ ॥

एतानि शिष्ययोग्याऽप्योपयत्प्रतिपादकान्युदाहरणानीति ॥ २ ॥ सेवति, शोभ. मुद्र-
प्रमाण पापाणविशेष, दनो भेद., शोभश्च दनश्च शोभघन. तदुदाहरणं प्रथम
॥ ३ ॥ कुटो घटः, चादानी प्रतीता परिपूर्णक सुधरीचिटिकाग्रह, हसमहिषमेपमश-
कजलौकाविनाय प्रतीता. ॥ ४ ॥ जाहव. सेहुदक गौ जेरी आनीरी च प्रतीता
॥ ५ ॥ उदाहरण च द्विधा भवति, चरित कल्पित च, उक्त च—चरिय व कल्पिय
वा आहरण दुविहमेव पन्नत्त, अर्थ.स साह एटा दधणमिव श्रोयणटाए ॥ ६ ॥

एवी रीति उपर बणवेव्हा उदाहरणे दिवना यो य उयोग्यएने प्रतिपादन वरनासु ठे ॥ २ ॥ शोभ
एत्ते मग जेपनो पापाणविशेष, तथा दन एत्ते रेत, अर्थात् भगईद्वीओ पापाण उने मेष, ए पेहेतु उदाहरण
जाणतु ॥ ३ ॥ कुट एत्ते वना, चादानी प्रसिद्धे, परिपूर्णक एत्ते मुधरी नामनी चकडीओनो मा.गे. हर,
पानो, घेओ, मारु, जलो, तथा विद्वामी. ए प्रसिद्ध ठे ॥ ४ ॥ जाहव एत्ते शेरों, गाय तथा आनीरी एत्ते
रमारण ए प्रसिद्ध ठे ॥ ५ ॥ हेवे उदाहरण वे रकारु होय ठे, एक चरित एत्ते साचु वनेतु तथा रीतु
कल्पित वतु ठे के—जेम चावत्त माटे इधन, तेम अर्थने साभा माटे चरितरूप अन कल्पित एम वे प्रकारु
उदाहरण कहेतु छे ॥ ६ ॥

तत्र इमं कल्पिय, त जहा, मुगसेवो पुरवद्वसंवदतो—य महामेवो जंबुद्वीप-
माणो तत्र य नारयस्थाणीतो कद्वह आजोएइ मुगसेव जणति ॥ ७ ॥ तु-
ज्ज नामगहणे कए पुरवद्वसवदतो जणइ जहा ए एगाए धाराएविराएमिति,
नद्धीति जावार्थ ॥ ८ ॥ सेवो उप्पासितो जणइ, जइमे तिद्वतुसतिजागपि उब्बोइ
तो नामनग्हामि ॥ ए ॥ पड्यामेहस्स मूद्धे जणइ मुगसेवद्वयणाइ, ततो सो कुवितो
सब्बायेरेण जुगप्पमाणाहि धाराहि वरसिउमारद्धो ॥ १० ॥ सत्तरत्तेवुद्धो चित्तेइ इ-
याणि गतो सो वरागोत्ति उितो, इयरो मिसमिसतो उज्जत्तरो जातो दिप्पिउमारद्धो
जणइ जोहरोत्ति, मेगो व्वज्जितो गतो ॥ ११ ॥

तेमा आ कल्पित दृष्टत डे ते कहे डे मगशेवीओ पापाण मग जेवनेो हतो, तथा पुक्करावर्च महामेव
जंबुद्वीप जेवनेो हतो, तेने नारटे अर्हा बावीने परस्पर कवह कराव्यो, पडे ते मगशेवीआनेे कहे छे के ॥ ७ ॥
तारु नाम ग्रहण करवायी पुक्करावर्च मेव रुहे डे के, हु तेने मारी एरु धारायी गळापी नाछु, अर्यात् नए रु
॥ ८ ॥ त्यारे मगशेवीओ गर्व जावीनेे कहे डे के, जो माग तिनतुप माव जाणनेे पए ते गळावे, तो हु मार नाम
पए धारण करु नर्हा ॥ ए ॥ पडी मेव पासे जनेे नारटे मगशेवीयावा वचनेो रुथा, तेयी ते कोपायमान यइनेे
धोसरा जेवनी धाराओयी सर्व मारराना आडरे करीनेे ररसवा द्वाग्यो ॥ १० ॥ सात रात मुधी वरस्था वाड ते
विचारवा द्वाग्यो के, हवे ते वराक एवो मगशेवीओ नए ययो हयो, एम विचारी ते वय पड्यो, एट्ठनामां तो ते
मगशेवीयो चकचमट करतो वयारे उज्जवन ययो, तथा नीपायमान यइनेे मेयनेे जुहाग रुया द्वाग्यो, त्यारे मेव
द्वज्जायमान यइ चाततो ययो ॥ ११ ॥

एव कोइ सीसो मुगसेइसमाणो एगपि पय नावगाहइ, ततो अन्नो आयरिअ्यो गजंतो आगतो ॥ १२ ॥ एहण गहेमि, पठति च गर्वाध्मातमानस - आचार्यस्यैव तज्जाड्य यद्विग्यो नावबुध्यते ॥ १३ ॥ गावो गोपाद्वकैव कुतीर्थिनावतारिता, ततो पढावेउमारओ, म सक्वितो दब्जितो ॥ १४ ॥ एरिस्स न ढायब्बं, कस्मादिति चेत् उच्यते, इह यस्मान्न वध्या गौ शिर स्तनजघनपृष्ठोदरादौ सस्नेह स्पृष्टा सती दुग्धप्रदायिनी भवति ॥ १५ ॥ तथा स्वाच्चाव्यादेव भेषोऽपि सम्यक्पूठान्मानोऽपि पदमप्येकं नावगाहति, ततो न तस्य तावदुपकार. ॥ १६ ॥

एवी रीते कोइरु शिष्य के जे मगशेइवीआ सरबो होय, ते एक पदनां पण अरुयास करी शक्तो नयी, त्वारं वीजो आचार्य गजतो यको आवे डे ॥ १२ ॥ अने कहे डे के, हु ते शिष्यने जणारी आपु, तेमज यली सनमा गर्व दावीने ते आचार्य नहे डे के, शिष्य जे जणी शक्तो नयी, तेनु कारण आचार्यनीज मूर्खो डे ॥ १३ ॥ गावोने गोवालेज अबले मार्गे चरती डे, इत्यादिक वक्कीने तेने जणायवा बागे डे, परतु जणवी नहीं शक्वाथी ते दज्जतुर थाय डे ॥ १४ ॥ माटे एवी रीतना शिष्यने धर्मपंटेवादिक नहीं देखु, शायटे? एम जो कोइ शका करे, तो ते माटे कहीये डीये के, बाळणी गायने मस्तक, स्तन, सायळ, पीउ, पुन्ड तथा उदर आदिक प्रत्ये स्नेहसहित स्पर्श करवाथी पण ते दूध देइ शक्ती नयी ॥ १५ ॥ तेम आ शिष्य पण, सारी रीते जणाव्या छा पण स्वभावयीज एक पण पदने जाणी शक्तो नयी; अने तेथी ते प्रत्ये उपकार थइ शक्तो नयी ॥ १६ ॥

तत्र इम कल्पिय, त जहा, मुग्सेद्धो पुरखद्वसवदतो—य महामेहो जवुहीवप-
माणो तत्र य नारयत्याणीतो कद्वह आजोएइ मुग्सेद्व ज्ञाति ॥ ७ ॥ लु-
ज्क नामगहणे कए पुरखद्वसवदतो ज्ञाणइ जहा ए एगाए धाराएविराणमिति,
नह्मीति ज्ञावार्थ ॥ ८ ॥ सेद्धो उप्पासितो ज्ञाणइ, जइमे तिवलुसतिजागपि उद्वेइइ
तो नामनह्मासि ॥ ए ॥ पढामेहस्स मूढे ज्ञाणइ मुग्सेद्ववयणाइ, ततो सो कुवितो
सव्वायेरेण जुगप्पमाणाहि धाराहि वरसिउमारब्धो ॥ १० ॥ सत्तरत्तेवुद्धो चित्तेइ इ-
धाणि गतो सो वरागोत्ति उित्तो, इयरो मिसमिसतो उज्जत्तरो जातो दिप्पिउमारब्धो
ज्ञाणइ जोह्मारोत्ति, भेगो द्वजित्तो गतो ॥ ११ ॥

तेषां त्रया कल्पित दृष्टांत उते ते कहे उे मगेश्वरीओ पापाण मग जेवमो हतो, तथा पुक्करावर्च महामेघ
जइइए जेवमो हलो, तेने नारदे अर्हो द्वायीने परस्पर कनह कराव्यो, पडे ते मगेश्वरीओने कहे छे के ॥ ७ ॥
तारु नाम ग्रहण करवायी पुक्करावर्च भेग कहे उे के, हु तेने मारी एक मारयी गळवी नाछु, अर्थात् नष्ट कर
॥ ८ ॥ त्वारे मगेश्वरीओ गर्व द्वायीने कहे उे के, जो मारा तिनतुप मात्र जागने पण ते गळवे, तो हु मार नाम
पण धारण करु नर्हो ॥ ए ॥ पही भेग पासे जइने नारदे मगेश्वरीयाता वचनो कया, तेयी ते कोपायमान थइने
घोसरा जेवनी धाराओधी सर्व प्रकारना आदरे करीने वरसवा द्वाव्यो ॥ १० ॥ सात रात मुधी वरस्या गट ते
निचारवा द्वाव्यो के, हवे ते वराक एवो मगेश्वरीओ नष्ट थयो इयो, एम निचारी ते वध पड्यो, एटनामा तो ते
मगेश्वरीयो चरुचकट वरतो वधारे उज्ज्वय थयो, तथा दीपायमान थइने भेवने जुलार करग द्वाव्यो, त्वारे भेग
द्वज्जायमान थइ जानतो थयो ॥ ११ ॥

एव कोइ सीसो मुग्गसेवसमाणो एगपि पयं नावगाहइ, ततो अन्नो आयरिओ
 गज्जतो आगतो ॥ १२ ॥ एहणं गाहेमि, पवति च गर्वाध्मातमानस-आचार्यस्यैव
 तज्जाड्य यद्विब्यो नावबुध्यते ॥ १३ ॥ गात्रो गोपादकैनेव कुतीर्थेनावतारिता,
 ततो पडवेउमारुद्धो, म सक्किन्तो, द्वाज्जितो ॥ १४ ॥ एरिस्स न दायव्वं, कस्सा-
 ङ्गित्ति चेत् उच्चये, इह यस्मान्न बंध्या गौ शिर स्तनजघनपृष्ठोदरादौ स-
 स्नेहं स्पृष्टा सती दुग्धप्रदायिनी ज्वति ॥ १५ ॥ तथा स्वात्ताव्याडेव भेषोऽपि
 सम्यक्पाटमानोऽपि पटमप्येकं नावगाहति, ततो न तस्य तावदुपकार. ॥ १६ ॥

एवी रीते कोइक शिष्य के जे माशेद्वीआ सरखो होय, ते एक पनो पण अउयस करी शकतो
 नयी, त्यारे वीजो आचार्य गजतो थको आवे डे ॥ १२ ॥ अने कहे डे के, हु ते शिष्यने जणवी आपु, तेमज
 वळी मनसा गर्वदावीने ते आचार्य कहे डे के, शिष्य जे जणी शकतो नयी, तेहु कारण आचार्यनीज मूर्खाडे डे
 ॥ १३ ॥ गायने गोवालेज अरुळे मांगे चरवी डे, इत्यादिक वचनीने तेने जणवावा जागे डे, परतु जणवी नहीं
 शकवाची ते दज्जातुर थाय डे ॥ १४ ॥ माटे एवी रीतना शिष्यने धर्मपेदेशादिक नहीं देवु, शापाटे? एम जो
 कोइ शका करे, तो ते माटे कहीये डीये के, वाजणी गायने मस्तक, स्तन, सायळ, पीठ, पुच्छ तथा उदर आदिक
 प्रत्ये स्नेहसहित स्पर्श करवाची पण ते दूध देइ शकती नयी ॥ १५ ॥ तेम आ शिष्य पण, सारी रीते जणा-
 व्या छला पण स्वभाववीज एक पण पदने जाणी शकतो नयी; अने तेयी ते मत्ये उपकार थइ शकतो नयी ॥ १६ ॥

आस्ता तस्योपकाराऽज्ञाव, प्रत्युताचार्ये सूत्रेवाऽपकीर्तिरुपजायते, यथा न सम्यक्
 कौशल्यमाचार्यस्यव्याख्याया, इदं वाऽध्ययनं न समीचीन, कथमयमन्यथा नावबुध्यते,
 इति ॥ १७ ॥ अपि च तथाविधकुशिल्पपाठने तस्याऽवधानाऽज्ञावात् उत्तरोत्तर-
 सूत्रार्थाऽनवगाहनत सूत्रे सकदावपि शास्त्रातगतौ सूत्रार्थौ भ्रशमाविशतोऽन्ये-
 पामपि च पटुश्रोत्राणामुत्तरोत्तरसूत्रार्थावगाहनद्वानिप्रसंग ॥ १८ ॥ उक्तञ्च—
 आयरिए सुत्तमिय । परिवाओ सुत्ताअत्तपद्धिमथो ॥ अन्नेत्ति पिय हाणी पुद्धानि
 उद्धया वजा ॥ १९ ॥

रुी तेने उपकार न थाय, ए वात तो दूर रही, परतु उद्वट्टी आचार्यनी तथा सूत्रनी पण अपकीर्ति
 थाय डे, जेके, ब्याप्यान आपवामा आचार्यनी दुशीयरी नथी, अथवा आ शास्त्र सार (सुगम) नथी, जो
 तेम न होय तो आने प्रतिग्रोध केम न दागे ? इति ॥ १७ ॥ रुी तेम प्रकारना कुशिल्पने ज्ञानमायी अने तेने ते
 अन्त्याम स्मरणमा नहीं रहेयाथी आचार्यने पण उत्तरोत्तर सूत्रांशु अवगाहन न थवायी, शास्त्रातरमा रहेला
 सग्या सूत्रार्थो नाशने प्राप्त थाय डे, अने तेथी दुस्वियान् एवा बीजा श्रोताओने पण उत्तरोत्तर सूत्रार्थने
 जानयती हांनिने प्रसंग थाय डे ॥ १८ ॥ कथु डे के—(मुगशेखीया सरखा कुशिल्पने ज्ञानमायी) आचार्यने
 तथा सूत्रने अपमाड थाय छे, सूत्र अर्थन ओववमापणु थाय डे, तथा अन्य श्रोताओने पण हांनि थाय डे, जेके
 स्पर्श कर्याथी पण रुदं वाजएणी गाय दुपती नथी ॥ १९ ॥

मुद्गशोषप्रतिपङ्कते योग्यशियायविषये दृष्टात. कृष्णचूर्णमिष्टदेश, तत्र हि प्रभृतम-
पि निपतित जलं तत्रैवात परिणमति ॥ १० ॥ न पुन. किञ्चिदपि ततो च-
हिरण्यगच्छति, एव यो विनेय सद्भासूत्रार्थग्रहणधारणे समर्थः स कृष्णचूर्णमिष्ट-
देशतुल्य, स च योग्यस्ततस्तस्मै वातव्यमिदमध्ययनमिति ॥ ११ ॥ उक्त चबुद्धे
वि शोणभेदे । न कण्ठ जोमाउ लोडण उदय ॥ गहणधारणासमत्ये । इय-
देयमस्थिरिकारिमि ॥ १२ ॥ सप्रति कुट्टदृष्टतभावना, कुटा घटास्ते द्विविधास्त-
द्यथा, नवीना जीर्णाश्च, नवीना ये सप्रत्येच पाकत. समानीता, जीर्णा द्विविधा जावि-
ना अजाविताश्च, जाविता द्विविधा, प्रशस्तद्रव्यजाविता अग्रशस्तद्रव्यजाविताश्च ॥ १३ ॥

माशोषीयाथी प्रतिपङ्करूप एषा योग्य शिष्यना विषय, श्यामन्मूनीनो प्रदेश दृष्टारूपे ज्ञानयो, केसकेत्सा
पनेतु गण एतु पण जळ, तेमान परिणामे अे, एद्वे समाइ जाय अे ॥ १० ॥ परतु तेषाथी किञ्चित् मान पण
वहार निक्की जतु नथी, एथी रीते जे शिया मज्जा सूत्रार्थने ग्रहण करवाया तथा धारण मज्जा समर्थ अे, ते
मूलाशूनीना प्रदेश सरगो अे, अने ते योग्य अे, मोटे तेने आ शास्त्र चरणामुं ॥ ११ ॥ म्हु अे के-शोणमेव
समर्थे अेते पण ज्याम च्छीफथी पाणी यही जतु नथी, मोटे (सूत्रार्थने) ग्रहण करवाया तथा धारण करवाया
समर्थ, अने अथथी अत मुथी सप्रण अज्याम मज्जा शिया प्रत्ये शास्त्रोपदेश देवो ॥ १२ ॥ हवे यना दृष्टतनी
जातना महे अे, कुट्ट एद्वे यना, अने ते ते प्रकारा अे, नवा अने जुना, नवा एद्वे पाकमाथी तुल जावेडा,
जुना यना ते प्रकारा अे, वामेजा अने नहीं गलेवा, वामेजा ते प्रकारा, उत्तम पदार्थथी वामेजा अने ह्यार
पदार्थथी वामेजा ॥ १३ ॥

तत्र ये कर्पूरगुरुचदनादिनि प्रशस्तद्रव्यैर्जावितास्ते प्रशस्तद्रव्यजाविताः, ये पुन
पद्मामुद्गशुनसुरौतद्वादिनिर्जावितास्तेऽप्रशस्तद्रव्यजाविता ॥ १४ ॥ प्रशस्तद्रव्यवा-
सिता अपि द्विधा वाम्या अत्राम्याश्च, अजाविता नाम ये केनापि द्रव्येण न वासि-
ता ॥ १५ ॥ एवशिष्या अपि प्रथमतो द्विधा, नवीना जीर्णाश्च, तत्र ये वाद्वजात्रे
वर्त्तमाना अज्ञानिन, सप्रत्येवाऽवबोधयितुमारब्धास्ते नवीना ॥ १६ ॥ जीर्णां द्वि-
विधा जाविता अजाविताश्च, तनाऽजाविता ये केनापि दर्शनेन न वासिता, जाविता
द्विविधा कुमावचनिकपार्थस्यादिति सत्रिंशत् ॥ १७ ॥

तेमा कपुर, अगर तथा चन्द आदिकथी जे वासेना छे, ते शुद्ध पदार्थायी वासेना कहेवाय, अने जे
डुगळी (प्याज) दामण, मदिरा तथा तेन आदिकोथी वासेना छे, ते अशुद्ध पदार्थायी वासेना कहेवाय ॥ १४ ॥ शुद्ध
पदार्थायी वासेना घनात्रो पण ते प्रकारना छे, एक स्वानी करी शकाय तेना, अने बीजा स्वामी न कर। शकाय तेना,
हवे नही वासेना एटने जे कोइ पण पदार्थायी वासित थयेना नयी ते ॥ १५ ॥ ग्वी रीते शिल्यो पण प्रथम जे
प्रकारना होय छे, नवा अने जुना, तेमा जेओ वाह्य अर्थाया चर्त्तनारा अज्ञानीओ छे, तथा जेओने हमणज बोध
आपवा मानेओ छे, तेओ नवा शिल्यो कहेवाय छे ॥ १६ ॥ हवे जुना शिल्यो जे प्रकारना छे, वासित थयेना अने
नहीं वासित थयेना, तेमा नही वासित थयेना एटने जेओ कोऽ पण दर्शनथी वासित थयेना नयी, वासित
थयेना शिल्यो जे प्रकारना छे, कुशाब्जने मरूपनारा पाम्पया आदिकोथी वासित थयेना, अने बीजा सश्लोत्रोथी
वासित थयेना ॥ १७ ॥

कुप्राचनिकपार्श्वस्थ्यादिनिरपि ज्ञाविता छिधा, वाम्या अवास्याश्च, सत्रिनेरपि
 ज्ञाविता छिधा., वाम्या अवास्याश्च ॥ २७ ॥ तत्र ये नवीना ये जीर्णा अन्ना-
 विता ये च कुप्रावचनिकादिज्ञाविता अपि वाम्या, ये च सविग्मज्ञाविता अ-
 वास्यास्ते सर्वेपि योग्या, शेषा अयोग्या. ॥ २८ ॥ अथवाऽन्यथाकुट्टदृष्टातज्ञावना,
 इह चत्वार. कुटास्तद्यथा, विद्धकुट्ट.; कवहीनकुट्ट., खरुकुट्ट, सपूर्णकुट्टश्च ॥
 ३० ॥ यस्याधोबुद्धेने विद्ध स विद्धकुट्ट., यस्य पुनरोष्ठपरिसम्भङ्गाऽज्ञाव. स कवहीन
 कुट्ट, यस्य पुनरेकपार्श्वे खमेन हीनता स खरुकुट्ट., एव शिष्या अपि चत्वारो वेदि-
 तऽया. ॥ ३१ ॥

कुवाहने मरूपनारा पासरया आदिकोवने करीने शसित पर्येद्या शिष्यो एण वे प्रकारा डे, वामी
 शकाय तेवा, अने न वामी शकाय तेवा, सर्वेगीत्रोयी वामित धयेनात्रो एण वे प्रकारा डे, वामी शकाय तेवा,
 अने न वामी शकाय तेवा ॥ २७ ॥ तेऽत्रोया जेऽत्रो नवा, जेऽत्रो अने नही वासेऽत्रा, जेऽत्रो कुमावचनिकादि-
 कायी वासित ठता वामी शकाय तेवा, जेऽत्रो सर्वेगीत्रोयी वासित अने न वामी शकाय तेवा, एट्ठया सर्वे योग्य
 शिष्यो छ, अने वाकीना अयोग्य शिष्यो डे ॥ २८ ॥ अथवा ते यमना दृष्टतनी ज्ञावना वीनी रीते एण
 (नीचे मुजव) जाणवी, अही चार प्रकारा मनात्रो डे. अने ते नीचे मुजव छे, विद्धवालो यमो, काठा विनानो
 यमो, डुकमा धयेत्रो यमो, अने सपूर्ण यमो ॥ ३० ॥ जे यमना नीचेना ज्ञागमा विद्ध होय, ते विद्धवालो यमो
 कहवाय, जे यमना गळपर काठो न होय, ते काठाविनानो यमो कहवाय; तेमज जे यमना एक वाजुनो डुकमो
 न हाय, ते ज्ञाणेडो यमो कहवाय, एवी रीते शिष्यो एण चार प्रकारा जाणव ॥ ३१ ॥

तत्र यो व्याख्यानमन्वयासुप्रविष्ट सर्वमर्थमवबुध्यते, व्याख्यानाडुस्थितश्च न किमपि स्मरति स विद्वक्कुटसमान ॥ ३२ ॥ यथाहि विद्वक्कुटो यावत्तदवस्य एव गाढम-
बनित्तसङ्गानोऽवतिष्ठते तावन्न किमपि जल तत श्रवति, स्लोक वा किञ्चिदिति ॥ ३३ ॥ एवमेपोऽपि यावदाचार्यं पूर्वापरानुसधानेन सूत्रार्थमुपदिशति तदवबुध्यते,
उस्थितश्चेष्ट्याख्यानमन्वया, तर्हि स्वयं पूर्वापरानुसधानविवक्षित्वाद्य किमप्यनुस्मरति ॥ ३४ ॥ यस्तु व्याख्यानमन्वयामप्युपविष्टोऽर्धमात्र विज्ञागचतुराकवा हीन वा सूत्रा-
र्थमप्रधारयति, यथावधारितं च स्मरति स खम्बुकुटसम ॥ ३५ ॥

तेमा जे शिष्य व्याख्यान मन्वळीमा वेडो थका संयं अर्थने जाणे ठे, तथा व्याख्यानची उक्ता वाद जे कड पण याद राखी शस्तो नथी, ते शिष्य विद्वान्वा घना समान ठे ॥ ३२ ॥ जेप विद्वान्वा घनो ज्यामुधि एवीज रीते गाढपणे पुढ्य पर दाग नोज रते ते त्यामुध तेसाची जरा पण पाणी निरळतु नथी, अने निरळे ठे, तोपण थोडु अथवा कि.चत् न्वळ ठे ॥ ३३ ॥ एवीरिंते ज्यामुधि आ आचार्य पण पूर्वापरना अनुसधानबंदे करीने सूत्रार्थने उपदेशे ठे, त्यामुध तेदु ते जाणे ठे, अने व्याख्यान मन्वळीमाची जो उडी जाय तो पडी पोते पूर्वापरना अनुसधानना 'दरुपर्षी' कड पण याद राखी इवतो नथी ॥ ३४ ॥ बत्ती जे शिष्य व्याख्यान मन्वळीमा देरने पण इंधो इधवा चाशो जग अथवा तेथी पण ओळख सूत्रार्थ जाणे ठे, तथा जा-
णा मुनन जे धारी रागे छे, ते जगथा राजा सरखो ठे ॥ ३५ ॥

यस्तु किञ्चिद्गुण सूत्रार्थमवधारयति, पश्चादपि च तथैव स्मरति स कव्हीनकुटसमान-
 ॥ ३६ ॥ यस्तु सकलमपि सूत्रार्थमाचार्योक्तं यथावदवधारयति. पश्चादपि च तथैव-
 न स्मृतिपथमवतारयति स संपूर्णकुटसमान ॥ ३७ ॥ अत्र त्रिचकुटसमान एका-
 नेनाऽयोग्यः, शेषा यथोत्तर प्रधानाः प्रधानतरा ॥ ३८ ॥ सप्रति चाद्वनी
 इत्यातन्नावना, चाद्वनी लोकप्रसिद्धा यथा कणिकादि चाद्वयते, तत्र यथा
 चाद्वन्यामुदकं प्रक्षिप्यमाण तद्द्विणादेव गच्छति, न पुनः. कियतमपि कालमवतिष्ठते
 ॥ ३९ ॥ तथा यस्य सूत्रार्थः प्रदीयमानो यदेव कर्णे प्रविशति तदेव विस्मृतिपथमु-
 पैति, स चाद्वनीसमानः ॥ ४० ॥

परतु जे कक्ष ओग एवा सूत्रार्थने धारी राखे जे, अने पात्रळ्यी पण तेज मुज्व जे याद राखे जे, ते का-
 वा विनाना घना सरखो जे, ॥ ३६ ॥ वडी जे शिष्य आचार्ये कहेवा सखळा सूत्रार्थने यथार्थ रीते धारी राखे जे,
 तथा पात्रळ्यी पण तेजीज रीते याद राखे जे, ते सपूर्ण घना सरखो जे ॥ ३७ ॥ अर्हा त्रिद्वाला घना सरखो
 एकाते अयोग्य जे, अने बाकीना उत्तरोत्तर श्रेष्ठ तथा कथारे श्रेष्ठ जे ॥ ३८ ॥ हवे चाळणीना दृष्टतनी जावना
 कहे जे, चाळणी ए दुनियांमं प्रसिद्ध जे, क जेजणे करीने कणकी (आवो) आदिक चाळवापा आवे जे, ते चाळणीमां
 रेनां पाणी जेम तुरतज निक्ळी जाय जे, परतु थोमो चलत पण ठेरी शकतु नथी ॥ ३९ ॥ तेम जेने
 उपदेशतो सूत्रार्थ ज्यारे कर्णमां प्रवेश करे जे, त्याजेन चूडी जवपा आवे जे. ते शिष्य चाळणी शकवो
 जे ॥ ४० ॥

तथा च मुद्गश्लेषद्विष्कृतचातनीसमानशियज्ञेद्वप्रदर्शनाथमुक्त ज्ञान्यकृता—सेद्वेय-
त्रिदुचाद्वणिमिहो कदा सोऽह उद्वियाणतु ॥ त्रिदुचाह तस्यविद्यो ॥ ४१ ॥ सुमरिसु-
सराभि नेयाणि ॥ एगेण विसद्वीणणीद्वकणेण चाद्वणी आह ॥ धनोत्य आहसेद्वो,
जं पत्रिसद्व नीद्वना तुर्जं ॥ ४२ ॥ तत एपोऽपि चाद्वणीसमानो न योग्य चाद्वनी-
प्रतिपद्वन्नूत च वराद्वनिर्मापिततापसत्ताजन ततोहि विद्विमाश्रमपि जद्व न स्रव
ति ॥ ४३ ॥ उक्तच—तापसखलरकद्विणय चाद्वणिपन्वित्रम्बु न सत्रद्व दवपि । ततस्त
त्समानो योग्य ॥ ४४ ॥

वकी मगश्लेषीयो पापाण, त्रिद्वरादा घनो तथा चाद्वणी समान शिव्योना जेने त्वेखानामोटे ज्ञान्यकारे पण
कतु डे के — मगश्लेषीयो पापाण त्रिद्वरादो घनो तथा चाद्वणी कथा सामन्नलगने उद्व्या, त्रिद्वयुक्त ननाए
कतु के ॥ ४१ ॥ हु त्या नेसीने कथा सारी रीते स्मरण कर हु, अने वीजा एवा तमो तेम करी शकता
नयी, त्यारे चाद्वणीए न्यु के, हु तो एवी हु के, मारे तो एक गजुधी पंस के, तुल वीजी गजुएयी
निकृती जाय डे, मारे तु धन्य डे, त्यारे मगश्लेषीयो गोत्रो के, हे त्रिद्व 'यदा' तारा मन्वे पण जेनु मवेश थाप
डे, तेथेज निकले डे ॥ ४२ ॥ मारे ते त्रिद्व वद पण चाद्वणी सरखो डे, अने तेथी योग्य नयी, चाद्वणीनु
प्रतिपद्वन्नूत वनावेतु तापसतु जाजन जाणतु; केमके तेमायी त्रिद्वपात्र पण जल निकळी शकतु
नयी ॥ ४३ ॥ कतु डे के—चाद्वणीना प्रतिपद्वी दृष्टतन्प तापसतु र्वपर छे, के जेमाधी एक त्रिदु जेद्वु नत्र
मण ऊरतु नयी, मारे ते सरखो शिव्य योग्य डे ॥ ४४ ॥

सप्रति परिपूर्णकदृष्टतो ज्ञाव्यते, परिपूर्णको नाम धृतङ्गीरगाढन, सुग्रहाग्नि
धचटकाकुडायो वा, तेन ह्याग्नीषो धृत गालयति ॥ ४९ ॥ ततो यथा स परि-
पूर्णकः कचवर धारयति, धृतमुज्जति, तथा शिष्योऽपि यो व्याख्यावाचनादौ दो-
षानग्निदहति, गुणास्तु मुचति, स परिपूर्णकसमानः, स चाऽयोग्यः ॥ ४६ ॥ आह
चूर्णिकृत—वग्दद्याणाद्सु दोसे । द्वियंमि उवेऽ मुयऽ गुणजात्रं ॥ सो सीतो
उअजोगो । जणियो परिपूर्णगसमाणो ॥ ४७ ॥ आह, सर्वज्ञसनेऽपि दोषा
सन्नमतीत्यथ्रधेयमेतत्, सत्यमुक्तमत्र ज्ञायकृता ॥ ४८ ॥

हवे परिपूर्णकदृष्टत ज्ञेवे अं, परिपूर्णक षट्त्रयी तथा रूय गळवानी गळणी, अथवा सुरी नामनी
चीनीनो मालो जाणवो, ते गळणीषी ग्वाणो री गळे अं ॥ ४७ ॥ माटे जेप ते गळणी कृतं गरी
राखे अं, अने वीने जोनी दे अं, तेम शिष्य पण जे, व्याख्या तथा वाचना आदिकमा दोषेने ग्रहण करे
अं, तथा गुणेने जोनी दे अं, ते शिष्य गळणी अथवा सुरीना माला सरखो अं, अने ते अयोग्य अं ॥ ४६ ॥
चूर्णिकारं पण कहे अं के, जे शिष्य व्याख्यान आदिकमा दोषेने तो हृदयमा धारण करे अं, अने गुणोता समूहने
तने अं, ते गळणी सरखा शिष्यने पण अयोग्य कथो अं ॥ ४७ ॥ अर्हा कोऽ शंका को अं के, सर्वज्ञता मत्ता
पण दोषो सन्नेवे अं, माटे ते नाम श्रद्धा करमा जायक नयी, त्यारे तेने उत्तर अपि अं के, ते माटे अहो ज्ञायकारे,
कथु अं के ॥ ४८ ॥

सबन्तुप्पामन्ना । दोसा हु न सति जिणमए केवि ॥ जं अणुवउत्तकहणं । अप-
त्तासाज्ज व हवंति ॥ ४ए ॥ संप्रति हंसदृष्टातजावना, यथा हस झीरमुदकमिश्रि-
तमपि उदकमपहाय झीरमापिबति, तथा शिष्योऽपि यो शुरोरनुपयोगसञ्चवान् दो-
षान् अवश्य गुणानेव केवलानादत्ते, स हंससमानः ॥ ५० ॥ स चैकातेन यो-
ग्य, ननु हस झीरमुदकमिश्रितमपि कथं विनमस्तीकरोति, येन झीरमेव केवलं
मापिबति, नतूदकमिति ॥ ५१ ॥ उच्यते, जिह्वाया अस्त्वत्वेन कूर्चकीञ्चूय पृथग्ज
वनात्, उस्तच—अवत्तणेण जीहाए । कूचिया होइ खीरमुदगपि ॥ हंसो मुत्तूण जल
आवियइ पय तह मुत्तीसो ॥ ५२ ॥

सर्वज्ञ प्रभुए कहैदा एवा जित्तमत्तनी अरर कोइ पण दोषो नयी, एवी रीतना सर्वज्ञ प्रभुना मत्तयां
जे अनुपयोगणणु कहेंवु ते कुपातेने आर्थीने जाणवु, अर्थात् कुपात्र मनुष्य तेम कहे ठे ॥ ४ए ॥ हवे हसना
दृष्टातनी जावना कहे ठे, जेप हस पासे दूध अने जल मिश्रित करीने मूत्रया होय, परतु तेमायी जळने तजीने
ते दूध पीये ठे, तेम शिष्य पण के ज, गुल्ना अनुपयोगयी उत्सन्न थयेना दोषोने ओम्निने केवल गुणोनेज ग्रहण
करे ठे, ते हस सरखो ठे ॥ ५० ॥ अने ते एकति योग्य ठे, अहाँ शका करे ठे के जळधी मिश्रित थयेना दूधने
पण हस केम जुटु करी शकें ठे? के जेयी ते केवल दूधन पीये ठे, अने पाणी पीतो नयी । ॥ ५१ ॥ ते
मोटे कहे ठे के, तेनी जीजया खदाहा होवायी ते कुचो थइने जुटु पडे छे, तेयी,—क्यु ठे के—जीजनी खदाहायी
जळया रहैहु दूध पण कूचारूप थाय ठे, अने तेयी हस जल ओम्निने दूध पीये ठे माटे सुशिय पण ते हस
मखो होय ठे ॥ ५२ ॥

मोक्षोपद्रवोत्तमसिद्धिर्गुणो ज्ञो ज्ञोसो । जोगो
 समयत्यसारस्स ॥ ५३ ॥ इदानीं महिषदशान्तभावना, यथा महिषो निपानस्थान-
 नमवाप्त सन् उदकमध्ये तदुदकं मुहुर्मुहुः शृंगाभ्यां तान्मयन्नवगाहमानश्च सकलमपि
 कञ्चुपीकरोति, ततो न स्वयं पातु शक्नोति, नापि घृथं ॥ ५४ ॥ तद्वद्विष्योऽपि यो
 व्याख्यानप्रबन्धवसरेऽक्रान्तमप्यत्र कुञ्चपृञ्चानिः कञ्चल्लविकयादिभिर्वा आत्मनः पर्यां चा-
 नुयोगश्रवणविधातमाधत्ते, स महिषसमानः ॥ ५५ ॥ स चैकान्तोऽयोग्यः उक्तं च—
 समयमपि न पिपिइ महिसो । न य जूहं पिपिइ द्वोद्वियं उदयं ॥ विगह विक्कहाहि तह
 । अथक्कपुञ्चाहि य कुसीसो ॥ ५६ ॥

गुरु अनुयोगपणाधी कहेबा इह दोषेने पण दोस्सिने जे गुणेने ग्रहण करे डे, ते शिष्य सुर्यार्यना
 सारने योग्य डे ॥ ५३ ॥ हवे पामना दशतनी चावना कहे डे, जेप पामे जळशय मत्ये प्राप्त थको थको
 तेमा रहेबा पाणीने वाचार शिगनात्रोधी उजळतो थको तथा अदर अक्काहना करतो थको समु जळ मेवु
 करे डे, अने तेधी पोते पी शक्नो नथी, तेम पोताना दोळाने पण पीवा देतो नथी ॥ ५४ ॥ तेनी फेडे शिष्य
 पण के जे, व्याख्यान वचती रखते विना अवसरजे नकापा सवाडोधी अथवा वत्तेशनी विक्का आदिकवने
 करीने पोताने अने फसेने अनुयोगना श्रवणनो विगत करे डे, ते शिष्य पाना सरतो छे ॥ ५५ ॥ अने ते
 एकते अयोग्य डे. कुवु डे के, पामे पोते पण पाणी पीतो नथी, तेम ते मेळी नाखीने पोताना दोळाने पण
 पीवा देतो नथी; तेम कुशिय पण विग्रह कयात्रोधी तथा निरर्थक प्रश्नोधी व्याख्यानने मेळी नाखे डे ५६ ॥

मेयोद्वाहणज्ञावना, यथा मेयो वदनस्य तनुत्वात् स्वयं च निभृतात्मा गोष्पदमा-
 त्स्थितमपि जलमकद्गुपीकुर्वन् पिवति ॥ ६७ ॥ तथा य शिष्योऽपि पदमात्रमपि
 विनयपुर सरमाचार्यचित्त प्रसादयन् पृच्छति स मेपसमान, स चैकानेन योग्य.
 ॥ ६८ ॥ मशकदृष्टातज्ञावना, य शिष्यो मशक इव जाल्यादिकमुद्घृष्टयन् गुरो-
 र्मेनसि व्ययामुत्पादयति स मशकमसमान, स चाऽयोग्य ॥ ६९ ॥ जल्लोकाह-
 द्यातज्ञावना, यथा जल्लोका शरीरस्मदुन्मती रुधिरमार्कपति, तथा शिष्योऽपि योऽ-
 दुन्मन् श्रुतज्ञानमापिचति स जवृकासमान ॥ ६० ॥ उक्तञ्च—जद्गुगावभद्रुभिर्नो ।
 पियद् सुसीसोत्रि सुयनाण ॥ ६१ ॥

हरे घेयना श्रुतनी ज्ञाना कहे डे, जेप घेयो पोतातु मुख सुद्धम हेपायी पोते गायना पाता जेव्वा
 पण मशका रहेला पालीने महा मनीन कर्नो थको थसजेने पीये डे ॥ ६७ ॥ तेप जे शिष्य पण एरु पद
 मान पण विनयप्रमक आचार्यना चित्ते खुशी कर्नो थको प्रडे डे, ते घेग सरखो डे, अने ते एराते योग्य
 डे ॥ ६८ ॥ हरे मशाला दृष्टातनी ज्ञाना कहे डे, जे शिष्य मशकनी पेंडे ज्ञानि आन्कि खुद्धी करीने गुम्ना
 मनमा खेट उपजावे डे, तेन मशक समान जाणयो, अने ते अयोग्य डे ॥ ६९ ॥ हरे जनेना दृष्टातनी ज्ञाना
 कहे छे, जेप जळो शरीरने दुज्ञान्या विना मधिर खंवे डे तेप शिष्य पण जे गुम्ने दुनाथा विना श्रुतज्ञानरूप रसेन
 पीये डे, ते जळो सरखो डे ॥ ६० ॥ क्यु डे के-जनेनी पेंडे दुज्ञान्या विना उत्तम शिष्य पण श्रुतज्ञाननो रस
 पीये डे ॥ ६१ ॥

विनाढीदृष्टतत्रावना यथा विनाढी भ्राजनसस्य द्वीर श्रमौ विनिपात्य पिवति,
 तथादुष्टस्वप्नावत्त्वात् शिष्योऽपि यो विनयकरणाद्विनीततया न साक्षादुत्सुसमीपे
 गत्वा शृणोति ॥ ६२ ॥ किंतु व्याख्यानानुस्थितेभ्य केभ्यश्चित्स विनाढीसमान.
 स चाऽयोग्य ॥ ६३ ॥ तथा जाह्नकस्तिर्यग्विशेषस्तदुदाहरणत्रावना, यथा जा-
 ह्नक. स्तोत्रं स्तोत्रं द्वीर पीत्वा पार्श्वोऽपि द्वेडि तथा शिष्योऽपि य पूर्वदृष्टीत
 सूत्रमर्थं वा अतिपरिचितं कृत्वा अन्य पृच्छति स जाह्नकसमान. स च योग्य ॥ ६४ ॥
 संप्रति गोदृष्टतत्रावना. यथा केनापि कौटुंबिकेन कस्मिंश्चित्पर्वणि चतुर्भ्यश्चतुर्वेद-
 पारंगामिभ्यो विप्रैर्भ्यो गौर्दत्ता, ततस्ते परस्पर चितयामासुर्येयमेका गौश्चतुर्णा-
 मस्माक ॥ ६५ ॥

हृदं विनाढीना दृष्टतनी जावना कहे डे, जेम विनाढी भ्राजनमा रहेंडु दृथ श्रमीपर पानीने पीये डे,
 तेम शिष्य पण के जे दुष्ट स्वप्नावत्त्वो होमयी विनय करवा आदिकयी मरीने साक्षात् गुरु पासं जइ
 साजलतो नथी ॥ ६२ ॥ परतु व्याख्यान साजलतीने उडेजा एवा केडझक मनुष्यो पासेयी साजले डे. ते विद्या-
 नी समान डे, तथा अयोग्य डे ॥ ६३ ॥ वली जाह्नक पदज्ञे एक जातनुं तिर्यच, तेना उदाहरणनी भावना कहे डे,
 जेम जाह्नक (शेरो) थोशु थोशु दूध पीने परत्वा चांटे डे. तेम शिष्य पण जे पूर्वे ग्रहण करेवा सूत्र अथवा अर्थने
 अतिपरिचयवालो करीने बीजाने पृडेडे, ते जाह्नक सरखो डे, तथा ते योग्य डे ॥ ६४ ॥ हृदं गायना दृष्टतनी जावना
 कहे डे; जेम कोऽक कुडंजिए को क पर्वने विपे चार वेदोने जाणनारा एवा चार ब्राह्मणो प्रत्ये एक गाय आपी,
 तेयी तंत्रो परस्पर चितयवा लाग्या के, आ एक गाय आपणा चारेनी डे ॥ ६५ ॥

तत कथं कर्तव्या, तत्रैकेनोक्त, परिपाठ्या दुहतामिति, तच्च समीचीन प्रतिज्ञात-
मिति सर्वे प्रतिपन्न ॥ ६६ ॥ ततो यस्य प्रथमदिवसे गौरागता तेन चित्तित
यथाहमस्यैव धोढयामि, दृष्ट्ये पुनरन्यो धोढयति, किं निरर्थिकमस्याश्चारिं ब्रह्मामि
॥ ६७ ॥ ततो न किञ्चिदपि तस्यै तेन दत्त, एव श्रेयैरपि, तत सा श्रुपाककुड्ड-
निपतितेव तृणसद्विद्वान्निहिता गतासुरचूत् ॥ ६८ ॥ तत समुत्थितस्तेषां धि-
ञ्जातीयानामर्णवादो दोषे, शेषगोदानादिद्वान्नव्यवद्भेदश्च ॥ ६९ ॥ एव शिष्या
अपि चिन्तयति न खलु केवलमस्माकमाचार्यो व्याख्यानयति, किंतु प्रतीडकानामपि ॥ ७० ॥

माटे हवे तेषु शुं कखु ? त्या एकै कखु के, वारा फरती आपणे ते दोषी, एम कखु मार छे, एम
विचारी सख्यत्रोए ते अगीकार कर्युं ॥ ६६ ॥ पडी पेहेल दिवसे जेनी पासे गाय अबाबी. तेषे विचार्युं के,
हु तो आंगेन फक्त दोष्य, अने काये तो नीजे दोषे, माटे आ गायने हु फोक्त चारो शामटे नाखु ? ॥ ६७ ॥
एम विचारी तेषे तेने कइ पण चारो आप्यो नहीं, अने एवी रीते नीजात्रोए पण चारो आप्यो नहीं, अने तेवी ते
गाय जागे कसाइ खानामा पनी होय नहीं, तेम यास पाणी निना मृत्यु पामी ॥ ६८ ॥ अने तेवी ते नीच आ-
सणोने जगत्पा अर्बणवाद थयो, अने त्याखी तेत्रोए बीजी गयो मळवा आदिकेनो ज्ञान पण गुमाव्यो ॥ ६९ ॥
एवी रीत शिष्यो पण के जेत्रो एम विचारे छे के, आचार्य महाराज केवल अमारो माटेज कइ व्याख्यान आपता नथी,
परंतु "प्रति चक साधुत्रो माटे पण व्याख्यान आपे ठे ॥ ७० ॥

"अन्य गच्छादिसमाधी शासत्रान्यसादिक माटे आवेदा साधुत्रो, ग्राहणा साधुत्रो, प्रातीच्छिको (आचर्यक
निर्मु, च ट वा वारे बुद्धो)

ततस्तएव विनयादिक करिष्यति किमस्माकमिति प्रातीडिका अप्येव चित्तयति निज
 शिष्या सर्व करिष्यति किमस्माक कियत्काद्यावस्थायिनामिति ॥ ७१ ॥ ततस्ते-
 पामेव चित्तयतामर्थांतरात् एवाचार्यो विधीदति, लोके च तेपामवर्णवादो जायते
 ॥ ७२ ॥ अन्यथापिगङ्गांतरे दुर्द्वजो तेषा सूत्रार्थो, ततस्ते गोप्रतिग्रहकचतुर्द्विजान्तय
 द्वाऽयोग्या दृष्टव्या ॥ ७३ ॥ उक्त च—अन्ने दुष्कृद् कद्वदं । निरड्यं से वहामि
 कि चारि ॥ चञ्चरणगवीरुमया । अन्नहाणी उवहुयाण ॥ ७४ ॥ सीसा पम्नि-
 ड्गाण । जरोत्ति तेविय हु सीसगजरोत्ति ॥ नकरति सुत्तहाणी । अन्नस्य वि-
 डुद्धह तेसि ॥ ७५ ॥

माटे तेअज तेपनो विनय आदिक करे, अपारे शी जर डे? वळी वीजा प्रातीच्छको पण एमज विचारे
 डे के, तेना पोताना शिष्यो सप्रकृ करे, अने पोत्ते बवत रहेनार एवा अपारे ते वित्तय आदिक करवानी शी
 जर डे? ॥ ७१ ॥ एवी रीते तेअने एवा विचारथी आचार्यजी महाराज तो वच्चेज सीदाया करे डे, अने
 हुनीयमा ते शिष्येनो अर्णवाद थाय डे ॥ ७२ ॥ वळी तेम करवाथी वीजा गच्छमा पण तेअने सूत्रार्थ मळवो
 मुक्केस थाय डे, माटे तेम शिष्येने, गायने ग्रहण करनार ते चार ब्राह्मणेनी पेडे अयोग्य जाणवा ॥ ७३ ॥
 कहु डे के-काव तो वीजो दोसे, माटे फोकट शा माटे हु चारे नाछु? एवो विचार करवाथी ते ब्राह्मणेये गाय
 गुमावी, अन्य दाजनी तेअने हानि थड, तेमज तेअने अर्णवाद पण थयो, (एमो चार्थय डे) ॥ ७४ ॥
 शिष्यो गुंनो-विनय वीजा साधुअने जळवे डे, अने ते वीजा साधुओ वळी शिष्येने जळवे, डे; अने एवी रीते
 गुंनो विनय आदिक न थवाथी सूत्रनी हाणी थाय डे, अने वीजा गच्छमा पण तेअने वाचना दुर्द्वज थाय डे ॥ ७५ ॥

एष एव गोदृष्टात प्रतिपङ्केऽपि योजनीय, यथा कश्चित्कोट्टुविको धर्मश्रद्धया च-
 तुर्न्यश्चतुर्वेदपागामिभ्यो गां दत्तवान् ॥ ७६ ॥ तेऽपिपूर्वत्वपरिपाठ्या दोग्धुमारुधा-
 स्तत्र यस्य प्रथमद्विक्से सा गौरागता स चिन्तितवान् ॥ ७७ ॥ यद्यहमस्याश्चारि
 न दास्यामि तत क्रुधा धातुङ्गयात्प्राणानपहास्यति, ततो मे लोकेषु एते गोहत्याका-
 रका इत्यवर्णवादो न विष्यति पुनरपि चाऽऽमन्त्र्य न कोऽपि गवादिक दास्यति ॥
 ७८ ॥ अपिच यदि मदीयचारिचरणेन पुष्टा सती शैरपि ब्राह्मणैर्धोड्यते ततो मे म-
 हानऽनुग्रहो न विष्यति अहमपि च परिपाठ्या पुनरप्येनां धोड्यामि ॥ ७९ ॥

कली एवी रीतनु आ गायतु नृष्टात तेथी प्रतिपङ्क दृष्टात्स्वपे एण नीचे मुजर जोमी देवु, जम कोङ्क
 कुडवीण र्मिनी श्रद्धाथी चार वेदोने जाणनारा चार ब्राह्मणो प्रत्ये एक गाय आपी ॥ ७६ ॥ अने ते ब्राह्मणो एण
 पूर्वनी पंडे चारा फलती दोवा वाग्या, तेआंमा जेने त्यां प्रथम दिक्से गाय आबी, तेणे विचार्युं के ॥ ७७ ॥
 जो हु आ गायने चारो नहीं आपु, तो ते कुधायी धवायी माणोने छोनी देशे, अने तेथी आ
 ब्राह्मणो तो गौहत्या करनारा अं, एनी रीतने तुनीयामा अमर्णवाट यशे, अने तेथी फरीने अमोने कोऽ एण
 गाय आन्कि आपसो नहीं ॥ ७८ ॥ कली जो आ गाय मारो चारो स्वाडेने पुष्ट यशे, तो वीजा ब्राह्मणो एण
 तेने नोऽ शकशे अने तेथी *मारो तेआंमा उपर महोणे अनुग्रह यशे, अने कली मारो वारो आजेथी हु पाण
 तेने नोऽ शकश ॥ ७९ ॥

नतोऽवश्यमप्ये वातव्या चारिस्ति ददौ चारि, एव शेषा अपि उडु, नन सर्वे-
 ऽपि चिरकात्रा दुग्धाऽव्यवहारआलिनो जाता, लोकैच समुद्धित साधुवाद, इत्यने
 च प्रभूतमन्यदपि गवाधिक ॥ ८० ॥ एवं येऽपि विनयाश्रितयति यदि त्रयमाचा-
 र्थस्य न किमपि विनयादिक विधातारस्तत एपोऽवसीदन्नवश्यमपगतासुर्जेविष्यति लोकै-
 च कुशिष्या इमे इत्यघर्णवाद ॥ ८१ ॥ ततो गच्छांतरेऽपि न त्रयमवकाशं इत्यस्या-
 महं, अपि चास्माकमेप प्रव्रज्याशिद्धावतारोपणादिकरणतो महोपकारी, संश्रति च जगति
 दुर्द्धर्तं धुनरत्नमुपयडुन् वर्त्तने ॥ ८२ ॥ ततोऽवश्यमेतस्य विनयादिकमस्मान्नि कर्त्तव्य,
 अन्यच्च यद्यस्मदीयविनयादिना साहायकवक्षेन प्रातीडिकानामप्याचार्यते उपकार ॥ ८३ ॥

माटे आ गणने शरं गन चरो देवो जोइये, एम विचारी तेणे गयने चरो आय्यो, अने गवी रीते
 वीजाओण पण आय्यो, अने तेथी मज्जाओ घणा कालवृधि दशनु जोगन करुनारा थया, लोकैमा पण तेओनो
 यश फंडायो; अने तेथी गय आदिक वीडुं पण तेओने घणु दान पड्यु ॥ ८० ॥ गवी रीते शिष्यो पण,
 के जेओ एम विचारे के जो अमो अचार्यनो विनय आदिक रुड नही करीये, तो आ आचार्ये खरेवर सीदाड
 सीदाइन मुर्यु पापशे, अने लोकमर्ष पण अपवाद थरो के, आ कुशिष्यो थया ॥ ८१ ॥ कळी बीजा गच्छमा,
 पण अपोने भयान नही मळे, तेमज गळी आ आचार्ये अपोने दीडा, शिष्यापण तथा व्रत आदिक आयवाथी
 अपारा मांदा उपकारी डे, कळी हगणा पण जगतमा दुर्द्धन एंडुं ज्ञानान्न अमोने ते अपे दे ॥ ८२ ॥
 माटे अपारो अकथ तेने- विनय आदिक करवो जोइये; कळी अपारा वित्तय आदिकरूप सहायकारी गळवेने
 करीने जो बीजा साधुओने पण आचार्यथी उपकार थरो ॥ ८३ ॥

किमस्मान्निर्न बन्ध, छिद्युण्णतरपुण्यद्वान्नस्याऽस्माक ज्ञावात् ॥ ८४ ॥ प्राप्तीद्विका अपि
 धे चित्तयति, अनुपकृतोपकारी जगवानाचार्योऽस्माक, को नामान्यो महानमेव व्याख्या-
 प्रयासमस्मिन्निमिन्ना विदधाति ॥ ८५ ॥ तत किमेतेषा त्रय प्रत्युपकर्तुं शक्ता.,
 तथापि यत्कुर्म सोऽस्माक महान् ज्ञान इति परनिरपेक्ष विनयादिकमादधते ॥
 ८६ ॥ तेषा नावसीदत्याचार्योऽव्यवच्छिन्ना च सूत्रार्थप्रवृत्ति., समुच्चवति च सर्वत्र
 साधुवाद, गङ्गांतरे च तेषा सुद्वज श्रुतज्ञान, परलोके च सुगत्यादिज्ञान ॥ ८७ ॥
 चेर्धुदाहरण यथा, 'वारवङ्ग वासुदेवस्स तिस्रि जेरीओ' त जहा, सगामिया
 अब्जुद्धया कोसुद्धया ॥ ८८ ॥

तो तेषां अमार शु जशे? तेथी तो उवगे अमोने वेवनो पुण्यनो दान थशे ॥ ८४ ॥ वडी ते अन्य
 साधुओ पण एम चित्तरे के, आचार्यनी महागज तो अमारा, विना उपकार कयें पण ठपकारी ठे, केमके अमारे
 मटे आबो म्होठे व्याग्यानो मयास बीजे कोण कशे ॥ ८५ ॥ वडी शु अमो तेमनापर मत्युपकार कर-
 वाने शक्तित तथि? तोपण अमो जे कइ करीण डीए, ते अमोने महोय वाजरूप ठे, एम विचारी परनी अपेक्षा
 राग्या विना जेओ विनय आदिक करे ठे ॥ ८६ ॥ तेओना आचार्य सीदता नयी, तेम सूत्रार्थनी मनुत्तिने पण
 विन्नेट थनो नयी, सखळी जगण यशवाद फेनाय ठे, तथा बीजा गरुमा पण तेओने श्रुतज्ञान मुवज थाय
 ठे, अने परबोक्सा मुगनि आदिकलो वाच मळे ठे ॥ ८७ ॥ हुवे जेरीनु द्ध्यात नीचे मुजव ठे. छास्पी (छास्का)
 नपरीण वासुदेवने तण जेरीओ हती, ते नीचे मुजव-सथापनी जेरी, मणदिकनी जेरी, तथा कोसुद्री महोत्सनी
 जेरी ॥ ८८ ॥

तत्र प्रथमा सग्रामकाक्षे समुपस्थिते सामंतादीना ज्ञापनार्थं वाचने, छिन्तीया पुनरा-
 गतुके कस्मिंश्चित्प्रयोजने समुद्भूते लोकाना सामतादीना परिज्ञापनाय ॥ ८ए ॥
 तृतीया कौमुदीमहोत्सवाद्युत्सवज्ञापनार्थ, ततो ॥ तिष्ठिवि गोसीसचटणमईतो देवता-
 परिग्राह्या ॥ ९० ॥ तो तस्स चउथी जेरी अस्विप्पसमणी, तीसे उप्पत्ती कहि-
 जाइ ॥ ९१ ॥ तेणं कक्षेण तेण समएण सक्को देविदो सो तत्थ देवउोगे सुरमज्जे
 वासुदेवस्स गुणकित्तण करेइ ॥ ९२ ॥ अहो उत्तमपुरिसा एए अवगुणं न गिल्लति,
 नीएण य जुळेण न जुळ्ळति तत्थ एगो देवो असइहत्तो आगओ ॥ ९३ ॥

तेमा पेहेन्ती जेरी मग्राम सवधि वळत आव्येयी मासत आदिकेने जाण थवा मांटे वगानवाया आवे
 डे, नीजी जेरी कोइ परोणो आव्येयी, अथवा कडक प्रयोजन पड्येयी दोको तया सासत आदिकेने जाण
 थवा मांटे वगानाय डे ॥ ८ए ॥ तथा नीजी कौमुदी महोत्सव आदिक उत्सव जणववा मांटे वगानाय डे, ते
 गणे जेरीओ देवताधिष्ठित तथा गोशीपिचडनी वनाविडी हती ॥ ९० ॥ वळी तेनी पासे उप्पडवो नाश करनारी
 चोथी जेरी हती, तेनी उप्पत्ति कहे डे ॥ ९१ ॥ ते कक्षे तया ते सपयने विपे देवोनो स्वामी इइ त्या देववो-
 रुमा देवोनी माहे वासुदेवना गुणोहु वर्णन करवा बायो ॥ ९२ ॥ के, अहो' उत्तम पुरुषो अवगुण ग्रहण
 करना नथी, * तेम नीच युद्धथी युद्ध रुना नथी, एटनामा त्या एक देवने ते वचनपर श्रद्धा नही आववाथी
 ते वासुदेव पासे आव्यो ॥ ९३ ॥

* फक्त न्याय युक्त युद्धथीज युद्ध करे छे.

॥ वासुदेवो वि जिणसगास वदगोपवित्तो, सो अतरा कादसुणयख्व मययं विव्वइ +
 डुञ्जिगध ॥ ए४ ॥ तस्स गधेण सब्बो दोगो पराजगो, वासुदेवेण विट्ठो ज-
 णिय वणेण, अहो इमस्स कादसुणयस्स पटुरा इता मरगयजायणनिहित्तुत्ता-
 वद्विब्व रेहति ॥ ए५ ॥ देवो चित्तेइ, सच्च गुणगाही, ततो वासुदेवस्स आस-
 रयण गहाय पहावित्तो, सो 'वडुरापादएण नातो, तेण कूविय, जाहा आसो-
 हरिइ ॥ ए६ ॥ ततो कुमार रायाणो य निगया, ते देवेण हयविहयाकाजण तान्धिया,
 वासुदेवो निगओ जाणइ, कीस मम आसरयण हरसि ॥ ए७ ॥

वासुदेव पण जिनेश्वर मनुनें यात्या मांटे जंतो हतो, वच्चे ते देवताण सोत्रा तथा दुर्गंधाला काला
 कुतगनु रूप निक्खुं ॥ ए४ ॥ तेनी गयवी सयला बोको दूर जाग्या, पत्तु वासुदेवे ते कुतराने जोडेने नेनु वणने
 करुं के, अहो! आ काला कुतराना सफेट दातो जाणे मरकत्तपणिना चाजनमा राखेवी पोतीओनी पाळा होय
 नही, तेवा शोत्रे डे ॥ ए५ ॥ त्यारे देवे विचारुं के, खरेखर वासुदेव गुणग्राही डे, पछी ते देव वासुदेवतो अश्वरत्न
 (उत्तम घोत्रो) महए ऋति जाग्यो, तेनी अश्वपालने खर पन्नाथी तेणे पोकार रुया के, घोत्रो हरी जाय
 डे ॥ ए६ ॥ ते मान्जली राजाओ अने कुमारो तेनी पाळ जवाने निकय्या; तेमने पण ते देवे हतमहत
 ऋति माग्यो, त्यारे वासुदेवे निकळीने तेने कळु के, मागे घोत्रो तु शामाटे हरी जाय डे? ॥ ए७ ॥

१ पटुरा-अश्वशाला (घोत्राहाण, तवेत्रो) तस्या पाळको रङ्गकम्बेन

एसो मम आसो तुज्ज न होइ, देवो ज्ञएति इमं जुज्जे पराजिउण गिण्हाहि
 वासुदेवेंण जणिय वाढं किह जुज्जामो, तुमं चूसीए अह च रहेण तोरह मे-
 ण्ह ॥ एण ॥ देवो ज्ञएइ, अह मे रहेण, एवं आसो हृत्थी पन्निस्सिओ, वा-
 याजुब्बाध्याइ सब्बाइ पन्निसेहइ ॥ एए ॥ तोखायं केण जुज्जेण जुज्जियव्वं,
 देवो ज्ञएइ अहिवाणजुञ्जेण, वासुदेवेंण जणिअ पराजितोऽह. नेहि आसरयण
 नाह नीयजुञ्जेण जुज्जामि ॥ १०० ॥ तो देवो तुठो समाणो ज्ञएति वरेहि
 वर कि ते देमि, वासुदेवेंण जणिय, असिचोवसम णि जेरि देही, तेण विज्जा एसा
 तीसे जेरीए, उप्पत्ती ॥ १०१ ॥

आ मागे बोना ठे, तारो नथी, त्यारे देवे कबु के, तमे युद्ध करो ? अने पराजय करी घांनो ग्रहण
 करो, त्यारे वासुदेवे कबु के, युद्ध केली रीते कराय, तपो चूसीण ठो, अनं हु रथपर हु, मांटे तपो पण रथ
 ग्रहण करो ? ॥ एण ॥ त्यारे देवे कबु के, मारे रथनी जर नथी, एवी रीते मोना तथा हाथीनो पण निपेथ
 कयो, उज्जे वचन युद्ध आदिक सर्व युद्धनो तेणे निपेथ कयो ॥ एए ॥ त्यारे कळी वासुदेवे कबु के कया
 युद्धथी युद्ध करवु ? देवे कबु के, अभिमान युद्धथी युद्ध करवु, ते साजळी वासुदेवे कबु के, हु हाथो, मांटे
 अथल्ल ढोड जा ? हु नीच युद्धथी झरतो नथी ॥ १०० ॥ त्यारे देवता तुष्टमान थने मानसहित कहेवा ज्ञायो
 के, तु वदान माग ? हु तने शु आपु ? त्यारे वासुदेवे कबु के, उपद्रव उपशमावतारी नेरी आप ? तथी तेणे
 आपी एवी रीते ते जेरीनी उपत्ति जाणवी ॥ १०१ ॥

कथीकयसुत्तल्यो । गुरुविजोगो न ज्ञासियव्वस्स ॥ अविणासियसुत्तल्य्या । सी-
सायरिया विणिदिट्ठा ॥ १११ ॥ अत्र सिखियमाणेण इति सुशिक्षितोऽह स्व-
यमेव नान्य पृष्ठाम्नीति मानेन गञ्जित विस्मृत सपूर्णं करोतीत्यर्थं , शेष सुगम ॥ १११ ॥
सप्तत्याञ्जीरीदृष्टातज्ञावना, कश्चिदाञ्जीरो निजचार्यया सह विक्रयाय धृत गज्या
शुहीत्या पत्तनमवतीर्णश्चतु पथे च समागत्य त्रिणिगापणेषु पणायितु प्रवृत्तो ॥ ११३ ॥
घटितश्च पणयागसटकस्तत समारब्धे धृतमापे गज्या अधस्तादवस्थिता आञ्जीरी
धृत जर्वा वारकेण समर्प्यमाण प्रतीड्ढति ॥ ११४ ॥ तत कथमप्यर्पणे ग्रहणेवाऽनुप-
योगतोऽपातराद्धे वारकां द्यधुघटरूपो निपत्य खरुशो जगन ॥ ११५ ॥

गुरूपण (तेषज) कथारूप कोढा डे मृतार्थ जेणे एत व्याख्यान करत वायक नधी, जेओए मृतार्थने
विनाश नधी कर्यां, एवा शिष्यो तथा आचार्योनिज (योग्य) कथा डे ॥ १११ ॥ अर्हा ' शिक्षितमानं
करीने ए गस्यनो एयो अर्थ करवो के हु तो सारी गीते पोतानीमिळज शीविन्वो बु ? वीजामोडने प्रडीश नहा.
इत्यादि अहंकारं करीने न्हवी गपेनु जे सपूर्ण करे डे, एमो अर्थ जाणवो, तर्कानु मुगम डे ॥ ११५ ॥
हरे आञ्जीरी एग्धे स्वारणना दृष्टातनी ज्ञावना कहे डे, कोडक स्वारी पोतानी स्त्री साये, वेचवामोड
गाम्नीमा वी जगने शहेरमा आब्यो, तथा पछी चउगमा आर्विनि तणिकोनी दुकानोमा ज्ञावताव पृष्ठवा व्याग्यो
॥ ११३ ॥ पडी ज्यारे सोने थयो त्यारे घेतु माणु जरा माणु ग्यारण गाम्नीनी नीचे वेडी, तथा तेनो स्यामी
गाम्नीपरथी घीना घमा जे आपनो हतो, ते इती हती ॥ ११४ ॥ एतनामा क्षेत्रा देना अचानक त्त्चे
एक नानो वीनो वनो नीचे पदनीने टुकडे टुकमा थड गयो ॥ ११५ ॥

ततो द्रुतत्वानिद्रनमना पतिकृद्वपितु खरपरुषवाभ्यानि प्रावर्त्तयत् ॥ ११६ ॥ हा-
पायीयसि इ शीद्वे कामविभ्रुवितमानसा तरुणिमाऽञ्जिरमणीय पुरुपातरमवद्वोकसे,
न सम्यग्वाचकमञ्जिह्लासि ॥ ११७ ॥ तत सा खरपरुषवाभ्यश्रवणत समुद्रचूतको-
पावेशवशोऽद्विगतकपितपीनपयोधरा, स्फुरदधरविबोधी ॥ ११८ ॥ दूरोत्याटितचूरखा-
धनुरवष्टन्नतो नाराचश्रेणिमिव कृष्णकटाङ्गसततिमविरत प्रतिङ्गिपती प्रत्युवाच ॥
११९ ॥ हा ग्रामेयकाथम द्रुतघटमयवगणस्थ विदग्धमत्ताकामिनीना मुखाराविद्वान्य-
वद्वोकसे, न चेतावताऽवतिष्ठसे ॥ १२० ॥ खरपरुषवाभ्यैर्माम्प्यधिङ्गिपसि, तत. स
मथ प्रत्युक्तोऽतीवज्वद्वितकोपानद्वो यत् किमायसवच्छ चापितु द्वम्न., सायैव ॥ १२१ ॥

एवी रीति नीनु तुक्कान थवायी ररारीनु मन दुजावा द्वाग्यु, अने तेथी ते र्गणने आमग वचनो
बोववा द्वाग्यो के, ॥ ११६ ॥ अरे! पापणी! 'दिवाळ' सामदेवकी पीम्ति मन्वळी! जुवानीथी मनोहर
द्वागता वीजा पुरपने जोया करे डे? अने वीनो रको रगर द्वेनी नथी ॥ ११७ ॥ एवी रीतना आरुना
वचनो सात्तळ्यायी ते र्गणण उपन थयेवा तो म्ना आवेदना वहाथी जेणीना पुष्ट म्त्नो उडळवा तथा रूपवा
द्वाग्या डे, एवी, तथा जेणीना होळ स्फुरायमान थड रखा डे, एवी ॥ ११८ ॥ उची कंद्वी ब्रुकुडीनी रेखास्पी
धनुयना आधाथयी गणोनी श्रेणिनी पेडे थयाम वटाङ्कोनी श्रेणिने एकटम फेंवती थकी बोडवा द्वागी के ॥ ११९ ॥
अरे! नीच गामनीया! वीना घमनी पण अद्बगणना करीने चाड्वाकीगळी म्दो मच वामी मीत्रोना मुख-
कम्पळोने तु जोया करे डे? वळी एट्ठेथी पण सनोप नहा पामिने ॥ १२० ॥ आकरा वचनोथी मने पण वचोने
डे? पळी एवी रीतना सामा वचनो कहेवाथी अत्यत सहगेद्व डे तोधम्पी अग्नि जेनो एगो ते ररारी जेम
तेम गळो आत्कि तैण्णिने डेवा वाग्यो, अने ते र्गणण पण एवीज रीति तेने गळो डेवा द्वागी ॥ १२१ ॥

तत समभूतयो केशाकेशि युद्ध, ततो विमस्युद्धपाडादिन्यासत सकश्मपि प्रायो
 गत्रीघृत न्रुमौ निपतित, तत किञ्चित् शोपमुपगत, अश्वशेषं चावद्धीहं श्रन्निः
 ॥ १११ ॥ गत्रीघृतमपि शोपीनृतमपहृत पश्यतोहरे, सार्थिका अपि स्वं स्व घृत वि-
 क्रोय स्वभ्रामगमन प्रपन्ना ॥ ११३ ॥ तत. प्रभृतद्विवसजागातिक्रमेणापसृते शु-
 छे स्वास्थ्ये च द्वब्धे यत्किञ्चित् प्रथमतो विक्रीत घृत, तद्व्यमादाय तयो स्वभ्रा-
 म गद्धतो ॥ ११४ ॥ अत्रातराज्ञेस्तगते सहस्रजानौ, सर्वत प्रसरमञ्जिष्टकृति त-
 मोविताने परास्कदिन समागत्य वासासि ह्वय बद्धीवर्दे चाऽपहृतवत ॥ ११५ ॥

पडी तेओ कच्चे एक बीजाना केतो खचवा परत बरुाऽ चानी, अने तेथो आनाअरुला णो पम्वायी
 मायें करी गाफीषा रहेबु सप्रळु घी पृथ्वीपर दोलाऽ गधु, अने तेयी थोदुक तो जमीनमा सोसाऽ गधु, अने
 वाकी रळु ते हुतरा चटी गया ॥ ११५ ॥ गाफीषा जे कइयी यकी रही गधु हनु ते हाथ चाजाकीवाला चोरोए
 चोरी झीडु, सयवारवालाओ णण पोवपोवानु घी वेचीने पोताने गाम चाया गया ॥ ११३ ॥ पडी दिक्सतो
 यणो खरो जाग व्यतीत थया चाढ तेओनी बरुाऽ बप पफी, तथा ज्यारे तेओ उरुा पड्या त्यारे पेहेवेयी
 जे कइ घी वेचाणु हनु, तेनु द्रव्य बंझे, तेओ बंजे पोताने गाम जवा ब्याग्या ॥ ११४ ॥ एट्यामा कच्चे सूर्य
 अस्त थवायी चोरेकोरयी अथकारानो सपूह विस्तार पाग्यो, अने तेयी चोरोए अर्यानि तेओना हरुा, द्रव्य तथा
 वळुओ णण बटी बीधा ॥ ११५ ॥

तत्र एव तौ महती दुःखस्य नाजनमजायेता, एष दृष्टतोऽयमथांपनय' ॥ १२६ ॥
 यो विनयोऽन्यथा प्ररूपयन्नधीयानो वा खरपरुषवाक्यैराचार्येण शिद्धिनोऽधिद्वेषु-
 रःसर प्रतिवदति, यथा स्वयैवेत्यमहं शिद्धितः, किमिदानीं निहनुषे, इत्यादि
 ॥ १२७ ॥ स न केवलमात्मान संसारे पातयति, किन्वाचार्यमपि खरपरुषप्रत्युच्चारणा-
 दिना तीव्रतीव्रतरकोपानद्वज्ज्वालनात् ॥ १२८ ॥ जवति कुर्विनया मृदोरपि गुरोः
 खरपरुषप्रत्युच्चारणादिना प्रकोपकाः, उक्तं चोत्तराध्ययनेषु ॥ १२९ ॥ आणासवा-
 ब्रह्मचर्या कुसीद्धा । मित्रपि चरु पकरति सीसा इति ॥ १३० ॥

अने एवी रीते तेओ उचे महानदुःखेते पात्र थया, ए उण मुजमनु तो दृष्टत अे, एतु त्ता अर्थनो उपनय तो
 नीचे मुजम अे ॥ १२६ ॥ शिष्य के ने, उबट्टी रीते मरूपणा कलतो होय, अथवा अच्यम रगतो होय, तेने
 आकरा चनेनेथी आचार्य शिवाभाण आपे, अने ते वक्ते सामो यइने प्रतिवचनो कहे के, तत्र मने एवी रीते
 शिष्याव्यु अे, हेव शामोटे गोपे अे ? इत्यादि ॥ १२७ ॥ एवी रीतनो ते शिष्य केवल पोतनंन संमरमा पान्तो
 नवी, पंतु आकरा वचनो सामा योत्तखा आदिकथी तथा वओर वओर क्रोधरूपी अयिते मदीस करववाची आचार्य-
 महाराजने पण ससासा पाने अे ॥ १२८ ॥ खली एवी रीते कुशियो सोमल्लनाथळा गुप्ते पण आकरा वचनो
 योनमा आदिकथी नोप उत्तन्न करनारा थाय अे, उचग ययनमा रतुं अे के ॥ १२९ ॥ आश्वनिना, मय्यह नववा-
 ला तथा कुडीवीया एवा शियो सोमल्ल गुप्ते पण क्रोधित करे अे ॥ १३० ॥

अपि च गुणगुरवो गुरवस्तस्ते यदि कथमपि दुष्टशैक्षिशिक्षापनेन कोपमुपागमस्त-
थापि तेषां जगवदाज्ञावर्तित्वाद्दृष्यपपन्नाजा मिथ्याऽऽकृतादिमात्रेणापि विशुद्धिरूप-
जायते ॥ १३१ ॥ शिष्यस्तु जगददाज्ञाविद्वोपतो गुर्वाज्ञातनायाश्चोपचिताऽशुच्यगुरु-
कर्मा दीर्घतरराजी ॥ १३२ ॥ किंचैव स वर्त्तमानो मत्तिमानपि श्रुतरत्नवह्निर्भवति,
अन्यत्राऽपि तस्य दुर्द्वैजश्रुतत्वात् ॥ १३३ ॥ को हि नाम सचेतनो दीर्घतरजीविताऽ-
चिदापी सर्पसुखे स्नहस्तेन पयोविदून् प्रक्षिपतीति ॥ १३४ ॥ स एकातेनाऽयोग्य,
प्रतिपङ्कजावनायामपीदमेव कथानक परिचावनीय ॥ १३५ ॥

रात्री पण गुरुओ गुणायी मोहंरा ठे, अन तेओ क्ताच कोऽ कारणथी दुष्ट शिष्यने शिष्याण अप-
वाथी कोथ पामे, नोपण तेओ मद्दुनी आझामा रत्ता होराथी तेओने स्वप पाप वागे ठे, अने ते फस्त मि-
या दुष्कृत आपवायीज शुद्ध थऽ जाय छे, ॥ १३१ ॥ अने शिष्य तो मद्दुनी आझाने बोपराथी तथा गुरुनी
आसातनाथी अशुच कमाने उपाजन करवायी जारकमा थयो थको न्दीर्घ मसारने जजनगे थाय ठे ॥ १३२ ॥
वली णवी रीते वर्त्तनागे शिष्य बुद्धिचान होय तोपण ज्ञानरत्नथी याब थाय ठे, तेम बीजा गन्डातर आदि-
कमा पण तेने ज्ञान मक्खु दुर्द्वैज थाय ठे ॥ १३३ ॥ वली घणा काल सुधी जीवित्तो अचिदापी चतुर एमो
कयो माणस णवो होय के जे पोताने हाये र्मपना सुखमां र्थना भिदुओ रेरे? ॥ १३४ ॥ मांठ ण्या प्रसारनो शिष्य
एराने अयोग्य छे, रात्री उपर वर्त्तवैनु आचारीरिनु ण्यल मतपिक्क चावनामा पण नीचे मुजव चावी हेतु ॥ १३५ ॥

केवलमिह वृत्तघटे जग्ने सति छात्रपि तौ दृपती त्वरित त्वरित कर्परैर्यथाशक्ति घृत
 शहीतवतौ, स्तोकमेव त्रिनाश ॥ १३६ ॥ निदति चाल्मानसानीरो यथा हा मया
 न घृतघटस्ते सम्यक्समर्षितः, आचनीर्यपि वदति समर्षितस्त्वया सम्यक्, न मया
 सम्यग् शहीतस्तत् एव तयोर्न कोपवेशडु ग्व ॥ १३७ ॥ नापि घृतहानिर्नापि सकाल
 एवान्यसार्थिकै सह ग्राममशिसर्पतामपातरात्रे तस्करावस्कृष्टः, ततस्तौ सुखजाजन
 जातौ ॥ १३८ ॥ एवमिहापि कथञ्चिदनुपयोगादिनाऽन्यथारूपे व्याग्याने कृते सति,
 पश्चादनुस्मृतयथावस्थितव्याख्यानेन सूरिणा शिष्य पूर्वमुक्त व्याग्यान चिन्तयत प्रति
 एव वक्तव्य ॥ १३९ ॥

फक्त अहाँ घीनो घने ज्यारे जागी गयो ज्यारे, ते बने ली चस्तारे मळीन तुग्न तुस्त ते घीने जंष्टुं
 दोषाय तंष्टु काचनीओवने कोऽ बोवु जेम् हतु अने तेम करायथी फक्त थोभोज गगन थात ॥ १३६ ॥ क्ली
 ते स्वारीए एण पोतानेन उपको आपवो जास्ता हतो के, अरे' मे ते घीनो घने तने जाल्नीने न आयो,
 तेम रगारणे एण एम कहवु जोष्टुं हतु के, तमोए तो मने ते घने जाल्नीने आयो. एणु मे ते जाल्नीने लीथो
 नहीं, एम जो तेओ बोदते, तो तेओने क्रोधना आवशेशु दु.ग्व थते नहीं ॥ १३७ तेम घीनी हानि एण
 न थात, तथा नेह्नावहेलाज वीजा साथीओनी साथे गाम जगत. अने तेथी यच्चे चोरानो उपद्रव एण न थात. अने
 एवी रीते तेओ सुबना पाररूप थात ॥ १३८ ॥ एवी रीते अहाँ एण कोऽ रीते उपयोग आडिक विना आ-
 चार्य महागजधी जो कऽ उदादी रीते व्याख्यान कराऽ गणु होय अने पाउळधी ते व्याग्याननु ज्यारे यथास्थित
 स्वरूप याद आबु होय, तो आचार्यनी महाराजे, शिष्य ज्यारे एंव कऽेवु व्याख्यान विचारतो होय त्यां
 एम कहेवु जोड्ये के ॥ १३९ ॥

अथ त्रयोदशस्तरंगः

एव बहुधा श्रोतृविषयं योग्याऽयोग्यस्वरूप निरूप्येदानी योग्यानेव कतिचिदाह—मू-
लम्—अत्यथी समत्य मङ्गल्य । परित्वगधारगावि से सन्तू ॥ अपमत्त थिर जिड-
दीअ । धरमस्स पसाहगा पाय ॥ १ ॥

एवी रीते प्रणे प्रकारे श्रोताओ सवधि योग्य अयोग्यतु स्वरूप निरूपण करीनि, हरे केटजाक योग्यतुज वर्णन
को रे—मूवनो अर्थ—अर्था, समर्थ, मय्य, परीक्षक, धारक, विशेषज्ञ, प्रमादनिनो, स्थिरचित्तमाओ तथा
जितेंद्रिय, एतथा प्राय करीनि धर्माना मसाथक एते योग्य ते ॥ १ ॥

पदघटना स्पष्टा, तत्रार्थिस्वरूपमाह, अर्थी पुण जो धर्म । निहिमि नदू गवे-
 सए, सम्मं ॥ तज्जाणगे अ पुब्बइ । सुविआरी तूसए लहिठ ॥ १ ॥ अन्य-
 चापि, अर्थी एतथ सो पुण । जो ससारिअन्नयं परिवहते ॥ एसो चित्र पर-
 मर्थो । सेसोणत्थोत्तमन्नतो ॥ ३ ॥ पुब्बइ गुरुणो तदुत्तेय । विसयववहारनिव-
 याशय ॥ तस्स सम्भव अणुदिण । मज्ज हिअ रुयसमुट्टाणो ॥ ४ ॥ धम्मिअ-
 जाणोणुरज्जइ । सज्जइ अ ससत्तिओ अणुट्टाणे ॥ वज्जइ अ तच्चिरुख—प्यवि-
 त्तिपाणं जाण दूरे ॥ ५ ॥ तक्कहणिसामणेण वि । हरिसिज्जइ खिज्जइ असुहकिञ्चे
 ॥ धम्ममाण्णद्वीण इमे । दूरविरुक्खासमायारा ॥ ६ ॥

आ गायत्री पंढरचना स्पष्ट है, तेषां अर्थानु स्वरूप कहे है, जे माणस नष्ट थयेना निपाथने जेम,
 धर्मे सम्पद् प्रकारे गवेपे है, तथा धर्मना जाणकारेने पृथकारे है, तेमज धर्मेने मेलीने जे सतुष्ट थाय है,
 तेने उत्तम विचारसो अर्था जाणवो ॥ १ ॥ धीजी जगोए पण रुठु छे के, अर्हा अर्थी तेने जाणवो, के
 जे, ससारसधि जयने धारण करतो होय, तथा तेम रुठु तेज परार्थो है, अने जाकितु, निरर्थक छे, एय जे
 मने है, ते अर्था ठ, ॥ ३ ॥ वृत्ती जे, गुरुप्रते धर्मना जेद, तथा विषयेने प्रछे है, तथा ससारथी वैराग्यदुस्त
 बडेने हमेशा ईदयेनी अदर निश्चय व्यवहारपूर्वक ते धर्मनु स्वरूप चितवे है, तेने अर्थी जाणवो ॥ ४ ॥ वळी जे
 धमी मनुष्यप्रते अनुराग धारण करे है, तेम समर्थ थयोयको धर्मक्रियामा जे तत्पर थाय है, तेमज जे धर्मविस्व
 ष्टि करनारा मनुष्यने दूर तजे है ॥ ५ ॥ वळी धर्मकथा सान्ध्यामां पण जे हर्षित थाय है, तथा अष्टाज
 कार्यमां जे अनानदरपण धारे है, तथा जेणे निरुद्ध आचरणो दूर कर्था है तेओने धर्मना अर्थी मनुष्यो जाणवो ॥ ६ ॥

अथ त्रयोदशस्तरंगः

एन बहुधा श्रोतृविषय योग्याऽयोग्यस्वरूप निरुव्येदानी योग्यानेव कतिचिदाह—मू-
लम्—अत्यी समत्य मज्जत्य । परिरखगधारगावि से सन्तू ॥ अपसत्त थिर जिड-
दीत्र । धम्मस्स पसाहुगा पाय ॥ १ ॥

एवी रीते णे मकरे श्रोताञ्चो सपि योग्य अयोग्यतु स्वरूप निरूपण करीने, ह्वेकेट्ठाक योग्योत्तुन वर्णन
करे ठे—मूदानो अर्थ—अर्था, समर्थ, मयस्य, परीक्षक, धारक, विशेषज्ञ, प्रमादविनानो, स्थिरचित्तवायो तथा
जितेन्द्रिय, एट्ठा मायै करीने धर्माना प्रसाधक एट्ठे योग्य ठे ॥ १ ॥

पद्मघटना स्पष्टा, तत्रार्थिस्वरूपमाह, अर्था पुण जो धम्म । निहिमिव नदु गवे-
सण सम्म ॥ तज्जाणगे अ पुब्बइ । सुविआरी तूसए बहिय ॥ २ ॥ अन्य-
त्रापि, अर्था एत्य सो पुण । जो ससारिअजय परिवहतो ॥ एसो च्चिअ पर-
मत्यो । सेसोणत्योत्तिमन्नतो ॥ ३ ॥ पुब्बइ गुरुणो तइजेय । विसयववहारनिब्ब-
याइयय ॥ तस्स सम्म्व अणुदिण । मज्ज हिअ कयससुट्टाणो ॥ ४ ॥ धम्मिअ-
जोणपुरज्जइ । सज्जइ अ ससत्तिओ अणुष्टाणे ॥ वज्जइ अ तव्विरुछ—प्पवि-
त्तिवणं जाणं दूरे ॥ ५ ॥ तम्महणिसामणेण वि । हरिसिज्जइ खिज्जइ असुहकिच्चे
॥ धम्माणएत्थीण इमे । दूरविरुछासमायारा ॥ ६ ॥

आ गायानी पंढरचना स्पष्ट है, तेमा अर्थोनुं सारूप कहे डे, जे माणस नए थयेता निधायन्ते जेभ,
धर्मने सम्म्व प्रकारे गेये डे, तथा धर्मना जाएकारेने पूब्याकरे छे, तेमज अर्भने मेळनीने जे सतुष्ट थाय डे,
तेने उच्चम निचारालो अर्थी जाणवो ॥ २ ॥ बीजी जगोए पण कहु छे के, अर्हा अर्थी तेने जाणवो, के
जे, ससारसत्रि चयने धारण कर्नो होय, तथा तेम करु तेज परसार्थे डे, अने यकीनु निरर्थक छे, एम जे
माने ते अर्थी डे, ॥ ३ ॥ रती जे गुरुभते धर्मना जेठ तथा विषयने पृष्ठे डे, तथा ससारथी वैराग्ययुक्त
धरने हुमेश इन्द्रयनी अतर निश्चय व्यवहारपूर्क ते धर्मनुं सारूप चितवे डे, तेने अर्थी जाणवो ॥ ४ ॥ बळी जे
धर्मी मनुष्यभते अनुसारा धारण करे डे, तेम समर्थ थयोयको धर्मक्रियामा जे तत्पर थाय डे, तेमज जे धर्मनिष्ठ
मष्टति करनारा मनुष्यने दूर तजे डे ॥ ५ ॥ बळी धर्मकथा साज्ज्यामां पण जे हर्षित थाय डे, तथा अशुभ
कार्यमा जे अनादरपण धारे डे, तथा जेणे किन्ढ आचरणो दूर कर्या डे तेओने धर्मना अर्थी मनुष्यो जाणवो ॥ ६ ॥

इन्द्रद्वारखणो अ नेत्रो । अस्थी जोगो विसेसधम्मस्स ॥ एअविद्धरुखण-
स्वो य । जाणियव्वो अजुगोत्ति ॥ ७ ॥ अपिच, जह जोअणमि इत्ता नज्जो-
वइआण जहव अपुरागो ॥ तहअत्थित्त सार । परद्धोअपहाणचिछासु ॥ ८ ॥
न य विज्जोवि हुविज्जत । गुरुअरोगपि रोगिण दट्ठु ॥ अणत्तिमयतिगिद्धिचि अ ।
तिगिद्धिउ वउई कहवि ॥ ए ॥ किच, सयुद्धयमाण इव नस्मनि वह्निशुन्ये,
सजाप्यमाण इव वा वधिरे मनुज्ये, अर्थित्ववर्जितहट्टि प्रविधीयमान सपद्यते हि वि-
फज्ज सुधियां प्रयास, ततोऽर्थी धर्मस्य योग्य सोमवसुविभवत् ॥ १० ॥ कौशाब्द्या
सोमवसुर्विप्रोऽन्यदा कयकपाश्वे धर्मश्रुत्वाऽप्राङ्गीत्, जो कस्य पाश्वे सम्भग् धर्मोऽस्ति
॥ ११ ॥

एवी रीतना उपर वर्णवेना नरुणेषालो मनुज्येने अर्थी जाणवो अने ते विशेषे ऋते योग्य उ, तथा
तेवी उवडा इरुणवळाने अयोग्य जाणवो ॥ ७ ॥ वळी पण, जोजनमां जेम इउडा थायडे, तथा जेम स्त्री-
पर अनुराग थाय डे तेम परवोक सवधी उत्तम चेष्टाओमां जे अथिपणु धारण करु, ते सारनृत डे ॥ ८ ॥
जेने पोता मांटे आप्त कणवधानी इउडा नयी, एवा महेडा रोगवाळा रोगीने जोऽने पण तेनी दवा करवने वंध्य
कोई पण रीते इउडा करतो नयो ॥ ए ॥ वळी अग्रिरहित राखमा सभकण मूक्वानीपेडे, तथा वहेरा मनु-
ज्यते जापण कलानीपेडे, अर्थावणायी रहित हृदयवाळा मनुज्य ऋते उत्तम उद्धिवानेनो (धर्मपेट्टेश आट्टिकेनो)
प्रयास निष्कळ थाय डे, मांटे सोमवसु द्वाण्वनी पेडे अर्थी मनुज्य धर्मेने योग्य डे ॥ १० ॥ कौशात्री नगरीमां सो-
मवसु नामना नाम्मणे एक रवने कया कहेनार पामेयी धर्म सजळीने तेने पृष्ठु क, उत्तम धर्म केनी पास छे ॥ ११ ॥

कथक प्रोचे, 'मिठ चुजेअव्व, सुहं सुएअव्व, लोगपिअो अप्पा कायव्वो' एतत्प-
दत्रयस्यार्थं य सम्यगवगडति पाद्वयति च, तत्पार्श्वं सम्यग्धर्म ॥ १२ ॥
तत स धिविधान् दर्शनस्तदर्थं पृढ्वन् क्वचिद्ग्रामे तपासमठे प्राप्त, तापसपाश्व-
र्धं पृढ्वति ॥ १३ ॥ सोऽप्याह, अस्मद्गुरुणाप्येवमेवादिष्ट, परमर्थो नाऽव्याधि, ततो
मया स्वधियेस्य क्रियते ॥ १४ ॥ मत्रौपधादिविधिविद्वोक्तप्रिय आत्मा कृत, तेनाह
मिष्ट भोजन वजे, इह मठे निश्चित. सुखेन स्वपिमीति ॥ १५ ॥ तच्चत्वा दध्यौ
छिज, नायमर्थं सगडते, यत—मतोसहिपमुहेहि । जायइ जीवाण धायणं नूण ॥
ता लोगपिअो अप्पा । कह परअत्येण इअ हेई ॥ १६ ॥

कथा करनारे कहु के, 'मिष्टान्न खाहु, मुवे मुहु, तथा बोक्तप्रिय आत्मा कर्त्तो' ए तए पढोने अर्थ
जे सम्पक पकारे जाणे ठे, अने पाठे ठे तेनी पासे उचप धर्म ठे ॥ १२ ॥ पडी ते ब्राह्मण जुदा जुदा दर्शनो-
बालने तेनो अर्थ प्रडतो यको कोडक गममा तापसना मठमा पहात्यो, तथा तापसने तेनो अर्थ प्रडवा लाग्यो
॥ १३ ॥ त्यारे ते तापसे एण रहु के, अमार गुरए एण एमज कहु ठे, परतु तेनो अर्थ क्यो नयी, अने
तेथी हु मारी बुद्धिप्रवृत्त नीचे मुजव कर हु ॥ १४ ॥ मत्र तथा औपथी आदिकनी विधिथी मे बोक्तप्रिय आत्मा
कर्त्तो ठे, अने तेथी मने मिष्टान्न भोजन मळे ठे, अने आ मठमा निश्चित थइ मुवे मुतो रहु हु ॥ १५ ॥
ते सान्नेलीने ब्राह्मणे विचारुं के, आ अर्थ द्वारा पर्त्तो शकतो नर्था, केसके-मत्र, औपथी आदिकथी खरेखर जीवो-
नो बियात थाय ठे, माटे परमार्थथी बोक्तप्रिय आत्मा शी रते थाय ? ॥ १६ ॥

पाएण मिठजत्त । जणेइ जीवाण गाढरस्सगिद्धिं, ततो जवपरिपुडी । ता परमयेण
 कहुअम्मिण ॥ १७ ॥ सुखशय्यापि धर्माग्धिना निपिद्धा, यडुक्क—सुगशय्यामन स्नान
 तावूत्त वत्तमन्न ॥ दत्तकाष्ट सुगथ च । ब्रह्मचर्यस्य द्रूपण ॥ १८ ॥ तत्तस्स पुट्ठा नत्स-
 तीर्थपाश्र्चं गतोऽर्थं पृञ्चति, स प्राह, एकातरोपरमसकरणेण मिष्ट जुजे, अव्ययन यानपर
 सुख स्वपिमि, निरीहत्वेन लोकप्रियोऽस्मीति ॥ १९ ॥ एतदाकार्यं पुनरचिन्वच्छिम,
 एप वरीयान्, परमेषोऽपि यत्र जुक्ते तत्रैतदर्थं जोजेने निष्पाद्यमाने महती जीवनिराधने-
 ति कथं लोकप्रियत्व, तत् पाटवीपुत्रे मास ॥१९॥ सुवोचनमत्रिपुत्रीं नरवाहनारूढा
 महोत्सवादागच्छती दृष्ट्वा कचिदप्राङ्गीत्, केयमिन्द्यादि ॥ १९ ॥

मिथुन जोजिन माये करीने जीजेनु अत्यत रसनेनुपपण उत्यन्न करे डे, अने तेथी सफारती दुच्छि
 थाय डे, तथा तेथी परमाये करीने ते जोजन करुनु डे ॥ १७ ॥ वत्री धरणा आथअओ माटे मुख शग्गा पण निपेधेनी
 डे, कण्ठे के-सुप शग्गापर रेडके, स्नान, ताउव वत्त, आन्नपण, दातण, तथा युगती, एथावाना ब्रह्मचर्य मले दूपणवाळा
 डे ॥ १८ ॥ पडी एवी रीते त्ते प्रडीने तेना सोमरी पासे जडेने ते पडवा ज्ञायो, त्यारे तेणे म्हु के, हु तो एकातरे
 उपवास करीने मिष्ट जोजन करु डे, तथा शान्तर्यासना यानमा तपर थइ मुखे युठ डे, तेमज निरिच्छरुपणाथी हुडोक
 मिय थइ पड्यो डे ॥ १९ ॥ एतान्मात्रेण फरीने ब्रह्मणे विचार्युं के, आ कडक डीक डे, परतु ते पण ज्या जोजन करे
 डे, त्या तेने माटे जोजन तैपण करारु होलाथी मोटी जीजेनी निराधना थवी जोडेये, माटे तेमा पण लोकप्रियपण
 वी रीते घटी शके ? पडी ते पाटवीपुत्र-नासमा गयो ॥ १९ ॥ त्या मधुप्याए उचकेटी पावलीमा रेसीने
 महोत्समप्रवर्क आसती एवी मुनेचनमजिनी पुत्रीने जोडेने, तेणे वाडेन प्रवयु के, आ कोण डे ? इत्यादि ॥ १९ ॥

सोऽन्यथात्, इय मन्त्रिपुत्री नृपसन्नाया पूरितसमस्या द्बन्धनृपप्रसादाऽऽयति, सम्य-
स्या चेष ॥ ११ ॥ तेन शुद्धेन शुद्ध्यति, पूरिता चैव, यत्सर्वव्यापक चित्त । म-
न्त्रिन दोषरेणुञ्चि ॥ सद्भिर्वेकावुसपर्का—तेन शुद्धेन शुद्ध्यति ॥ १३ ॥ तद्वचनको-
शद्व श्रुत्वा चमत्कृतस्तज्जनकमन्त्रिण पार्श्वे पदत्रयार्थं पृच्छति ॥ १४ ॥ मन्त्र्याह, अकृ-
तमकारित शुद्ध मधुकरवृत्त्या द्बन्ध रागद्वेषविमुक्त मन्त्रादिप्रयोगवर्जितमाहार यो शुक्ते
स सिष्टज्जोञ्जी, अशुक्ल मोढकाद्यपि कटुकमेव ॥ १५ ॥ यदुक्त—‘अजय जुजसाणो अ’
यश्च सर्वजीवहित सुवर्णाद्यर्थनि स्पृहश्च स लोकप्रिय . य पुन स्वाध्यायध्यानपरोऽ-
वसरे शेते स सुखशायीति ॥ १६ ॥

त्यारे ते मधुष्ये तेने क्यु के, आ मन्त्रीनी पुत्री राजसन्नाया समस्या प्ररिञ्चि, तथा राजानी कृपा मेलनीने
आवे डे, अने ते समस्या नीचे मुजम डे ॥ ११ ॥ ‘ते शुद्धधी शुद्ध चाय डे’ एवी रीतनी समस्याने नीचे
मुजम परेड्डी डे, सर्व व्यापक एवु जे चित्त दोषरूपी स्वधी मन्त्रिन थयेतु डे, ते सद्भिर्वेकरूपी जज्ञना समधी
जो शुक्ल थाय, तो तेषी आत्या शुक्ल चाय डे ॥ १३ ॥ एवी रीते तेणीना वचननी कुशलता जोडने आर्य्य
पामेड्डो ते ब्राम्णण तेणीना पिता मन्त्री पासं ते तणे पदोनो अर्थ पछय नाग्यो ॥ १४ ॥ त्यारे मन्त्रीए क्यु के,
(पेता पाटे) नहीं करेड्डु, नहीं करवेतु, शुक्ल, मयुकरवृत्तिची मळेड्डु, रागद्वेष विनातु तथा मन आदिकना प्रयोग
विनातु जे जोजन करे डे, ते मिश्रव जोजन करचारो डे, तथा अशुक्ल एवु दाशु आम्निकनु जोजन पण कमजुज डे
॥ १५ ॥ क्यु डे के-जयणा रहित जोजन करनार अनेक जीवोनो सहार करवाची पापकर्म थाये डे अने तेतु
कटुक फट जोगवे डे, कळी जे मधुष्य सर्व जीवोनो हितकारी डे, तथा मुवर्ण आदिक धननो निसृही डे, ते
लोकप्रिय डे, तथा जे सज्जाय यानमा तत्पर थयो थको अवसरे सुए डे, ते मुखे सुनारो डे ॥ १६ ॥

तद्विशम्य त्रिषु स्मरह, कोऽपि किमीदृशोऽप्यस्ति, मञ्चुचे जैनमुनय सत्येय ॥ ३७ ॥
 तत स तत्र गतो विहरणादौ सिद्धज्जोजन, प्रतिद्वेखनादौ रात्रौ च तृतीययामे वैश्रम-
 णोपपाताध्ययनगुणानाकृष्टधनेन वरदानेऽपि निरीहत्वाद्वोक्तप्रियत्व, ध्यानपरत्वेन सुख-
 शय्या च परीक्ष्य तच्छर्म प्रपद्य स्वर्ग क्रमान्मोक्ष च प्राप्तवानिति ॥ ३८ ॥ तथा सम-
 थौ धर्मस्य योग्य, समर्थद्वयज्ञान च,—होइ समर्थो वम्म । कुणमाणो जो न वीहइ
 परोसि ॥ माइपिइसासिगुरु,—जाइआण धम्ममाज जिन्नाण ॥ ३९ ॥

ते साज्जलीने ब्राह्मणे कछु के, शु कोऽ एवो पण डे? मत्रीए कबु के, जैनमुनिओ एवाज डे ॥ ३७ ॥ पछी
 ते जैनमुनि पत्ते गयो, त्या बहोरया आदिकमा मिष्ट नोक्त पदिद्वेहण आदिकमा तथा रात्रिपे त्रीजे पट्टेरे वैश्रमणो-
 पपात नामना अ ययनना गणवाथी आत्रुर्पायेत्ता कुबरे बरदान देवा मारुता पण मुनिओने निस्पृही जोइने तेमनु डो
 कर्मियपणु जाएयु तथा यानपा तत्पर पणायें करीने मुखवाग्या जाणी, एवी रीतनी तेमनी परीक्षा करीने, तथा ते
 धर्म स्वीकारीने स्वयं अने अनुक्रमे ते मोक्षे गयो ॥ ३८ ॥ वज्री समर्थ माणस पण धर्मने थोएय डे, समर्थनु बड्ड-
 ण नीचे मुनव डे र्म करतो यको जे माणस परयी भरतो नथी तेम माता, पिता, स्वामी, गुरु तथा चाइ, के
 ने निन्न र्मवाला डे तेओथी पण भरतो नथी, ते माणस समर्थ डे ॥ ३९ ॥

तद् जौ पुव्वच्चिअ देवयाऽ तक्काअप्रअणाविरहे ॥ वीदिइ नेव तक्कय—विशुवसग्गा-
 ण्हिपि ॥ ३० ॥ हुतीह केइ पुरिसा । सरत्तसमुकिठविअधम्मजर ॥ पढा वि-
 ग्घोवहया । हयव्व उज्जति इहत्ता ॥ ३१ ॥ अपि च, सो धम्मं पम्बुछो ।
 विघोवहओवि जो समुज्जमइ ॥ तयजावे सब्बोविहु । वम्महिगारी जेवे इहारा
 ॥ ३२ ॥ गोत्रेदेवीकृतविधिंपसर्गाऽत्थाजितस्वधर्मं षडिमश्रीकुमारपाअनृपारामन-
 दनशुकपरिवाजकाचार्याऽज्जोचितसुदर्शनश्रेष्ठिमातापित्रादिस्वजनद्यत्याजितधर्माऽसरद-
 तादयश्चात्र दृष्टाता भवतीति ॥ ३३ ॥

तेषु बली जे माणसे पूर्वे जे दव आन्तिकोन पूजेबा हंगय, अने तेअानी ते बलते पूजानो विरह यवायी,
 ते दंगण करेबा विग्र तथा उपसर्ग आदिर्कषी एण जे यीतो नयी, ते एण सपर्य ठे ॥ ३० ॥ आ जगत्ता एवा
 एण केउत्ताक पुरपो ठे, क जेओ सहासा धर्मनो चार गरण करीने पाउळवी विग्रोयी हणया यका अबली
 चानना योनानी पेडे तेने छोनी आपे ठे ॥ ३१ ॥ बली एण, तेने यमपा प्रविषोष पामेडो जाणवो, के जे,
 विग्रोयी हणया छला एण ते धर्म प्रत्येज उदासवत थर रहे ठे अने विग्रो जो न नरे, तोतो बीजा एण सयळा धर्मना
 अधिकारी थइ शके ठे ॥ ३२ ॥ अहाँ गोत्रेदेवीए करेबा नाना प्रकारना उपमर्गोयी एण जेणे पोताना र्मनी इहता
 तनी नयी, एवा कुमारपाळ राज, आरामनदन, शुक परित्राजकार्ययी नहाँ दोज पामेडा सुदर्शन शेट, माता
 पित्त आदिक तथा स्वजन आदिके एण नयी तजवेड धर्म जेने एवा अपरदत्त आदिकला दृष्टतो अहाँ लागु परे
 ठे ॥ ३३ ॥

तथा मध्यस्थो धर्मग्रहणेऽधिकारी, तद्वद्वक्षणं च, न तु कुग्गहगहिअमई । सुवि-
 आरी जो सुदब्बलयाइयणो ॥ नकाहिं विस्तुडो । मज्जत्थो सो सुए, जणिओ
 ॥ ३४ ॥ स एव हि यथास्थित धर्माधर्माद्विस्तुतत्वं परिचिनत्ति, यडुक्कं—विम-
 द्धमि दप्पणे जह । पन्निविवई पासवत्तिवत्थुणो॥ मज्जत्थमि तद्धानणु । सकमई
 समग्गधम्मयुणो ॥ ३५ ॥ अपिच, अशास्त्रज सस्करण हि बुद्धे—रद्धोचन वस्तु-
 विज्ञोकन च ॥ आचार्यशिद्धान्तव्यतिरिक्तमेव । माध्यस्थ्यमाहु परम पदुत्व ॥ ३६ ॥
 दृष्टान्ताश्चात्र प्रायुक्तसोमप्रसुविप्रादय, तथा परीङ्गको योग्य, सारेतरवस्तुपरीङ्गेरु-
 परत्नात् कुरुचन्द्रनुपादिवत् ॥ ३७ ॥

जली मयस्य मनुष्य पण धर्म ग्रहण करवामा अधिकारी अहे, अने तेतु दक्षिण नीचे मुजम ठ, जेनी
 कान्प्रदृशुक बुद्धि नयी, जे उत्तम निवासवालो अहे, तथा जे उत्तम गुणावालो अहे, तेमज जे
 वधाय पण रागी के छपी नयी, तेने सिद्धातमा मयस्य कहेवो अहे ॥ ३४ ॥ अने तेतो मयस्य मनुष्यज
 धर्मधर्मोद्वेष्टकत्वेन यथार्थ रते जाली अहे अहे वतु अहे के—जम निर्जन दर्पणमा पासे रहेवी वस्तुओन.
 समस्तु प्रतीन एहे अहे, तेण मयस्य मनुष्यमा खरेखर धर्मना समळा गुणो समो अहे ॥ ३५ ॥ शहनी सहाय विनाज
 बुद्धिने सतेज अनार अने चट्टीी सहाय विनाज वस्तु स्वरूपने विनोकन अनार एतु आचार्यनी शिद्दा (शीव्यामण,
 —केलमणी) विनाज प्राप्त थयेतु मयस्यपण परम पदुताथाहु अर्थवात् मयस्यता एज खरेखरी पदुता—तुशन्ता
 अहे ॥ ३६ ॥ अर्हा पूरे कहेवा सोमप्रसुधम आदिकना दृष्टते जाली अहेवा, जनी एरीडा बनार मनुष्य पण योग्य अहे,
 केमके ते उत्तम राजा प्रादिकनी तेने मय अनार मनुनी परीङ्गा करी अहे अहे ॥ ३७ ॥

अपरीङ्क. पुनर्मोदकादिग्रहणतो रत्नादित्यागिनिश्चाद्विवत् सारत्यागनांशुमारग्राह
 स्यात् ॥ ३७ ॥ नडुक—परीङ्का यत्र न सति देशे । नार्थति रत्नानि समुद्र-
 जानि ॥ आन्तीरदेशे किञ्च चक्रकात । त्रिचिर्वराटे प्रमदति गोपा. ॥ ३९ ॥
 तत सम्यग्धर्मवस्तुनोऽपरिच्छेदकरादयोग्य. स, कुरुचन्द्रनृपकथा स्विय ॥ ४० ॥
 काचनपुरे कुरुचन्द्रनृपति कुरुते राज्य, मत्री रोहक, स जैनो राज्ञोऽप्रे जिनधर्म
 श्लाथते, राजाह कय ज्ञायते सन्यसेप धर्म इति ॥ ४१ ॥ मञ्जूचे, परीङ्काया सारे-
 तस्वस्तुनिर्धार, यडुक—मणिबुँवतु पादात्रे । काच. शिरसि धार्यताम् ॥ परीङ्करु-
 रप्राप्त. काच. काचो मणिर्मणि. ॥ ४२ ॥

अने जे परीङ्का नयी करी इक्तो. ते तो मोदक आदिन्ने बेइ रत्न आदिक्तो त्याग करुनार यलक
 आदिनी पेंवे, सार वस्तुने जोकी असार मस्तुने ग्रहण करुनारोज थाय ॥ ३७ ॥ क्यु डे के— जे देशमा परीङ्काको
 नयी, त्या समुद्रमा उच्यन्न थता रत्नोनी मा एणी थनी नयी, केमके आन्तीरोना देशमा गोपळीआओ चद्रकाल
 मणिने तण कोरीनां रुहे डे ॥ ३९ ॥ माटे धर्मना तत्वेने जे सम्पक् प्रकारे जाणतो नयी, ते अयोग्य डे. कुरुचद्र
 राजानी कथा नीचे मुजम डे ॥ ४० ॥ 'काचनपुर नामना नगरमा कुरुचद्र नामे राजा राज्य करे डे, तेने रोहक
 नामे मत्री डे, ते जैन होलायी राजा पोमे जिनधर्मना वयाण करे डे, त्यारे राजाए वस्तु के, ते धर्म मागे डे, ए
 यात केम जणाय ? ॥ ४१ ॥ मत्रीए क्यु के, परीङ्का करुनायी सार असार वस्तुनो निर्धार थाय छे. क्यु डे के,
 मणि कटाच पो कचगतो होय, अने काचने मन्मकर धारण करातो होय, एतु ज्यारे तेओ परीङ्कना हायमा
 आणे, त्यारे काच ते काचज परसाय-अने मणि-ते मणिज-परगाय- ॥ ४२ ॥

अपिच, आगमेन च युक्त्या च । योऽर्थः समन्निगम्यते ॥ परीक्ष्य हेमवद् ग्राह्य ।
 पङ्क्यात्प्रहेण कि ॥ ४३ ॥ न च,—पुराण मानवो धर्म । सागो वेदश्चिकित्सित ॥
 आज्ञासिद्धानि चत्वारि न हतव्यानि हेतुभिः ॥ इत्यादिकग्रहद्विसितं मनस्यवधा-
 र्यं ॥ ४४ ॥ यदुक्त—वस्तेव तन्नहि जवेत् कियतेऽन्यथा यत् कञ्चादयेद्दिनमणि कर-
 सपुटेन ॥ सोरतरात्तरविचारवत् प्रतीर्यस्तेनाहमेव वत् दुर्जनचक्रवर्ती ॥ ४५ ॥
 इत्यादि, नतो नृप सर्वदर्शनिना हृद्गतमेराग्यपरीक्षार्थं 'सकुम्हल वा वयण न वसि
 इति समस्यापदमार्पिपत् ॥ ४६ ॥

चठी पण, आगमयी तथा युक्तियी न अर्थ मारारिने जणाय तेनी परीक्षा करोन मृषण्णीपिठे ग्रहण
 करचो. पत्रपण ग्रहण कराययी शु ठे ॥ ४३ ॥ कळी पुराण, मनुस्मृति (मानवशास्त्र) अगोमेहित येद तथा
 पैठकं प चारे आज्ञायीज मिच्छ ठे, माटे तत्रांन हेतुत्रायी दणवा नही' इत्यादिक कदाग्रहयुगत वाचन मनमा
 शर्वाी न जोऽये ॥ ४४ ॥ कहु ठे के—ने वस्तुज न होड शक के जे अन्वया कराय, केमके मूर्येने हस्तमपुटयी
 कोण आच्छाटीशिके डे? माटे सार तथा अगम वस्तुना तफावतने विचारकरना प्रत्ये दर्श कनारो एतु हुज अरे रे ।
 दुर्जनोने सत्तर बु ॥ ४५ ॥ इत्यादि, पठी गजाण सर्व दर्शनेवात्राना हृदयमा रहेना वैराग्यनी परीक्षायणं'
 'मुत्त कुम्हलवाळु हतु के नही' एवी रीतनु समप्यातु पद आप्तु ॥ ४६ ॥

तत प्रथम बौद्ध ग्राह. माहाविहारमिगणए डिहा । उवासिआ कवणअूसिअगी ॥
 वखिलत्तचित्तेणमए न नाय । स कुन्दन वा वयण नवत्ति ॥ ४७ ॥ इत्यादिप्रकारे.
 सर्वेण्यपरदर्शननिजि शृगारगसेनैव प्रेरिता सा समस्या विसंवदति धर्म ॥ ४८ ॥ मं-
 ज्याकारितो जैनमुनिस्तु—वतस्स जिइडिअस्स । अज्जप्पजोगे गयमाणस्सस्स
 ॥ किमज्जएणण विचिन्तिणए । सकुम्भ वा वयण न वत्ति ॥ ४९ ॥ इति तामपूर-
 यतु, तच्चतुत्वा चमच्चक्रे पृथ्वीशक्र यत,—झाणदस्मार सार वा वस्तु सूद्धम परीञ्जते
 ॥ निश्चिनोति मरुत्तूर्ण । तूद्धोच्चयशिक्षोच्चयो ॥ ५० ॥ तत प्रतिबुद्धः प्रपन्नवान् जि-
 नधर्मं क्रमाद्विषयपदमपीति ॥ ५१ ॥

त्यारे प्रथम बौद्धदर्शनमालो वाच्यो के, हु अंगर माहा, विहाग्मा गयो इतो, त्पारं मुण्णथी ऋणि
 थयेना शरीखली स्त्री त्या वेडेडी में जां, फतु मारु चित्त विक्रिस थयायी में जाणु नर्हा के, मुख बुद्धमहित
 हतु के नर्हा ॥ ४७ ॥ एवी रीते नीजा मत्राय अग्य दर्शनीअणए पण ते समस्या शृगार रसयीज प्रण करी, ते
 अने तेथी ते धर्म साये विसवाद करनागी थड ॥ ४८ पठी मत्रीण बोवावेना जैन मुनिए तो (नीचे गुजय ते
 समस्या प्ररी) डात, डात, जिनेंद्रिय, तथा जेतु एन अग्यान्प योगया गशु डे, एवा मारं तेतु मुख कुम्भवाळु
 डे के नर्हा ? ते समथमा विचार कखलीज थी जर डे ? ॥ ४९ ॥ एवी रीते जैन मुनिए ते समस्या प्ररी, ते
 सात्तलीने राजा तो आश्रय पाग्ये, कमेके सार अथय अमार वस्तुनी परीझा झणवाग्माज निपुणमति ऋडि
 डे, कारणके बाणु र्ना पुवणअोना समहनो तथा परयोगेना समहनो तुगत निश्रय करी डे डे ॥ ५० ॥ एवी
 रीते राजाए प्रनिवेश पापीने जैन धर्म अगीमार कयो अने अनुक्रमे ते मोडे पण गयो ॥ ५१ ॥

तथा धारयति ययोक्त धर्माऽधर्मादियस्तुतत्वमिति धारक, स धर्मस्य धोऽय, अणि-
मिसनयणा मण—रुज्जसाहणा पुफ्रडामअमिज्ञाणा ॥ चउरुणेण चूमि न डिवति
सुरा जिणविति ॥ ६२ ॥ इति गायधारकरौहिणेयवत, उपशमविवेकस्सवरेति त्रिप-
टीधारकचिज्ञातीपुत्रवत् ॥ ६३ ॥ सर्वत्र ध्यातस्समता—अचिर्मुन्येत पातकात् ॥ क्रूक-
मांपि तिमिरे । कृतटीप इवात्रय ॥ इति श्लोकधारकैस्सरिचौरवत् ॥ ६४ ॥ श्री-
वर्धमानजिनसमवसरणागततेइशानाधारकाथारकैरचित्प्रसिद्धान्निधानदुमारुध्यवच्च त
त्सवधश्च 'बोहीण् तेणानाणेति' दिनकृत्यगायात्रेत्तैर्ज्ञेय, ततश्चाऽधारकोऽयोग्य इति
निदर्शित ॥ ६५ ॥

रही जे धर्म अर्धर्म आदिक वस्तुतत्त्वं यथाक्त राग धारे डे, ते धाक्क रुहण्य अन त धर्मन गाय डे,
निमेषरहित आगोवाजा, मनमा चित्तोना रुथेने साधनारा, जेअनी पुणपाना कर्माली नधी, तथा जे पृथ्वी
धी चार आणुव अथर रहे डे, तेने तेओ जाणवा ण्ण जिनेथरो रुडे डे, ॥ ६२ ॥ ण्णी रीतनी गायने गरण
करनार रोहिण्णैयक चैस्सनी पेडे योग्य जाणवा, तेमज 'उपशम, निक्क, अने सव' ण्णी रीतना गण पदोने
धारण करनार चिनती पुननी पेडे ण्ण योग्य जाणवा ॥ ६३ ॥ ज्या ण्णीपक ईरेव डे, ण्णु पनत जेम अथक
रयी मुक्काय डे, तेम नूर कर्मायलो मनुय्य ण्ण जो सर्वे यत्तथा सप्पार चित्तु भ्यात धारे, ते ते पपयी म्माय डे,
एवी रीतना श्लोकने धाननारा केसरि चोस्सनी पेडे ण्ण योग्य जाणवा ॥ ६४ ॥ श्री र्द्धमान म्मुत्ता समरसर-
ण्णाम् आयेना तथा नेपनी देशनने धारनार ण्णाम् आधारक अने ण्णकचित्त ण्णाम् प्रसिद्ध नामपाटा यने कुमारो
नी पेडे योग्य जाणवा, ते यत्तेनुं उच्चत 'रोहिण्ण तेणानाण' ण्णो रीतनी निनकृत्यनी गायनी वृत्तियो
जाणु मडे नही धारण करनार अयाग्य डे, ण्णम जगण्यु ॥ ६५ ॥

तथा वस्त्वऽपरतुनो वृत्तादृत्वयो स्वपरयोर्वा विशेष जानातीति विशेषज्ञ, स ध-
र्मस्यार्हं, तदुक्तं— वत्थण गुणदोसे । वग्बेई अपत्तवचयत्तोवेण ॥ पाएण वि-
सेसन्नु । उत्तमधम्मारिहो तेण ॥ ७६ ॥ अथवा विशेषमात्मन एव गुणदो-
षाविरोद्धवद्वाण जानातीति विशेषज्ञ, यदुक्तं—प्रत्यह प्रत्यवेद्देत । नरश्चरितमा-
त्मन ॥ किं तु मे पशुनिस्तुय्य । किं तु सस्युद्धैरिति ॥ ७७ ॥ श्रीधर्मदासग-
णित्तिरपि, जोनविदिणे दिणे सक्खेइके अज्जअज्जिआमि गुणा ॥ अगुणेसु अ नहु
अविज्जो । कहसोउ करिज्ज अप्पहिअ ॥ ७८ ॥

कौी धम्मु अत्तुना, दृश्य अत्तुना, तथा श्रवणा तत्त्वत्तने जे जाणे अं. ते विशेषज्ञ षट्त्रे विरेप
जाणनो स्वेयय, अने ते धर्मे योग्य अे वतु के—विशेषज्ञ माणस प्राये स्त्रीनि अपद्रवपतणायी म्मुना गुण
दोषेने जाणे अं. अने तैथी ते उत्तम धर्मे योग्य अे ॥ ७६ ॥ अथवा विरेपने षट्त्रे पतोलान गुण दोषपर
चमनाना बद्धानुरूप विरेपने जे जाणे अं, ते विशेषज्ञ स्वेयय वतु अे वे—मनुष्ये हमंशा पोतानु चरित्र जोतु
के शु माण चरित्र पशु मगान अे ? के उत्तम पुण्यो रगान अं ? ॥ ७७ ॥ श्रीधर्मदास गणीजी महाराजे पण क्यु
अे के, जे मनुष्य दिन निन स्वेयसु दित्तो नथी, के अजने मे वया गुणां शेट्त्वा ? तथा जे अगुणेणमाथी
अग्नेयो नथी, तेने मनुष्य आणानु दित्त वयाथी क्के ? ॥ ७८ ॥

यद्वा विशेषमारम्भो गत्यादिवदङ्गण जानातीति विशेषज्ञ, तथा चाह, — इहोपपत्ति-
 र्भम केन कर्मणा । कुत प्रयातव्यमितो जवादिति ॥ विचाराणा यस्य न जायते
 हृदि । कथं स धर्मप्रवणो जविष्यति ॥ एए ॥ अथवा विशेष कालाद्युचितागीका-
 रादिवदङ्गण यद्यत्र कालादौ हातुमुपादातु वा युक्त तदादिस्वरूपमित्यर्थ, तत्रेति, तथा
 प्रवर्तते च य स विशेषज्ञ ॥ ६० ॥ प्रदीपपात्रे रजसतस्तेद्विज्ञेपाद्भ्रूगतेन तैलेनो-
 पानदण्डयजकस्य श्वसुरस्योदायार्थादिपरीक्षायै तीव्रोदरव्यथावादिबधूजठरपीनोपज्ञसनिमि
 त्तमामदकप्रमाणमौक्तिकप्रवादादिचूर्णरोद्वकसारश्रेष्ठिवत ॥ ६१ ॥

अथवा विशेष एतन् आमाना गति आत्तिक दान्तरूप विशेषन ज जाणे उ, न विशेषज्ञ कहेवाय,
 वही क्यु ठेके, कया कर्मवी मारी ग्रहा उत्पनि थड? तथा आ जययी हरे मारे मया जव ठे? एवी रीतनो
 विचार जेना हृदयमा यतो नथी, ते मयुष्य र्ममा शी रीत तस्य यशे ॥ एए ॥ अथवा विशेष एतन् कान
 आदिक उचित अगीकार आदिक दान्तरात्राग विशेषने. अर्थात् जे कान आदिकने विं जे रु६ डोभन्तु अथवा
 प्रहण कखु युक्त ठे, ते आदिक स्वरूपने जे जाणे ठे, तथा त प्रमाण जे प्रवत् ८. ते विशेषज्ञ कहेवाय ॥ ६० ॥
 टीवना पात्रमा उतातळधी पूरता थरा १००वीएर पकेडा तेनवरु करीने पारम्बा चोपमनाग ससरानी उडास्ता
 आदिकनी परीक्षा माटे पेटमा घाणे घणो टुखावो थवालु वहेनागी यहुना पेटनी पीमा डूर करया माटे आतला
 जेसनां मेती तथा प्रवादा आदिना चूर्णनो रोम्यो रूपार डेन्नी पेट विशेषज्ञ जालवो ॥ ६१ ॥

तथा च बधू प्रति तच्छ्रेष्ठिवच, —यः काकिणीमप्यपथप्रपन्ना—मन्त्रेपते निकसहस्र-
 लुट्यां ॥ काङ्क्षेन कोटिष्वपि मुक्तहस्त—स्तस्याऽनुबंध न जहाति ब्रह्मी ॥ ६२ ॥
 एवं धर्मोधिकारेऽपि विशेषज्ञो योग्य, यदागमः—सबल्य सजमं । सजमत्रो अ-
 प्पाणमेव रखिबजा ॥ मुच्चइ अइवायात्रो । पुणो विसोही नयाविरई ॥ ६३ ॥
 विशेषज्ञविषया दृष्टाताश्चात्र श्रीअज्ञयकुमारस्मिन्श्रीब्रजस्वामिश्रीमदार्थरङ्कितसूर्या
 दयोऽवगंतव्या. ॥ ६४ ॥ तथा अप्रमत्तो निष्ठाविषयविक्रयामद्यादिप्रमादरहित,
 स धर्मस्य योग्य सूरप्रजन्तृपादिवत्, प्रमादिनो धर्मश्रद्धानोदरप्यनुत्पत्ते, शशिनृपा-
 देरिव, तउक्त—॥ ६५ ॥ ॥

वली ते बक्ते ते श्रेते पोताना पुत्रनी बहुने नीचे मुजन वचन बहु हहु, जे दुमार्गे वपगती एक कोर्नीने
 पण जे हजार सोनामोहेरो सरखी जाणे ठे, तथा बलत परुथे कोनोपरथी पण जे हाथ उठावी छे छे,
 तेनो सग बहूची गोमती नथी ॥ ६२ ॥ णवी रीते धर्मसवधी अधिकारमा पण विशेषज्ञ योग्य ठे, आगममां
 पण क्यु ठे के, सर्व अर्थथी पण सयमनी रक्षा करवी, तथा संयमथी पण आत्मानी रक्षा करवी, केमके (जे आत्मा
 हयात होवो तो) ते पापथी मुक्त थइ फरीने पण शुद्ध थइ शक्यो, अने अविरतिपणु रहेशे नही ॥ ६३ ॥ अही
 विशेषज्ञना सनथमा श्री अज्ञयकुमार मत्री, श्री वसुधाम्नी तथा श्रीमान् आर्यरङ्कितमृरि आदिको दृष्टातरूप जाणवा
 ॥ ६४ ॥ वली अप्रमदी पट्टे निद्रा, विषय, विक्रया तथा मद्य आदिक प्रमाद विनांनो, अने नेत्रो मन्युय सूरप्रजराजा
 आदिकनी पेठे धर्मेन योग्य छे, प्रमादिने धर्मनी श्रद्धा आदिकनी पण शशी नृप आदिकनी पेठे प्राप्ति थती
 नथी क्यु ठे के—॥ ६५ ॥

पापासक्ते चेतसि । धर्मकथा स्थानमेव न दानते ॥ नीङ्गीरक्ते वाससि । कुकुमरा-
 गो दुराधेय ॥ इति ॥ ६६ ॥ स्थिरो नर्मैकाग्रचित्त, स धर्मस्य योग्य, अस्थि-
 रचित्ताना ङ्गीरास्त्रवादिद्विबन्धिनिरपिबोधयितुमशक्यत्वात्, एकचित्ताग्निधकुमारद्वयम-
 ध्यात् श्रीवीरवचनाप्रतिबुद्धकुमारवत् ॥ ६७ ॥ जितान्यत्यासक्तिपरिहारेण वशीकृ-
 तार्नीक्षियाणि स्पर्शनादीनि येन, स जितेक्षियो धर्मोपदेशाना योग्य ॥ ६८ ॥
 अजितेक्षियो हि विषयतृष्णया बाध्यते, तद्वाधितश्च न श्रद्धते हितोपदेशाद्येहि-
 कमपि. इरे धर्मस्य तथापि सीतारूपाङ्कितरावणनृपवत् ॥ ६९ ॥

पापोयी आसक्त ययना चित्तमा धर्मकथानेतो स्थानज मन्तु नयी. केमके गळीषी रंगहा बल्लपर
 केसरनो रग चनी शक्तो नयी इति ॥ ६६ ॥ स्थिर ण्डने ण्वाग्र चित्तवाजे मनुय जाणवो, इने ते धर्मे
 योग्य छे, बळी त्रैत्रोनु मन अस्थिर छे, तेअने ह्रीगाम्बवदिवि-मबळ्याओ पण प्रतिबोधि शकता नयी,
 (मंती पेडे' तो के) एक चित्त नामना वने कुमारोपायी श्री वीरप्रनुना रचनयी नही अनियेध पापेना कुमार्नी पेडे
 ॥ ६७ ॥ अत्यत आसन्ति नववाचने करीनि जितेन छे, अर्थात् वश करेव छे स्पेश आदिक इद्रियो ज्ञणे ते जि
 तैद्रिय कहेवाय, अने ते धर्मोपदेशेन योग्य छे ॥ ६८ ॥ बळी जेणे इद्रियो जितेनी नयी एवो मनुष्य विपपनी
 तुंगायी दुग्गी थाय छे; अने तेवी दुग्गी ययो थको आ 'बोक सयवी हितोपदेशपर पण ते श्रद्धा करतो नयी,
 धर्म कथा तो त्वारे दूरज रही, (मंती पेडे तो के) सीताना म्पयी व्याकृत छेयना रावण नपनी पेडे ॥ ६९ ॥

सरस्वतीसाध्वीरूपाङ्गिसर्गनिह्वनृपादिवत्, सुकुमाङ्गिकाराङ्गीस्पर्शासम्तजितशत्रुनृप-
 वच्च, तत्संबंधसग्राहक श्लोकश्च, यथा ॥ ७० ॥ बहुभ्या शोणित पीत—मुरूमांसं
 च नङ्कित ॥ नर्त्तारं च निहित. कूपे साधु साधु पतित्वे ॥ ७१ ॥ इति, ततो जिते-
 द्विय एव धर्मस्य योग्य, एते अर्थिप्रभृतयो धर्मस्य साधका नवति प्राय इति सटक.
 ॥ ७२ ॥ प्रायोग्रहणाच्च तादृकङ्गेत्रादिसामग्रीवशात् स्वचिद्विप्रासधर्मेण केनचिद्द्व्यञ्जि-
 चारो नाशकनीयः, धर्मसाधकत्वोक्त्या च धर्मोपदेशाना योग्यत्वमाङ्गिसमेवेति ॥ ७३ ॥
 योग्यान् स्वरूपाववगस्य सम्यगित्युल्लसदेशनया बुधास्तान् ॥ सदानुयुक्तीध्वमिहोत्रयेषां
 स्फुरति नावारिजयश्रियो यत् ॥ ७४ ॥

तमज सरस्वती साग्नीना रूपयी मोहित श्येज्ञा गर्दजिह्वराना आदिकनीपेठे तथा मुकुमालिका गणीना स्वर्ग-
 या आसत श्येना जितशत्रुगान्नीपेठे तेना सवश्ये सग्रह करारो श्लोक नीचे मुजउ ठे ॥ ७० ॥ मने हायोभायी
 नृधिर पीधु, तथा सायन्नु मास ग्वाधु, तेमज नर्त्तारने कूवामा नाब्धो मोटे पतिता तो धरणी सारी नीरनी ।
 ॥७१॥ इति ॥ मोटे जितश्रिय मनुयज धर्मे योग्य ठे, एवी रीने उपर वर्णवैना अथा आदिक मनुव्यो प्राय करीने
 धर्मना साधक प्राय ठे, एयो सवष ठे ॥ ७२ ॥ अहाँ माय शब्दना ग्रहणयी तेवी रीतनी क्षेत्र आदिकनी
 सामग्रीना वदायी, नवी मास श्येज्ञ धर्म जेने एवा कोङ्कनी साये स्याक व्यञ्जिचार सवधी शका करवी नहीं,
 वकी धर्मनु साधकसणु केहवायी धर्मोपदेश मने योग्यणु एण केहेनुज छे एम जाणी हेतु ॥ ७३ ॥ एवी रीने
 हे पन्तिने । उल्लसयमान थती देशनवने करीने सव्यग् रीने वदेना स्वद्वपयी योग्य मनुय्येने जाणीने, तेओ-
 पर हर्षेवा अनुग्रह करो के जेयी जावशत्रुने जीतवानी बङ्गीओ स्फुरणायमान थय ॥ ७४ ॥

॥ इतिश्रीतपागङ्गे श्रीदेवमुदरसूरिश्रीज्ञानसागरसूरिशिष्यश्रीसोमसुंदरसूरिषट्पादाकारश्री-
मुनिमुदरसूरिचिन्ते श्रीउपदेशरत्नाकरे श्रोतृविषययोग्यायोग्यत्वस्वरूपनिरूपण. प्रथ-
मोऽंश, तरंगा १३, ॥ अथाम्र १००४ अङ्कः ॥ २३ ॥

॥ इति श्रीतपागङ्गे श्री देवमुदरसूरि, श्री ज्ञानसागरसूरि, शिष्य श्री सोमसुदरसूरिनी पाठे अक्षकाररूप श्री
मुनिमुदरसूरिण रचेना श्री उपदेशरत्नाकर नामना प्रथमा जामनगर निवासि शारद्वर्य्य हसरजत्सज श्रावक हीरानात्रे
करेवां तेना गुजराती ज्ञापतरमा श्रोताञ्चो सबधि योग्य अयोधना स्वरूपने निरूपण करानो प्रथम अंश समाप्त
थये; तेमा तेर तरंगे समाप्त थया. प्रथाप्रथना श्लोको १००४ तथा अङ्करो २३ ॥ श्री रस्तु ॥

इति त्रयोदशस्तंभः समाप्तः

अथ चतुर्दशस्तरंगः

—बुगेहि बुगपासे । सो पुण जुगो गहिजण विहिणा ॥ सपुनसुहफडो ज ।
एव चित्र अन्नहा इअर ॥ १ ॥

योग मनुष्येण योग्यनी पासे, अने ते पए पाउं योग्य एवो धर्म विधिपूर्वक ग्रहण करवो, के जेयी ते मप्रार्ण
सुखल्पी फळयाळो थाय ठे, अने जो तेयी उतटो रीति ग्रहण कराय तो ते विपरीत फळ्याना थाय ठे ॥ १ ॥

इति द्वारगाथाया जुगेहिंति गत, अथजुगपासेति द्वितीय द्वार विवर्ति श्रीगुरुगत
योग्याज्योग्यत्वस्वरूप निरूपयति प्रस्तावागतं श्लाघादिगतमपि ॥ ३ ॥ मूढम—जट
चास कुच महुर । मोर पिगा हंस कीर करटमुहा ॥ अह खगा तह गुरुणो । रूबुवए-
साइ किरिआहि ॥ ३ ॥ व्याख्या—चापकौचमधुकरमथूरपिकहंसकीरा प्रसिद्धा, व-
रटो ध्वाङ्क, मुखशब्द प्रमुखार्थ. स च प्रत्येकं गोज्य; ततश्च यथा चापप्रमु-
खाश्चापप्रकारा पङ्क्तिण इत्यर्थ. ॥ ४ ॥ एव कौचप्रमुखाः मधुकरप्रमुखा इत्यादि
ज्ञेय, रूबुवयसा इत्यादि रूपोपदेशक्रियाचिरपेत्यप्रकारा भगा पङ्क्तिण. स्युः, ए-
व गुरवोऽप्यप्रकारा चवतीति पितार्थ ॥ ५ ॥

एवी रीतनी छार गाथामा 'योग्या ए' पदनु वर्णन कर्तुं, हवे 'योग्य पासे' एवी रीतना बीजा छारतु
विवरण करवा माटे, श्रीगुरु सत्रधि योग्य अयोग्यतु स्वरूप, तेमज प्रस्ताव अत्रेनु श्रापक आदिक सवधि पण योग्य
अयोग्यतु स्वरूप निरूपण करे डे ॥ ३ ॥ मूढनो अर्थः जेम चाप, नौच, भ्रमर, भयूर, कोयड, हस, पोपट तथा
रूगना आदिक आठ पङ्क्तिओ डे. तेम गुरुओ पण रूप उपदेश तथा पियायी इत प्रकारना डे ॥ ३ ॥ व्याख्या—
चाप नौच, भ्रमर, भयूर कोयड, हस अने पोपट ए प्रसिद्ध डे. कट एतेवे कागफो, ते मुखशब्द अर्हा ममुखने अर्थे,;
अने ते दरेकनी साये जोनी देवो, अने तेथी चाप आदिक नाना प्रकाराळा पङ्क्तियो जाणवा ॥ ४ ॥ एवी
रीते नौच आदिक भ्रमर आदिक, पण जाणवु, एतडे रूप उपदेश अने क्रियावने करीने आठ प्रकारा पङ्क्तियो
होय वे, अने एवी रीते गुरुओ पण आठ प्रकारना होय छे, एवो सप्तद्वार्य जाणवो ॥ ५ ॥

तत्र रूपोपदेशक्रियान्तिरिति सामान्योक्तावपि वचनस्य विशेषविषयत्वात् तद्विशेषा
 ग्राह्या ६ ॥ तथाहि खगपङ्के रूप विशिष्टवर्णाकारादिस्वरूप, उपदेश श्रोतृजना-
 हादिवचन, क्रिया पुन शुच्याहारादिरूपा, गुरुपङ्के तु रूप जिनप्रणीतस्तादृक्प्रमा-
 णाद्युपेतो वेप ॥ ७ ॥ उपदेश शुद्धमार्गप्ररूपणा क्रिया च सम्यग्मोक्षमार्गानुया-
 नरूपेति, अपि च रूपोपदेशक्रियारूपैस्त्रिभिर्पदैरर्थौ जगा, तथाहि—एकैकजगात्त्र-
 य, रूप, उपदेश, क्रिया च, द्विक्रियोगोस्त्रय, रूपोपदेशौ, उपदेशक्रिये, रूपक्रिये च,
 त्रिक्रियोग एक, त्रयाऽज्ञावपङ्कश्चैक इति ॥ ८ ॥ एतैश्चाष्टजिर्नैर्यथाऽष्टधा चापाड-
 य पङ्क्तिण, तथाऽष्टधा गुरवोऽपि, एतदेव चाव्यते ॥ ए ॥

तेषां रूप, उपदेश अने क्रियावदे करीने, एष सामान्य प्रकारे कहते अते एण वचनो विशेष प्रकारो विषय
 होवाची ते सत्रधि विशेषो एण ग्रहण करा ॥ ६ ॥ ते कहे अे—पङ्क्ति सत्रधि पङ्कमा उत्तम र्ण्य, आकार आ-
 टिकला स्वरूपवाद्यु रूप जाणवु, उपदेश एट्ठे श्रोताअोने हर्ष करनारु वचन जाणवु, तथा क्रिया एट्ठे पवित्र आ-
 हार आटिक रूप जाणवी, गुरुना पङ्कमां रूप एट्ठे जितेभर मत्तुए कहेदो तेवी रीतना प्रमाण आटिकवालो वेप
 जाणवो ॥ ७ ॥ उपदेश एट्ठे शुद्ध मार्गनी मरूपणा, तथा क्रिया एट्ठे सम्यक् प्रकारे मोक्षमार्गना अत्युत्तम रूप
 क्रिया जाणवी, वळी ते रूप उपदेश अने क्रियारूप त्रण पदो वदे करीने आठ जागाओ धाय अे, ते कहे अे—
 एकेकना त्रण जागा, रूप, उपदेश अने क्रिया, द्विक्रियोगी त्रण जागा, रूप अने उपदेश, उपदेश अने क्रिया, तथा रूप
 अने क्रिया, त्रिक्रियोगी एक जागो, तथा त्रणेना अत्रावना पङ्कवालो एक जागो ॥ ८ ॥ एवी रीते उपर वर्णवेना
 आठ जागाओवदे करीने जेम आठ प्रकारना चाप आटिक पङ्क्तिओ होय अे, तेम गुरुओ एण आठ प्रकारना होय
 अे, तेन स्वरूप हवे कहे अे ॥ ए ॥

यथा चापपङ्क्तिणि रूपमस्ति पचवर्णमुदरत्वात्, शकुन्तत्या दर्शनीयत्वाच्च, नतृपदेश,
 वास्तुसादर्याञ्जायात्, नापि क्रिया, कीटाद्याहाह्रित्वात् ॥ १० ॥ तथा केपुचित् शु-
 र्यु रूपमस्ति मुविहितवैपत्वात्, न पुनरुपदेशः, शुष्कमार्गाऽप्ररूपकत्वात्, नापि क्रिया
 निरवद्याहाराद्विस्वरूपा, प्रमादाद्विनिस्तदसमाचरणात् ॥ ११ ॥ तदुक्तं—दृगपाण
 पुणफुल्ल । अणोसणिज गिहृत्यकिञ्चाद् ॥ अजया पन्निसेवती । जङ्घेसविम्वगा
 नर ॥ द्वादि ॥ १२ ॥ एतद्विधाश्च बहुवोऽपि, सप्रति तु दुःखमाहुः प्रावतो विशि-
 ल्येति न निदर्शनमपेक्षते माग्निकागणिकावशीकृताऽवस्थयतिवैपभाः किञ्चवाञ्जु-
 क्रियादयो वा यथासन्नत्र दृष्टता अप्यत्र निवेदया ॥ १३ ॥

जंम चाप पक्षिणा रूपे, तेषामेते पचवर्णपणायी मुर ३ तथा त अकुन्तये ते नईन रूपया ज्ञायक
 ३ पन्तु तेनासा उपदेशनो गुण नयी, तेषामेते तेनी वाणीमा मुदरपाणु नयी. तेषा तेषा क्रिया पण (शुच) नयी,
 तेषामेते तेनीना आत्तिकनो आहार वग्नार ३ ॥ १० ॥ एतरी रीते त्रेडनाक गुग्गोमा रूप होय ३, केषामेते तेषा
 तेषा मुविहित होय ३, पन्तु उपदेशा हंतो नयी, केषामेते शुद्ध मार्गे प्ररूपता नयी, तेषा निराद्य आहार आदिम्प
 क्रिया पण होती नयी, केषामेते प्रमाद आत्तिकनं करीने तेषी क्रियाहु तेषो आचरण करी शकता नयी ॥ ११ ॥
 वदु ३ के—पाणी, माटी, पुप, फल अनेपणीय आहार, गृहस्थहु कार्य तथा जतना न राग्वती ते, एतद्भावाना
 साधुना वेपने वगोतारां ३, तेषा सदेह नयी, इत्यादि ॥ १२ ॥ एवा प्रकारा नयी दृष्टानु यतित्रो तो हादमा, आ पचम
 आराना मनावयी घणा ३, माटे तेतु विशेष प्रकारे दृष्टानु आपवानी कद् जर नयी; तोपण मागधिका, नामे
 गणिकायी वश करीयेदी अवस्थामां रहेना यतिवैपयारी कुळवाञ्जक रूपि आत्तिकेनां दृष्टानु पण अहो
 यथासन्नवै जाणी तेषां ॥ १३ ॥

कृद्वद्वाद्वाके हि यतिवैयोऽस्ति, नतु क्रिया, मागधिकागणिकाप्रसक्तेः, विशाद्वाज-
गादिमहारजादिप्रवर्त्तकत्वाच्च, नाऽप्युपदेश, सामान्यसाधुत्वेन तदङ्गधिकारित्वात्,
तादृग्युन्मार्गगामिबुद्ध्या गुरुकृद्वद्वासात्यागिनस्तस्य शुद्धमार्गप्ररूपकत्वाऽसंभवाच्चेति प्र-
थमो जगः ॥ १४ ॥ कौचपक्षिणि यथा रूप नास्ति, दर्शनीयवर्णकाराद्यजावात्,
क्रियापि न, कीटाद्याह्यारित्वात्, केवद्वामुपदेशोऽस्ति मधुरगज्जीरजापित्वात् ॥ १५ ॥
तथाच श्रीसमवायोगे वसुदेववर्णके 'सारयनवथणित्रमहुरगज्जीरकुचनिग्धोसडुद्धि-
सरा' इति, तद्वृत्तिलेश. शरदि जत्र शारद; स चासौ नव स्तनितमस्मिन्नि-
धौषे, स चेति समास ॥ १६ ॥

केमके उल्लवावक ऋषिमा यत्किं वैप तो हतो, पलु (शुज) क्रिया नहोती, केमके तेमने मागधिसा
नामे गणिकानो प्रसग थयो हतो, तथा विशावानगरीने जागवा आदिकना महान् आगजनी तेमणे षट्ठचि करानी
हन्ती, तेमज तेमनी पासे उपदेश पण नहोतो, केमके सामान्य साधुपणु होवायी ते सवधि तेमने अधिकार नहोतो,
तेमज तेनी रीतनी कुमार्गामी युष्चिके करीने गुरु कुळमा नही रहेनारा एवा तेमने शुष्क मार्गनी प्ररूपणा
करायणानो असजव डे, एवी रीते पहेडो जागो जाणवो ॥ १४ ॥ वत्री कौच पक्षिमा जेम रूप नयी, केमके
तेनो र्ण तथा आकार आदिक देवावना नयी, तेम तेनामा क्रिया पण (शुज) नयी, केमके ते कीमा आदि-
कोतु जट्टाण करनार डे, केवल तनामा उपदेशानो गुण डे, केमके ते मधुर अने गज्जीर स्वर बोवनिारो डे ॥ १५ ॥
श्री समवायागसूत्रमा यामुदेवना यणनमा बहु डे के, 'शारद ऋतुना नवा गर्जना कर्त्ता वरसाट सरखा मधुर अने
गज्जीर एवा कौच पक्षीना स्वर सरखा तथा दुदुजिना स्वर सरखा स्वरवाला वासुदेव' तेनी टीकानो लेश कहे डे, शारद
ऋतुमा असन्न थयेतो ते शारद ऋदेवाय, एयो तथा नवो डे गर्जास्व जेना शरदमा ते, एयो समास थयो ॥ १६ ॥

स चासौ मधुरा गंजीरश्च यः कौंचनिर्घोष, पङ्क्तिविशेषनिनादः, तद्वत् उंडुञ्चिस्व-
ग्वच्च स्वरो येषां ते वासुदेवा इत्यादि ॥ १७ ॥ एव केषुचिद्गुरुषु न रूपं, चा-
रित्रवेपाऽज्ञावात्, नापि क्रिया, प्रमादपतित्वात् उपदेश पुनरस्ति शुद्धमार्गप्र-
न्पणात्मक, प्रमादपतितपरित्राजकवैपश्यत शुद्धमार्गप्रन्पणावस्थश्रीप्रथमतोर्थप्रतिपौ-
त्रमरीच्यादिवत् ॥ १८ ॥ पार्श्वस्थ्यादिवच्च, पार्श्वस्थेषु क्रियारहितत्वादेव प्रस्तुतना-
मप्रवृत्ते, वैपस्थ्यादि प्रायेणाऽज्ञावाच्च ॥ १९ ॥ यदुक्त—वथंशुभ्रपन्निवेद्विद्विभ्रमप-
माणं सकृद्विभ्र उडूज्ञाह, इत्यादि, शुद्धप्ररूपकत्व तु जवनि यथाउदवर्जिताना
॥ २० ॥

एतो मसुर अने गंजीर जे कौंच पङ्क्तिनो शब्द, तेनो फेडे तथा दुदुञ्चिना स्वानी फेडे से सर जेपनो एवा
ते वासुदेवो, इत्यादि ॥ १७ ॥ एवी रीते केद्वारक गुरुओमां चारिनो वैप न होमाधी रूप नयी होतु; तेम
प्रमादमां पद्मचार्थी क्रिया पाण नयी हेती, एतु शुद्ध मार्गती प्ररूपणा क्त्वारूप उपदेशनो गुण तेओमां होय
जे, (कौंचो फेडे ? तो के) प्रमादमां पद्मनि परित्राजकनो वैप धनारा तथा शुद्ध मार्गती प्ररूपणाती उवस्थामा
रहंसा श्री प्रथम तीर्थकरना पांत्र मरीचि आदिकनी फेडे ॥ १८ ॥ तेमज पासवथा आदिकनो फेडे, पासवथाओमां
क्रिया नहीं होवाधीज तेओमां ते नामनी प्रवृत्ति ख्येही जे, तेम तेओने वैपनो एण प्राये करीने अज्ञाप जे ॥ १९ ॥
कतु जे के—तेओमां यवो मरी रीते पन्निवेद्वण कर्पो विनानां, प्रमाण विनानां तथा किनारीबळार्क रेशम आदिकनां होय
जे; इन्वोदिर, वळी जेओण स्पेन्डाचारिणु तंजेंदु जे, एवा तेओमां शुद्ध-प्ररूपणानो गुण तो होय जे ॥ २० ॥

तदुक्त—इत्थं य पासत्थाईहि । संगं चरणनासयं पाय ॥ समत्तहरं अहंभंदए
 —हितह्वरवण चैय ॥ ११ ॥ उस्तुत्तमायरतो, उस्तुत्तचेव पन्नवेमाणो ॥ एतो
 उ अहाउदो । इवांउत्तिएगछा ॥ १२ ॥ सउंदमइविगण्णिय । किचि सुहसायवि-
 गइपन्निउदो ॥ तिहि गारवेहि मजइ । त जाणाही अहाउद ॥ १३ ॥ एवमाइ वहु-
 विगण्ण । उस्तुत्त आयरति सयमेव ॥ अन्नेसि पन्नविति य । सिउखाए जे अहाउद
 ॥ १४ ॥ इत्यादि, प्रतिदिनदशदशप्रतिबोधितुनडिपेणसइशास्तु श्राद्धद्विगत्वान्न
 गुरुपुक्तिमहतीति छितीयो जग ॥ १५ ॥

बहु डे रे—पासत्या आग्निनी स्मति अहीं प्रायं करीने चारित्तो नाश करनारी उ, तथा सेउडा
 चान्नि स्मति संभ्रवत्त्वे हरनारी डे, तेतु बइए नीचि मुज डे ॥ १२ ॥ उस्तुत्तने आचनो तथा उस्तुत्तने
 प्ररूपो एवो यति सेउडाचारी कहेचाय, 'यथाउद, इउडाउद' ए शत्रो गकार्थयाची डे ॥ १३ ॥ सेउडाचारी मतिना
 विक्रपोयी किचिन् मुग्गवीतीओ धइने (धृत, गोल आदिक) गियेनो वावचु थयो थको कश्चिर्गि आदिकया
 जे मग थाय डे, तेने सेउडाचारी जाणयो ॥ १३ ॥ इत्यानिक यथा विक्रपोप्रक ते पोंतेज उस्तुत्तनु आचरण करे
 डे, तेमज वीजात्रांने एण उस्तुत्त मरूपे डे, तथा शिखाएण देवा एण तेओ सेउडाचारी थाय डे ॥ १४ ॥ इत्यादि,
 हंपेशा दश नशेने प्रतियोगनाग नन्पिण ससखा तो श्रामना निगमाग होमाधी गुरुपुक्तिने दापक यइ शयना
 नयी, एवी रीते वीजे जाणो जाणयो ॥ १५ ॥

मधुकरो ब्रमरस्तस्यापि खगमनशीघ्रत्वात् खगत्व न विरुद्धं, यथा ब्रमरखगे न रूप, कृष्ण-
वर्णत्वात्, नाप्युपदेशः, तत्स्वरस्य तादृगुदात्तत्वमाधुयाध्ययोगात् ॥ २६ ॥ केवलं कि-
यास्ति, उत्तमकुसुमेषु यथा तदऽद्वानिपरिमलैकपाथित्वात्, तथा केचुचिद् गुरुषु न रूप
यतिवेषाऽथारित्वात्, नाप्युपदेश कुतश्चिच्छेतोस्तदनसेवकत्वात् ॥ २७ ॥ क्रिया पुनर-
रित, यथाविहिता, यथा प्रत्येकबुद्धादिषु, प्रत्येकबुद्धस्वयबुद्धतीर्थकरादयो हि सार्धमि-
का इत्यतस्तेषु यतिवेषधारित्वेऽपि तीर्थगतसाधूना प्रवचनद्विगात्र्या न सार्धमिका इत्यत-
स्तेषु न यतिवेषधारित्व ॥ २८ ॥

मधुकर एतद्धे जसो, अने ते एण आकाशमा गमन करणो होमाथी, तेने पद्मी कहेचामा निरोध नथी,
हेने जेम भ्रमर पक्षिमां, ते काला रगने होमाथी एय नथी, तेम तेमा उपदेशनो गुण एण नथी, केमके तेना
स्वस्सा तेसा मरुतु गच्छीएणुं के मीवाश नथी ॥ २६ ॥ केवल तेमा क्रियानो गुण अे, कारणके ते पुण्येने भवानि
उपजाव्या विना, तेमाथी मरुतु पीये अे, एवी रीते केचनाक गुप्तोमा रूप हेतु नथी, केमके तेओ साधुना येने
धारण करता नथी, तेम कोटक मारणथी उपदेशने नही सेता होमाथी, तेओमा उपदेशनो गुण एण होतो नथी
॥ २७ ॥ परतु तेओमा प्रत्येक बुद्धादिसेनी माफक यथा विहित एतद्धे ज्ञान क्रिया होय अे; प्रत्येक बुद्धो, स्वयबुद्धो
तथा तीर्थकर आदिको सार्धमक एतद्धे एक सरखा अे, अने तेथी तेओमा जोके साधु येने धरमाएणु अे, तोएण
शासनमां बर्त्ता एवा साधुओना प्रवचन अने द्विग सांघे तेओ सरखाएणु धरता नथी, पाटे तेओमा साधु येने
धरवाएणुं नथी ॥ २८ ॥

नायुपदेशः, देशनाञ्जासेवक, प्रत्येकबुद्धादिरित्यागमात् क्रिया त्वस्ति, तद्भव एव मुक्तिफलेति तृतीयो जगः ॥ ३९ ॥ यथा च मयूरे रूप समस्ति पचवर्णमनोहर, उपदेशश्च मयुरकेसररूप, पर क्रिया नास्ति सर्पादिरप्याहारकत्वेन निम्बिशत्वात् ॥ ३० ॥ तथा गुरुष्वपि केषुचित् छयमस्ति, नतु क्रिया, मथुरामग्न्याचार्योद्विचदिति चतुर्यो जगः ॥ ३१ ॥ तत्र मग्नाचार्यसवधो यथा, मगुनामाचार्योऽन्यथा मथुरां पाव-
यामास—श्रुतस्य शानेस्तपसा निधान । युगप्रधान तु तदा तमाहु ॥ विहाय का-
थांतरमतराया—द्वन्याननाहस्य मुनीनशेषान् । जमत्या वशीभूत इवातिभूरि । सूरि
सिपेवेऽत्र जनस्तमेव ॥ ३३ ॥

तेम तेओमा उपदेश गुण पण होऽ शकतो नथी केपके प्रत्येक बुद्धादिकोने देशनाना नहीं सेनाग
आगममा कथा हे, रजी तेओने तेज जंवे मोहा मजाना फऊरूप क्रिया डे, एवी रीते नीजे जागो जाणयो
॥ ३९ ॥ वली जंम मथुरमा मनोहर पचरीरूप डे, तेम मथुराणीरूप उपदेश पण डे, एतु हिंसक होपा वंने करीने
सर्प आद्रिकोने आहार करवायी तेनामा क्रियारूपी गुण नथी ॥ ३० ॥ तेम केववारु गुरुओमा पण जेप अने
उपदेशरूप ते गुणो तो होय डे, एतु मथुरायासी मगु आचार्य आद्रिकनी पेडे क्रिया होती नथी, एवी रीते चो
थो जागो जाणवो ॥ ३१ ॥ त्या मगु आचार्यतु वृत्तात नीचे मुजम डे, एक वखते मगु आचार्ये मथुरा नगरीने
पवित्र करी, अर्थात् त्या आर्या, ते वखते मगु आचार्येने हांको सिद्धातना, शांतिना तथा तपना निधानरूप
अने युग प्रधान वहेता हता, तथा तेथी घणा बोको नीजु कार्य ओम्बने, तथा जेच बीजा सजळा मुनिओने
पण अनाडर करीने जाणे नक्तियी वश थड गया होय नहा, तेम तेनेज सेवमा हाग्या ॥ ३३ ॥

न वदकप्रब्रह्मकपाउकेइय । प्रवारयामोऽङ्कणिका.सदेव ॥ इत्यार्यमगौ वदति प्रदर्पा—
जयादिशैलेव जना जगुस्ते ॥ ३३ ॥ निशागरिष्टश्च तपोनिधिश्च । चारित्रवाश्रेति जने
स्तुवाने॥ मुनिः स मानाख्यमहाङ्कितिध्र—प्रोत्तुंगशृगं परिरौप्यते स्म ॥ ३४ ॥ वर्धि-
णु ऋधुत्तरगौरवाख्य शृगांतर तत्र चरन्नवाप ॥ अहो अह पूजितपूजिताधि—रित्येप
मेने त्रिजगत् तृणाय ॥ ३५ ॥ एव रसगौरवसातागौरवरूपे अपि शृगे प्राप, तत उद्यत-
विहार त्यम्स्वा नित्यवास प्रपन्नः, जैनकुत्तादिषु ममत्वमगीचकार ॥ ३६ ॥ तत, आत्मस्तु-
ति श्राद्धकृतामथाऽन्य—निवाविमिश्रामनुमोदमानः ॥ मिथ्याजिमानाऽन्निनिविष्टबुद्धि-
मिथ्यात्वमूर्च्छितवानह्युः ॥ ३७ ॥

उदना करना, पठनारा तथा जणनाराओधी अमारो तो आरो, आवतो नयी, अने पत्नी रीते अमोने
हमेशा इण्यार पण पुरसद पळती नयी, एवी रीते अहकारची म्णु आचार्य बोवते छेते बोको तेअोने 'तमो जय
पामो? हुमम फरपावो?' एम रुहया दाग्या ॥ ३३ ॥ वळी तमो निष्ठामा गरिणु छे, तपना चकार बो, तथा चारि-
ग्युक्त बो, एवी रीते स्तुति करता बोकोए ते मुनिने पान नामना महाच पवतना उचा शिखरपर चनाव्या ॥ ३४ ॥
वळी एवी रीते ते मानम्हयी शिखरपर चरता थका, बुद्धि पावता एवा ऋच्छिगारम नामना रीजा शिखरपर ते चड्या;
तथा अहो! प्रमनीको पण मारा चरणो पुजे छे, एम विचारीने ते ज्ञणे जगतने तण समान मानया दाग्या ॥ ३५ ॥
तथा एवी रीते अमुममे ते म्णु आचार्य रस गरुच तथा साता गौरम्हयी शिखरपर पण चड्या, तथा पडी उद्यत
निहार तजीने एकज जगोए रहेवा दाग्या; तथा जैनकुळ* आदिस्मा ममता करया दाग्या ॥ ३६ ॥ पडी रीजाओए
करेडी निडाधी मिश्रित थयेन्नी एवी श्रामोए करेडी पोतानी स्तुतिने अमुमोदता थका, तथा मिथ्याऽन्निमानना
आप्रहवळी बुच्छियुक्त थया थका अन्निमान दावीने मिथ्यात्वपणु चरया दाग्या ॥ ३७ ॥

* गोचरी मसुल माटे जैन कुळमां के अन्य अमुम कुळमाज म्णु बोरे वावतमा ममत्व धरवा दाग्या एगे अर्थ सनेरे छे

अर्थानिनेप्सुनिपरीतनीति । कामी परवस्त्रीग्विव वच्छरागः ॥ धर्माध्वपयुर्गुरार्यमंगु—मू-
 लङ्गति प्राप विशेषद्विप्सु ॥ ३७ ॥ सदृशनाल्लोकद्वसद्विशेष—श्रुत तप सयम इत्यशे-
 प ॥ सदप्यसदूपनहो चकार । हहा । महामोहमयोधकार ॥ ३८ ॥ ततो मृत्वा तत्रै-
 व प्राणाद्वायतनवासी यज्ञोऽद्यूत, स विचितात् प्राग्जन्वप्रमाद भृश शुशोच, तथा चाह,
 'पुरनिच्छमणे जल्वो' इतिमथुरामगुरुया ॥ ४० ॥ पिक कोकिल . तस्मिन् यथोपदे-
 शोऽस्ति पचमगाधित्वात् . क्रिया च सहकारमजर्यादिशुच्याहारत्वात् तथा चाहु
 ॥ ४१ ॥

अनीतिबालो मनुष्य जेप धनमे डच्छे, तथा कामी पुरूप जेप परस्त्रीमां अन्निनाप करे, तेम धर्ममार्गमा चान्न-
 वाने पागला एवा मगु आचार्ये विशेष इच्छा करता थका मरुने पण सोट वेजा ॥ ३७ ॥ अहो ! ते मगु आचार्ये मत्
 एवा पण सथ्य् दर्शन, सथ्यग् ज्ञान, तथा उच्यसायमान थनू विशेष प्रकास्तु शुभ, तप, संथम विगोरे सर्व असन् कृत्य,
 माटे अरेरे ! मोहस्थी महान् अधवासनु एवु स्वरूप डे ॥ ३८ ॥ पडी त्यायी मृत्यु पापी ते मगु आचार्यनेते त्रिवि
 तेन नगली गरसा रहेनारा यद्गुरूपे उत्यन्न थयो, तथा त्या विजग ज्ञानथी पूर्वजने करेवो प्रमाद जाणनि मणो
 शोच करवा वाग्यो, कथु डे के—' नगली गरनो यद्गु,' एवी रीति मयुगपासी मगु आचार्यनी कथा जाणवी
 ॥ ४० ॥ दुये पिक एट्टे कोयल, ते पचम राम गानार होपाथी तेमा उपदेशस्थी गुण छं, तेमज आयानी मात्र
 आदिकना शुष्क नक्षत्राथी तेमा क्रिया समगि गुण पण रहेतो डे; कथु डे के ॥ ४१ ॥

आहारे शुचिना स्वरे मधुरता नीने निररञ्जता । वधो निर्ममता वने रसिकता
 वाचान्ता साधने ॥ त्यक्त्या न छिजकोकिल मुनिवर दूरात्युनर्वाञ्छिक वंदते वत स्रजन
 मृमिञ्जल चित्रा गति कर्मणा ॥ ४४ ॥ इति, नतुरूप काकाडितोऽपि निकृष्टरूपत्वात्
 तथा केषुचिद् गुरुषु सम्पक् क्रियोपदेशो स्त, न तु रूप, कुतश्चिद्धेतोर्येतिज्ञाऽ-
 वास्तित्वात्. सरस्वतीवाहनाहेतुक्यतिनेपत्यागिश्रीकाञ्चिकसूरिवत् ॥ ४३ ॥ इति पचमो
 भाग. ॥ हस प्रमिच्छ, यथा तस्मिन् रूप प्रमिच्छ क्रिया च कमलनाद्याद्याहागाडि-
 रूपा, न तूपेदेज, पिकशुकाडिवत् हसपङ्क्तिणि तटप्रसिद्ध ॥ ४४ ॥

जो आहारमा प्रियता डे, स्वस्मा मायु डे, गात्रो यापयामा निगन्धिणु डे, सुमा निर्ममणु डे, स-
 यामपा गभिरुणु डे तथा वसतगा जेने वाचायणु डे, एवा राकिग पडो मपी मुनिगने रग ओमनि, श्रीना
 मानाग यजन पडो सरखा हपरी यतिने ओरे 'दोको वदन को डे, माटे कमानी विचित्र गति डे ॥ ४३ ॥
 इति यत्री ते कोकिनमा रूप हातु नयी, केसके ते तो कागमायी पण सगप स्याली डे, एयी रीन कटवाक गुञ्जोपा
 सन्धक मरागप क्रिया अत उपेक्ष तो होण डे, परतु येनयी रूप होतु नयी, केसके को-क काणने डीने,
 रास्ती मा रीने गळया माटे मुनिना वेप तजनाग श्री काविरुमिनी पेडे मुनिना वेपने ते थारण करता नयी ॥ ४३ ॥
 एयी रीने पाचमो जागो जाणवो ॥ हस ए प्रसिद्ध डे, जेम तथा रूप प्रसिद्ध डे, तेष प्रिया पण कमल नाळना
 आहार आदिक नयी डे, परतु तेनामा कायत्र तथा गेपट आत्किनी पेडे उपेक्षेनो गुण नयी, तेसके हस
 पडोना नादनी प्रसिद्धि नयी ॥ ४४ ॥

तथा केयुचिद्गुरुषु साधुमात्ररूपेषु छयमस्ति, न पुनरुपदेश, गुर्वननुज्ञातत्वादिना
 तदनधिकारिस्वात्, अन्यशास्त्रिभ्रष्टादिमहार्पितवत्, इति पद्ये भग ॥ ४९ ॥ कीर.
 शुभ, स च बहुविधशास्त्रसूक्तकथादिपरिज्ञानप्रागद्वयवानिह गृह्यते, स च रूपेण
 रमणीय, नित्यया सहकारकदक्षीटात्मिफल्लादिशुचिहाारादिमान्, उपदेशपदुश्च चे-
 तोहरवचनत्वात् ॥ ४६ ॥ कस्यचित्तथाविधावसरोचितहितोपदेशकत्वादिपि, श्रूयते
 च गुरुछाससत्यादौ, शुकेन छामसत्या कथानकैः प्रोपितपतिकाया श्रेष्ठिपत्न्या पर-
 सगनियारणेन शीघ्ररक्षाकरणादि ॥ ४७ ॥

एवी रीते ऋत्वाक साधु मात्ररूप गुरुश्रोमा रूप अने क्रिया ए वने तो हांय वे, परंतु उपदेश हांतो
 नयी, रमेके गुण तम कथानो अनुज्ञा नहा आपया अत्रिमे करीने धया शस्त्रिचद्र अत्रिनी पंडे उपदेश
 ेसाया तेत्रोन अचिकार हांतो नयी णवी रीते उद्ये जागो जाणवो ॥ ४७ ॥ कीर एतेन पोष्ट, अहो पवा
 पोष्टनु ग्रहण करुके, जे थणा मत्तगना शासोना उचम श्योतो तथा रुया अत्रिनी जाननी चतुगध्यातो हाप,
 ते पांष्ट रूप मनोहर होय वे, तम त्रियावेके वरीने पण आया, कळ, दास्त्रिग, आदिमत्त पवित्र आहारावलो
 होय वे, तम मनोहर धचनयाळा हायाथी उपेकया पण मत्रीण वहेयाय न ॥ ४६ ॥ केफके तेयो पोष्ट कांसे
 अस्मराचिन हितोपदेश पण आपे वे, मुमागवुहेरी अत्रिमा सत्तयाय छे कं पोष्टे यदावेर रुथाश्रोमे करीने
 पदेश गयता पतितात्री शठनी मोन एतेन सग निवारण करया रंके करीने तंणीना शीविना रक्षा अत्रिमु
 वार्य करुं वे ॥ ४७ ॥

रत्नमारश्रेष्ठिक्रयादिषु स्थाने स्थाने हिनोपदेशादि च, तथा केचित् श्रीगुरुवस्त्रय-
मपि विव्रति श्रीजनूश्रीवज्रस्वास्यादिवन ॥ ४७ ॥ इति सप्तमो जग ॥ तथा च
करट कारुस्तस्मिन् न रूप, बोचनाऽप्रियदर्शनत्वात्, नोपदेशा- कटुरटनशीलत्वात्,
नापि क्रिया, रोगिजग्दृग्वादिपश्चाद्विजीवोचनोत्पाटनङ्गनचुघट्टनादिकारित्वात् ॥
४८ ॥ तदस्त्वमासमज्ञाद्युन्याह्यारित्वाच्च, एव केपुचिदगुरु रूप, उपदेश, क्रिया
चेति त्रयमपि नास्ति, ज्ञावना प्राग्वत्, निदर्शन च अशुब्दप्रन्पका पार्श्वस्थादय
एव, परतीर्थिका द्विगिनो वा ॥ ५० इत्यष्टमो जग ॥

एकी स्नामार शोचनी कथा आदिकामा उक्ताणे उक्ताणे (पापंते संवो) हिनोपदेश आदिक उे, एकी
रति केट्वारु गुरु महामनां ये क्रिया अने उपदेश, ए एणे गुणोने धारण करे उे (वानी पेडे तो के
श्री जग्यामी तथा श्री तन्म्यामी आदिकला पेडे ॥ ४७ ॥ एकी रति सातमो जगो जाणतो ॥
हरे करट एव सागर्भे, नेमा रूप नयो, कर्मके तंतु जोतु गुज्योनी आगोने अप्रिय घट पेडे, ए
रुदक सरागो बोभावी तमा उपदेशो गुण पय नयी, तेम नेनामा क्रिया एण शुद्ध नयी, कारणे
ते गंगो एकी गण आदिक पशु आदिक जीवोना आयो उदेरुनी, तथा तेओने पेडना चाडाए चाओ घाचनी
इत्यादिक अशुच क्रियातो कर्त्तार उे ॥ ४८ ॥ नेमज ते पशु आदिकोना रधिग, माम तथा मज आदिक
अपत्रिय एपायोना चक्रण रत्तार उे एकी रति केट्वारु गुत्रोणा नेप उपदेश के दिया ए एणे हाता नये
तेनी विशेष ज्ञाना (समजग) घूर्वनी पेडे जाणवी अही दृष्टत तरिकि अशुद्ध उपदेश म्पपनारा पासस्था अदि-
कोनेन जाणवा, अथय परतीर्थी निग धारीओने जाणवा ॥ ५० ॥ एकी रति आठमो जगो जाणतो ॥

॥ प्रमुखवचनाच्च तज्जातीया अपरेऽपि पङ्क्तिषो दृष्टातीकार्या, यथासन्नव-
मिति, एषु चाष्टषु क्रमेषु क्रियाविकल्पज्ञा सर्वेऽप्ययोग्या एव, क्रियास-
हितपङ्कास्तु योग्या ॥ ११ ॥ पर तत्राऽप्युपदेशविक्रमा स्यतारकत्वेऽपि न परा-
स्तरयितुं समर्था, अशुद्धोपदेशकास्तु स्वपराश्च नान्यथो निमज्जयतीति शुद्धोप-
देशक्रियायुक्तपङ्क विकृष्टातमचित्त स्वीकारार्हं ॥ १२ ॥ शिष्ययोगपङ्कश्च कीरट-
घातेन प्रकटित्त सर्वोत्तम एवेति,—वगाष्टरूपस्य निदर्शनैरिति । श्रीमदगुणनष्टनिश्चय-
विनावयन ॥ सम्यक्क्रियान्सारगुणान परीक्ष्य तान् । चजेत नावारिजयश्रियं च ॥ १३ ॥

॥ इति श्रीमुनिमुदगमूरिरिरचते श्रीउपदेशरत्नाकरे चतुर्दशस्तमः ॥

अथा प्रमुख शब्दधी त जातिगाला रीजा पङ्क्तिषोऽपि एण योग्यता प्रकं न्युत्तमं स्यादने त अतो
रभात्रोपा त्रिया विनाना सव पङ्को अयाग्यज ँ, अने त्रिया महित पङ्को योग्य छे ॥ ॥ ११ ॥ त्री ल्या
प ऽ उपरग विनाता ता जो के पोताने तारे ँ, परतु परने तारयाने मर्मथ मथा वती अशुद्ध उपेन्य दे-
नागथा तो शतान अने परने एण समारसमुद्रया मुकाद दे, पाटे कोयवना न्युत्तथी मुचने मर्मथो एयो शुद्ध उपेन्य तथा
शुद्ध त्रियागालो एक स्वीकारसा नायक उ ॥ १२ ॥ वली ऐएना दृष्टातथी मुचनेवो त्रियोगी एक मर्मथी
उत्तम उ, एती रीने अतो पङ्क्तिषोऽपि एण स्यष्ट प्रतीपम करीने अाठ प्रकारना गुफ्रोने जालने तेओपायो उत्तम
त्रिया तथा उत्तम गुणोपायानी परेभा मनेने तेषने, षाडशुओपे जीतयान्ती वदमो मा परितने टम ॥ १३ ॥

॥ एती रीने श्री मुनिमुदगमूरिरिचते श्री उपदेशरत्नाकरे चतुर्दशस्तमः ॥

इति चतुर्दशस्तरंगः समाप्तः

अथ पंचदशस्तरंगः

पुनर्निदर्शनात्तर्गुणस्वरूप्य प्रस्तावागत श्राद्धादिस्वरूप्य चाह—मूत्रम् सोवाग वेस
गिहवड । रायाहरण व मङ्गवहिसारा ॥ चतुर्गुणगिहि धम्मजिया । सुअकिरिया सुच्छि
धम्मोहि ॥ १ ॥

वली वीजा दृष्टान्तं वरु करीने गुरुतु स्वरूप्य तथा प्रसारयी आवेनु श्रापक आदिक्तु स्वरूप्य पण त्हे डे -
मूत्रानो अर्थ -चाफान, वेडया, गृहपति तथा राजाना आजरणनी पडे म ये तथा वहागयी मारदूत पया चार प्रवा-
रना गुरुओ तथा गृहस्थियो, श्रुत, क्रिया, शुचि अने धर्मसे करीने धर्मरूपी आजीविकायाज थाय डे ॥ १ ॥

अस्या व्याख्या, श्रपाकवेश्यागृहपतिराज्ञामाचरणानीव मध्ये वहिश्च सारा असार-
 श्रत्वार इति चतु प्रकारा , श्रुतेन, क्रियया, शुद्ध्या धर्मेण च क्रमाद् गुरवो, गृहीति
 सामान्योक्तावपि श्रावकरूपा गृहिणो धर्माजीवाश्च जवतीति पितार्थ. ॥ २ ॥ अथ
 विस्तारार्थ.तत्र मज्जत्रद्विसारा इत्युमत्या आचराणाना चतुर्जंगी सूचिता, तथाहि
 ॥ ३ ॥ कानिचिदाचरणानि मध्येऽतरऽसाराणि, वहिरप्यसाराणि (१) अंतरसारा-
 णि वहिश्च साराणि (२) अतःसाराणि वहिस्ताराणि (३) मध्ये वहिश्च सारा-
 णीति (४) ॥ ४ ॥

हवे ते गाथानी व्याख्या कहे डे, चामात्र वेधया गृहस्थी न्था राजाना आचरणोनी फेडे मध्ये तथा
 वहारथी सार अने असारदूत, ज्ञान, त्रिया, शुद्धि अने धर्मथी अतुत्रमे गुत्र्यो चार प्रकारना डे, तथा गृहस्थी
 एष सामान्यणो न्था उता एण श्रावकरूपी गृहस्थियो जाणवा, अने तेवा श्रावकरूपी गृहस्थियो एण चार प्रकारे
 धर्मथी आजीविकावाळा धाय डे एथो समुदायार्थ जाणो ॥ २ ॥ हवे विम्भारवाळा अर्थ कहे डे त्या म ये अने
 गृहस्थी सार, एष कर्तेनि आचरणोनी चतुर्जंगी सूचन बरी, ते कहे डे ॥ ३ ॥ केंद्राक आचूणो अदरथी एण
 सारविनाना अने वहारथी एण सार विनाना डे (१) केंद्राक अदरथी असाग अने वहारथी सारवाळा डे (२)
 केंद्राक अदरथी सार अने वहारथी असाग डे. (३) अने केंद्राक तो अदरथी अने वहारथी अनेथी सारवाळा
 (४) डे ॥ ४ ॥

तत्र यथाकामोऽमुपबद्धाणादभ्येपामयाञ्जीरार्द्धीनि, नीनजातीना आनरणानि कञ्जीरा-
 दिभ्यत्वेनात.शुषिरत्वात्, कर्कशादिभ्युत्तत्वादिना चातरसाराणि, ताडकूनेज शोभाद्य
 नावाद् नद्विश्वाऽसाराणि ॥ ५ ॥ केवलं नूपुरकृद्वायाकारमात्रधारित्वादानरणानी
 बुध्यते, तेन परिहितैर्भया नूपुरादीनि परिहितानीत्यनिमानमात्रसुग्य परिधानु ॥ ६ ॥
 तथा तेभ्यः श्रेष्ठेणकामौ मुक्तेरपि न किमपि विजिग्य षड्व्यादि द्वाच्यते, तन्नेरपि च न
 काचिद् इत्योल्पत्तिरिति प्रथम आनरणमेव ॥ ७ ॥ तथा वेक्षयाना आनरणान्यत्र
 शुषिरत्वात् द्वाङ्कादिभृतत्वाद्यासाराणि, वह्विश्च ताम्रादिमयत्वेऽपि स्वर्णं रशितत्वा-
 न्मुग्धाना न्येभ्यस्त्व बुद्धिच्छेदुत्वेन साराणीव प्रतिजासते, इति साराणि ॥ ८ ॥

यथा चाभ्यागतो तत्र उपनयनी तेषां पण आचार आनिक नीच जनिप्रोला आश्रयणो ऋगिर
 आनिरा तथा अग्नी पोना होत्राथी गया अत्र राकरा आनिक चरेवा होत्राथी अत्रथी सा विनाना डे.
 तेषज तर्मा तत्रो रतिना तत्र शोरा अन्कि त होत्राथी वहाथी पण सार दिनाना ड ॥ ५ ॥ यत्र जात्र तथा
 इरुड आदिकनो मात्र आचार धरता होत्राथी आश्रयणो कहवाय डे, अने तथा आश्रयणो पहेरथी म जाकर
 आनिक पहेस्था डे एत्यू फक्त अनिमानरूप मुख पहेग्गाने जणाय डे ॥ ६ ॥ बली ते अस्वम आनरणाने मरेणे
 आदिक मुकवाथी पण, तेथी कड विज्ञप रीते द्रव्य आनिकना ज्ञान थतो नथी, तम ते आनरणो कायाथी पण कड
 द्रव्यनी उच्यति अती नथी, एवी रीते आनरण सप्रधि पहेदो जेद जाणवो ॥ ७ ॥ इवे ने याना आश्रयणो अत्र
 पोवा होत्राथी अने दाव्य आदिकथी चरेदो होत्राथी सार विनाना डे, अने वहाथी तानना होत्रा उता पण उपर
 मानानो होत्र चरवावारे करीने मुग्ध बोधेने ते रानाना डे, पत्री बुद्धि धग वरु करीने जणे सागराज होय नही
 तेय जाणे डे, गणे सारचत डे ॥ ८ ॥

यद्वा वहि सारस्व प्रकारातरेण जाव्यते, तथाहि—यथाऽजरणानि कुञ्जस्त्रियो वस्त्राः
 द्वाग्नादनेन गुप्तानि परिद्वयति. न तथा गणिका, तान्निरनाद्वावनेन स्फुटवृत्त्यैवागदुकु-
 न्दानीनां परिधानात् ॥ ए ॥ तेन वहिर्द्योतमानताप्रतिज्ञासात्तानि वहि.साराणीति.
 तैश्चाऽखने. शुष्काजरणवत् शोभाति स्यात्, ग्रहणकावौ मुक्तैश्च तत्स्वरूपाऽनजिज्ञा
 मुग्धा ह्यव्याद्यर्पयति, जग्नेस्तु न कोऽयर्थः सिद्धतीति द्वितीयः ॥ १० ॥ तथा
 गृहिणा व्यवहारिणामाजरणानि सर्वस्वार्णमयत्वावतर्निघटत्वात्साराणि, वहिश्च ता-
 दृक्प्रौढ रत्नादिजटितत्वाऽजावात् ॥ ११ ॥ तद्योषिवादिनिर्वस्त्राद्वावनादिना गुप्तवृत्त्या
 परिधानेन वा राजाजरणोपेक्षया अनुदरा कन्येत्यादिवत् अल्पसारत्वादसाराणि ॥ १२ ॥

अर्थो ते बहारात् सारणु वीजो रीते वतावे अं, ते कहे अं—अंम कुञ्जनि वीजो वस्त्रादिकथी वांकीनि
 गुप्त रीते आचूषणो पहरे अं, तेम केयत्रो गुप्त पहरेती नयो, तेत्रो तो वस्त्रादिक दाया विना प्रगट रीतेज
 वलुयथ तथा कुंभ आदिक पहरे अं ॥ ए ॥ अने तेथी बहाराथी चळकला देखावाथी तेत्रो वाबसारवाळा अं,
 वळी ज्यामुथी ते अखंरु होय त्यामुथी तो साचां आचूषणनी पेडे शोना आदिक थाय, तेम घरेणे मूकवाथी
 पण तेना स्वरूपने नही जाणनारा मुग्ध दोको ते साटे द्रव्यआदिक आपे अं, पण ते आचूषणो चाग्याथी तेथी
 कंठ पण स्वार्थ सरतो नथी, एवी रीते वीजो जेठ जाणवो ॥ १० ॥ वळी गृहस्थीना एट्टे व्यापारीओना
 आचूषणो, साव सोनाना होवाथी तथा अदर नकोर होवाथी सारजत अं, तथा बहाराथी तेमां तेवा उमदा रत्नआ-
 दिक जनेदा न होवाथी ॥ ११ ॥ तेमज तेओनी वी आदिको पण वखो दाकवा आदिकथी गुप्त रीते पहरे अं,
 अने तेथी, राजाना; आचूषणोनी अपेक्षायै, आ कन्या उदर विनानी अं इत्यादिकनी पेडे ते, आचूषणो स्वल्प
 सारवाला होवाथी असारजत अं ॥ १२ ॥

तानि चाऽख्यानानि जगन्तानि वाऽर्थज्ञानादिकार्यकारीण्येवेति तृतीय. ॥ १३ ॥ तथा राज्ञामाचरणानि प्राग्बद्धत. साराणि, बहिरपि च लङ्ककोव्यादिमूढ्यरत्नादिजटितत्वाश्रित्यनेन पुत्रिर्नृपयोषिद्भिश्च स्फुटदृश्यैव परिधानादिना वा रविकिरणादिवद् द्योतमानत्वेन साराण्येव ॥ १४ ॥ तैश्चाऽख्येन. सुखमातिरेकोत्पत्तेः, जगैरपि च स्वर्णमाणिम्यादिमूढ्योत्पत्तेश्चाऽनीष्टसिद्धिरेवेति चतुर्थ. ॥ १५ ॥ एव गुरवोऽतर्बहिश्च श्रुतेन सताऽसता च चतुःप्रकारा इत्या, अतर्बहिश्चाऽसारा, अतरसारा वहि सारा, अंत सारा बहिरसारा, अतर्बहिश्च सारा. ॥ १६ ॥

बळी ते आचरणो अखंन होय या चांगना होय, तोपण द्रव्यना दान आदि कर्माने करनारजि छे, एवी रीते बीजे जेद जाणवो ॥ १३ ॥ बळी गजानां आनृपणो पूर्वनी पेटे अदरयी सारवाळ, तेम बहुरयी पण दाखो जेजाननी किमत्वागं रत्नो आदिकयी जनेनां होवायी, अथवा निरुपणें पुरूपो तथा राजानी हीओ वने गणद रीतेज पहेरथा आदिकयी अथवा सूर्यना किरण आदिकोनी पेटे चळकतां होवायी सारचतन छे ॥ १४ ॥ बळी तेओ ज्यासुधी अखन्ति होय त्यासुधी पहेरनायी अस्यत सुखनी प्राप्ति थाय जे अने चागायी पण सुर्वण तथा माणिस्य आदिकोतुं मुख्य उपजवायी इच्छित सिद्धि थायज जे, एवी रीते चोयो जेद जाणवो ॥ १५ ॥ एवी रीते गुरुओ पण अदर अने बहुर उता अने अछता एवा ज्ञाने करीने नीचे मुजव चार प्रकारना जाणवा अदरयी अने बहुरयी सार विनाना; अदर, सारविनाना अने बहुरयी सारवाळां, अदरयी सारवाग अने बहुरयी सार विनाना; तथा अदरयी पण सारवाळां अने बहुरयी पण सारवाळां ॥ १६ ॥

तत्र केवाचित् पार्श्वस्थादीनामंतर्हृदये न श्रुतं सम्यक्श्रीजिनागरूप, तदश्रच्छानात्-
 क्षेयतोऽपि तद्ज्ञानवनाद्यज्ञावाद्या ॥ १७ ॥ अश्रच्छानादि च तद्विद्वंगस्य, महान्नता-
 राधनावश्यकादिसम्यक्क्रियापइजीवरक्षापरिणामपादानप्रयत्नादिसवेगकपायोपशमतत्व-
 ज्ञानान्देरदर्शनात् ॥ १८ ॥ प्रत्युत 'दगपाणं पुष्पफल । अणोसण्णज्ज गिहरथ-
 किञ्चाइ' इत्यादिप्रमादाना स्फुटवृत्त्यैवासेवनोपदंज्ञात्, पार्श्वस्थादिषु ह्येतेऽनाचारा
 स्फुटमेवोपदन्त्यते ॥ १९ ॥ तथाहि—सनिहिमहाकर्म । जदफद्वकुसुमाइसव्वस-
 च्चिचत्तं निच्चडुत्तिवारन्नोअण—विगइव्वगाइत्तंवोदं ॥ २० ॥ वढं हुप्पन्दिने-
 हिअ—मपमाणसकन्निअं दुक्खुआइं ॥ सिज्जेवाणहवाहण—आउहत्तंवाइप्ताइ ॥ २१ ॥

त्यां केन्द्राकं पास्तथा आदिकानां रूपायनी अदर श्री जिनागर रूप सम्यक् प्रकारु श्रुत हेतु नयी,
 केमके त्रेअंने ते पर श्रच्छा होती नयी, अथवा वेश मात्र पण तेनी ज्ञानना आदिकलो तेअंने अज्ञाप हांप डे
 ॥ १७ ॥ वळी तेअोना तिगनी पण श्रच्छा आदिक धती नयी केमके तेअोमा मडानतोनी आराधना, आव
 श्यक आदिक उत्तम क्रिया, उकाय जावोनी रक्षानो विचार, तथा ते पाळवामा प्रयत्न आदिक, वैराग्य कपायोनी
 शांति तथा तत्वोनी ज्ञानना आदिक देखातु नयी ॥ १८ ॥ परतु उदडु जळ, माटी, पुष्प, फळनो सधद, अने
 पणीय आहार आदिकतु सेवन, तथा गृहस्थोना कार्य करवा पणु, इत्यादि प्रमादोने प्रगट रीतेज सेवता देखा-
 य डे; केमके पास्तथा अदिकोने विपे ए अनचारो प्रगटज रीते देखाय डे ॥ १९ ॥ ते कहे डे.—सनिधि,
 आधाकर्म, जळ, फळ, तथा पुष्प आदिक सर्व सच्चित्तोतुं सेवन, हयेशां धे, जणवार जोजन विगप तथा क्षण
 आदिक तत्वोसतुं सेवन ॥ २० ॥ सारी रीते नही पन्दिनेहन करेअं, प्रमाण विनानां, तथा किनारीवाळां रेशमी
 वत्त आदिकतुं पहेरपाणुं, शय्या, पगरबां, वाहन, हथीपार, ज्ञावा आदिकनां पत्रोतुं राखुं ॥ २१ ॥

सिरतुन-खुरमुन । स्थहरमुहपति धारण कजे ॥ एगगित्तचमण । सन्ददं चिद्धिअ
 गीअ ॥ ११ ॥ चेश्चंमढाईवासं । पूथारजाइ निच्चवासित्त ॥ देवाइ वच्चचोग
 । जिण्णैहरसाइाइकारवण ॥ १३ ॥ न्हाणवट्टणचूसं । ववहार गयसगहंकीअ ॥
 गामकुडाइममत्त । *थीनट्ठ थ्रीपसग च ॥ १४ ॥ निरयगद्धेठ—जोइत्त । निमि-
 च्चेगिच्छमतजोगाइ ॥ मिच्छाइ रायसेव । नीयाणवि पावसाहिज्ज ॥ १५ ॥
 सुविद्धिअसाहुपथोत्सं । तप्पासे धम्मकम्मपन्निसेह ॥ सासणपचावणाए । मच्चर-
 वज्जडाइकलिकरण ॥ १६ ॥

अस्त्रायी मस्तक दाही मुंनारवी, काम पड्ये रजोहरण तथा मुहपति धारवा, तथा एकाकी नमनु, ए
 सयकु स्वच्छन चेटित्त कथु छे ॥ ११ ॥ प्रजा आरज आदिक, नित्ययास, देवद्वयादिकु चोगवधु, जिनमद्वि
 अने जिनशोभा आदिक वनावर्वा ॥ १३ ॥ स्नान करनु, आचरण पहेरत्तं, व्यापार करवो, भय
 सग्रह करवो, क्रीडा करवी, गाम कुळ आदिकुनी ममता करवी, खीनो नाच जोवो, तथा स्त्रीनो प्रसग करवो
 ॥ १४ ॥ वट्टी नरकगतिला हेतु रूप एवा ज्योत्तिप, निमित्त, वैद्यक, मत्र, जोग आदिक, साधवा, मिथ्यालि राजानी
 सेवा करवी, नीच प्राणीओने पण पापकार्येमा सहाय आपवी ॥ १५ ॥ उत्तम क्रिया पाळनारा साधुओपर डेप
 करवो, तेमनी पापे धर्म कार्यनो प्रतिपेध करवो, शासननी उचतिमा मत्सर करवो, वाकनी आदिकवने करीनि
 कनीओ करवो ॥ १६ ॥

* * * * * थी परिगहो वावि' इति द्वितीयमुक्तापाठ

सीसोदरइफोत्तग । अद्वित्त दोहहेउ गिहियुणए ॥ जिणपन्निमाकयविक्रय । उ-
 च्चानणवुइकरणाइ ॥ १७ ॥ श्रीकरफास वने । संदेह कदतरेण धणदाणं ॥ चट्ट-
 नयसीसगहण नीचकुइस्सावि दंवेण ॥ १८ ॥ सव्वावज्जपवत्तए—मुहुत्तदाणाइ
 सव्वदोयाण ॥ सद्दाइगिहिये वा । खज्जगपागाइकरणाइ ॥ १९ ॥ जग्गवाइयुत्त-
 नेवय—पुयाणपूयावणाइमिच्चत्त ॥ सम्मत्ताइनिसेह । तेसि मुद्धेण वादाण ॥ २० ॥
 इय बहुहासावज्ज । जिणपन्निक्कुठ च गरहियं दोए ॥ जे सेवति कुकम्मं । क-
 रंति म्व हि निच्छम्मा ॥ २१ ॥

मन्तक पेट आदिक फोरुवा, नाट्यागणणु आचरु, दोजन माटे गृहस्थीनी स्तुति करवी, जिन
 प्रतिमानो नयनिक्रय करवो, उवाटन, रामणमसुग्ग नीच कार्य करवा ॥ १७ ॥ ह्रीना हाथनो स्पर्श करवो, दाम-
 चर्यमा मंद्द धरवो, न्याजे धन आपहुं, नीच कुत्रा पण चाडुनीया शिष्योने द्रव्य आपी ग्रहण करवा ॥ १८ ॥
 सर्व पापेमा प्रयत्ति करवी, सर्व लोकोंने मुहूर्त आदिक जोइ देवां, धर्मशालामा अथवा गृहस्थीने घर खाना
 पकवान आदिक करवा ॥ १९ ॥ यह आदिक गान्धेवखानी पूजा करवी करवती आदिक भि-यान्त्वेने स्वीकारु,
 सम्यक्त्व आदिकलो निषेध करवो, अथवा विमत देइ सम्यक्त्व आदिक देवुं ॥ २० ॥ एवी गीते यणा प्रकाशुं
 सासध एट्ठे पापवाहुं कार्य जिनेश्वर प्रभुण निषेधु, तथा निट्टेवु छे, माटे आ लोकमां जे प्राणीओ कुकर्म सेवे छे, तथा
 करे छे, तेओ ग्गरेवर धर्म-निना छे ॥ २१ ॥

इह परब्रह्मोद्ग्रहणं । सासणजसघाट्टणं कुदिट्ठीण ॥ कह जिणदंसणमेसि । को-
 वेसो कि च नमणाई ॥ ३२ ॥ इत्यादि, अतो न तेपामत.श्रुत, नापि वहि., पाठे
 व्याख्यादौ च श्रुतस्याऽश्रवणात्, प्रायः पट्टप्रज्ञकादीनां चाणाम्यपचाख्यानकसिहा-
 सनछान्निशिकाविनोदकयाप्रायाणामन्येषामपि लोकाज्ञेयकाणां तत् तदाधुनिकादि-
 नृपमन्त्रिकविप्रभृतिप्रवचकद्विपत्संवधविशेषोपदेशाना च पाठाद् व्याख्यादौ च प्रयो-
 जनाच्च ॥ ३३ ॥ ततोऽतर्बहिश्च श्रुताऽज्ञावेन द्विधाप्यसाराः पार्श्वस्थादयो लोको-
 तराः कुतुरुत्र प्रथमजगत्पातितो ज्ञेयाः ॥ ३४ ॥

बली एवी रीते आबोक अने परलोकनो नाश करनारा, शसनना जरनो घात करनारा, तथा कुहःष्टिवाला
 एवा तेअने जिन्दर्शन क्याथी प्राप्त थाय? तेम उत्तम वेप तथा नमन आदिक एण क्याथी होय? ॥ ३२ ॥
 इत्यादि, माटे तेअने अतरथी एण श्रुत एद्वे ज्ञान नथी होठ, तेम बहारथी एण नथी होठ? कर्मके पाठ तथा
 व्याख्यान आदिकर्मा तेअने श्रुत होय, एम सनळातु नथी, कर्मके तेअो प्राये करीने ठ प्रज्ञकादिकनो तेमज
 चाणाम्य नीति, पचाख्यान, सिंहासन मनीसी आदिक विनोद कथाअोनो, तेमज वीजां पण जेयी लोकोनां मन
 रजन थाय तेवां शास्त्रोनो, तथा ते ते हयणाना राजा, मन्त्रि कवि आदिकोनो प्रवधेना कट्टित एवा सवध विशेष
 उपदेशेना पाठथी व्याख्यान आदिक प्रांचे ठे ॥ ३२ ॥ माटे एवी रीतना पासस्था आदिको श्रुतना अज्ञावथी
 अदरथी अने बहारथी एण सार विनाना ठे, तथा ते लोकोत्तर कुतुरुअने पहेया ज्ञांगामा रहेया नाणया
 ॥ ३४ ॥

एव लौकिका अपि विप्रादयो बौद्धयोगितापसादयश्च बहिरतश्च श्रुताऽज्ञावेन प्रथ-
मजंगानुयातिन एव, श्रुताऽज्ञावाश्च तेषां छिद्यापि जिनवचनवाह्यत्वात् ॥ ३५ ॥
जिनवचनव्यतिरिक्तशास्त्राणां च श्रुतत्वाऽज्ञावात्, तेषां श्रुतत्वाऽज्ञावश्च गर्दभद्विभक्त-
द्वौदाऽङ्गमत्वात्, जीववधाऽसत्यस्तैन्याऽब्रह्मादीनामपि धर्मत्वेन प्ररूपकत्वाच्च ॥ ३६ ॥
तदुक्तं धनपादापन्तिन,—स्पर्शाऽमेध्यच्युजां गवामघहरो वद्या विसज्ञा दुमा. । स्व-
र्गव्यागवधाच्छिनोति च पितृन् विप्रोपपञ्चुक्ताशन ॥ आप्ताब्दम्पराः सुरा. शिखिहुतं
प्रीणाति देवान् हवि. । स्फीतं फलयु च वलयु च श्रुतिगिरां को वेत्ति द्वीद्वायितं ॥ ३७ ॥

एवी रीते लौकिक एवा ब्राह्मण आदिको, बौद्ध, योगी तथा तापस आदिको बृहार्थी अंन अंदरथी एण
श्रुतना अचावै करीने पहेला चागामां वर्त्तनाराज छे, कळी तेओ जिन वचनथी बाब होवाथी तेओने वने रीते
श्रुतनो अचाव छे ॥ ३५ ॥ तेम जिन वचन शिवायना शास्त्रेनो श्रुतपणनो अचावज छे, अने ते शास्त्रेनो श्रुतप-
णानो अचाव गधेनानां लीगनी पेटे लुटावुं खमी शकतो नथी, केमके तेओमां जीबहिंसा, असत्य, चारी,
तथा अब्रह्म आदिकोने एण धर्मक्ये प्ररूपेजा छे ॥ ३६ ॥ ते मोटे धनपाळ पंन्ते कथु छे के, जे श्रुतिनी बाणीमा
विष्णु खानारी गयोनेो स्पर्श पपोने हरनारो कथा छे, सझारहित वृट्टने वंदनीक कथा छे, बकराओनी हिंसाथी
स्पर्शासि कहेदी छे, ब्राह्मणोए खथेळु अब्र पितृओने पुष्ट करनार कथु छे, उग्रस्य देवने आप्त तरीके
कहेला छे, अग्निमां होमिळु बलिदान देवोने खुश करनार कहेलुं छे, एची रीतनी श्रुतिनी बाणीनु विवाळ
अने मनोहर ठता निरर्थक चैष्टि कोण जाणी शके तेम छे? ॥ ३७ ॥

॥ ११२ ॥

योगशास्त्रात्तरश्लोकेष्वपि,—अथ दशविधो धर्मो । सिंथादृग्निर्न वीक्षित ॥ योऽपि
 कश्चित् स्वचित् प्रोचे । सोऽपि वाङ्मात्रनर्त्तन ॥ ३७ ॥ तत्त्वाथो वाचि सर्वेषा । के-
 पाचन मनस्यपि ॥ क्रिययापि नरीनस्ति । नित्य जिनमतस्प्रज्ञा ॥ ३८ ॥ वेदशास्त्रपरा-
 धीनबुद्ध्य सूत्रकठका. ॥ न द्वेषमपि जानति । धर्मरत्नस्य तत्त्वत ॥ ४० ॥ गोमैध-
 नर्मैधान्श्वेधाद्यध्वरकारिणा ॥ याज्ञिकाना कुतो धर्म । प्राणिधातत्रिधायिनां ॥ ४१ ॥
 अश्रद्धेयमसद्भूत । परस्परविरोधि च ॥ वस्तु प्रद्वेषता धर्म । क. पुराणविधायि
 ना ॥ ४२ ॥

योगशास्त्रमा रहेना' श्लोकामा पण कथु डे के, आ दश प्रकाराने धर्म सिंयात्त्रिओए जोगेडो नथी, अने
 क्ताच कोऽ कदक कहे, ते पण फक्त वचन मात्रु नाटक डे ॥ ३७ ॥ जैन मतने माननाग एवो सर्ग लोकाना वच
 नमा तत्त्वतो अर्थ रहेडो डे, तथा केटवाकोना मनमां रहेचो डे, अने क्रियारूपे पण हमेशाज नाची रहेचो डे
 ॥ ३८ ॥ फक्त सूत्र मात्रने कडे करनारा तथा वेदाकने आधीन बुद्धिवाला, मनुष्यो धर्मस्यो स्तना देश मात्रने पण, तत्त्वथी
 जाणता नथी ॥ ४० ॥ गोमैध नर्मैध तथा, अश्वमैध आदिक युद्ध करनारा एवा जीवहिंसा करनाराओने र्म ते कर्वावी होय ?
 ॥ ४१ ॥ वडी न शब्दा, कर्वा डायक, असत् तथा परस्पर विरो, वाडु, वचन बोधनारा एवा पुराणीओने पण सूी रीति
 धर्म होय ? ॥ ४२ ॥

असद्भूतव्यवस्थाञ्चि । पराद् इव्यं जिघृक्षता ॥ मृत्यानीयादिञ्चि शौच । स्मा-
 र्त्तादीना कुतो ननु ॥ ४३ ॥ ऋतुकाले व्यतिक्रान्ति । ऋणहृत्यानिधायिनां ॥ ब्राह्म-
 णाना कुतो ब्रह्म ब्रह्मचर्यप्रज्ञापिनां ॥ ४४ ॥ अदिस्ततोऽपि सर्वस्व । यजमानाजिघृ-
 क्षता ॥ अर्थार्थं त्यजता प्रणान् । क्वाकिचन्य छिजन्मना ॥ ४५ ॥ दिवसे च र-
 जन्या च । मुखमापृष्टय रवाढता ॥ नह्याऽनह्याऽद्विकानां । सौगतानां कुतस्तप.
 ॥ ४६ ॥ मृच्छी शय्या प्रातः पेया । मध्ये नक्त साय पून ॥ आङ्गाखनं रात्रेर्मध्ये ।
 शाक्योपङ्गुः साधोर्धर्म ॥ ४७ ॥ स्वल्पेष्वप्यपराधेषु । इणाढ्याप प्रयत्नतां ॥ लौ-
 किकानामृषीणां न । इमादोशोऽपि दृश्यते ॥ ४८ ॥

जूती व्यवस्थात्रोथी पर पासेथी द्रव्य ग्रहण करवानी इच्छा करनारा एवा सृत्तिने अनुसरनारा आदिकोने
 माटी तथा पाणी आदिकथी पवित्रता (धर्म) क्याथी होय ? ॥ ४३ ॥ ऋतुकाल गये तेते वाळहत्या कहिनारा,
 तथा ब्रह्मचर्यते फक्त बरुवमाट करनारा ब्राह्मणेने ब्रह्मचर्य (धर्म) क्याथी होय ? ॥ ४४ ॥ देवानी इच्छा नही
 करनारा एवा पण यजमान पासेथी तेतु सर्वस्व देवतेने इच्छता तथा धनेने माटे प्राणेने तगनारा एवा ब्राह्मणेने
 आकिचनपणु क्याथी होय ? ॥ ४५ ॥ दिवसे अने रात्रिए पण मुखने पुडीने खानारा, तेमज नह्य अन्नइयनो
 विवेक नही करनारा एवा बौद्धेने तप क्याथी होय ? ॥ ४६ ॥ कोमठ श्रमा, प्रचले राव के कानी पीथी, मयान्हे
 नोजन करतु, सने दूध आदिक पीधुं, मयारात्रिए ब्राह्म संन खावां, एवा शाक्यसुनिए साधुधर्म कळो छे ॥ ४७ ॥
 स्वल्प अपराध होते तेते पण कृणवारमा थ्राप आनारा एवा लौकिक ऋषिओने इमानो ब्रह्म माने पण देवतेतो
 नथी ॥ ४८ ॥

जालादिमददुर्लभ—परिनिर्मितचेतसा ॥ क्व मार्दव छिजातीना । चतुराश्रमवार्तिना
 ॥ ४९ ॥ दत्तसरत्नगर्भाणा । ककटुत्तिजुषा वहि ॥ जवेदार्जवद्वेषोऽपि । पाख-
 रुवतिना कथ ॥ ५० ॥ यद्विणीयद्वेषुत्रादि—परिग्रहवता सदा ॥ छिजन्मना
 कथं मुक्ति—द्वौजैककुलवेदमना ॥ ५१ ॥ अरक्तछिष्टमूढाना । केवलज्ञानशास्त्रिना
 ॥ ततोचगवतामेषा । धर्मस्वास्यातताहता ॥ ५२ ॥ रागाद् छेषात्तथा मोहात्
 । जवेद् वितथवादिता ॥ तदज्ञाने कथ नामा—ऽहता वितथवादिता ॥ ५३ ॥ ये
 तु रागादिजिदेषै । कद्वुधीकृतचेतस ॥ न तेषा सुवृता वाच । प्रसरति कदा-
 चन ॥ ५४ ॥

जाति आदिकनो मद तथा दुराचरणोषी जेओतु मन नाची रंयुं डे, तथा चार आश्रमोमा जेओ वत्ता
 रहदा डे, एवा ब्राह्मणने कोमलता क्याथी होय ? ॥ ४९ ॥ हृदयमा कष्टवाला, तथा गहायथी बगजगत जेरी
 दृत्तिवाला एवा पाखनी प्रथारीओने सरदणणानो दोश पण स्याथी होय ? ॥ ५० ॥ हमेशा स्त्री, घर तथा पुत्र
 आदिकना परिग्रहवाला तथा दोलना तो एक दुलग्रह सरखा एवा ब्राह्मणने ल्यागनाव क्याथी होय ? ॥ ५१ ॥
 माटे राग छेप विनाना अने केवल ज्ञानरंभे करीने मनोहर तथा उत्तम व्यायानने बायक एवा श्री अरिहत मनु
 ओनो कहेतो धर्म श्रेष्ठ डे ॥ ५२ ॥ राग, छेप अने मोहथी किययातीपणु थाय डे, अने श्री अरिहत मनुओने
 तो तेओनो अज्ञाव हेवाथी तेओमा वितथवातीपणु स्याथी सत्तरे ? ॥ ५३ ॥ बली जेओना मन राग आदिक
 दोषोथी महिन घयेग डे, तेओना सत्य कवनो कटापि पण होइ शकतां नथी ॥ ५४ ॥

तथाहि—यागहोमादि—कर्माणीष्टानि कुर्वतां ॥ वापीकूपतडागादी—न्यपि पूर्त्ता-
न्यनेकशः ॥ ११ ॥ पशूपधातत. स्वर्ग—द्वोकसौख्यं च मार्गतां ॥ छिजेज्यो ज्यो-
जनेर्दत्तेः । पितृवृत्ति चिकीर्षता ॥ १६ ॥ धृतयोऽन्यादिकरणे । प्रायश्चित्तविधायिनां
॥ पचस्वापस्तु नारीणा । पुनरुद्धाहकारिणा ॥ १७ ॥ अपत्याऽसन्नवे स्त्रीषु । द्वे-
त्रजापत्यवादिना ॥ सदोपाणामपि स्त्रीणा । रजसा शुद्धिवादिनां ॥ १८ ॥ श्रेयो-
बुद्ध्याध्वरहत—ज्ञागशिश्रेपजीविना ॥ सौत्रामण्या सप्तततो । सीधुपानविधायिनां
॥ १९ ॥

बळी यज्ञ, हवन आदिक इष्ट कर्माने करनारा, तथा अनेक एवा वाच कुत्रा तथा तळाच आदिक पूर्तने
पण करनार* ॥ ११ ॥ बळी पशुओनी हिंसायी स्वर्ग दोऊना सुखनी मागशी करनारा, ब्राह्मणो प्रत्ये जोजन देइने
पितृओनी वृत्ति कराना इजा करनारा ॥ १६ ॥ धृतनी योनि आदिक करीने प्रायश्चित्त करनारा, पाच प्रकारनी
आपदाओ पन्ते बवे पुनर्निवाह करनारा ॥ १७ ॥ स्त्रीने सतान न हेते छे क्षेत्रजयी (गोत्रीयी) पुन उत्पन्न करावुं
कहेनार, दोपयुक्त स्त्रीओनी पण रजयी शुद्धि कहेनार ॥ १८ ॥ श्रेयनी बुद्धियी यज्ञ करनारे हण्डवा मकराना
क्षिगयी आजीविका चनावनारा, सुनामणी तथा सप्ततु यज्ञमां मडिरापान करनारा ॥ १९ ॥

* उक्त कार्याने तेओ इष्टापूर्ते कहे छे

* पोतानी आज्ञायी पोतानी स्त्री साथे गोत्रत्र अथवा परपुरपना सनोगयी उत्पन्न थयंतो पुत्र 'क्षेत्रज,
कहेवाप डे. (आबी आज्ञा देनारा शास्त्र केर्ना प्रमाणिक होय तेज विचारवा योग्य डे) ते संकेधी मनुसृतिमां
विवेचन छे.

गूयाशिनीनां च गवा । स्वर्शनात्पूतमानिनां ॥ जज्ञादिस्नानमात्रेण । पापशुद्धि-
 धायिना ॥ ६० ॥ वटाश्वत्थामंझक्यादि—सुमपूजाविधायिनां ॥ बन्धो हुतेन हव्येन ।
 देवप्रीणनमानिना ॥ ६१ ॥ सुविगोदोदहरण—दिष्टशातिकमानिना ॥ योपिष्टिरु-
 वनाप्राय—व्रतधर्मपदेशिना ॥ ६२ ॥ तथा, जटापट्टञ्जस्माग—रागकौपीनधारिणा
 अर्कधचूरमादुरै—देवपूजाविधायिना ॥ ६३ ॥ कुर्वता गीतनृत्यादि । पुतौ वादयता मु-
 हु ॥ मुहुर्वदननादेना—तोद्यनादविधायिना ॥ ६४ ॥ असत्यज्ञापापूर्व च । मुनीन दे-
 वान् जनान् धनता ॥ विधाय व्रतजग च । दासीदासत्वभिद्धता ॥ ६५ ॥

विष्टा स्वानारी गायोना स्वर्शथी पवित्रणु माननारा, फक्त जळ आदिकना स्नानथी पापोनी शुद्धि कहे-
 नारा ॥ ६० ॥ वन, पीपळा तथा आमनी आदिक वृक्षोनी पूजा करना, अग्निमां होमेस्ता प्यर्थवने करिने
 देवोनी खुशी माननारा ॥ ६१ ॥ चूरी उपर गायने दोवथी विप्रोनी ज्ञानि माननारा, प्राये करिने जेयी स्त्रीने
 दुःख उपमे एवा न्तोयी धर्म थवानो उपदेश देनारा ॥ ६२ ॥ बळी, जटा, वस्त्र, जडम चोळ्येवु शरीर तथा
 लगोर्गने धरनारा, आकनो, यंतुरो तथा विद्विथी देव प्रजा करनारा ॥ ६३ ॥ गीत, नाच आदिक करना, रा-
 गरार हाथनी ताळीओ वगारनारा, तेमत्र गरार मुखना स्वथी वाजिनो नाट करनारा ॥ ६४ ॥ असत्य
 चवनपूर्वक मुनि, देवो तथा मनुष्योने हणनारा, नतजग करिने दासी दासणु इच्छनारा ॥ ६५ ॥

शुद्धता मुच्यतां श्रूयो । श्रूय. पाशुपतं व्रतं ॥ श्रेयजादिप्रयोगेण । यूकालङ्क प्रणि-
 ब्रता ॥ ६६ ॥ नरास्थिश्रूषणभृता । शृङ्खलखट्वांगवाहिना ॥ कपाद्विजाजनशुजा । घ-
 टानूपुरधारिणां ॥ ६७ ॥ मद्यमासागनान्मोग—प्रसक्ताना निरतरं ॥ शुतानुबद्ध-
 घटानां । प्रबलं गायता मुहु ॥ ६८ ॥ तथा, अनतकथकडादि—फडमूढाद-
 द्वाशिनां ॥ कदत्रपुत्रशुक्ताना । वनवासशुभामपि ॥ ६९ ॥ तथाहि—नट्टयाऽ
 नट्टये पेयाऽपेये । गम्याऽगम्ये समालम्ना ॥ योगिनाम्ना प्रसिद्धानां । कौलाचा-
 र्यातवासिना ॥ ७० ॥ अन्येषामपि जैनैश्चासासनाऽस्पृष्टचेतसा ॥ क्व धर्म इव फडं
 तस्य । तस्य स्वाख्यातता कथ ॥ ७१ ॥ इति ॥

गळी वारवार पाशुपत व्रतने ग्रहण करता तथा मूर्कता, औपय आदिक प्रयोगे करिने द्वाबो गमे जृञ्चोने
 मारनारा ॥ ६६ ॥ मनुष्यानां दानकानां आच्छुषणेने श्राण करनारा, शृङ्खोवाळा (खीडा जनेडा) खाटपर वेसनारा,
 तुम्हीच्या जीजनामां जोवन करनारा, घन तथा जाजर पहेनारा ॥ ६७ ॥ हमेशा मद्य, मास तथा खीना
 जोगोमां आसक्त थपेडा, सोबे धंद वाधीने फरनारा, तथा हमेशा वारवार गायन गानारा ॥ ६८ ॥ गळी, अन-
 तकाय, कदमूळ आदिक फळ, मूळ तथा पत्र खानारा, वनमासमा रहिने पण खी तथा पुत्रोने सोबे राखनारा
 ॥ ६९ ॥ गळी-नट्टय तथा अचट्टय, पेय तथा अपेय, गम्य तथा अगम्य ए सधळामा तुट्टय अत्रम्यावाळा, तेमज
 (बहाराखी) योगीना नामयी प्रसिद्ध, अने कौलाचार्यानी पासे रहेनारा ॥ ७० ॥ तेमज एवा जीजाओ
 के जेओनां चित्ते श्रीजिनेश्वर मरुना शासनने स्पर्श करेडो नयी एवाओने धर्म, तथा धर्महु फळ, अने उत्तम
 उपदेशाणु र्यायी होय ? ॥ ७१ ॥ इति ॥

इत्युक्त्वा बहिरतरसारा. प्रथमजगानुसारिण. कुगुरुत्र, एते च प्रथमजगज्जरणवद् गु-
 र्वाकारधारिणोऽपि बाहीकमुग्धमिथाहृगमोहाऽज्ञानां धितचेतस्कजनमान्या अपि च
 स्फुटारजाऽधर्मम्रुत्तदेवञ्चव्यपरिन्नोगरोपतापिवाक्कुकर्मादिचिर्विज्ञानाऽवज्ञास्पदत्वेने-
 ह् द्वोकेऽपि न तथा पूजासुखादिज्ञाज. ॥ ७२ ॥ नित्यजीविकाऽपत्योच्छाहनादिचि-
 ताकृपिराजसेवाद्विज्ञि प्रायो दु खिता एव च, प्रेत्य च नृपाधिकारनिमित्तज्योतिप-
 क्रयनादिमहारजप्रवर्तनादिपापे प्रायो निरयादिदुर्गतिगामिन एवेति ॥ ७३ ॥ तदु-
 क्त 'नरिदनेमिच्छिआयजोइसिआ' इपि पद्मचरित्रे नरकगामिजीवाधिकारे, द्वौकि-
 कैरप्युक्त—॥ ७४ ॥

एवी रीते बहार्थी अने अदर्थी सरनिना एटने पहेबा जागाने अनुसरनारा कुगुरुओतु म्बरूप कहु,
 अने तेओ पहेबा जागावाळा आचूणनी फेडे गुटना आकारने जो के धरण करेडे, तोपण, तेमज मडुर, जोला, मिथ्या
 ऋटि तथा मोह अने अज्ञानथी अथ चित्तवाला दोकोथी माननीक उता पण प्रगट रीते आरज, अर्थममा प्रवर्तन,
 देवद्रव्यनो उपचोग, परने पीभा उपजावभारी वाणी, तथा कृकर्म आदिकोवने करीने विद्वानोनी अज्ञाना स्थान-
 करूप होवार्थी आ दोकथा पण एवी रीते मान तथा सुख आदिकने जजनारा थइ शकता नथी ॥ ७२ ॥
 हेमशा जीवे एवा सतान, विवाह आदिकनी चिता, खेती, तथा राजसेगा आदिके करीने प्राये करीनेदुखीज
 रहे डे, तेम परबोकथा पण राज्याधिकार, निमित्त तथा ज्योतिप् कथन आदिक मोटा आरजना
 प्रवर्तन आदिक पापये करीने प्राये करी नरक आदिक दुर्गतिमा जनाराज थायडे ॥ ७३ ॥ बहूडे के 'राजा,
 निमिच्छिआ, ज्योत्सिपी' एमपद्मचरित्रमां नरकगामी जीवोना अधिकासां कहु डे, अन्यदर्शनीओए पण कहुडे के ॥७४॥

अधिकाराच्चिन्मार्से—मौठपत्याच्चिन्निर्दिने. ॥ शीघ्र नरकवांछा चेद्द्विदिनेक पुरो-
हित. ॥ ७९ ॥ दोकोत्तरगुरुनय्याश्रित्यागमेऽपि,—पुद्गेव मुठी जहसे असारें । अ-
थतिण् कूरुकहावणे वा ॥ राढामणीविरुद्धिअप्यगासे । असमथए होंइ हु जाणणसु
॥ ७६ ॥ तमतमेणेवजसे अ सीद्धे । सया दुहीविप्परिआमुवेई ॥ सधावइनरगतिरि-
ग्वजोणि । मोण विराहित्तु असादुरुवे ॥ ७७ ॥ इत्यादि विशेषे श्रीजचाराध्यने, ॥
तथा गणिकात्रणवतकेचिदतरसारा प्रायुक्तयुक्त्या वहिस्तुसारा. ॥ ७८ ॥ पाठतो
नवपूर्ववधिश्रीजिनवचनाध्ययनाप्यपनेपदेशाद्यानवरभुक्तया स्युः, अगारमर्दकाचार्या-

दिवत् ॥ ७९ ॥ तथाहि

अधिकारथी त्रण मसे नरक मळे छे, मउपतिण्ण धारण करवाथी त्रण दिवसे नरक मळे छे, तथा जो
तुरतज नरकनी इन्डा होय, तो एक दिवस मुधि पुरोहितण्ण अगीकार करु ॥ ७९ ॥ वळी दोकोत्तर गुरुओने
आश्रीने पण आगममा पण कछु छे के, नेम पोंडी मठी सारविनानी छे, अथवा जेम नियमित करेजो खेद्यो
सितो सारविनानी छे, (तेम ते द्रव्यमाधु पण उपेक्षा करवा दायक छे) केसके काचनो दुकको वैकुण्ठ रत्ननी पेडे
कडाच मकाश युक्त होय, तोपण तेना परीक्षको आगळ ते किमत विनाजोन थड पमे छे, अर्थात् अज्ञानीओज
तेने किमती गणे छे, ॥ ७६ ॥ वळी अधकारने करीने अर्थात् मिथालरूप अज्ञाने करीने हणणव्यो एवो ते
द्रव्यति हमेशा दुस्ती थयो थको तत्त्वआदिकोने विपे विपरीतण्ण पामे छे, तथा मुनिण्ण विराथीने असायुरूप थयो
थको नरक तथा तिर्चनी योनि पामे छे ॥ ७७ ॥ इत्यादिक वर्णन श्री उत्तरायन सृजना रीसमा अन्वयनमां
कळ्हु छे. वळी केटडाक साधुओ वेग्यना आचूषणनी पेडे पूर्वं कहेडी रीति मुजव अदरथी सार विनाना अने
बद्धारथी सारवाळा छे ॥ ७८ ॥ अने तेवाओ अगारमर्दक आचार्य आदिकनी पेडे, पाठथी ठेक नव पूर्व मुधी
श्री जिन वचन नणवा, नणववा तथा उपदेशाच आदिकना आनवरवाळा होय छे ॥ ७९ ॥ ते कहे छे—

—श्रीविजयसेनसुरे शिष्ये स्वप्ने सूकरो गजकञ्जशतपचकेन परिवृतो ददृशे,
 कथित गुरोः, सोऽवोचदञ्जव्य कश्चित्सुपरिकर समायास्यति ॥ ८० ॥ तद्दिन एवा-
 ऽऽगतो रुद्रदेवनामाचार्य शतपचकेन साधूना, कृतोचिता प्रतिपत्ति ॥ ८१ ॥
 निशि परीक्षणार्थं गुरुचिरुक्तैः स्थम्निन्नमार्गं विकीर्णं साधुन्निरगारा, ततस्ते आ-
 गतुका साधवस्तेषु पादपातात् किशिकिशिकाशब्दमाकर्ण्य सानुक्रोश मिथ्याड-
 ष्टकस्थिति वदतो निरर्त्तते स्म ॥ ८२ ॥ रुद्रदेवस्तु श्रीविजयसेनगुरुकृतसकेत-
 वशादागतुकसाधुषु निष्ठाणेषु स्वयं प्रत्वावव्युत्सर्जनार्थं गड्वस्तथैवागारेषु किशि-
 क्रिशिकाशब्द श्रुत्वा हृष्यन् गाढतर तान् समर्थं प्रावोचत् ॥ ८३ ॥

श्री विजयसेनसुरिणा शिष्येण पाचसो हाथीओना वस्त्रांओषी पंरायेडो मूर स्वप्नमा जेयो,
 ते यात तेओए गुरने कही, त्यारे गुरए क्हुँ के, उत्तम परिवारवाळो कौंश्क अञ्जव्य मनुष्य अही आतशे ॥ ८० ॥
 एट्वाया त्या तेज दिगसे र्द्रेदेव नामे आचार्य, पाचसो साधुओं सहित आया, तेकनी उचित आगता स्वागता
 करी ॥ ८१ ॥ रात्रिण परीक्षा मोटे गुरुनी आशाथी शिष्येण स्थम्निन्न जवाना मार्गमा अगारा त्रिलेयी, अने
 तेथी ते नवा आवेवा साधुओं, ते अगाराओपर पा पद्मवाथी 'क्रिशिकिशि' यतो शब्द सांजळीने अयुक्रोशसहित
 मिथ्याट्कृत देता थका पात्रा वळवा लाग्या ॥ ८२ ॥ पत्री श्रीविजयसेन गुरए करेडा सकेतने वडो नया आवे-
 ळा साधुओ ज्यारे (कृत्रिम) नित्रा देवा लाग्या, त्यारे र्द्रेदेव पोते मातु परउवाने बाहिर गया, त्या तेवीज
 रीते अगाराओ कचरावाथी यतो 'क्रिशिकिशि' शब्द साजळीने खुशी थया थका ते अगाराओने खूय जोरथी
 कचरीने घोजवा लाग्या के ॥ ८३ ॥

अहो अहंश्चिरेतेऽपि जीवा इत्युक्ता, दृष्ट तत्प्रतिजामद्भिर्मुनिभिः, प्रजाते शु-
 रुस्तद्विग्यानुपपत्तिनि प्रत्यायय्याऽज्जब्योऽयमिति त वहिश्चकार ॥ ८४ ॥ तद्वि-
 प्या पुन सर्वं कृत्वा तपो गता दिवं, ततश्च्युत्वा ते सर्वे राजकुलेपूषन्ना राजा-
 नोऽञ्चूयन् ॥ ८५ ॥ अन्यथा ते सर्वेऽपि वसतपुरे कनकवज्रनूपतिकन्यास्वयंवरम-
 रुषे जग्मु, स च रुद्रदेवस्तदा नानाविधासु योनिषु ब्रमन् करञ्जो वञ्चूव ॥ ८६ ॥
 तं चारोपितबृहद्भारं जराजीर्णशरीर महाक्रायं कृतार्त्तनाड तत्र ते ददृशुः; तं प-
 श्यता चाविरञ्चूत्तेषा तस्योपरि करुणा, संज्ञान जातिम्मरण ॥ ८७ ॥

अहो ! अरिहोए आने पण जीव कदा ठे ! हवे आ वृत्तात जागता एवा दरेक साधुआए जायुं; पडी म-
 जाते गुरमहाराने ते रूदेवना शिष्योने सिचातना वचनोपूर्वक खातरी करामी के, ते रूदेव अजब्य ठे, एम विचारी
 तेने गन्ध बहार कर्यो ॥ ८४ ॥ अने तेना सयळा शिष्यो तप करीने देवदोकें गया, त्याच चवनि तेओ सयय राज-
 कुळ्या उत्पन्न थइ राजाओ थया ॥ ८५ ॥ एरुदहानो ते सयळा राजकुमारो वसतपुरमा कनकनन राजानी पुत्रीना
 स्वयंवर मरुपमा गया; वळी ते रूदेवनो जीव ते वरुते विवि प्रवारनी येनिओमा जमतो थको इंटरंप थयो हतो
 ॥ ८६ ॥ ते उदपर महोयो जार जरेळो हतो, तेंहु शरीर वृष्ठावस्थापी जीर्ण थयुं हलें, तथा मोडं थयुं हलु,
 अने तेथी ते दुःख जरेळो स्वर करी रळो हतो, एवी हावतमा ते उंटेने तेओए जोयो; अने जोतान ते राज-
 कुमारोने तेनापर दया उत्पन्न थइ, तथा तेओने जातिसरण झान उत्पन्न थयु ॥ ८७ ॥

तदनुसारेण विज्ञातं तरेप सोऽस्मद्गुरुः, अहो विचित्र संसारः, यत्तादृशी ज्ञानज्ञ-
 क्ष्मीमिवाप्य हृदयजावतोऽश्रद्धधानो वराकोऽयमिमामवस्था दोजे ॥ ८८ ॥ अनंतं
 च नव लप्स्यत इति कृपया विमोच्य त सर्वेपि निष्कृताः ॥ ८९ ॥ इति,
 एते चाऽज्जव्या दूरनव्या वा वह्निर्युर्वाकारधारिणोऽप्यत श्रीअर्हच्छचनश्रद्धानादिर-
 हित्वेनाऽनतजवज्जधिपातिन इत्यंतरसारा वह्निश्च सारा, इत्युक्ता द्वितीयजंगपाति-
 न कुयुक्त ॥ ९० ॥ तथा केचिद्व्यवहार्यार्थान्नरणवदत. सारा वह्निश्चाऽसारा,
 तथाहि—केपाचिदतर्हदये श्रुतमस्ति, श्रीजिनवचनसम्यक्श्रद्धानादिरूप ॥ ९१ ॥

अने तेने अनुसारे तेओए जाएणु के. आ अमारो गुरु ठे, अहो! ससार विचिन ठे, केमके तेवी रीतनी
 ज्ञानइयी पामीने एण अत-करणना नामयी तेपर श्रद्धा नही राखवायी ते विचारो आ हानत पाम्यो ठे ॥ ८८ ॥
 तथा वली पण अनता भयो पामशे, एवी रीते तेपर दया लाबिने, तथा तेने छेभारीने ते सयला राजकुमारो त्यायी
 चाहया गया ॥ ८९ ॥ इति, एवी रीतना उपर वणैवेना गुरओने अजवी अयवा दूरजवी जाणवा, तेओ महारयी
 जो के ए गुरनो आकार धारण करे ठे, एतु अदरयी श्री अरिहत मनुना वचनोपर श्रद्धा आदिक नही होवायी तेओ
 अनत एवा ससारयी समुद्रमा पमे ठे, एवी रीते अदरयी सार विनाना तथा वहारयी सारचूत एवा बीजा ज्ञाने
 अनुसरनारा उगुरुओनु स्वप्न क्यु ॥ ९० ॥ वली केट्ठाक गुरओ व्यपरीना आचूणनी पते अंदरयी सारवाला
 अने वहारयी सार विनाना हेप ठे, ते तर्ह ठे.—केट्ठाक गुरओना इदयना श्री जिनेबर मनुना वचनोमा सम्यक्
 ममाली श्रद्धा आदिकरूप ज्ञान हेप ठ ॥ ९१ ॥

तद्विगस्य पट्टजीवरङ्गापरिणामनिःउद्मवृत्तितत्प्राप्तनप्रयत्नादेर्दर्शनात् ॥ ए२ ॥ न
 पुनर्वाहि, तादृग्ज्ञानावरणकर्मोदयादिना पाठादौ श्रुतस्याऽनुद्धासात्. मापलुपसाध्या-
 दीनामिव, प्रमादतो वा तदपाठात्प्रवर्गाचार्योदीनामिव ॥ ए३ ॥ तथाहि—विशा-
 द्वाया यवो नाम राजा, तस्यांगजो गर्दन्निह्व., मुता अणुद्विका, अमाल्यो दीर्घशृष्ट-
 श्र ॥ ए४ ॥ नृपोऽन्यदा निशांलयामे प्रबुधोऽचितयत्, नून प्राग्जवे किमप्यस्यद्बु-
 त सुकृत कृत मया, तस्य प्रजावादब्धिमेखदां बुवसखन्तिज्ञ. शास्मि ॥ ए५ ॥ एषा ग-
 जादिसपन्मे, सद्देशे न दुर्चिन्नाद्यपि तस्युन सुकृत कुर्वे, यत आगामी चवोऽपि सुंदरः
 स्यादित्यादि ॥ ए६ ॥

केपकं तेना चिद्गुण उक्ताय जीवोनी रक्षानो परिणाम, निष्कण्ड आचरण, तथा तं पालयामा भयल आदिक
 तेभ्योषा देखाय डे ॥ ए२ ॥ पतु तेमनो बहुरथी ज्ञाननाम देखानो नथी, केपके तेना प्रकारा ज्ञानारणी कर्मना
 उदय आदिककने करीने सिचालना पाठ आदिप्रमा, 'मापलुप' साधु आनिस्ती फेडे उद्वस तेभ्योने यतो नथी, अथवा
 तो यत्तान कृपि आदिकनी फेडे प्रमादथी तेभ्यो शासाऽययन करता नथी ते यत्तान कृपितु उदाहरण कहे डे ॥ ए३ ॥
 निशाज्ञा नगरीमा यवनामे राजा हतो, तेने गर्दन्निह्व नामे पुत्र, अणुद्विका नामे मथान हतो ॥ ए४ ॥
 पुरु वरते रात्रिना ठेह्या पहारे जागेतो राजा चिंतनवा द्वाग्यो के, पूर्व जवे त्पेखर मे ककरु पण अद्भुत पुण्य करेयुं डे,
 अने तेना मजावथी सशुद्धी मेखदाखली आ पृथ्वीनु अन्वन्तित आङ्गाप्रकं हु गज्य करु ॥ ए५ ॥ तेमन तेथी आ
 हाथी आदिकनी सपदा मने मळेडी डे, तेम मारा देशमा उच्चाल आदिक पण पन्तो नथी, याडे फरीने पण हु पुण्य करु
 के जेथी मारो आगामी जर पण कुर्वे, इत्यादि ॥ ए६ ॥

ततः प्रात सुत राज्ये न्यस्य हिनमनुशिय च वनप्राप्तान् गुरून्तत्वा तदुपांतेऽग्रही-
 क्तत, तीव्र तपस्तप्यते, वेयावृत्त्यसत सह गुरुनिर्विहरति, परं गुरुनिर्वहूकेऽपि श्रुत
 न पठति ॥ ए७ वृद्धोऽह मम नायानि पाठ इत्यादि वृत्ते, अन्यदा दाञ्च दृष्ट्वा श्री-
 गुरुनि.सुत प्रतिबोधयितु विगाद्याया प्रहित, गुरुवच. शिरसा प्रपद्य चञ्चित ॥ ए७॥
 पथ्यचितयत् मम पाठ स्वदपोऽपि नायाति, किं पुत्रस्याऽन्येषा चोपदेश्यते, इति
 ॥ ए७ ॥ अत्रातरे स्वचित् क्षेत्रे यवधान्य चक्षयितुकाम जिया चपद्ददश खरप्रति
 क्षेत्रपाद्वेन गथैका प्रोचो ॥ १०० ॥ उहावसी पहावसी । मम चैव निरिखिलसी ॥ द्वारिखिद्यो
 ते अजिप्यात्रो जव पञ्चेसि गदहा ॥ १०१ ॥

पडी प्रदाने पुत्रे रात्रपर वेसानेने तथा तेने हितशिक्षा आनीने, यमा आपेना गुन्ने नमीने तेमनी पासे
 तेणे दीक्षा व्हीधी; पडी आकरो तप तपया चाग्या, तथा यावत्तु करवाना रसयी गु सोगे विहार कया द्याग्या, परतु
 गुग्गु धणु कया उना पाए ते शास्त्रेनो अन्यास करे नदी ॥ ए७ ॥ अने रुहे के, हु तो हवे खुबो हु, मने पाठ चमते
 नयी, पछी एरु बबते गुग्गु वाज जोडने तेना पुत्रे प्रतिबोधयाने तेने विज्ञाना नगरीए मोरुग्या, ते पाए गुरुतु वचन मधने
 चमावी त्यायी चाड्या ॥ ए७ ॥ मार्गमा विचारवा ताग्या के, मने पाठ तो जरा पाए आरफतो नयी, तो पडी पुत्रेने तथा
 नीजाओने हु शु उपदेश आपीश ? ॥ ए७ ॥ एतनामा कोरु क्षेत्रमा यम नामतु थाय चक्षुण कवानो इच्छागला तथा
 जययी चपल दृष्टिवाला एरा एक गथेना मत्ये ते क्षेत्र । रक्षके एरु नीचे प्रमाणे गाथा कही ॥ १०० ॥ हे गथेना 'तु आम
 नोने दे, तेम दोने दे, तेम मने पाए तु लुए दे, तारे अजिप्याय में आण्यो दे, के तु यवने नक्षण करयाने इच्छे दे ॥ १०१ ॥

* जगानी उमी तुम्स रागो । जव नरावमी गच्छदा ॥ इति द्वितीयपुस्तकपाठ ॥

तां श्रुत्वाऽसोषायुधं प्रातमिवाऽऽमन्यन्तं राजर्षिः । विद्यावत्ता स्मरत्तन्ने समया प्राप्तं र-
ममाणेषु शिशुषु एकेन ऋषेखररूपाऽण्डुद्विक्रोल्लिप्ता ॥ १०२ ॥ साऽन्ये. शिशु-
न्निर्गवेषयद्विर्जनं दृष्ट्वा, तावदेकेन शिशुना गायोक्ता ॥ १०३ ॥ अत्रो गया तत्रो गया
। जोइज्जनी न दीसइ ॥ अस्हे न डिछा तुस्हे न दिवा । अगडे बुद्धा अणुद्विया
॥ १०४ ॥ तामपि हर्षात् पठन् कियद्विदिनेर्विशाखा प्रातः, कुञ्जकारण्डे नि-
श्यस्यात् ॥ १०५ ॥ तत्रैतस्तनो ब्रह्मन्तमुदरं प्रत्यूचे कुञ्जकृतं—सुकुमात्रं सुकोमलं
। नृद्वयया रत्तिहिनणसीञ्जाण्या ॥ अस्ह पसाओ नत्थी जय । दीहपिठाओ
ते जय ॥ १०६ ॥

ते गाया साज्जहीने ते राजर्षि जाले अमांष हथोयार मळ्यु होय नही तम मानवा लया, तथा ते
गायाने विद्यानी पेडे स्मरण करता यका अणल चाया, एद्वामा एफ गाम्नी पामे केद्व्याक ओकराओ रमता
हता, तेमाना एके काष्टना डुकुनाण्य अणुद्विका (मोद-गोद्वी) उजाली ॥ १०२ ॥ तेने गीजा बालको शोभना
द्वान्या, एतु तेओण तेने गीडी नही, त्यार तेमाना एफ गोरुण नीने मुज्ज एफ एक गाया कही ॥ १०३ ॥ आम गद,
तेम गद, अने जेवायी एण देवतायी नयी, अमांए पण न दीडी, तयोए एण व दीडी गदं ते अणुद्विका (मोद-गोद्वी)
कोइ खानामा बुणार रही डे ॥ १०४ ॥ पडी ते गायाने एण हर्षयी नणता यका ते यसरार्षि केद्वेक दिसे
निशाखा नगरीमा गया, अने रात्रि ए त्या एक कुजारने धेर रखा ॥ १०५ ॥ त्या आम तेम जमला उंदर
प्रत्ये कचारने नीने प्रमाणे एफ गाया कही, हे मुकुमान तथा कोमल अने रात्रि तद्रक परिणामे फरनारा
एवा हे उंनर! अपारा तरफयी तेने कड्यण जय नयी, एतु दीर्घे पृष्टयी (सर्पयी) तेने जय डे ॥ १०६ ॥

एतां गाथात्रयीं कष्टपङ्क्तिमणिक्कामधेनुत्रयीमिव प्राप्ता मेने स मुनि पुन पुनः
 परावर्त्तयेते ॥ १०७ ॥ अत्रांतरे तत्र पुरे दीर्घष्टामात्येन राज्ञः स्वसाऽण्डविका
 स्वष्टहातर्षूद्धे गोपितास्ति, नूप केनाप्युपायेन निहृत्य स्वसुत राज्ये निवेद्यैना
 पाणौ कारयिष्यामीति ॥ १०८ ॥ राज्ञा जटैः शोधितापि स्वसा न द्वाब्धा, ताव-
 न्मन्त्री यवराजर्षिसागत श्रुत्वा, तपसा प्राप्तज्ञानोऽयं ज्ञावी, ज्ञानेन च ज्ञात्वा मत्स्व-
 रूप राज्ञे निवेद्यिष्यति चेत् तदा नृपः सकुञ्ज मा निग्रहीष्यतीति किमप्यनागत-
 मुपाय करोमीति ध्यात्वा निश्चयोपनृपप्राप्त ॥ १०९ ॥ पृष्टोऽनवसरगमहेतु, उद्ध मार्गयित्वा
 स्माह, व्रताद् जगन्स्ते पिताऽत्रागत्य कुञ्जकृद्गृहे स्थित, प्रातस्त्वञ्चाज्य गृहीतेति ॥ ११० ॥

एवी रीतमी ते त्रणे गाथात्रोने ते मुनि कष्टपृद्ध, चिंतामणिरत्न तथा कामधेनु सखी मानवा द्वाग्या
 तथा वारवार तेने याद करवा द्वाग्या ॥ १०७ ॥ हेवे एटनामा ते नागसा दीर्घपृष्ट नागता मत्रिण राजानी वनेन
 अणुद्विकोने पोताना घग्सा चौराग्सा पूरी राखी अे, एवा विचारथी के कोऽक उपाययने राजने मारिने तथा
 पोताना पुनेन राज्यपर येसानेने तेण्णि हे हु द्वाय कर ॥ १०८ ॥ राजण मुन्नगे मारफते वहेनेने शोधावी,
 पनृ मळी नहीं, एटद्वाभा यवराजर्षिने आवेढा साजळीने मत्रिण विचारुं के आ ऋणिने तपथी ज्ञान प्राप्त
 थयु हशे, अने ते ज्ञानथी मारु वृत्तात जाण्णिने जो ते राजने कहेशे, तो राजा मने कुडुग सहित मारी
 नाखेशे मांटे हेवे कष्टक हु पहेलेथी उपाय करु, एम विचारी ते रात्रिण राजा पासे आब्यो ॥ १०९ ॥ त्यारे राजण
 तेने अकाले आत्रवातु कारण पुरथु, पळी त्याग जांने तेणे राजने कथु केतमागे पिता दीक्षाथी पतित थयो छे तथा अहि
 आर्षीने कुजारने पर उतथा अे, अने प्रजाते तारु राज्य दाइ अेशे ॥ ११० ॥

तदाकार्यं नृप. प्रोचे, पिता चेच्छाज्यं ददाति तर्हि ज्ञाय मे, तस्यादौ सेविष्ये, भवती
 प्रोचे नैव युक्त, स्व राज्यं नार्थते, वध्य. पितापि ॥ १११ ॥ विविधयुक्तिभिस्तेन कै-
 तवभृता तदपि प्रतिपादितो नृपः पितुर्वधाय निशीथे खड्गहस्तः कुञ्जकृद्गोह गतः,
 विद्रेण पितरं वीक्षते ॥ ११२ ॥ तावद्वधार्थिणा आद्या गाथा गुणिता, तां श्रुत्वा
 चित्तित मत्पित्रा ज्ञानेन ज्ञातोऽहमितस्तातः पश्यन्, अपि च यद्ययं ज्ञानी तन्मे स्वसु.
 शुद्धिं वक्तु ॥ ११३ ॥ तावद् द्वितीया गाथा गुणिता तेन, तां श्रुत्वा जात. प्रत्ययः,
 गुणप्रशंसादि चक्रे, पुनरचिति मरुतसा येन गोपिता, तन्नाम प्रकाशयतु पिता

॥ ११४ ॥

ते सांजली राजए कहु के, जो पिता राज्य देखे, तो मारु जाणु जाणु, हु तेना चरणो सेवीश,
 तारे मत्रिए कहु अ, तेम तो योग्य नयी, पोतातु राज्य कं अणाय नई, पिताने एण मारवो जोःए ॥१११॥
 पडो ते कपडी मत्रिए नाना प्रकामनी युक्तिओधी पिताने मारी नाखगानो एण तेनी पासे स्वीकार कराव्यो,
 अने तेथी राजा मयरात्रिए हाथमा खरुग दासने पिताने मारवा माटे कुजारने घेर गयो, तथा त्या विद-
 मारी पिताने जेवा लाग्यो ॥ ११२ ॥ एद्वामा यवमृपिए पहेडी गाथा गणी, ते सांजली राजए
 विचार्यु के मारा पितए ज्ञानथी मने आम तेम जेतो जाणो लीधो अ, वळी एण जो ते ज्ञानी होशे
 तो मारी वहेननी हकीकत एण ते कहेशे ॥ ११३ ॥ एद्वामा ते मृपिए वीजी गाथा गणी, ते सांजलीने
 तेने खातरी थइ, तथा तेना गुणोती मशसा आदिक ते करवा लाग्यो, वळी तेणे विचार्यु के मारी वहेनने
 जेणे सतायेडी अ. तेतु नाम एण हवे मारा पित्ता कहेतो ठीक ॥ ११४ ॥

तावत् तृतीया गाथा परावर्तिता, ततो नग्नसदेहो हृष्टो ध्यास्मुद्घाट्यातर्गत
 ॥ ११५ ॥ पितर ज्ञानिन जिघासु स्वं निदन् मुदथुमुनि नत्वा स्वापराधप्रकटनपर
 क्लमिन्तवान्, मुनिर्मानमेवाकरोत्, तदेव हि सर्वार्थसाधनमिति ॥ ११६ ॥ ततो
 नृप स्वग्रहागतौ रात्रिशेषमतिवाद्य प्रातर्मंत्रिग्रह जट्टे शोधयित्वा श्रूमिग्रहे ज्ञ-
 गिनी लब्धा, मत्रिण देशाद्विरकासयत् ॥ ११७ ॥ ततो ज्ञानिन मुनि प्रज्ञशस,
 त च नत्वा तदुक्त र्म प्रत्यपद्यत मत्र्यादिभि पौरैश्च सह, तत स यंत्रराजर्षि-
 र्बधुवर्ग प्रतिबोध्य गुरुपाश्वे गत, प्रमाद त्यम्त्वा भुत पपाठ, तपस्तप्त्या दिव ययौ
 ॥ ११८ ॥ इति यंत्रराजर्षिकथा ॥

एतन्नामा ते मुनिर् एतीची गाथा गळी, ते साजळी तेनो सदेह दूर थवायी ते खुशी यक्षेने यरणु
 उवाची अत्र गयो ॥ ११५ ॥ तथा ज्ञानी एया पितानं मात्तानी इच्छा यस्तारा पोताना प्रारगाने निदतो
 थको हर्षता अथुओ वाधी मुनिन नमी तथा पोतानो अपराध प्रगट कृी खभाववा दाग्यो, मुनिण तो मौनज कर्तुं,
 केमके तेज सर्प अर्थाने साधनात् ३ ॥ ११६ ॥ पंडी राजा पोताने घर आर्वाले तथा वाकीनी रात्रि गात्रीने
 प्रजाते मुन्नेने मारफते पत्रीनु घर तयासायु, तो जेयरागायी पोतानो वडेन मळी, अने तेथी मत्रिने देशनिकाज
 कर्यो ॥ ११७ ॥ पंडी ते ज्ञानी मुनिनी प्रशसा करवा दाग्यो, तथा त्ने नमीने तेणु कहेटो धर्म तेणु स्वीकार्या, तमज
 मत्रि आदिकोण तथा नगरा लोकोण पण ते धर्म स्वीकार्यो; पंडी ते यमराज ऋषि वदु वर्गाने मत्रिाधीने गुरु पासे
 गया, तथा प्रमाद तजीने शास्त्रान्यास करवा टाग्या, तथा वेदं तप तपी देवजोके गया ॥ ११८ ॥ एती रीते
 यंत्रराज ऋषिनी कथा जाणवी ॥

एवमद्व्यथुतस्यापि अनुदरा कन्येत्यादिवद्विद्वक्या तदध्येतारोऽन्येपि सम्यक्क्रिया-
परा गुरुवरा वहि श्रुतसारत्वाऽज्ञावेऽप्यंत सारत्वेनाश्रितवतां शिवसीमश्रुन्नफन्नडाधि-
नो जवतीति ॥ ११ए ॥ आह परः, ननु अद्वयश्रुतस्य कथं स्वरतारकत्व, यदाग-
म—अबहुसुओ तवस्ती । विहरिकामो अजाणिजणपहं ॥ अवरारुहपयसयाई
। काजण वि जो न याणेइ ॥ १२० ॥ इत्यादि, उच्यते, बहुश्रुतगुरुपरतत्रतया
सम्यग्धर्मानुष्ठाने स्वयं प्रवर्तमानानां पराश्च प्रवर्तयतामद्व्यश्रुतानामपि स्वरतारक-
त्वमविरुद्ध ॥ १२१ ॥ तदुक्त—गुप्फारततनाण । सदहण एअ सगयेचव ॥ इतो ज
चरितीण । मासलुसार्शणनिदिठ ॥ १२२ ॥

पत्नी रीति 'उदर विनानी कथा' इत्यादिकनी पंडे अद्वयश्रुतनी पण अविद्यायं करीनि ते जणनारा
धीजाओ पण, के जेओ उत्तम क्रियामा तत्पर होय ठे, एवा उत्तम गुरुओने वहाय्थी जो के श्रुत सार-
पणानो अज्ञाव होय ठे, तोपण अद्वयधी सारणाय करीनि आश्रित ग्या श्राफर आदिकोंने ठेक मोझ पर्य-
तना शुच फलने देनाराओ थाय ठे ॥ ११ए ॥ अहो वादी शका करे ठे के, अद्वय श्रुतयाजने पोताने
तथा परने तारतापण केम सन्ने ? केमके आगममा कयं ठे के, अबहुश्रुत एवो तपस्वी मुनि जिनमार्गने
जाणया विना विहार करवानां इच्छा करतो यतो संकहां गेय अपराय करीनि पण तेओने जाणी शकतो
नथी ॥ १२० ॥ इत्यादि, हुने ते वादीने उचर आपे ठे के, बहुश्रुत एवा गुप्फा तागमा रह्निने पोते
उत्तम प्रकाली धर्म क्रियामा प्रवृत्तं ठे, तेमज अन्योंने पण प्रतीने ठे, माटे एरी रीतना अद्वयश्रुतोंने पण पोताने अने परने पण ता-
वापण विसो विनालु ठे, अर्थान् तेओ पोताने अने परने पण तारी शके ठे ॥ १२१ ॥ कथुं ठे के, गुरु परतत्र ज्ञान अने
तेनी सदहणा, ए योग्य ठे, अने तेद्वयामोटेज मापनुप आदिक मुनिओने चारिपणुं कइलु ठे ॥ १२२ ॥

किंच, अग्नीअस्स इमं कह । गुरुकुत्रवासाउ कहतत्रो गीओ ॥ गीआणाकरणा-
ओ । कहमेअ नाणओ चेव ॥ १२३ ॥ अधोणोधोव्वसया । तस्साणाए जहेव
दाधेइ ॥ जीमंयि हु कतार । नवकतार इअअग्नीओ ॥ १२४ ॥ इत्यादि, केचिपुनर्द-
पाअरणमदतवहिश्च सारा, हृदयवहिश्च सम्यक्शुतधारित्वात्, रत्नोपमनिरुपमाति-
शयविविधत्रन्धिसमृद्धिजि. समधिकतर दीप्तिमृत्वाच्च ॥ १२५ ॥ अत्र श्रीवज्रस्वा-
भ्यादयो दृष्टाता स्पष्टा एवेति एते चतुर्यजगता. श्रीगुरुव. श्रीजिशासनप्रज्ञावनेकप-
रा., स्वरयोस्तारणसमर्था, प्रवहणवदाश्रयणीया नवाब्धि तरीतुकामे ॥ १२६ ॥

बडी अर्गतादेने चारिपणुं शायी हांय ? तो के गुरु कुळमां वसवायी होय, अने तेथी गीतार्थ-
णु केम होय ? तो के त्या शास्त्रो साज्जवायी होय, अने ते शास्त्रातु साज्जु शायी होय ? तो के ज्ञानयी
होय ॥ १२३ ॥ केम अत्र मनुष्य पांगळाना सग्ययी तेनी आझा ममाणे वर्तवावने कराने जयकर मनने
पण ओळगी जाय अं, तेम अर्गोतार्थ पण (गीतार्थ गुरना सग्य।) आ ससारपी वनने ओळगी जाय
ते ॥ १२४ ॥ इत्याद, हवे केठनाक गुरुआ राजाना आअपरनी पेंते अदरयी अने बहारयी पण सारवाळा
होय अं, केमके तेओ हृदयमा अने वहारयी पण उत्तम श्रुतेने धरनास होय अं, तेमज रत्न सरखी निर-
पम अतिगयोवाळा नाना प्रफारनी द्वन्धिरप्य समुदअपारुं करीने अधिक कांतेवाळा होय अं ॥ १२५ ॥
अर्ही श्री वज्रव्यामी आदिरेना दृष्टता स्पष्टज ते ए उपर वर्णवेना चोया चांगमाळा गुरुओ श्री जिन-
शापनी मनावनामान तत्पर रहेता अं, तेम पोतान अने पने तास्वामा समर्थ अं, घटे जेअने आ ससारखी
समुद्र तरवाना इच्छा होय, तेअण बहाणनी पंड तेवा गुरुअने आदर करतो ॥ १२६ ॥

एतद्वाचने तृतीयजगत्सगिनोऽपि, आद्यजगद्ध्यगुरुवस्तु त्याज्या एवेति इत्युक्त्वा श्रीगुरु-
 गता श्रुतमाश्रित्य चतुर्जंगी ॥ १२७ ॥ अथ क्रियामाश्रित्य श्राद्धानां चतुर्जंगी दर्शयति,
 श्रुतमाश्रित्य तु तेषां चतुर्जंगी न घटते, तेषां विशेषतः अनधिकारित्वात् ॥ १२८ ॥
 तदुक्तं—अदृष्यवयणमायाणु—गयं सुप्तं इह हृत्त्रो पढइ ॥ उक्तेसेण ऽज्जीवणि तु ।
 जइवयकउज्जोगो ॥ १२९ ॥ इति, तत्र केचिच्छूद्धाः क्रियामाश्रित्य श्रुतमाश्रित्य
 दत्तवर्द्धिश्चाऽसारा, तथाहि—क्रिया खल्वत्र श्राद्धविध्यगुणान व्यवहारशुद्धिजनपूजा-
 गुरुमतिपत्तिसुपात्रदानहिसादिविरतिसामायिसावश्यकारुपरुपा ॥ १३० ॥

ए चोया जागावाळा गुरुचो वटाच न मळे तो त्रिजा जागावाळाङ्गानि पण स्वीकार्या, परंतु पहेळा
 ने जागावाळा गुरुत्रोने तो तजवान जो. ए, एवी रीते श्रुतने आश्रिते गुरुत्रो संबंधी चोत्तगो कही ॥ १२७ ॥
 हवे क्रियाने आश्रिते श्रावकांनी चोत्तंगी देखावे ठे, श्रुतने आश्रिते तो ते श्रोने। चोत्तगो घटा शकती नयी,
 केमके ते श्रोने विरुपे श्रुतु अधिकार'पणु नयी ॥ १२८ ॥ कतु ठे क, सावुत्तमा करेव ठे उद्धम जेणे एवो
 श्रावक जयनयी आठ श्रवचन मतानं अनुसरारु श्रुत जणे, अने उच्छुटी तो उर्जवणी आश्रयन सुधी श्रुत
 जणे ॥ १२९ ॥ इति, तेमा केव्हाक श्रावको तो क्रियाने आश्रिते च. नाजना सादृपानी पडे अदरशी अने
 वहारथा पण सार विनाना होय ठे; ते कहे ठे—अहो क्रिया एतन श्रावकांनी विधिपूर्वक क्रिया. जेवो के
 व्यवहारशुद्धि, जिनपूजा, गुरुसेवा, सुपात्रदान, हिसा आदिकनी किरति, सामायिक तथा आवश्यक आदिकरूप
 जाणवी ॥ १३० ॥

सा क्रिया केषांचिदतर्ह्येत्यहचिरूपेण नास्ति, बहिश्च करणरूपेणापि नास्ति, केवलश्रा-
 ष्छुन्नोत्पन्नत्वादिना श्रावणनाममात्रधारित्वमस्ति ॥ १३१ ॥ ते प्रथममंगपातिन. श्रा-
 ष्छा ज्ञेया, एते च र्ममगोचराया रुचेरत्यन्तवेन सम्यक्त्वादिविकल्पा मयमगुणस्थान-
 वर्त्तिनो गृहस्त्रीधनापत्यादिप्रतिबन्धा. कुटुंबाद्यर्थं विविधारंजपरा इह दु खिन स्यु-
 रपयशोभाजन च ॥ १३२ ॥ प्रेत्य चैकेंद्रियादियु गता. सुचिरं च व द्वाभ्यति धनप्रिय-
 श्रेष्ठ्यादिवत्, उक्तं च—पुत्ताइसु पन्निवन्धा । अन्नाणपमायसगया जीवा ॥ उष्प-
 ज्जति धणुष्पिय—यण्णुव्वेगिदिएसु बहु ॥ १३३ ॥

ते क्रिया केन्द्राक श्रवकोना हृदयमा रचिन्त्ये नयी होती, तम गृहस्थयी एण रुक्वस्वये क्रिया नयी होती,
 केन श्रावकना पुनमा उत्पन्न यवा आदिक करीने नामगारी श्रावकणु होय डे ॥ १३० ॥ मया प्रकृताना
 श्रावकोने पेहेसा चागावाळा जाणया, वडी तेओ र्म समधि र्चचिना एण अन्नने करीने समकीत आन्विकयी रहित
 यया यका मयम गुण ठाणामा वत डे, तथा घर, स्त्री, मन तथा सतान आदिकना मन युक्त यया यया कुटुंब
 आदिक मोटे नानामकारना आरजोमा पनीने आ लोक्का दु खी तथा अपजशना चाजनरूप थाय डे ॥ १३१ ॥
 वडी परनोक्तना पण एकद्रियादिकर्ण उत्पन्न यहेने धनप्रिय क्षेत्र आदिकनी पेडे यणा काल मुवि सत्साराया जने
 डे कु डे के—पुन आदिकना यधनमा पनेना तथा अज्ञान अने प्रमादने प्राप्त थयेना जीवो यणु करीने धन
 प्रिय चणिकनी पेडे एकेंद्रिय आदिकोर्णा उत्पन्न थाय डे ॥ १३३ ॥

इति श्रीनवनावनायाः ; केचित् पुनर्हिंसाऽसत्यस्तेन्याऽब्रह्माद्यविरता ब्रह्मयाऽनङ्गयेयाऽ-
 पेनादिविवेकविकला इहापि ज्ञातिपंक्तिवह्निःकण्ठधराल्याद्विभ्रं। प्रियाद्यंगञ्चेदकुमर-
 णादि प्राप्नुवन्ति ॥१३४॥ प्रेत्य नरकादि च नीमादिवत्, तथा च नवनावनायामेव,—
 पाणिवहेण नीमो । कुण्णिमाहारेण कुजरनरिवो ॥ आरेचेहि य अयत्तो । नरयर्दण
 उदाहरणा ॥ १३५ ॥ न च श्राद्धनाममात्रातोषा साधारता कापि, नाममात्रस्याऽर्थोऽ
 साधकत्वात्, तत्त्वे च नौमादीना मगल्लादिनाम्ना प्रसिद्धानां मगलायार्थसाधकत्वापत्तेः

॥ १३६ ॥

एष श्री नवनावनामा कथुं डे. १३१ केऽकारु तो हिंसा, अमत्य, चोरी, तथा अत्रत्यआदिकृषी नहो
 म्रिति पामेडा, अने नद्वय, अचद्वय पय, अयेय आदिसुना चिक विनाना मनुजो अर्हा ण ज्ञाति उहार यवु,
 धन तथा राज्य आदिकुलो नाश, इन्द्रिय आदिक अगोलो डेद, तथा कुपोन आदिकुने प्राप्त थाय डे ॥ १३४ ॥
 तथा परलोकमा ण नीम आदिकनी पें नरक आदिक पामे डे, यत्तो नवनावनामान कथुं डे के, नीमादिसाथी
 नीम, अचद्वय चोवनयी कुजर राजा, तथा आरजोयी अचल रके गयो, ष्ठी रिति ए नरक गतिना उदाहरणो
 जण्णव ॥ १३५ ॥ १३१ शकत्वा नाम मानयी तेऽयोमा कऽ साधारणणु हेतु नयी, केमके नाम मान कऽ कार्य साथी
 शकन्तु नयी, अने जो नाम मानयी कार्य सथात होय तो, मगऽ आदिक नामथी मसिद्ध णया नेम आदि-
 रने मंगल आदिक कार्य साधयानी प्रापति (प्राप्ति) थाय ॥ १३६ ॥

न च तद्वद्व्ययते, उक्त च—शोभि मगद्वनाम विष्टिविषये नघ्रा कणानां द्वये । वृद्धिः
 शीतद्विकेति तीव्रपिटके राज्ञः पर्वणि ॥ मिष्टत्व द्रवणे विषे च मधुरं जामिः सपत्न्या
 पुनः । पात्रत्व च पणगनासु रुचिर नाम्ना परं नार्यतः ॥ १३७ ॥ इत्युक्ता श्रुपाका-
 नरणानुसारिणः श्राद्धा ॥ केचित् पुनर्गणिकात्ररणवत् क्रियामाश्रित्यातर्हद्वयेऽसारा
 क्रियापरिणामाद्यनावात् ॥ १३८ ॥ बहिस्तु सारा अहिकज्ञात्रपूजाद्यर्थ कचिच्छर्मा-
 र्थिन स्वपरकार्यमितसाधयिषया कयचिद्वन्नयितु वा सम्यक्श्राद्धानुष्ठाननिर्भित्तिनिपुण-
 त्वात् ॥ १३९ ॥

अने तेम तो देखातु नयी, मधु डे के, चोमपां मगल नाम रुहेवाय डे, *विष्टिना विषयमा नद्रा
 रुहेवाय डे, धान्योनो ज्ञाय होते डते वृद्धि कहेवाय डे, तीत्र फोरना होतं डते शीतला कहेवाय डे, होळीनो
 राजा कहेवाय डे, व्युणने मधु कहेवाय डे, जेते मधुर रुहेवाय डे, तथा शोकने गहेन कहे डे, वेद्याओने
 पात्रणु कहे डे, ए सगळ नामया मनोद्वर डे, पण ते प्रमाणे अर्धसाधक नथी ॥ १३७ ॥ एती रते
 चानलना आनूपण सरखा थारसो मगा ॥ गळी वेद्याको तो वेद्यना आच्छूषणनी पडे क्रियाने आश्रने
 त्दयमां सार निनाना होय डे, केमके तेओने क्रियानी परिणति आदिकनो अनाव होय डे ॥ १३८ ॥
 वठी तेओ गहारयी तो सारगळ देवाय डे, केमके आ लोक सर्पध दान तथा पुजा आदिक माटे
 कोशक भर्मायी मतुल्यने पोतागा अने पना तयने साश्वानी इच्छयी कोइ पण रीति उगवा माटे सम्यक् प्रकारे
 श्रावमनी क्रिया करवापां तेओ निपुण होय डे ॥ १३९ ॥

* मधुरी या वचना अर्थमां पण प्रवर्ते डे.

दृष्टताश्च सप्रति उ यमानुजावतोऽनुपद सुद्वभा धर्मवकास्तादृशा बहवोऽपीति, जिन-
 दासश्रेष्ठपुरगापहारकरद्वन्द्वचारिचक्रप्रद्योतनृप्रप्रहिताभयकुमारमंत्रिविधनार्थकपटश्राविकी-
 भूतगणिकाशब्दसुतापाणिप्रहार्थकपटश्राच्छीभूतबुधदासवचरकृद्वद्वृद्धकविक्राचकशाठ्या-
 दयो वा दृष्टता यथाहर्मत्र वाच्या ॥ १४० ॥ एतेऽपि चाऽभव्या दूरभव्या अपि च
 स्युः । गतिर्येषां प्रथमगुणस्यानिनामिव यथाह वाच्या, धर्मानुष्ठानविषयश्रद्धानाद्यभा-
 वेन सम्यक्वररहितत्वात् ॥ १४१ ॥ काव जने प्रख्याप्य कुव्यवहारपरजोहृद्विश्वासधा-
 तादिपरत्वेन श्रीजिनधर्मगोचरामुद्राजनां बुर्वाणानां च तेया केयांचित्तु इरतभवन्नमणा-

द्यपि ॥ १४३ ॥

अर्हा हृदिमां दुःखम काळवा अनुज्ञावधी तेवा दृष्टतो तो पण्णे पण्णे मळी शेके डे, केमके
 तेवा धर्मजो बहु देखाय डे, जिनदास इठनो घोणे हुरनार द्रव्यचारो, चक्रप्रद्योते राजाए मोकलेढी
 तथा अचरगुमार मंत्रिने वाधवा माटे वपटी श्राविका थयेढी वेडगा, श्रावकनी पुत्री परएवा माटे कपटी
 श्रावक थयेड बुद्धदास, तथा वचर कूळना दुद्धकने वेचनार श्रावक आदिकना दृष्टतो यथायोग्य रते अर्हा
 वाची देवा ॥ १४० ॥ ए उर वएदंडा श्रावको अन्नदय तथा दूरज्य पण हेए शेके डे । तथा
 तेओनी गती पण प्रथम गुणैवावाळाओनी पेडे यथायोग्य रीते जाएवी, केमके धर्मक्रियाना विषयवाळी
 श्रद्धा आदिकना अन्नावे करीते तेओने समहीत रहितणणं होय डे ॥ १४१ ॥ वळी लोकामा (पोतानुं)
 श्रावकणु प्रसिद्ध करीते खोडो व्यवहार, परचो श्रेह, तथा विश्वासघात आदिकमां तत्पर यडेने श्री जिन-
 धर्मनी हिदना करनारा एना तेओ केट्ठारोने दुस्त नवोमा जममा यादिकणणं पण थाय डे ॥ १४३ ॥

तदुक्त—अन्नं च नागणाश्मु । अर्धोहिवीयं दृविज नियमेण ॥ ततो भवपरिवुद्धी । ता
हुजा उज्जुववहारी ॥ १४३ ॥ केचित् पुनरत श्रद्धानाद्यभावेऽपि बहि क्रियान्यासा-
दिना प्रत्य बोधिसपि लभते. ससाष्टादिज्ञेय सिद्धि वा, वरदत्तश्रेष्ठिनो दासीपुत्रवत्,
तथाहि—॥ १४४ ॥ अत्रैव चरते कौशाड्या नरसिंहो राजा, कनकवती राज्ञी
॥ १४५ ॥ तत्रान्यदाऽत्रविज्ञानी वरदत्तसाधुश्चाने प्रापत्, त वदितु नगरद्वीके
गते मुनिना धर्मदेशना प्रारब्धा ॥ १४६ ॥ धर्मकथामन्ये मुनिनाऽक्रमात् हसि-
त्, तत दृष्ट्वा जाताश्चर्या सन्ध्या मुनि व्यङ्गयन् ॥ १४७ ॥

कथं ते के—धर्ममार्गधी लग्नो अज्यास करवा आदिकथो निन्द्य करीनि अर्धोधिवीन प्राप्त थाय डे,
तथा तेथी समास्ती दृष्टि थाय डे, माटे ऋतुव्यवहारी चतु ॥ १४३ ॥ कळी केड्याको तो हृदयमां श्रद्धा आदिकवने
अजाप हेते छेते पण वहाग्यी क्रियाना अज्यास आदिकवने करीने परचवभा बोधिबीजने पण प्राप्त थाय डे,
अथवा सात आठ नवे मोक्ष पापे डे, (जेनी पेंडे ? तोके) वरदत्त श्रेष्ठना दासी पुननी पेंडे, ते उदाहरण
म्हे डे—॥ १४४ ॥ आज चरतडेना कौशापी नगरीमा नरसिंह नामे राजा हतो, तथा तेने वनमक्ती नामे स्त्री
हती ॥ १४५ ॥ हवे एकदहानो त्यां अत्रविज्ञानाळा कडच नामे साठु उद्यानमा पथार्या, तेने नादवाने ज्यारे नग-
रना बोचो आया, लोरे मुनिए धर्मदेशना देवा मानी ॥ १४६ ॥ वर्षे कथा कहेतां थका वरुने मुनि अरु-
सात हसना लाग्या, ते जोडे सनासने आश्चर्य पावी मुनिने पृठवा लाग्या के, ॥ १४७ ॥

जगत्तु अन्येऽपि सत्पुरुषाः कारणं विना न हसति, गगाद्विगहिता जगदशा-
स्तु कथं तद्विना हसन्तीति हास्यहेतुमादिश ॥ १४८ ॥ साधुरुच्ये जज्ञाः शृ-
णुत, एतस्य निवन्म्य शिन्वरे समद्विकां पश्यत, एषा क्रोधान्मां पादान्यां घात-
यितुमिच्छति, प्रागन्वरेरात ॥ १४९ ॥ तत् श्रुत्वा सकौतुकाः सन्यास्तत्प्राग्जवं
पृष्ठन्ति, साधुः समद्विकया. प्रतिबोधार्थं तमाख्याति, समद्विकापि हृदयगतार्थक-
यनाद्विस्मिता शृणोति ॥ १५० ॥ तथाहि—अत्रैव जरते कनकपुरे धन्यो ना-
म्ना श्राद्धः, तस्य चार्या सुन्दरी, सा दुःशीला अन्यासक्ता वर्त्तते ॥ १५१ ॥

अन्यदोषपतितोच्ये, सुन्दरि अद्यप्रभृति त्वर्याश्वं नायास्यामि, यतस्त्वद्वचनमुर्विजिम्बि ॥ १५२ ॥

हे जगत्तु ! बीजा पण सत्पुरुषों विना रागों हसता नहीं, त्पारे रागआदिकषी रहित एवा आप
सरवा तो कारणविना केम हसे ? माटे आपना हास्यलु वरण भ्रमोने कहों ? ॥ १४८ ॥ त्पारे साधुए क्युं के,
हे जज्ञो ! तमो सांजळो ? आ लीवजाना वृक्षपर दांचे केव्ही समळीने तमो सुओ ? ते समळी पूर्वजवनां वरं करीने
क्रोधयी मने पोताना पणोयी मारचाने इच्छे ठे ॥ १४९ ॥ ते सांजळीने सजासदेने कौतुक पचायी तेनो पूर्वज
पृष्ठवा हाण्या, त्पारे साधु पण समळीने प्रतिकोत्रवा माटे ते उपांत कहंवा लाग्या तथा समळी पण पोताना हृदयमां रहेदो
अर्थ कहेवायी विसय पामती यकी साजळवा लागी ॥ १५० ॥ ते कहे ठे—आज जरादेअमां कनकपुर नापना
नगरमां धन्य नामे श्रावक हतो, तेने सुन्दरी नामे बी हती, ते सराव आचरणबाळी होवायी अन्य पुरुषमां आसक्त
हती ॥ १५१ ॥ एक दहाने तेणीना चारे तेणीने क्युं के, हे सुन्दरि ! आचोयी मांदिने तारी पासे पुं आचोश
नहीं; केफके तारा चरतारयी हुं मर बु ॥ १५२ ॥

तत् श्रुत्वा मृश जातडखा तमवादीत्, प्रियतम मैव ब्रूया., स्तोकादिनमध्ये तव
 निःशब्दत्व करिष्ये ॥ १५३ ॥ अन्यदा दुग्धमध्ये त्रिपुं क्लिप्त, जर्तुं परिवेषणा-
 र्थं तदानयनाय यावत् सा गृहमध्ये याति, तावद् युजगेन दद्या पतिता, सद्य.
 प्राणैर्मुक्ता च ॥ १५४ ॥ धन्य श्राद्धो भोजनाडुस्थितः, हा किमेतदितिचाण-
 न् ता गतप्राणा वीदयाऽज्ञातच्चरित्र स्नेहाद् व्यपन्नत ॥ १५५ ॥ सा मृत्वा शा-
 र्दूलोऽमृत, तद्विराग्याद् धन्यश्राद्धेन दीक्षा गृहीता ॥ १५६ ॥ अन्यदा वने कायो-
 त्सर्गे स्थित, विधिवशात् तदुन्नार्याजीवो व्याघ्रस्तत्रागतस्त ऋषि दृश प्राग्भव-
 वेरात् व्यापादयामास ॥ १५७ ॥

ते साज्जलीने अत्यत दु खी य,ने तेने ते कहेवा लागी के, हे प्रियतम! तमो एम न व्हो? खोना दिवसमा
 तमारु ते शय दु दूर करीश ॥ १५३ ॥ पडी एक दहाना तेणीए दुधमा गेर नाख्यु, ऊने नर्चारेने परसवा माटे
 ते खेवोने जेडनामा परमा जायडे, तेड्यामा सयें दखवाची ते पनी गद्, ऊने तुस्त भाएरहित थइ ॥ १५४ ॥
 ते जोइ धन्य श्रावक भोजन करतो पक्वो दळ्यो, तथा हा! आशु ययु! एम बोडलो थको तेणने मृत्यु पामेद्वी
 जोइने, तेणीना च रिवयी अजाण्यो होवायी ते विनाप करावा हाग्यो ॥ १५५ ॥ पडी ते खी मृत्यु पामने सिह
 थइ, अने धन्य श्रावके वेसापयी दीक्षा र्त्वी ॥ १५६ ॥ एक वल्ले ते वनमा काउसगं याने रथो, एटनामां
 देवयोगे तेनी खीना जीवरूप सिह त्यां आव्यो, तथा पूर्वचवला वैरधी ते मुनिने जोइ तेने मारी नाख्यो
 ॥ १५७ ॥

स धन्यऋषिर्भूत्वा अच्युते कश्यपे प्रापत्, सिंहस्तु चतुर्ये नरके अच्युतकष्टपाह्युत्वा
 पुनः स चंपाया दत्तश्राद्धस्य जिनमती जार्या, तयोः पुत्रोऽचूत् वरदत्तनामा ॥
 ॥ १५० ॥ स आत्राड्यात् सविन्नो यौवने विशिष्य सम्यस्वभूधर्मोद्यतो दानी
 विवेकी मधुरनायी शातो विनीतश्चाऽचूत् ॥ १५१ ॥ प्राग्जवजार्याजीवस्तु नरका-
 ह्युत्वा जव आत्वा तस्यैव श्रेष्ठिनो गृहे दासीपुत्रोऽचूत्, स दुष्टो वंचनाशीलो दासी-
 पुत्रेति नाम्ना ख्यानोऽचूत् ॥ १६० ॥ क्रमतः पितरि स्वर्गते वरदत्तो गृहस्वामी बभूव,
 स प्राग्जवस्नेहादासीपुत्र सहोदरवत् पश्यति, ब्रह्मादि दत्ते ॥ १६१ ॥ दासीपुत्रस्तु
 वरदत्त शत्रुवत् पश्यति, तथापि तर्जुजनायं किञ्चित् धर्मं कुरुते चाव विनैव
 ॥ १६२ ॥

एवी रीति ते धन्य मुनि मृत्यु पार्मिने अच्युत देवमोकना गयो, तथा सिंह चोथी नरके गयो, - पत्नी अच्यु-
 त देवमोकथी चवीन गती ते मुनिनो जौव चरा नगराभा दत्त श्रावकली जि-मती नामती खीनी कुक्षिण वरदत्त
 नामे पुत्रह्ये थयो ॥ १५० ॥ ते उक्त वात्यागायीज वरदत्तान् हतो तथा यौवन अस्याया विशेष प्रसारे सम्यक्त्वमूल
 श्रावक धर्ममा उद्यमवत् थइ दाना, विंकी, मधुरनापी, शात तथा विनयवान् थयो ॥ १५१ ॥ बळी पूर्व जैवनी
 खीनो जीव नरकथी चवीने तथा समार जर्माने तेज गेठने येर दासी पुत्र थयो; ते दुष्ट उगारो दासी पुत्रना नामथी
 मसिद्ध थयो ॥ १६० ॥ अतुरुपे पिता देवमोके गये उते वरदत्त यानो पानीकु थयो, तथा पूर्व जवला स्नेहथी
 ते दासी पुत्रने सग चार तराके जावा द्वागयो, तथा तेने वैव आदिक आपवा द्वागयो ॥ १६१ ॥ पंतु दासी पुत्र तो
 तेने वांशुनी पंते जेतो हतो, तोपण तेने खुश साववा भारे जावविनाज कर्क कर्क थमे ते कालो हतो ॥ १६२ ॥

तस्य धर्मगुणं दृष्ट्वा तुष्टः श्रेष्टीति चिंतयति, ममैवाता जिनधर्मानुरागी, परं कर्मवशात्तो
 चकुर्वे उत्पन्नः श्रीजिनधर्मं च न कुर्वे प्रधानं ॥ १६३ ॥ यतः—‘न कुर्वे द्रव्यं पहाणं’
 ततो ममान्यो ज्ञाता नाऽच्युतः, एष च धर्मतो ज्ञाता, तस्मान्मृत्युपतिसमझमेन ज्ञातरं
 स्थापयामीति ॥ १६४ ॥ तथा तेन कृते दासीपुत्रो लोकैः श्रेष्टिञ्जातेति बहुमानितः,
 ततः श्रेष्टी विश्वासात्सर्वं सत्यापयति, तथापि स प्राग्जन्मवैरात् श्रेष्टिनो विश्वासार्यं
 बाह्यधर्मपरोऽपि श्रेष्टिनं दत्तुं विविधोपायांश्चितयति ॥ १६५ ॥ अन्यथा तादृशपुट विपं
 पत्रमध्ये द्वाित्वा तद्वीटक तेन शयनसमये श्रेष्टिनोऽपिंत, श्रेष्टी तु तदप्यणात् प्राग् चतु-
 र्विधाहार प्रत्याख्यातवान् ॥ १६६ ॥

तेनो धर्मगुणं मोक्षेने खुशी धर्मज्ञो श्रेष्ठ एव विचारलो हतो के, मासे जाऽजन यर्पनो अतुरागी ठे, परंतु
 कर्मना वशापी नीच कुळमां उत्पन्न थयो ठे, तथापि भी जैन धर्ममां कंइ कुळने मथानपणु नल्लु नथी ॥ १६३ ॥
 कथु ठे के ‘अह्रीं कुळ मथान नथी’ माटे मासे वीजे जाइ नथी, अने आ मासे मं जाइ ठे, माटे रागानी समझ
 हु तेने मारा जाइ तरीके स्थापन कर ॥ १६४ ॥ पडी तेणे तेम कर्माधी आ शेठनो जाऽ ठे, मम जोणी ते
 दासी पुत्रने लोकें थणु मान आप्पावा लाग्या, वळी शेठ एण विवास द्यावी तेने सर्वं कर आप्पावा लाग्या, तो
 एण पूर्वजन्मना वैरथी, जोके ते शेठना विश्वास माटे उपरथी धर्ममां तपर थयो, परंतु मनमा शेठने मास्वा माटे माना
 प्रकाराना उपायो चिंतववा लाग्यो ॥ १६५ ॥ एक वेळत तादृशपुट जेर पानमा नाग्येति, तेतु धीरु शयन वळते हेणे
 शेठने आप्पा, शेठे तो ते आप्पावे हेहेहानि नरविहारतु पंचव्याण कर्तुं हतु ॥ १६६ ॥

तथापि सङ्गपरोधात्तत्र गृहीत्वोपधानस्याधोऽमुच्यते, अथ विधिवशात्तानि पञ्चाणि
 चूसौ पतितानि प्रातर्दृष्ट्वा वरदत्तश्रेष्ठिनो चार्या गृहीत्वा गृहस्यांगणे यावदागात्
 तावदासीपुत्रं दृष्ट्वा, देवर तांबूल एहाणेति ॥ १६७ ॥ सोऽपि गृहीत्वा तद-
 न्द्रायत, सहसा सुवि पतितः, स्वामिञ्जोहीतीव प्राणोस्स्यकः, आर्त्थयानान्मृत्वा-
 समद्विकैषा जडे, तत्स्वरूप दृष्ट्वा जातजन्मवैराग्यो वरदत्तश्रेष्ठी निज विरा सुद्धे-
 त्रे उन्वा प्रव्रज्यामग्रहीत् ॥ १६८ ॥ सोऽहं, एतत्स्वचरित्रं शुल्माकं मयोक्तं, एवं
 नवे रागधेषविद्वसित ज्ञात्वा यथ्युक्त तदाच्चिद्यज्ञं, इति श्रुत्वा केऽपि सर्वविरतिं
 देशधिरत्यादि च परे यथाशक्ति प्रत्यपद्यंत ॥ १६९ ॥

तोपण तेना आग्रहयो तेणे ते शीघ्र वेदने ओसीका नीचे मय्यु, ह्ये दंग्येणे ते पान जमीनपर पनी
 गर्वा, मनाते वरदत्त शेटनी ह्रीए जोवाथी ते वेदने नेद्वामा पला आंगणा आगळ ते आवे दे, तेद्वामा दासी-
 पुत्रने जोइ कहेवा सागी के, हे देवर ! आ तांबूल ग्रहण करो ? ॥ १६७ ॥ तेणे पण ते वेदने म्हायु के तुरत जमी-
 नपर पञ्चो ; स्वामी श्रेही हेवाथीज जाणे तुरत जीवथी युक्त थयो, तथा आर्त्थयानथी मरीने आ समळीरूपे ते
 उत्पन्न थयो दे, ते वृत्तान जोद वरदत्त शेटने ससारथी रैतल्य थचथी पोताह धन शुक मांग वापरी तेणे दीका
 बीथी, ॥ १६८ ॥ अने तेज आ हुं पोते डु, एवी रीते माफ पोताह चरित्र मं तपोने वयु, एवी रीते आ
 ससार्या रागधेषतु वेदित्त जाणीने ने युक्त होय, तेने आदर करो ? एव साजळीने केद्वामाकोए सर्वविरतिपणु तथा
 बीजामोए शक्ति मुक्त देशक्तिपणुं आदिक अगीकार करुं ॥ १६९ ॥

‘सा शकुन्त्येपि जातजातिस्मरणात् सर्वं तत् साक्षाद् दृष्ट्वा प्रतिबुद्धा, तरुशिखरान्मुने-
 र्भ्रत सहसा पतित्वा निज दुश्चरितं क्षमयामास ॥ १७० ॥ ततो मुनिवचनादनशन
 प्रपद्य नमस्कारस्मृतिपरा देवेषूपपन्नैति; एव जावरहितोऽपि कर्पायकच्छुषितोऽपि जीवो
 ज्वल्यतोऽपि यदि धर्मं करोति, तदाप्यचिराद् बोधिं लभते कश्चिदिति जावरहितधर्म-
 करणे दासीपुत्रस्य सवधः ॥ १७१ ॥ अत एव च पूर्वस्माद् जगादस्य किञ्चिच्छिशुश्च-
 त्, एवमग्रेऽपि ज्ञेयः, इत्युक्त्वा द्वितीयजगगामिनः श्लाघा ॥ १७२ ॥ तथा केचिन्नांघ्रा
 महैज्याजरणवदत्त सारा हृदये सम्यग् धर्मानुष्ठानविषयाया रुचे सत्त्वात्, बहिः
 पुनरसारा धर्मवीर्यातरयोदयादिना नरकादौ वञ्चायुःकल्पादिना वा स्पृह्यहिंसादिवि-
 तिप्रभृतिधर्मानुष्ठाने प्रवृत्त्यनुह्यासात् ॥ १७३ ॥

पत्नी ते सम्पत्नी पण जातिस्मरणं ज्ञानं यथाथी ते सयत्तु साक्षात् जोऽने प्रतियोग्यपत्नी, तथा वृद्धनी दोष
 परथी तुस्तं मुनिं पासे पद्मेने पोतातु दुश्चरितं समायत्ता द्यागी ॥ १७० ॥ पत्नी मुनिना वचनधी अनशनं करीने
 नवकारना स्मरणं पूर्वकं देवोभा उत्पन्नं यद्, एवी रीतिं जाय विनातो तथा कर्पायोधी महीनं थयेन्नो पण कोऽक
 नीध, जो द्रव्यधी पण धर्मं करे, तो पण तुस्तं बोधिबीजं पासे जे, तेद्व्या माटे जापरहितं धर्मं करायामा दासीपुत्रो
 सयधं बूढो ॥ १७१ ॥ अने तेयीजं पूर्वना जागाथी आ जागतु कर्क विरुप शुश्रूषणु छे, तथा आगळ पण
 एवीज रीते आणतु, एवी रीते बीजा जांगने अतुसरनारा श्रावको ब्या ॥ १७२ ॥ बळी कंठ्याक श्रावको शहु-
 मारना आचूपाणी पेंडे अदरधी सारंवाळा होय जे, केमके तेअना हृदयमा सम्यक् प्रकारे धर्मेक्रिया करयाना
 विषयबळी रुचे होय जे, परतु बहुरधी सारंविना होय जे, केमके धर्मं बीर्यना अतरायना उदय आ देके करीने
 अथवा नरक आ देवमां आयु थायवा आदिकधी स्पून हिंसा आदिकनी विरति आदिक धर्मं क्रियायां प्रवृत्ति करवानो
 तेअने लज्जास यतो नयी ॥ १७३ ॥

क्रियाविषयतीव्ररुचिर्विशेषात् स्वापत्यानां प्रवित्रजिषूणां निषेध न करोमि, अन्यो-
ऽपि य. कश्चित् प्रव्रजति तस्य प्रव्रजोत्सव स्वयं कारयामि, तत्स्वजनानामाजन्मा-
वधिनिराहादचित्तां च करोमीत्यादि प्रतिपत्तिमान, सर्वाः स्वसुताः श्रीनिमिषांश्च
प्रव्राजितपूर्वा स्वयमष्टादशसहस्रसाधुषु कृतिकर्मकृत श्रीकृष्णनरेडः, श्रीश्रेणिकन्द-
पादयश्च निर्दर्शनमत्रेति ॥ १७४ ॥ एते च तृतीयचंगश्राच्छा. क्रियाविरहितत्वेन च-
हृद्बोधैकेषु क्रियापरश्राच्छवन्महिमान न दधतीति बहिरसाराः, अंत सारतया तु पू-
र्वमवच्छाद्युपोऽवांतसम्यग्त्वा वा वैमानिकवर्जमायुर्न बध्नत्येव, यदागमः ॥ १७५ ॥—
सम्मदिह्यो जीवो । गच्छइ निअमा विमाणवासीसु ॥ जइ न विगयसरुमत्तो । अहवा
न चच्छाउअो नरए ॥ १७६ ॥

क्रिया सवधि तीर्रचिविशेषयी दीक्षा देवानि इच्छावाला पोत्राना सतानेने हु निषेध करतो नयी, तेम
बीजो पण जे कोइ दीक्षा बीये, तेनो दीक्षा महोत्सव हु पोते करु बु, तेमज तेना कुटुबीओना निर्यह
आदिकनी चिन्ता ठेक जीवित पर्यंत हु करु बु, इत्यादिक अगीकार करनारा, तेमज पोताना सयला पुत्रोने श्रीनिमि-
नाय मरु पासे दीक्षा अर्पवने पोते अठार हजार साधुओने बदन करनारा श्रीकृष्ण राजा, तथा श्रीश्रेणिकराजा
आदिकना दृष्टतो अहाँ जाणवा ॥ १७४ ॥ एवी रीतिना ए बीजा जागवाला श्रवको क्रियाविनाना होवायी बहा
रना बोधेया क्रियामं तत्पर एवा श्रवकनी पेते महिमा धारण करता नयी, मोटे बहारयी सारविनाना ठे, तेमज
अदरयी सारणायें करीने एवं आयु वांयाविना समकीतिने नहीं वमता थका अयवा वैमानिक शिवायतु
आयु बोधेज ठे, आगम्यां पण कछु ठे के—॥ १७५ ॥ सम्यग् दृष्टी जीव निश्रयें करीने विमानवासीओमां जाय ठे,
वगारे ? तौके जो तेव सम्यक्त्वं न गयु होय तो, अथवा नरकसु आयु न बौधुं होय तो ॥ १७६ ॥

बळायुष्का अध्वायुष्काश्चेत्युजयेऽपि चेते प्रायः संख्यातजन्ममध्ये सिद्धिगामिनः स्युः,
 केचित्तु तृतीयजन्मेऽपीति ॥ १७७ ॥ अथ केचिन्मृपाजरणवदंतर्वेद्विश्च सारा, हृदये
 रुचिरूपेण बहि. रत्नोपमसातिशयसम्यस्त्वमृदाद्वादशवत्प्रतिमाविसरनुष्ठानविशेषे-
 रधिकतर दीप्तिभृत्त्वेन च, आनन्दकामदेवादिश्राद्धवत् ॥ १७८ ॥ एते चेद्वापि नृपाय-
 धिजनमध्ये महत्त्वप्रशसायवार्थं प्रत्य - द्वादशकट्यावधिसुखसंपदमवाप्नुयुः, जघन्यस्त-
 स्तृतीयजन्मे ससाष्टजन्मवैत्कर्षत. सिद्धिसुखजाजश्च नवेयुरित्युक्तास्तुर्यजंगश्राद्धा ॥ १७९ ॥
 एषां च चतुर्णामपि जगाना मियो विशेष प्रतिजग नावित एवेति, एव क्रियामा-
 श्रित्य जाविता श्राद्धाना चतुर्जगी ॥ १८० ॥

वंधिष्ठां आयुवाळा अने नही बंधिष्ठां आयुवाळा एम बंधे जेदेवाळा तेड्यां प्रायें वरनि सख्याता जन्महि
 मोक्षगामी थाय छे, तथा वेद्व्याक तां श्रीजे जन्मे पण मोक्षे जाय छे ॥ १७७ ॥ वळी केवळाको राजाना आयुष-
 एनी फेडे अदरबी अने बहारबी पण सारवाळा छे, हृदयमां रुचिरूपे करिनि तथा बहारबी रत्नसरवा अति-
 शयवाळा संपकीत मूल वायवतो तथा पद्मिमा आटिकनी उत्तम क्रिया विशेषे करिनि आनन्द तथा कामदेव आदिक
 थावकोनी फेडे अधिक दीप्तिवाळा होय छे ॥ १७८ ॥ वळी तेड्यो अर्हो पण ठेक राजा सुधिना लोकामां मोटाइ
 तथा मशसा आदिक पार्थीने पद्मोक्तमां बार देवलोक्त सुधिनी सुख सपदा मेळवे छे, तेपज जघन्यपी श्रीजे जन्मे
 अथवा उत्कृष्टे सात आयु जन्मोम मोक्षसुखने जजनगर थाय छे, एवी रीते चोथा जांगाना श्रावको कथा ॥ १७९ ॥
 ए चारे जांगानो पारस्पर नद दरेक जांगे देवबन्धोज छे; एवी रीते क्रियाने आश्रीने श्रावकोनी चोजगी
 कही ॥ १८० ॥

अथ धर्मविषया संव शुद्धिमिदृश्य ज्ञाव्यते, तथाहि—॥ १८१ ॥ वर्मस्यात शु-
द्धिं किञ्च सर्वज्ञप्रणीतत्वादिधर्मप्रनर्त्तकाना सम्यग् जीवाऽजीवादितत्वस्याऽनेधारण-
पुरस्सरस्यज्ञेतरसकञ्जजीवरङ्गापरिणामसर्वशक्तित्त्विप्रयप्रयत्नशांतिमादिवाजिवसत्यशौ-
चत्रहृगाकिचन्यादिगुणमयत्न च ॥ १८२ ॥ वहि शुद्धिं पुनर्वहिसुखजनरजनशीतातप-
वर्पादिज्ञेशसहननानावनवासादिकष्टपष्टाष्टमादितपस्त्रिकयादि ॥ १८३ ॥ ततश्च
श्रुपाकाजरणवत् कश्चन धर्मोऽत शुद्धेरज्ञावादेतरसरो, वहि शुद्धेरज्ञावाद् वहिर-
प्यमारश्च, यथा वेदादिविहितो यज्ञस्नानधेनुकन्यादानादिधर्म ॥ १८४ ॥

इये धर्म सत्रधि शुद्धिने आश्रीते तत्र चोदगी देवाने दे, ते कहे छे ॥ १८१ ॥ धर्मनी अदृश्यी
शुद्धि, पदमे सर्वज्ञ प्रभुए र्वेत्ता धर्मने प्रनर्त्तनारात्रोलु सम्यक् प्रकारे जीव अजीव आदिक तत्त्वोनां अत्र-
धारण पूर्वकं स्युन तथा वादर एवा सर्वे जवोना रक्षणो परिणाम, तथा ते मांटे पौतानी सर्व शक्तियी प्रयत्न,
शांति, कामळता, सरज्ञता, सत्य, पवित्रपण, नमस्कर्य तथा पस्त्रिहरहितपण इत्यादिक गुणमयपणु होय छे, अर्थात्
उपर र्वेत्ता गुणो तेगा होय छे ॥ १८२ ॥ वहारनी शुद्धि एद्वे वाच लोकौ जेयी खुश थाय, दाह, तमसा,
तथा दरसार आदिकना-रूपने सहन कर्यां, त्रिवि प्रकारना वनवास आदिक कष्ट, तेमज, त्रुष्ट, अष्टम आदिक-
नी तपस्यानी त्रिया आदिक रूप जाणवी ॥ १८३ ॥ हने तेथी कोइक धर्म चामावना आर्चुपणनी पेंडे अदर
शुद्ध न होवाथी अदृश्यी असार छे, तेम वहारथी पण शुद्धिनो अज्ञाव होवाथी वहारथी पण सारविनाने
होय छे, जंमके वेद आदिर्तोभां कहेहो यज्ञ, स्नान, गौदान तथा कन्यादान आदिकरूप धर्म तेमो छे ॥ १८४ ॥

स खड्वसर्वज्ञप्रणीतशास्त्रमूढत्वेन हिंसादिमयत्वेन महारंजहेतुत्वेन चांत-शुद्धेरजा-
 वादनरसार ॥ १८५ ॥ एतच्चास्यामेव गाथायां प्राक् श्रीगुरुचतुर्भ्यां क्षेशतो ना-
 नित, तद् धर्मप्रणेतृणा ब्रह्ममहेश्वरादिदेवाना विश्वामित्रादिमहर्षीणा चाऽसर्वज्ञत्व
 पुनस्तथाविधद्वांत्वाद्यन्नाज्ञानशापादिप्रवृत्तीज्जियाऽज्ञानापराधतद्धेतुकानर्थप्राप्त्यादिना
 सुग्यक्तमेव ॥ १८६ ॥ तदुक्त—ब्रह्मा ब्रह्मशिरा हरिर्दृशि सरूक् व्यावृत्तशिरसो
 हर । सूर्षोऽप्युद्विखितोऽनन्नोऽप्यखिन्नशुक् सोम- कन्नकाकित ॥ स्वर्नायोऽपि विस
 रञ्ज खड्गु वपु सस्यैरुपस्थै कृत. । सन्मार्गस्खलनाद् भवति विपद प्राय प्रभू-
 णामपि ॥ १८७ ॥

केमेके त धर्म सर्वज्ञे नहीं रचेना एवा शास्त्रोक्तपी मूढबलो डे, तेमज हिंसायपणायें करीने, अने महान
 आरतपणप करीने अदर शुक् न होवायी अदरथी सारनिनो डे ॥ १८५ ॥ वळी ते सन्धि व्याख्यान आज
 गाथायां पुर श्रीगुरुनी चतुर्भगीमा क्षेशथी करे ३ डे, वळी एवी रीतनो धर्म चनावनारा ब्रह्म तथा महर्षिव
 आदिकु देवोतु तथा विश्वामित्र आदिक महर्षिओतु असर्वज्ञपणु प्रगटज डे, केमेके तेओमा तेची रीतनो इमा
 आदिकनो अतार, शाप आदिकनी प्रवृत्ति, इदिओने नहीं जीतपणु, अज्ञानथी अपराध थवो, तथा ते निमित्ते
 अनर्थनी प्राप्ति आदिकु तेअने थपेनीज डे ॥ १८६ ॥ वपु डे के—ब्रह्मातु पस्तक डेदासु छे, हरिनी आत्ममा
 रोग थयो डे महर्षिओतु निग डेदासु डे, सूर्षनी त्वचा तलेक्वमा आत्रो डे, अगि पण सर्वनकी थयो डे, चद्र
 कनकी थयो डे, तेमज इद्र पण शरीरमा रहनी योनिओरने करीने असस्पद शरीरबलो थयो डे, गाटे एवी
 रीते उत्तम मार्गची स्पष्टता पामवाय। समनेने पण भायें करीने आपनओ थाय डे ॥ १८७ ॥

अतस्तदुक्तस्य धर्मस्य कथं नामात्-शुद्धि, नापि बहि, बाह्यस्यापि विशेषतप. ऋष्टु-
 दानादेस्तत्राऽदर्शनात् ॥ १८८ ॥ अपिच, संवत्सरेण यस्यापं । कैवर्त्तस्येह जायते ॥
 एकादेन तदाप्नोति । अपृतजज्ञसग्रही ॥ १८९ ॥ अस्त गते दिवानात्रे । आपो रु-
 धिरमुच्यते ॥ तत्कैरेव ससृष्टा । आपो याति पवित्रताम् ॥ १९० ॥ इत्याद्युम्त्वा
 पुनरगद्वितजज्ञस्नान रात्रिजो जनादि च धर्मत्वेन समाचरता, यज्ञाद्विपु नाकृष्टतया
 प्रकृतशगादिवध च कुर्वता, गुणधेनुस्वर्णधेनुचक्रदग्दुःखिकापापघटादिदानानि प्रतीच्छ-
 ता गृहस्थेभ्योऽपि नि शूक्तयाऽधिकारजवता च छिजन्मनां स धर्मं प्रत्युत व-
 दिर्मुंखजनेष्वपि निदास्पदमित्यतोऽपि बहिरस्सर इति ॥ १९१ ॥

माटे ते श्रोत्रे कहेवा धर्मनी प्रदरथी शुद्धि ते क्यायीज होय? बळी ते धर्मनी बहारथी एण शुद्धि
 देलती नवी, केमके चाण एउ शिंप ककारनु तप तथा कष्ट क्रिया आदिक तेभा जणाती नगी ॥ १८८ ॥ बळी
 एण, अही मन्त्रीपाने एक थं जेउनु पाप थाय ठे, तेउनु पाप अणगन जत वापसाने एक दिग्गमां थाय ठ
 ॥ १८९ ॥ बळी सूर्य अस्त पामते ठे, जत रधिरसमान गणाप ठे, तथा पगी तेनाज किरणोथी स्थगित थोउनु
 जत पवित्र थाय ठे ॥ १९० ॥ इत्यादिक कहेने बळी एप वणु के धर्म निमित्ते अणगन जनथी स्नान, तथा
 रात्रि नेजन करवाभा (दोष नवी) माटे एवी रीतनु आचरण करता, तेमज यज्ञ आदिकेमां निर्दोषणे मगट रीते
 वकरा आदिकोनी हिंसा करता, तेमज गोलनी गाप, सुवर्णनी गाप, बळती गाभर तथा पापना घना आदिकतु
 दान ग्रहण करता, अने गृहस्थोथी एण निर्दोषणे अधिक आगन करता एसा ते बाल्यहोतो त धर्म, उज्जो नाग
 जोकोमां एण निर्दोने पात्र थाय ठे, माटे तेवी एण ते धर्म यहारथी सारविनातो ठे ॥ १९१ ॥

एव नास्तिकादिधर्मोऽपि, तस्य द्विधाप्यसारता सुव्यक्तैव, बौद्धाना धर्मोऽप्यत्रैव जगेश्वतरति, तत्र पात्रपतितमासादेरपि कष्ट्यत्वात्, तप कष्टादेर्निषेधाच्च ॥१९॥ तथाच तन्मत—मृच्छी शय्या प्रातरुत्थाय पेया । नक्त मध्ये पानक चापराहे ॥ आङ्गाखरु शर्करा चार्धरात्रे । मोक्षश्चात्ते शाम्यपुत्रेण दृष्ट. ॥ १९३ ॥ ततस्तस्यापि बहिरंतरसारता सुबोधैव, एवमन्येऽपि द्रवदानादयः, पत्रजातीया सर्वे वर्मा अत्रैवातर्जवतीत्युक्त प्रथमो जंग. ॥ १९४ ॥ गतिश्चेत्तर्धर्मजाजा प्रायो नरकादि, तथा चोक्त तद्यथैरपि—वृद्धं त्रित्वा पशून् हत्वा । कृत्वा रुधिरकईम ॥ यद्येव गप्यन्ते स्वर्गं । नरके केन गम्यते ॥ १९५ ॥

एही रीते नास्तिक आदिजनो धर्म पण तेवोज जाणयो, वंमके तंतु जंने रीति असारपणु भणउज जे, मणी बौढोनो धर्म पण तेज चागामा उतररे जे, वंमके तेसा पाने पकेवु मासात्तिक पण कःपनीक कहु जे, तम तप कष्टान्तिनो निषेध करेवो जे ॥ १९२ ॥ ते बौढोनो मतमा कहु जे के—होमळ शय्या, तथा मज्जाने उडाने मज्जानु पान कहु, म गान्हे चोजन करु, पाटने पहारे पाहु पान करु तथा अर्ध गणिए द्राऊ, खारु अने सासग मारी, अने तेम कर्यायी छेवटे मोऊ मळे जे, एम शायपुत्रे जंयेरु छे ॥ १९३ ॥ माटे ते धर्मतु पण महारयी अने अट्टरयी असारपणु सुखे जणाय तेवुज जे, एही रीते बीजा पण दानम आदिमोने जाणया, एही रीत्ता सयज मर्मेनो आयन चागामा समवेश थाय जे, एही रीति पेहेवो चाणो मयो ॥ १९४ ॥ बळी ते धर्मवाळाओनी गनि शयें कराने नरक आदिकमा थाय छे, तेज मतयाळाओए पण कहु जे के—टङ्कने उडाने, पशुअने लण्णिनि तथा अधिनो कीचरु करीने जो स्वर्गमा जगनु होय, तो पट्टी नरके रीण जंशं ? ॥ १९५ ॥

इत्यादि, केषांचित्पदपङ्क्तिव्यतरादिकेति ॥ १ ए६ ॥ कश्चिद्धर्मं पुनर्गणिकाग्रणव-
दतरसरो वहिस्तुसार, यथा तापसादीनां धर्मं, यत सम्यग्जीवादिस्वरूपाऽनन्ति-
ज्ञत्वेन जीवरक्षाप्रकारमजानतां ॥ १ ए७ ॥ नि-शिन तत्परिणामाद्यप्यस्पृशता स्व-
दृषापरत्रेऽपि शापादि प्रयच्छतामनतकायकंदमूलाशेयाद्वफद्वाद्याहारिणा पञ्जीवनि-
कायोपमईप्रवृत्ताना तापसादीना धर्मस्य नात शुद्धि कापि ॥ १ ए८ ॥ वहि शु-
द्धिस्तु किंचिदस्ति, मुग्धजनरंजकस्य वनत्रासदृक्त्वरूपरिधानकित्तप-कष्टानुष्ठानादे-
मदृक्षावात्, एतस्माद्धर्मतो गतिरुत्कर्षतो ज्योतिरुदेवादिषु ॥ १ ए९ ॥

इत्यादि, यही तेमाना के-ज्ञातने रुद्राच अथ्य रुद्रिवाली व्यतर आदिकनी गति प्राप्त थाय ते ॥ १ ए६ ॥
यही मोक्षक धर्म तो वेदयाना आचरणनी पडे अदृग्थी सागनिनो अने रहाग्थी साग्वालो होय ठे, जेम तापम
आदिकनो धर्म, जेमके तेओ सम्यक् प्रकारे जीव आदिकना स्वरूपे नही जाणता होवाची जीव रूढाना मका-
रथी अज्ञानी होय ठे ॥ १ ए७ ॥ तेमज विशेष प्रकारे ते जीव रूढाना परिणाम आदिकने पण तेओ गप्थी रस्ता
रथी, यही म्बव्य अपराध होते अते पण तेओ साप आदिक आपे ठे, अननकाय, रुद्रमूल, शेवाह नथा फद्व
आदिकनो आहार से ठे, उकाय जीवेलु उपमर्दन करे ठे, मोडे तेम तापस आदिकनो धर्मने अदृग्थी रुद्र पण
शुद्धि होनी नथी ॥ १ ए८ ॥ पलु बहारथी रुद्रक तेमा शुद्धि होय ठे, जेमके मुग्ध होको जेथी खुशी घाय, तेवा
मनवाम, रूढोनी ज्ञानना वृत्ती पहेरवा तथा कंदक तपस्व कष्टकारी मिया आदिक तेमा देग्वाय ठे, एथी रीतना
धर्मथी उत्कृष्टी गति ज्योतिके देव आदिसेमा थाय ठे ॥ १ ए९ ॥

यदागमः—‘तावसिया जोइसिआ चरगपरिवायवज्जोगोजा’एवजातीयोऽन्योऽपि ध-
र्मोऽत्र जगे ज्ञेय इति छिन्नीयो जग ॥ ३०० ॥ अपरो धर्मश्च महेभ्याञ्जरणव-
दत्त सारो वह्निश्चाऽऽसार . यथा अक्षितसम्यग्दृष्टधर्मं, तस्य सम्यग्देवयुद्धधर्मश्रुत्वा-
नतदारानपणपरिणामपापनीरुत्वादिद्वङ्गाणया अत शुद्धे सत्त्वेनात सारत्वात् ॥३०१॥
स्थलवधाद्यविरतितप कटानु’टानादिरहितत्वाभ्या वह्निसारत्वाच्च, सत्यकिविद्याधरा-
देरिव, एतच्छर्मापराधकाश्च नियमाद्धैसानिकदेवगतिवर्जमायुर्न वध्नति, यदागमः—
‘सम्मदिही जीवो, विमाणवज्ज न वथाए आउ’ इत्युक्तस्तृतीयो धर्मः ॥ ३०३ ॥

आगममा पण कथु ॐ रु—‘तापसो ज्योतिषी तथा चरुपरिजक्तो त्रयन्कोक सुधि जाय डे’ वळी ग्या
मकार्त्तो वीजो पण कोऽ धर्म, आज जगामा जणवो, एवी रीते वीजे जगो कळो ॥ ३०० ॥ वळी कोरु
धर्म शाहुकारना आउपणनी पेउ अदरयी सारवाळो अने वहायी सारविनालो होय डे, जेग अत्रिरिति सम्यग्
दृष्टिनो धर्म, केपके तेमा सम्यग् देगुरु अन धर्मर श्रुत्वा, तथा तेना आराधना परिणामना पायोयी नवैपणु
इत्यादिक वरुणनाळी अदरनी शुद्धि होययी, ते अदरयी सारवृत डे ॥ ३०१ ॥ तथा स्यूनहिंसा आदिकनी
अक्षिति तथा तपरुप कष्ट क्रिया आदिना रहितपणयी ते सत्यकिविद्याधर आदिकनी पेउे वहायी असार डे,
वळी ते धर्मना आराधको निधययी वैमानिक देवगति शिगयनु आयु बोधता नयी, आगमपां पण कथु टुके—
सम्यग् दृष्टी जीव वैमानिक शिगयनु आयु चधनो नयी, एनी रीते वीजा मकार्त्तो धर्म कळो ॥ ३०३ ॥

अथ कश्चिद्धर्मोऽतर्नाहिश्च सारः, पृथ्वीपत्यात्तरणवत्, यथा जैनः सर्वविरतिधर्मः, स हि यथोक्तांतःशुद्धिबहिःशुद्धिमत्त्वेन छिधापि सार एव ॥ २०३ ॥ एतद्ब्रह्मवना सुबोधैवेति न प्रतन्यते, अस्माच्च धर्माज्जघन्यतः सौधर्मे, उत्कर्षतः सर्वार्थसिद्धे सिद्धौ च गतिर्जीवानामिति ॥ २०४ ॥ देशविरतिधर्मोऽप्यत्रैवाऽवतारणीयः, अतः शुद्धिबहिःशुद्धिज्ञाधना देशतोऽत्रापि वाच्या, अतो धर्माऽत्कर्षतो छादंशे कल्पे. जघन्यतः सौधर्मे च गतिः, दृष्टांता यथाहं स्वयं वाच्या, इति धर्मविषया शुद्धिमधिकृत्योक्ता चतुर्नंगी ॥ २०५ ॥

बळी कोडकं धर्म तो अदरुषी अने बहाराथी एम बने प्रकारे सारवाळो होए ठे, जेम सर्व विरतिरूप जैन धर्म, ते यथोक्त रीते अदरुषी अने बहाराथी पण शुद्धिवाळो होवारी बने रीते सारवाळो ठे ॥ २०३ ॥ तेनी जावना सुखे समजाय तेवीज ठे, माटे तेनो विस्तार करता नयी, आ धर्मथी जग्न्यपणे सार्धर्म देवदोक्कमा, तथा उच्छृष्टी सर्वार्थसिद्धिमा तथा मोइमा जीतोनी गति थाय ठे ॥ २०४ ॥ देशविरतिरूप धर्मने पण आ जागामाज उतासां, तथा तेमा पण देशथी अदरुनी शुद्धिनी तथा बहाराथी शुद्धिनी जावना जाणी देवी, तेमज आ देश विरतिरूप धर्मथी उच्छृष्टी वारमादेवदोक्कमा तथा जघन्यथी सार्धर्म देवदोक्कमा गति जाणनी, तथा दृष्टतो योग्यता पूर्वक पोतानी मेळज जाणी होवा. एवी रीते धर्म संयधि शुद्धिने आश्रिने चोचंगी कही ॥ २०५ ॥

अथ सामान्यतो जीवाना धर्मगुणमधिकृत्य चतुर्जगी, तथाहि—केचिज्जीवा श्रमपा-
काचरणवद्धर्मतोऽतर्नहिश्चाऽसाराः, हृदये परिणामतो वहिश्च क्रियातो धर्मोऽज्ञावा-
त् ॥ १०६ ॥ कावसोकरिकाद्विवत् नरकादिगामिनश्चेते ज्ञेयाः ॥ १०७ ॥
अन्ये पुनर्गुणिकाचरणवदत्सारा वहिश्च सारा हृदये धर्मपरिणामस्याऽज्ञावाद्
वहिस्रताः क्रयासमाचरणाल्च, छादशत्रयीयतिवेषोदायिनृपप्रधकसाधुवत् ॥ १०८ ॥
विश्राय्यतासिद्धद्वैपकवच्च, एते च केचिदिहाऽप्यज्यर्थाज्ञान स्युस्तदुच्यवदेव,
प्रेत्य च नरकादिगामिनो ज्ञेयाः ॥ १०९ ॥ केचिपुनरनतिक्रुद्धमनसः क्रियाऽन्यासा-
दिना प्रेत्य बोधिमपि लज्जते, तत आसन्नसिद्धिका अपि जयन्ति, निदर्शन प्राग्वत्
॥ ११० ॥

हृदये सामान्यधी जीवोना धर्मगुणेन आश्रिते चोत्तरी वदे दे—केटवाक जीवो चानानना आनृपणनी
पेडे भिधी -दरत्रने नहार एम वने प्रकारे सारविनाना होय डे, मेमके तेओना हन्यमा परिणामरूपे तथा वहारथी
रियारूपे र्भितो अत्ताम होय डे ॥ १०६ ॥ तथा तेओने राजसंकरिकादिमनी पेडे नरक आदियमा जनारा
जाणया ॥ १०७ ॥ रठी वीजा रेन्नाक जीवो वेडयाना आनृपणनी पेडे अदरथी सारविनाना तथा नहारथी
सारनात्रा होय डे केमके तेओना हृदयमा धर्म परिणाम होतो नथी, परतु वहारथी तेसगधि रिया आचरे डे,
(कोनी पड? लोके) नार रपा सुधि साधुनो वेप धरनारा उदायी गजने मारनार साधुनी पेडे, ॥ १०८ ॥ तथा
रागमानी वन्चे रहेनार नृन्साधुनी पेडे; रठी तेओ रनेनी पेडे तेम वेडनाको आ लोसपा पण अनर्धना
पात्रप थाय डे, तथा पत्रोकमा पण तेओने नरक आदियमा गमन करनारा जाणया ॥ १०९ ॥ वली रेन्नाको
अतिक्रुद्ध मनवाला न होराथी रियाना अचयास आदिकथी परन्तमा बोधिजीने पण मास थाय डे. अने तेथी
नजदीक सिद्धिवाला पण थाय डे, अर्हा दृष्टत पूर्वनी पेडेज गाली वेम ॥ ११० ॥

वरदत्तश्रेष्ठिदासीपुत्रादयः, केचित्तु तद्भजेऽपि सम्यग् धर्ममपि दाजते, कृष्णककुमार
वत्, नगरिणीतनागिनाध्यानपरब्रातृचवदेवोपरोधवशाद्व्यवहारकर्मवत्त-
वञ्चेति छितीयो जंगः ॥ २११ ॥ अपरे पुनर्महेभ्यान्नरणवदतः सारा, हृदये ध-
र्मपरिणामवत्त्वात् वदन्नजमहर्षिसेवकमृगवत्, बहिस्त्वसाराः, धर्मक्रियारहितत्वेन, त-
था चागमः—सुई च दाक्षु सख च। वीरित्र्य पुण इहहं । बहवे रोअमाणवि
। नोअणं पन्निवज्जाए ॥ २१२ ॥ एते चासन्नसिद्धिका. स्यु, प्राय क्रियानुष्ठा-
नं विना नवतरणाऽसिद्धेः ॥ यदुक्तं—जाणतो विहु तरिणं । काश्यजोग न जुंजई जो-
उं ॥ सो बुद्ध सोएणं । एवं नाणी चरणहीणो ॥ २१३ ॥

वदत्त शंठना दासीपुत्र आदिकना दृष्टतो जाणवा. कळी केट्ठाको तो ते चवमा पण सम्यग् धर्मेने पण पांमे
डे, (कोनी पेते तोके) कृष्णक कुमारी पेते तथा नवी परेण्ढी नागीना नामनी स्त्रीना ध्यानमा तत्पर रहेडा तथा
पेताना नाइ जवदेवना आग्रहना वशाथी पण्णा वणं सुधि द्रव्य क्षिगने वनरा जवदत्तनी पेते, एवी रीते बीजो
जागे जाणवो ॥ २११ ॥ कळी रीजा केट्ठाक जीयो शाहुकारना आचूणणी पेते अंदरथी साखाळा होय डे,
केमके तेओना हट्यमा वदन्नद्र महर्षिना सेवक मृगनी पेते धर्मेने परिणाम होय डे, तथा धर्म क्रियाथी रहित होवाथी
बहारथी सारविनाना होय डे, आगममां पण कथु डे के—धर्म-सन्धि तथा श्रद्धा तो मळवी सहेडी डे, पंतु
ते मटे वीर्य फोरवतु दुर्दान डे, केमके पण्णाओने धर्म संंधि रुचि तो थाय डे, परतु ते पन्निवजता नथी, पद्वे
ते धर्म मुजप क्रिया करी शकता नथी ॥ २१२ ॥ एवी रीतना उपर वण्णिवेडा जीवो नजडीक मोक्षगामी होय
डे, केमके मायें करिने क्रियाना अदुष्टानविना ससार तरी शकतो नथी ॥ कळुं डे के—तरवाने जाणतो 'एवो पण
मनुष्य जो कायिकयोगने न जोरुं, अर्थात् जो पेताना हाथ पण हलाववरूप क्रिया न करे, तो ते बुद्धे डे, एवी
रीतेन चारित्र विनानो ज्ञानी पण जाणवो ॥ २१३ ॥

इति तृतीयो जग ॥ अन्ये पुनर्नृपाचरणवद् बहिरतश्च सारा, यथा देशविरता
 श्रीकुमारपादाढ्य, सर्वविरता श्रीवीरप्राच्यजवनन्दनव्यादयश्च, एते च तत्रैव जवे तृ-
 तीयादिजनेषु वा सिद्धिगामिन इति चलुथों जगः ॥ २१४ ॥ एव गुरुश्रावकधर्मजीवग-
 ते पृथग् जगचतुष्टयेऽस्मिन् ॥ यतश्चमल्यच्छितयेषु चेतो । निवेश्य जावारिजयश्रिये
 ज्ञा ॥ २१५ ॥

॥ इति तपागच्छे श्रीमुनिसुदरसूरिविरचिते श्रीउपदेशरत्नाकरे श्रीगुरुपरीक्षाधिकारे
 पचदशस्तरग समाप्तः ॥

एवी रीति त्रीजो जागो जाणवो ॥ क्लो कंट्याक त्रीवो तो राजाना आत्रपणनी पेठे महारथी अने अद्रथी
 एण सारवाय होय ठे, जेप देशविरतिथारी श्रीगुमारपाल राजा आदिको, तथा सर्वविरति एव श्री वीरपञ्चुना
 पूर्व जचवाल नदन रूपि आदिको, क्ली तेओ तेज जंवं अथवा त्रीजा आदिक जवोपा मोरुगामी होय ठे, एवो
 रीति चोयो जागो जाणवो ॥ २१४ ॥ एवी रीते गुह, श्रावक, र्म, तथा जोने आश्रीने कहेवा एवा आ प्रयक-
 चत चारे जगिओमाथी ठेह्ला वेपा मन गवीने, हे वक्तिं' तयो जावशयुओने नीत्वानी झट्ठर्मा मोटे प्रयन
 करो ॥ २१५ ॥

॥ एवी रीते श्रीतपाच्छमां श्रीमुनिसुदरसूरिजीए रवेला श्रीउपदेशरत्नाकर नामना प्रथमां श्रीगुरुपरीक्षाना
 अधिवाप्या पनरपो तरग समाप्त थयो ॥ श्रीरस्तु ॥

इति पंचदशस्तरंगः समाप्तः

अथ षोडशस्तरंगः

अथ करनोपमया श्रीचतुर्नगीमाह—मूढम्—सोवागवेसगिह्वद—रायकरंनोवमा
चउह गुरुणो ॥ मुअचरणार्द्धि—जहुत्तर असाराय साराय ॥ ? ॥

हवे करनीयानी उपमावने करीने चतुर्नगी कहे ठे:-मूढनो अर्थ-चाफान, वेइया, गृहपति तथा राजाना
करनीयानी उपमावाळा श्रुत तथा चारित्र आदिकें करीने उषरोत्तर सारविनाना तथा सारवाळा एम चार मकारना
गुरुओ होय ने ॥ ? ॥

व्याख्या—श्रुतचरणादिनि-
 रसद्भिः सातिशयैश्च हेतुतैर्यथोत्तरं असारा साराश्चेति जगद्वयेन चतुर्ना-
 गीसूचनादसारतमा असारा, सारा सारतमाश्च जवंतीत्युक्तिसदंक. ॥ ३ ॥ तत्र श्रुत-
 मर्हेत्प्रणीतागम, चरण पचमहाभ्रतादि, तथा चागम.—व्य (ए) समाधम्म
 (१०) सयस (१७) । वेद्मवचं (१०) च वज्रयुत्तिओ (ए) ॥ नाणाइतिं
 (३) तत्र (१२) । कोहनिगहाइ (४) चरण मेअं ॥ ३ ॥ आदिशब्दात्करणा-
 दिप्रह; श्रीसूरिविशेषगुणातिशयद्वाब्धिप्रभृतिप्रहश्च, तत्र करणं पिरुविशुद्धादि,
 यदागम. ॥ ४ ॥

व्याख्या—चांमद्वा आदिकोना करंभीयाओनी डे उपमा जेओने एवा चार प्रकारना गुरुओ होय डे,
 अडता तथा उता अने अतिहायोवाळा हेतुरूप एवा श्रुतज्ञान तथा चारित्र आदिकोवने करीने उत्तरोत्तर
 सारविनाना तथा सारवाळा एम पे जागाओमने करीने चोजनीना सूचनयी थारे सारविनाना तथा सारविनाना
 अने सारवाळा तथा वधारे सारवाळा गुरओ होय डे, एवो संघ डे ॥ ३ ॥ त्या श्रुत पट्टे श्रीअरिहत प्रभु-
 ए मरूपेणु आगम, तथा चारित्र पट्टे पचमहानतो, दश प्रकारनो श्रमणधर्म, सत्तर जेदे सयस, दश प्रकारनुं वैया-
 वच्च, नव ब्रह्मचर्यनी गुप्तिओ, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, गार जेदे तप, तथा क्रोध आदिक चार कपायोनो निग्रह ए चरण
 सित्तेरीरूप चारित्र डे ॥ ३ ॥ आदि शब्द यकी करण आदिकने पण ग्रहण करवा; तेमज आर्थो सबधि विशेष
 गुणो अतिवायो तथा द्वन्धि आदिकोनो पण संग्रह करवो, तेमां करण पट्टे पिमविशुद्धि आदिक, आगममा
 पण क्यु छे कै—॥ ४ ॥

पिन्विसेही (४) समिई (५) जावण (१३) पन्निना (१३) य इन्द्रियनिरो-
 हो (५) ॥ पन्निनेहण (२५) गुत्तीओ (३) । अज्जिगहा (४) चैव क-
 रणतु ॥ ५ ॥ श्रीसूरिविशेषगुणा प्रतिरूपत्वादय, तदुक्त—पन्निरुवो तेअस्सी जु-
 गप्पहाण (१) अपरिस्साविण (२) ॥ ६ ॥ अतिशया. पुनः सार्धयोजनछयादौ
 दुर्घ्निकारुमहरत्वादय; विद्यामत्रचूर्णौदिप्रयोगजन्मानो वा वशीभूतदेवतादिजनिता
 वा चमत्कारविशेषा ॥ ७ ॥ लब्धयस्तु क्रीरालत्रादय कफविशुण्णमज्ञामर्षोपध्यादयो-
 ऽवधिज्ञानादयश्चेति ॥ ८ ॥ अथैतद्ज्ञाव्यते—यथा श्रुपाकरुश्रुर्मपरिकर्मोपकरणवर्धा-
 दिचर्मशस्थानतयाऽत्यतमसार; तथा पार्श्वस्थादयः पट्टप्रज्ञकगायाज्योतिपादिरूप-
 सत्त्वार्थधारिणस्तथाविधयतिक्रियाविकज्ञाश्चेत्यत्यतमसारा ॥ ए ॥

चार प्रकर्मनी पिन्विशुद्धी, पांच प्रकारनी सिमित्ति, नार ज्ञाना, वार पन्निमा, पाच इन्द्रिओनो निरोध,
 पन्निनेहणा, नण गुप्ति, तथा चार अज्जिग्रह एवी रीने कारणसित्तेरी जाणयी ॥ ५ ॥ आचार्यना विशेष
 गुणो पत्तिप आन्तिक जाणया कयु डे के-पत्तिम्प, तेजस्वी, युगमथान आदिक ॥ ६ ॥ अतिशयो पट्टये अहो
 योजन आदिकर्मां दुक्कठ तथा जयने हरयापणा आन्तिकम्प, तथा यिया, मन तथा चूर्णे आदिकना प्रयोगयी
 उत्तम ष्येना, अथवा वरा थ्येना ण्या नेवता आदिके उत्तम करेना चमत्कार विशेषे जाणया ॥ ७ ॥ लब्धिओ
 पट्टये क्रीरालत्र आदिको, तथा कफ, शुक्, मन, आमर्षे आप्पी आदिक तथा अवधिज्ञान आन्तिक जाणयी ॥ ८ ॥
 हवे नेतु विशेष व्याख्यान कहे डे—जेम चर्मवने करुणीयो चर्मनो मडेनो तथा ते सवधि उपकरणम्प वार्धरी आदि-
 क चर्मना अराना स्थानपण्ये करीने अत्यत सारनिनानो डे, तेम पासत्या आदिको पद प्रङ्करु गाया, ज्योतिप
 आन्तिकम्प मृत्त्वर्थने धरनारा डे, तथा तेवी रीत्तनी साधु क्रिया विनाना होवायी तेओ अत्यत सारनिनाना डे ॥ ए ॥

तेषा तथाविधश्रुतस्य यत्तत्क्रियाणां च सावद्यत्वेन परेषा धर्माऽनास्याभियात्वादि-
 पोपकत्वेन च चर्माशादिसमत्वात्, एतद्ज्ञावना च पूर्वगायाया श्रुपाकाजरणदृष्टां-
 तज्ञावनायां कृतास्तीति ततो विशेषार्थिर्ज्ञेया ॥ १० ॥ यथा च वेद्याकररुको जतु-
 पूरितस्वर्णाञ्जराणाडिस्थानत्वात् श्रुपाकाजरणत सारोऽपि वद्वयमाणरुडापेङ्गयाऽ-
 सार ॥ ११ ॥ तथा केचिद्दुर्धीतश्रुतज्ञवा किञ्चित् क्रियाप्रवर्त्तनेन वागानुवरेण
 च मुग्धजनमावर्जयंतोऽपि परीक्षाया अङ्गमत्वाद्ऽसारा, पार्श्वस्याद्विच्य किञ्चित्सारत्वेऽ-
 ष्येतेषां विशिष्टचारिष्येङ्गया असारत्वमिति ॥ १२ ॥

बली तेजोस्तु तेनी रीतस्तु श्रुत, जे ते क्रियाना सावद्यपण्ये करीने अन्येने धर्मनी अनारथा तथा भिन्ना-
 त्त्व आनिकना पोपकपण्ये करीने चर्माशादिक समान जे, बली तेनी ज्ञावना पूर्वनी गायामां चानादना आचू-
 पणना दृष्टतनी ज्ञावनामा करेवी जे, माटे विशेष जाणवना अर्थोऽप्ये त्यायी जाणवी ॥ १० ॥ बली जेम
 वेद्यानो करनीयो दासयी चरेवा सुवर्णना आचूपण आदिकना स्यानरूप होवायी चानादना आचूपणयी जोके
 सारगळो जे, तोपण आगळ कहेवामा आवनारा करनीयानी अपेङ्गयें सारविनाजो जे ॥ ११ ॥ तम केन्द्राक
 गुरुजो, के जेजो महा मुदकेवीथी श्रुतनो देश मात्र जणेलो जे, तेजो कर्क क्रियाना प्रवर्त्तने करीने तथा बच-
 नना आनरवयी जोके जोला ढोकने समजावी ते जे, तो पण (गुरु सवधि खरी) परीक्षामा पसार नहीं थता
 होवायी तेजो सारविनाजो; जोके पामत्या आदिकोयी तेजोमां किञ्चित् सारपणु जे, उतां पण विशेष चारि-
 वाननी अपेङ्गये तेजोमा असारपणु जे ॥ १२ ॥

तथा गृह्यपतिः श्रीमान् कौटुंबिकः, तस्य करं नो यथा विशिष्टमणिस्वर्णोत्तराणादिस्थान
त्वात् सार, एव केचिद् गुरुव. स्वसमयपरसमयज्ञा. सम्यक् क्रियादिगुणयुक्ताश्चेति
साराः ॥ १३ ॥ तथा च राज्ञ् करं नकोऽमूढ्यरत्नजटितान्नराणाऽमूढ्यरत्नादिस्था-
नरत्नात्सारतमः, तथा केचिद् गुरुव समस्ताचार्यगुणभृतो विशिष्टातिशयविविधब्र-
ह्मिसमृद्धिपदचेति सारतमा, श्रीगौतमश्रीसुधर्मस्वामिश्रीजच्चवाहुश्रीस्थूलब्रह्मचादिवत्
॥ १४ ॥ श्रुत्वा तदेव गुरुगोचरा चतु—र्जगो करं नोपमया स्फुटिकृता ॥ सदा द्वियध्व
सुगुरुन् बुधा यदि । मृष्टहा जपद्वेषिजयश्रियेऽस्ति व ॥ १५ ॥

॥ इति तपागच्छनायकं श्रीमुनिमुंदरसूरिविरचिते श्रीउपदेशरत्नावरे योरुशस्तरग
समाप्त ॥

तथा गृह्यपति षट्ने ब्रह्ममीचान् कुटुंबो, तेनो करमीयो जेम उवां मणि तथा सुवर्णना आचूपण आ-
दिकना स्थानरूप होवायी सारवालो ठे, तेप षेट्नाक गुहंओ पोताना अने परना सिद्धतिने जाणता यका उत्तम
क्रिया आदिना गुणवाळा होय छे, मोटे तेओ सारावाळा ठे ॥ १३ ॥ बली गजानो करमीयो जेम अमूढ्य रत्नो-
धी जेमना आचूपणो तथा अमूढ्य रत्न आदिना स्थानरूप होवायी वधारे सारवालो ठे, तेम केट्वाक गुरुओ
आचार्यना सर्व गुणोये सन्न तथा विशिष्ट प्रकारना अतिशयो अने नाना प्रकारनी ब्रह्मिओनी समृद्धिना स्थान-
रूप होवायी यधारे सारवाळा ठे, (मेनी पेडे ? तो के) श्री गौतमस्वामी, सुधर्मस्वामी, श्रीजद्रवाहुस्वामी तथा
श्रीस्थूलब्रह्म आदिकोनी पेडे ॥ १४ ॥ मोटे एवी रीते करमीयानी उपमायी षण्ट करेवी गुरु सत्रधि चोचगिने सांत्त-
ळीने हे पढितो ! जो तमोने संसाररूपी शत्रुने जीतवानी ब्रह्ममीनी वाडा होय, तो तमो मुगुरुओनो आन्तर करो ? ॥ १५ ॥
॥ एवी रीते श्रीतपागच्छनायक श्रीमुनिमुंदरसूरिणचेना श्रीउपदेशरत्नावर नामना ग्रथमा मोत्रमो तरग समाप्त थयो ॥ श्रीरस्तु ॥

श्री इति पौफशस्तरंगः समाप्तः

सिद्धशस्तरंगः

नगुरुचतुर्जगी प्रस्तावतः सामान्यजीनाटिचतुर्जगीश्चाह—मद्यम
 त्वायरिअसमाणमहुजिअथा सपरुत्तयाणुत्तयाणो ।

॥

कर्त्तव्ये फलीने गुरु सप्तमि चोत्तमी तथा प्रस्तावथी सामान्य जीवआदिकोनी पण
 नो अर्थ—आचाया सागुओ, श्राप्यो अने सामान्य जीवो पातोने, परने, वनेने तथा अनु-
 । हेतुथी र्गोनी पेठे अर्थथी अने गहाराथी सागराळ्य तथा साग्गिनाना थया थका चार प्रस्ता-

व्याख्या—आचार्या श्रमणा श्राद्धा. सामान्यतो जीवाश्च रत्नानीव मध्ये ब-
हि सारा असाराश्च नवतीति चतुर्गमी ॥ १ ॥ तत्र रत्नानामत मारत्व अर्गन्नि-
तत्त्वाऽन्नगुरत्वाङ्गिनिः, वहि.सारत्व पुनस्तादृक् तेजोविशेषाङ्गिना, आचार्याङ्गीना
बहिरत सारत्वे सूत्रकार एव हेतुमाह ॥ ३ ॥ मपरुन्नयाणुत्रयाणोवयागुञ्जति, स्व-
स्य स्वजीवस्य, परेषामन्यत्रव्यसत्वाना तदुन्नयस्य अनुन्नयस्य चोपकारतो हेतो-
श्चतुर्भेदा नवतीति गार्थार्थ. ॥ ४ ॥ एतदुच्चावयति, यथा कानिचिद्भूतानि मध्ये
बहिश्चाऽसाराणि, यथा काचमणि. ॥ ५ ॥ कानिचिच्चानरसाराणि वहिश्च सा-
राणि मद्भूस्याङ्गिगर्भितरत्नवत् ॥ ६ ॥

व्याख्या—आचार्यो, सातुत्रो श्रावको अने सामान्य जीवो रत्नोनी षेते अदृश्यी अने न्हारथी सारवाळा
तथा सारविनाना होय ते, एम चोन्नमी जाणुथी ॥ १ ॥ तेसा रत्नोतु अदृश्यी सारपणु अर्गन्नितपणुथी तथा
अन्नगुरपणा आदिकथी जाणुतु, अने न्हारथी सारपणु तो तेवा प्रकारा तेज विशेष आदिकथी जाणुतु, हेवे
आचार्य आदिकोना न्हारथी अने अदृश्यी सारपणुमां सूत्रकारा हेतु कहे ठे ॥ ३ ॥ पोताने ण्ठे पोताना
जीवने, परेने ण्ठेने जीवा न्नव्य प्राणीअने, तेअो वकने तथा अतुन्नयने (एद्वे तेअो वन्नमाथी परेने णु न्हो
उपकारना हेतुथी ते आचार्य आङ्गिको चार प्रकारा होय ठे, एथो गायलो अर्थ ठे ॥ ४ ॥ हेवे नेनी विशेष
समज कहे ठे, जेम रुद्राक रत्नो, जेवके काच, ते अदृश्यी अने न्हारथी णु सारविनाना होय ठे ॥ ५ ॥
वळी केद्वकाक रत्नो अदर सारविनाना तथा न्हारथी सारवाळा होय ठे, जेवके देवकी आदिक जेना गर्भमा अं.
एवा रत्नो ॥ ६ ॥

कानिचित्युनरंतं साराणि बहिश्चाऽसाराणि खन्यादिमृन्मन्निनजात्यरत्नवत् ॥ ७ ॥
 कानिचिन्मध्ये बहिश्च साराण्येव, यथाविधसस्कृनकोटीमूढ्यादिप्रसिद्धजात्यरत्नव-
 दिति ॥ ८ ॥ तथा केचिदाचार्यां परुषप्रमादत्वेनोजयद्भोकेकांतिकहित चोरि-
 त्रधर्मं शिशिलयत स्वात्मनोऽप्यनुपकारिण इत्यतरऽसारा ॥ ९ ॥ अन्यसत्त्वेभ्योऽ-
 पि सम्यग्देशनादिना त धर्मं न ददतीत्यन्येषामपि नोपकारिण, इति बहिरसाराश्च
 ॥ १० ॥ ते च पार्श्वस्थादयो ज्ञेया, तत्स्वरूपं च प्राच्यगाथयोरुक्तमिति प्र-
 यमो जग ॥ ११ ॥

बळी केऽनाक रत्नो अत्र सारवाळा तथा बहारायी सगविनाना हेराय ठे, नेवकि म्काण आदिरुनी
 माटीषी मनीन ध्येता उत्तम रत्नो ॥ ७ ॥ बळी केव्वाक रत्नो अग्गधी अने बहारायी पण मासवाळांज होय ठे,
 जेवकि योग्यता पूर्वक पाहिस बरेना त्रोनोनी कीमतेवाळा उत्तम रत्नो ॥ ८ ॥ एवी रीते केऽनाक आचारा
 पणा प्रमाटे र्हीने चने बोकरा एकात हितकारी एया चाग्गिरिने जिचिन करता थका पोतानो पण उपकार
 करी शक्ता नवी, माटे तेओ अदरधी सारविनाना छे ॥ ९ ॥ तंपत्र अन्य प्राणीओ प्रत्ये पण उत्तम देशना
 आन्किं र्हीने ते धर्म तेओ आपी शक्ता नवी, माटे तेओ वीजाओपर पण उपकार र्ही शक्ता नवी, एदना
 माटे तेओ बहारायी पण सारविनाना छे ॥ १० ॥ अने तेवा गुग्गओ पाय या आदिनेने जाणया, अने तेओलु
 स्वरूप प्रनेनी बध्ने गायाओमां कडु छे, एवी रीते पेहेलो जागे जाणवो ॥ ११ ॥

केचिपुनर्द्वितीयरत्नवदतरसाराः, स्वस्थाऽपुष्पकारित्वात्, ज्ञावना प्राग्वत्, बहिस्तु
 सारा, सूत्रार्थप्रथादिभिः शिष्यवर्गस्य, विहाग्देशनादितिग्न्यन्तय्यसत्तानां चेह
 परत्र च इव्यतो ज्ञावतश्चोपकारकरित्वात् ॥ १२ ॥ एते च मंविज्ञपाठिका
 ज्ञेया, तथा च तद्वृत्तान्त—सुख सुसादुधम्म । कहेह निदइ य निअयमायारं ॥
 सुनवसिसिआणपुरओ । होइ अ सब्बोमरायणिओ ॥ १३ ॥ वंउड न य व-
 दावइ । किइकम्मं कुणइ कारवे नेअ ॥ अत्तहा न वि डिस्सह । देइ सुसादूण
 वोहेउ ॥ १४ ॥

रली केउडाक गुणओ वीजा रत्तनी पेउे अइगयी सारविनातः हांय डे, केपके नेअं पांनानो उपकाग
 करी शक्ता नथी, ते समधि ज्ञावना प्रवर्नी पेउे जाणयी, रली नेओ बहुरथी सग्गाग होय डे,
 वेमके तेओ सूत्रार्थनी वाचना आदिकवने करीने शिष्य र्गनो तथा विहाग अने देशना आदिंके करीने
 वीजा नव्य माणीओनो आ होक अने परलोक समधि द्रपथी अने जाययी उपकार करी शंके हे
 ॥ १२ ॥ अने तेरा सवेगइकी गुरओ जाणसा. वली नेरा मवेगइकीओतु वृत्तण नीचे सुजग क्यु हे—
 सवेगइकी गुणओ शुक्क तथा उत्तम साधु धर्म कहे, तथा पोताना आचारने निदे, तथा उत्तम तपसी मुनिराज-
 नी पासे सर्व प्रकारे नम्रता आचरे ॥ १३ ॥ पाते अन्प साधुओ मन्वे वडम करे, परतु पोताने होइ पागे वदोपे नहीं,
 पोते कृतिरुर्म करे, परतु वीजा पासे पोतामन्वे करामे नहीं, पोता पाटे कोइने दीक्षा आपे नहीं, परतु पोते प्रति-
 गेयीने उत्तम साधु पासे कोइने दीक्षा आपे ॥ १४ ॥

केचिपुनर्द्वितीयरत्नवदतरसागः, स्वस्थाऽनुपकारित्वात्, ज्ञानाना प्राग्वत्, ब्रह्मिष्ठु
सहसं। स्वार्थप्रयादिति. शिष्यवर्गस्य, विहागदेशनादिनिग्न्यज्यसत्पानां चेह
न्तिशुक्र श्रेयुवाच युक्तश्लोपकारकारित्वात् ॥ १२ ॥ एते च सविज्ञयाङ्गिका
त्यागार्हचक्राद्विज्ञानामादत्तेन सदा, अद्भ्यस्म-। कहेड निन्दइ य निअयमायार ॥
श्रद्ध स श्राद्धः खजनानुचे. ईदश मुनि यदा पश्यत तदा २१३ ॥ वदइ न य व-
श्रयित्वा तस्मै देयं, यथा महाफलं स्यात् ॥ ११ ॥ ततो । खड । देइ सुगान्दूण
यमाने उपयोगेन तमाहारमशुक्र विज्ञायाऽनादाय च वसंतो गत्व
पाद्वन्धवान् ॥ १२ ॥

पट्टनाया त्या श्रीआर्यमहागिरि महागज चिह्ना मोटे पर्याया, त्यारे श्रीगुरुहस्ता महाराज उवा मा
तेमने गान्वा दाग्या, त्यारे श्रीमहागिरि महाराज चिह्ना बीधविनाज स्यायी मुक्त पात्रा यथा ॥ १ए ॥ १
जोइने शेट श्रीगुरुहस्ति महाराजे कहेवा दाग्या के, प्रापना पण शु को- गुरु दे? त्यारे आचार्य महागजे मयु
के, हे शेट! अमाणा ते गुरु छे, तथा ते हेमशां*त्याग दायक जोजन आदिमनी चिह्ना दो डे; एम कही अर्दी
तेमना गुणोनु तेमणे वर्णन कर्यु ॥ १० ॥ ते सान्दलीने थयेव ठे अच्चा जेणे ग्यो ते श्रायक सज्जनोंन कहेवा दाग्यो
के, आवा मुनिने ज्यारे तपो जुओ, त्यारे तजवातु जोजन आदिक देवाहीने तेने देतु, के जेयी मोड फल्ल थाय
॥ ११ ॥ फडी बीजे दिसे तेओ तेवी रीते ज्यारे आहार देवा दाग्या, त्यारे उपयोगयी ते आहारने अजुड
जाणीने, ग्रहण कर्यो विना उपाश्रये जइने महागिरिजी गुरुहस्तीजीने उक्को देवा दाग्या के ॥ १२ ॥

यत् त्वया ह्यो विनय कृत्वाऽऽस्माकमनेपणा कृतेति, ततो नैव श्रूय. करिष्ये इ-
त्युक्त्वा श्रीमुहस्ती त इमंयामासेति ॥ २३ ॥ एव ये गणादितसि विमुच्य स्वा-
र्थकपरास्तेऽत्र नगे ज्ञेया. जिनकटिपकाचार्यादयश्चात्र निदर्शनमिति तृतीयो जग
॥ २४ ॥ तत्रा तुयैरत्नवत् केचिदाचार्या उन्नयथापि सारा, प्राग्वत् स्वात्मोपकार-
परत्वेन, परेषामपीह प्रेत्य च उच्यते ज्ञावतश्चोपकारित्वेन च ॥ २५ ॥ त्र्यधिकपत्र-
दशशततापस्येषुपरमाद्वाहकवद्विज्ञानप्रदायिश्रीगौतमगणधरादिवत्, तदुक्त—न
द्यो गुरु, सुरतरुर्विहितामितीर्थि—र्थतर्कवदाय कवद्वार्थिषु गौतमोऽचूत् ॥ तापातुरेऽ-
मृतरस किमु शैल्यमेव । नाऽप्रार्थितोऽपि वितरत्यजरामरत्वं ॥ २६ ॥

तमोए गद गाने विनय र्त्तने अमोने अनेपणा करी, ते साजली मुहस्ती महाराज कहेवा त्याया
के, फरिने इ त्पे तरीवा नही, एम रही ऋमा याचवा दागया ॥ २३ ॥ एवो रीते जेओ गन्ड आदिकनी तत्तिने
तर्जने फक्त स्वार्थमात्र तपर होय ॐ तेओने आ जागया जाणवा, तथा अर्हा जिनकपी आचार्य आदिकोने
दृष्टान्त्पे जाणवा, गवी रीते त्रीजो नागो जाणो ॥ २४ ॥ वळी केद्व्याक आचार्यो चौया रत्तनी पेडे वने प्रारो
सागवाळा होय डे, केमके तेओ पूवे गया प्रमाणे पोताना उपवारमा अने परना उपकारमा तपर होराच्यी आ
लोक अने परलोकांमा द्रव्ययी अने नापयी उपकारी होय डे ॥ २५ ॥ (कोनी पेडे? तोके) पदरसो गण ताप-
सोान इन्डा मुजव हीरनु नोजन तथा केनज्ञान आपनारा श्री गौतमस्वामी गणधर महाराजनी पेडे वयु डे के-
वाण करेड डे पणीज सुद्धिओ जेणे एवा श्रीगौतमस्वामी गुर केडक नवीन प्रकारा कल्पदृढ सरखा थया डे,
केमक तेमणे वक्त्रना (नोगनना) अर्थी एया तापसो प्रेत्य केवज्ञान आपु डे ! केमके अपुतरस, तापातुर माणनि
शु रंभव शीतज्ञान आपे डे? नही, परंतु प्रार्थना कर्यो विना अजरामरपणु एण आपे डे ॥ २६ ॥

श्रीभारपादनरेंद्रस्य बहुपुत्रवसरेषु ऐहिकोपकारकृत्पारत्रिकोपकारकृच्च श्रीहिमसूरि,
 आमनृपादेर्द्विधाव्युपकारिण श्रीधरपञ्चद्विगुर्वाद्यश्चात्र निदर्शयितव्या इतियुक्तयो
 नगः ॥ १७ ॥ एषु प्रथमजगदुरवस्थाया एव, द्वितीयजगदुरुक्तोऽपि सुगुणयोगसन्नेवे
 त्याज्या एव, यत्तस्तेषा प्रमादाचरणं पश्यता श्रोतृणा तदुक्तधर्मोऽप्यनास्योद्धारसादिना
 प्रायो न तदुपकारसिद्धिरिति ॥ १८ ॥ यथोत्तरमुत्तरजगदुरुक्तय च योग्यमि-
 त्पाराध्य श्रेयोऽर्थिञ्चिरिति, इत्युक्ता श्रीआचार्यानांऽधिकृत्य चतुर्जगि ॥ १९ ॥
 अथ श्रमणगोचरा सा जाव्यन्ते, तथाहि श्रमणाना स्वोपकार सम्यक् चरणकरण-
 समाचरणादि, परोपकारश्च गुरुतपस्विवादादृच्छद्भानवैयावृत्त्यादि, ३० ॥

अहो श्री कुमारणल राजने गणे अक्सरे आ लोक समपि उपकार करुनाग तथा परद्वोक समधि
 उपकार करुनाग श्रीहिमचन्द्रार्प तथा श्रीआमराजा आदिकेने गणे प्रफारे उपकार करुनाग श्रीरत्नद्विगुर् आदि-
 रने दृष्टान्तेषु जाणव, एरी रीते चोयो जागे जाणव ॥ १७ ॥ हेरे ते जागात्रोभायी पहेंटा जागना गुन्त्रो तो नजग
 दायकन डे, बीजा जागना गुन्त्रो एण सुगुनो योग मरुते उते नजग दायकन डे, नेमके तेअंलु प्रपानी
 आचरण जोडने तेगणे कहेडा र्मण श्रोतात्रोने आभ्यानो उन्दास आत्तिक न थायी तेओ तफवी उपकारनी
 सिद्धि यती नथी ॥ १८ ॥ वली ते पडीना यत्र जागात्रोयाळा गुन्त्रो योग्य डे, माडे म्प्याएना अर्थात्रोए
 तेओने आराधवा जोड्ये, एरी रीते श्री आचार्याने आश्रीने चोचगी कही ॥ १९ ॥ हेरे सावने आश्रीने ते
 चोचगी कहे डे—सावुओनो स्वोपकार एड्डे सम्यक् प्रफारे चरण करुणना समाचरण आदिकल्प जाणवो, तथा
 परोपकार एड्डे गुण, तपस्वी, साध, दळ, तथा रोगी सावुनी वेयाचच्च आदिकल्प जाणवो, ॥ ३० ॥

सम्यक्सामाचारीप्रवर्तनस्थिरीकरणदिकश्च, तत्र काचादिमणिवत् केऽपि श्रमणाः स्वो-
पकारपरोपकाराभ्या रहितत्वात् द्विधाप्यसाराः, पार्श्वस्यादय एव ॥ ३१ ॥ के-
चिन्तु द्वितीयरत्नवदतरसारा, स्वात्मोपकारहेतुसयमगुणनिकृत्तत्वात्, तद्विस्तृतसारा
भ्रान्तत्वाद्यवस्थायु सुसाधूना वैयाट्टस्याद्युपकारपरत्वात्, ते च सविज्ञपाङ्किऋद्य
एव ॥ ३२ ॥ तदुक्त—ऋतारोहमष्ठा—एतौ मगेननमाइऋजेषु ॥ सञ्चार्येण
जयणाइ । कुण्डज साहु करणिज ॥ ३३ ॥ एते च मनागू योग्या, सविग्न-
पाङ्किऋत्वस्य तृतीयमार्गत्वात्, यदुक्त—॥ ३४ ॥

तेमज सम्यक् प्रसारे सामाचारीना प्रवर्तनम्प तथा तेमा स्थिर करत्ता आद्रिकम्प पण परापकार जाणवो,
हवे त्या काचआद्रिक मणिनी पेते ऋट्टाक साधुओ सोपकार तथा परोपकारथी गहित होगथी बंधे रीते सारविना
डे, अने तेवा पास्तया आन्निगे डे ॥ ३१ ॥ बट्टी केऽवाको तो नीजा रत्ननी पेते अद्रथी सारविना होय
डे, केपके तेओ पोताना उपकारना हेतुम्प एया सयमगुणथी रहित होय डे, परतु बहारथी तेओ सारवाळा होय
डे, केपके मुसाडुओनी पांडगो आद्रिक अवस्थामा तेओ तेमनी वैयावञ्च आद्रिक उपकार करवामा तत्पर होय
डे, अने तेवा सेगेपट्टी आद्रिकोनेज जाणवा ॥ ३२ ॥ कटु डे के—ऋकातार (अट्टी), गेथ, (नगर-दुर्गादिनो
घेरो) अष्ठा (दुर्गिक आद्रिकाळ) अवम (वाठ) अने गतानि आद्रिक कार्य प्रसगे जे साधुतु कृत्य डे ते अति
आद्रथी करे अर्थवत् ते प्रसगे मुसाधु अनोने अत्यत सहायवृत्त थाय एवो परमार्थ उक्त गायानो होवो सनगे डे
॥ ३३ ॥ एवी रीतना ते सेगेपट्टीओ कडक योग्य डे, केपके सेगेपट्टीओनो वीजो मार्ग डे कटु डे के—॥ ३४ ॥

* आ गायना पूर्वदिने अर्थ बहु श्रुतोथी जाणी वेवो

सावज्जजोगपरिव्रज्जणार्हं—सबुद्धमो जइधम्मो ॥ वीओ सोवगधमो । तइओ
 सविग्गपख्खपहो ॥ ३५ ॥ इति छितीयो संग. ॥ केचिच्च तृतीयरत्नवदत्त सारा,
 वहि पुनरसारा., स्वार्थैकनिष्ठत्वात्, प्रतिमाप्रतिपन्नजिनकद्विपकादिसाधुवदिति तृतीय
 ॥ ३६ ॥ केचित्तु तुर्यरत्नवदुचयथापि सारा, स्वस्य परस्य चोपकारित्वात्, श्रीजर-
 तचक्रिवादुबद्धिप्रामन्नववाहुसुबाहुश्रीवसुदेवजीवश्रीनद्विपेणादिमहर्षिवदिति चतुर्थ. ॥
 ३७ ॥ एते छये योग्यास्तद्भवे त्रिचतुरादिभवेषु वा सिद्धिगामिन इति उत्तर-
 त्राप्येव चावना ज्ञेयेत्युक्ता श्रमणाना चतुर्जगी ॥ ३८ ॥

सावद्य योगिनो परिवर्त्तारूप यत्तिर्म सर्वयी उत्तम डे, तेषी उत्तरो वीजो श्रावकर्म डे, तथा तेषी
 उत्तरतो नीजो संगपट्टी धर्म डे ॥ ३५ ॥ एनी रीते वीजो जागो जाणवो य्ळी केट्टाक साधुओ नीजा रत्तनी
 पेडे अंठयी सारवाळा तथा बहारयी मारविनाना होय डे, केमके तेओ पन्निमाथरी जिनकट्टपी साधु आदिकोनी
 पेडे फक्त स्वार्थमान तत्पर होय डे, एवी रीते नीजो जागो जाणवो ॥ ३६ ॥ य्ळी केट्टाक साधुओ चोया
 रत्तनी पेडे वने प्रहारे साराळा होय डे, केमके तेओ पोताना तथा परना एम यत्तेना उपकारी होय डे,
 (ज्ञेनी पेडे ? तो के) श्री जरत चक्रो तथा गहुपरत्तिना पूर्व जमना जीव एवा गहु कुवाहु तथा श्रीवसुदेवना जीव
 श्रीनद्विपेण महर्षि आदिकनी पेडे, एनी रीते चागो जागो जाणवो ॥ ३७ ॥ ए एते जागयाळा साधुओने
 योग्य जाणया, तथा तेओ ते जे अथवा नीजा चोया आदिक जेवे मोक्ष गमी थाय छे, एवी रीते आगळ पण
 एज चावना जाणवी, एनी रीते साधुओनी चोजगी कही ॥ ३८ ॥

अथ श्राद्धानां सा नाव्यते, तत्र श्राद्धा केचिद्धर्मक्रियासु प्रमादित्वेन न्व नवाञ्चो मज्जयति, धर्मकारणतदुपदेशतत्साहाय्यदानादिविकल्पत्वेन परं सृजनपरिजनाद्यमपि न तारयतीत्युक्तयोपकाररहिता इति काचमणिवदुक्तयथाप्यसारा, सहदेववत् तज्ज्ञान यथा—॥ ३ए ॥ कृशास्थन्नपुरे विमलसद्वेवो व्रातरो, साधो पार्श्वे प्रतिपन्नधर्मो, अन्यथा तौ प्राग्वेशे डव्याय चेन्नतु ॥ ४० ॥ अर्धपथे विमल पणिकेन राजन्ननीरादियुत्तपथ पृष्टो न जानामीत्याह पापनीरुतया, स यास्यसीति पृष्टो यत्र पापार्थ ॥ ४१ ॥ निजपुर वदेति, राजधान्या वसामि, न मे किञ्चित्, तथा सहा गन्वामीति च पृष्टा स्वेच्छया गन्तता व के वयमिति चाऽवादीत् ॥ ४२ ॥

इवे श्राम्णेनी ते चञ्चगी रुहे छे, त्या केत्वाक श्राम्णे धर्म क्रियाया प्रमाणी र्ह्येयची पोताने सत्तार समुद्रमां नुनाके डे, तेमज र्थे करामो, ते संमपि उपदेश देगे, तथा ते माटे सहाय आपणे, इत्यतिक नहां म्नायी परने एत्त्रे पोताना सवधि तथा परितार आन्निने पण तेओ तारी शकता नयी, माटे तेओ र्णे रीते उपकार विनाना होय रे, अने तेयी काच मणिनी पडे महंयनी माफक तेओ र्णे रीते सागविनाना डे, ते सहंयतु उदाहरण नीचे मुजत डे ॥ ३ए ॥ कुशस्थत नागे नगरां विमज ओ सहेय नगे ते जाइगे हुता, तेओण सातु पासेयी र्णे स्त्रीकायों हुतो, एक यमने तेओ धन माटे पूर्ण देवमां चाटया ॥ ४० ॥ अर्धे मागे कोड नेमागुए विमनेने सारा पाणी आन्निक्वाळे मार्ग पृट्यो त्यारे विमवे पापला मरयी र्णु ते, मने तेनी म्बर नयी, पडी ज्यारे तेणे एम प्रत्यु के तपो र्णां जाओ डो ? त्यारे तेणे र्णु के, ज्यां व्यापार मटे त्या ॥ ४१ ॥ तारा नगरतु नाम रुहे ? एम पृठययी तेणे कर्णु के, हु राजधानीया र्हु डु, माफ रुड नयी, तारी सांवे हु आं ? एम प्रववायी तेणे र्णु के, तमारी ड्वायी चाना एम तमने प्रमोरो शो सतत डे ? ॥ ४२ ॥

अथ पाकस्थाने सहागतपथिन्नेनाग्नियाचने मत्पाश्वं बुद्धय, नाग्निमर्षये, इत्युक्तौ प-
थिन्नेनाक्रोशने, यधुर्दुश्खादिना ज्ञापने, प्राणतेऽप्यङ्गोचे स्वदिव्यरूपप्रादु.रुतो इन्द्र-
प्रशसादुक्तौ वज्ञाडुत्तरीये वियापहारमणि निवध्य देवगमेनेष्टं सहदेवज्ञाना तच्छु-
क्तौ ॥ ४३ ॥ नगरङ्गोच दृष्टा प्रश्ने पुरयोत्तमो राजाऽद्याऽहिदृष्टुवजीवधितुः रा-
ज्यार्थदानपटह वादयतीत्युक्तौ सहदेवेन वज्ञाञ्चेज्ञाचक्षान्मणि द्वाराया पटहस्पशं त-
ज्जीवने सहदेववचसा ॥ ४४ ॥ राज्ञा विमद्वपाश्वं आगत्य राज्याभ्यर्थने, तेनारञ्जि-
याऽग्रहणे गजारूढस्वग्रहणयने सहदेवाय राज्यार्थदाने विमद्वस्याऽनिन्दतोऽपि श्रेष्टि-
पट गृह्णादि चार्पयत् ॥ ४५ ॥

पट गृह्णादि चार्पयत् ॥ ४५ ॥

पट्टी रस्ताऽनी जगोए ते साथे आपेवा पथीग तेनी पासेयी अथि मागंते उते, तोणे कथु के, तु मारी
पासे चोजन कर हु अथि आपीश नहीं, ते साजली ते पथिए क्रोध मरी जरीर वारावा आदिकयी
तेने नीरामे उते, तथा प्राणति एण तेने नहीं चज्ञायमान थयेजो जोड, ते पथीन्प देवे पोतातु खं रूप मगट
कथु, तथा इडे केल्ली तेनी प्रशसा आदिकतु टुचांत तेने कथु, तथा आग्रहयी तेने दुष्टे जेर रर करानं मणि
पार्थीने देव गये उते, ते वृचांत विमद्वे सहदेव आदिकने कथु ॥ ४३ ॥ एव्यामा नगरमा कोवाहद्व थयो जोड
पृष्ठवथी मातुग पभ्यु के, पुरयोत्तम राजा आज्ञे सयं मनेना पोताना पुत्रेने जीवामनासे अरथु राज्य आप-
गाने पटह वागधे उे, तेवी सहदेवे रत्रात्कारे विमद्वाना यवने उेभेयी मणि द्वाद पटहने स्पर्शा तेने जीवतो कर्ये,
तथा सहदेवना वचनयी ॥ ४४ ॥ राजा विमद्व पासे आवी अरथु राज्य देवानी पार्थना करवा द्वाग्यो; त्यारे विमद्वे
आरजना नययी ते नहीं देवथी, राजा तेने ह्यथीपर चनवी पोताने घेर द्वाद गये, तथा सहदेवेने अरथु राज्य
आपी, विमद्वनी इन्द्रा नहोती, तोपण तेने राजाए शेठनी पदवी तथा पर आदिक आयु ॥ ४५ ॥

सहदेवस्तु राज्ये विषयेषु ७ एतौ महारज्जरो धर्मं तत्याज, साधर्मिकानप्यपीरुयव-
 ऽन्यायकगदिनि, दूरे तेषा धर्मसाहाय्यादि, विमज्ञेन वारितोऽपि युद्धाद्यकरोत् ॥
 ४६ ॥ उवाच च, राजकार्याणि कृत्तानि विद्धोम्यते, धर्मोऽप्यवसरे करिष्यते, इत्यादि,
 तत्सगत्या तत्परिवारोऽपि तथैव धर्मपराङ्मुखोऽभूत् ॥ ४७ ॥ सोऽन्यत्र वैरिप्रहित-
 घातकेन हतः, प्रथम नरक प्रापत् विमञ्जस्तद्वैराग्याद् गाढतर धर्मसाराध्य स्वर्गगतो,
 महाविदेहे सेत्स्यतीति प्रथमो जग ॥ ४८ ॥ एकं पुनश्चात्रिमोहनीयप्राचल्यादिना
 स्वय धर्मक्रियासु प्रमादिनोऽपि परेस्ता. कारयति, तदुपदेशसाहाय्यकरणतद्विप्रवा-
 रणादिनि दीनाऽनाथादीनपि वनादिवज्ञैरुपकुर्वतीति ब्रह्मि साररत्नतुल्या ॥ ४९ ॥

पत्नी सहदेवे तो राज्य अने विषयमां बुद्ध यद् योग आरज्जथी धर्मने जोनी दीषो, तथा अन्याय अने
 कर आदिकोथी साधर्म्यांने पण दुग् आववा ज्ञायो; कळी तेमोने धर्म आदिकमा सहाय आप्तो तो दूर
 ग्यो, विमने वार्यो उतां पण ते युष् आदिक करवा ज्ञायो ॥ ४६ ॥ तथा रहेवा ज्ञायो के, कोना
 राजकार्यने तपासयान जोडेय, अवसरे धर्म पण करासे, इत्यादि, एवी रीते तेनो सेपवथी तेनो पन्विर पण
 तेवीज रीते र्मथी पराङ्मुख थयो ॥ ४७ ॥ पळी एक वखते वैरीण मोक्खेज्ञा पाराथी इणायो थको ते पेहेवी
 नरके गयो; तेना वैराग्यथी विम्व धर्मने वधारे आराधीने स्वंगे गयो, तथा महाविदेहमा मोडे जशे, एवी रीते
 पेहेवो जागो ज्ञाणवो ॥ ४८ ॥ कळी तेव्याक थाकलो थाकलो चारित्र मोहनीय र्मनी प्रवतताथी पोते जोके
 धर्म क्रियामा प्रमादी होय डे, नो पण अन्योपसे ते करावे डे, पन्वे ते धर्म मन्धि उपदेश, सहाय करावो त्या ते
 सवपि विमोने निवावा आनिकें करीने, तेमज दीन त्या अनाय आनिकोने थन आनिकनी मन्डथी उपकार को
 डे, पाडे तेओ बहाराथी मांगवाला रत्न सरखा डे, ॥ ४९ ॥

प्रविभ्रजिपुस्वापत्याऽनियेधिस्रसुताऽप्रभ्रजितपूविशेषापतस्थार्थितपस्योत्सवकराणतकु-
 दुंबनिर्वाहादिसाहाय्यकृतच्छेदकतीर्थकरनामकर्माजकश्रीकृष्णनृपादिवत् ॥ १० ॥
 श्रीकृष्णादीना केपाश्रितःसम्यक्त्वादिज्ञानेऽपि विरत्यादिविजयेयुणाऽनावेनाऽनुदरा-
 कन्येत्यादिवदतरसारत्वं ज्ञेयमिति द्वितीयो जंग. ॥ ११ ॥ अन्ये तु ब्राह्मकल-
 नप्रुत्रादिस्वजनपरिजनाद्विप्रतिबोधाऽज्ञाक्ता परेषां धर्मसाहाय्याव्यवज्ञसाश्च, सम्यग् धर्मा-
 नुष्ठाने स्व जवात्तारणेनोपकुर्वतीत्यत साररत्नतुट्या, पूर्वजगोक्तसहदेवाऽप्रजवि-
 मद्वचदिति तृतीयो जंग ॥ १२ ॥

दीक्षा देवानी इन्द्रावाद्या पोताना पुत्रोने निषेध नहीं करनारा, तथा पोताना पुत्रोए दीक्षा दीधा पहेवा
 वाक्कीना सयळा तपस्याना अर्थप्रोनी तपस्याने उत्सव करनारा, तथा तेओना कुट्टुविओने आजी-
 निका आदिकनी साहाय करनारा, तथा तेथी तीर्थकरनाम कर्म उपार्जन कनारा श्रीकृष्ण राजा आदिकनी
 पेडे तेग श्रावणो जाणवा ॥ १० ॥ श्रीकृष्ण आदिक केट्टाकोने अदरथी समर्पित आदिकनो जाग होते हुते
 पण मिति आदिक विशेष गुणना अज्ञां वरिने 'उदर विनानी कन्या' इत्यादिकनी पेडे अदरथी असारपणु
 जाणु, एवी रीते नीजो जागो जाणवो ॥ ११ ॥ वडी केट्टाक श्रावको जाड, वी, पुन आदिक सजन तथा
 परिवार आदिकने प्रतिबोवने अशक होय अे, तेमज वीजाओने पण धर्मनो सहाय आपवाभा असमर्थ होय अे,
 परतु सम्यक् प्रज्ञानी धर्मक्रियाओथी फक्त पोताने ससारथी तारवान्प उपकार करी शके अे, माटे तेओ
 अदरथी सारवाळा रत्न सरवा अे; (कोनी पेडे ? तोके) पूर्वना ज्ञाणामां कटेडा सहदेवना मोड जाड विभवनी
 पेडे एवी रीते नीजो जागो जाणवो ॥ १२ ॥

केचित्पुनः स्वपरोपकारसमर्था इत्युच्यथा सारस्वतोपमा, श्रीकुमारपाद्वन्दुपादिवत्
 ॥ ५३ ॥ तथाहि—श्रीकुमारपादस्य श्रीसम्यक्त्वमूढाष्टाशत्रुतपालन, त्रिकाल जिन-
 नपूजा, अष्टमीचतुर्दशो पौषधोपवास, पारणिके दृष्टिप्रथगताना पर शतानामपि-
 यथाहृद्वृत्तिदानेन संतोषकरण ॥ ५४ ॥ सार्धं गृहीतपौषधाना स्वासे पारण-
 ककरण, जगन्साधर्मिकोच्छरणे सहस्रदीनारार्पण, एकस्मिन्वर्षे साधर्मिकेभ्य को-
 टिदीनारदान ॥ ५५ ॥ एव चतुर्दशवर्षेषु चतुर्दशकोटिदीनारदान साधर्मिकेभ्य,
 अष्टनवतिब्रह्मचर्यस्यौचित्ये प्रदानं, षाससतिब्रह्मचर्यव्यपन्नपादन, एकविंशति-
 श्रीज्ञानकोशलेखन ॥ ५६ ॥

वन्नी केन्द्वारु श्रावण पौतने अने परने एम वनेने उपकार कर्गने समर्थ ३, ग्नी रीत तेओ वने
 प्रकारथा श्रीकुमारपात्र गजा आन्तिनी पेडे सगवला एन सरवा डे ॥ ५३ ॥ ते वहे डे—श्रीकुमारपात्र गजा
 समकीत मूल गरे व्रतोने गनरा हता, त्रिकाल जिनप्रजा करता, आउम चोत्से पौष सदिन उपवास करता,
 पारगाने त्रिसे दृष्टिरे परेन्ना सेरुने गमे मनुष्योने यथायोग्य आजीविसा आपी सतुष्ट करता ॥ ५४ ॥ माये
 पौष करनारात्रोने पौतने धेर पारणा करावता, धनहीन थयेना साधर्मने हजार मोनापोहोरो आपता, एकम
 वर्षमा साधभात्रोने श्रोत्र सेनामाहोरेतु दान देता ॥ ५५ ॥ ग्नी गीते चोद वेमेमा चोद कोरु मोना माहोरेतुं तेमणे
 साधर्मिओने दान आयु, अत्राणु दाय द्रयतु उचित दान आयु, वोहोने बाम्ब द्रव्य आवत वरजगोना बगवत
 फक्तया परवीस ज्ञान नरुन वखाव्या ॥ ५६ ॥

प्रलहं श्रीत्रिचुवनपालविहारे स्नात्रोत्सवः, श्रीहिमचक्रसूरिगुरुपादपद्मेषु छादशशव-
त्तैवदनकदान, ततोऽनुक्रमेण सर्वसाधुवदनं ॥ ५७ ॥ पूर्वप्रतिपन्नपौषधादित्रताह-
श्रावकवदनमानदानादि, अष्टादशदेशेष्वमारिपटहदापनं, न्यायघटावादनं, चतुर्दश-
देशेषु पुनर्धनवदनेन मैत्रीवदनेन च जीवरक्षाकारण ॥ ५८ ॥ चतुश्चत्वारिंशदधि-
कचतुःशतनव्यग्रासादकारण, १६०० जीर्णोष्काराः, सप्त श्रीतीर्थियात्राः, प्रथमव्रते-
मारिरित्यङ्गरकथने उपवासकरणं ॥ ५९ ॥ द्वितीयव्रते विस्मृत्याद्यसत्यज्ञापणे आ-
चाम्ब्लादितपकरण, तृतीयव्रते मृतधनमोचनं, चतुर्थव्रते धर्मप्राप्त्यनंतरं पाणिग्रह-
णाऽकरणं, चतुर्मास्या त्रिधा मनोवचनकथैः शीघ्रपादनं ॥ ६० ॥

हृषेवां श्रीत्रिचुवनपाल विहारणा स्नात्रोत्सव कराव्यो, श्रीहिमचक्राचार्यना चरण वमदोषां छादशशवत्तैव
कथं, पक्षी अनुक्रमे सर्व साधुग्रोने वंदन कर्तुं ॥ ५७ ॥ पेहेलेयी पौष्य आदित्त देनार योग्य श्रावकने वदन तथा
मान आदिक आयु, अठार देशोमां अमारी पको वजनव्यो, न्याय घटा वागव्यो, वळी चौद देशोमां धनने वळे
तथा मित्रादने वळे जीवरक्षा करावी, ॥ ५८ ॥ चारसो चुमाह्नीस नवां जिनमदियो कराव्यां, सोळसो जीर्णोष्कार
कराव्या, सात तीर्थियात्रा करी; पेहेला व्रतमा 'मारि' अत्रो जो अक्षर मुखयी वोदाय तो पण उपयास करता
॥ ५९ ॥ बीजा व्रतमा चूळ आदिकथी असत्य वोदतां आविद्ध आदि तप करता, बीजा व्रतमां मृत्यु पामेलातु द्रव्य
नही लेता, चौथा व्रतमां धर्म पास्यां पक्षी परणवातु नियम कर्तुं; चौमासां मन, वचन अने काया, गुण नण
प्रकारे शीघ्र पालता ॥ ६० ॥

मनसा जगे दृषण, वाचा जगे आचारलं, कायजगे चैकाशनं, परनारीसहोदर-
 विरुधरण च, राज्ञी ॥ जोपद्वेदेव्याचार्याया मरणेऽपि प्रधानाद्विनिर्वहूच्यमानेऽपि
 पौणिग्रहणनियमस्याऽजग ॥ ६१ ॥ आरात्रिकार्थं सुवर्णमयजोपद्वेदेवीमूर्त्तिकार-
 ण, श्रीगुरुनिर्वात्मज्ञेषुर्न रात्रिर्विद्वद्वान, पचमव्रतविस्तरस्तु यथा— ॥ × ॥
 ॥ ६२ ॥ पट्जोद्य वनप्रत्य, अष्टौकोद्यस्तारस्य, दशतुल्लाजतानि महर्घमणि-
 रत्नादीनां, ३२ सहस्रमण्युत, ३२ सहस्रमण्युतेषु, ॥ ६३ ॥

मनयी शीघ्र नागते उते कृपणक कग्ता, वचनयी जागते छते आयेन करता, कायायी जागते ज्ते ण्ताशन
 रस्ता, परदी प्रत्ये सहोदरस्तु विरद धारण रस्ता, जोपद्वेदी राणीना मृत्युवाद प्रधान आदिजोए णु कया उता पण
 परणयाना नियमनो तेमणे जग कया नर्हा ॥ ६१ ॥ आरात्रिक माटे जोपद्वेदेवी राणीनी सुवर्णना मूर्त्तिकार्यावी. श्री
 गुरुमहाराजे वासुदेवपुत्रक तेमने रात्रिंहु विरद आयु, पाचमा नतनो विस्तर नीचे मुजव छे— ॥ ६२ ॥ व क्रोन
 सोनामोहोर, आठ क्रोन रूपामहोर, दशसो तोला मोटी किंमत्तनां मणिरत्नो विरदे, र्नीम हज्जर मण्यु वी,
 वत्रीम हज्जर मण्यु तेव ॥ ६३ ॥

* राज्ञीजोपद्वेदेव्यादिचार्या ण मरणेऽपि ॥ इति च्छितीयुस्तकपाठः ॥
 + यथा प्रयातराचाच्य ॥ इति च्छितीयुस्तकपाठः ॥

३ ब्रह्मा. शास्त्रिचनकयुगंधरीमुद्गप्रमृत्तिधान्यमूटकानां प्रत्येक पंचद्वंद्वी, अश्वानां सहस्र गजा उष्ट्राश्च प्रत्येक पंचशतानि ॥ ६४ ॥ शुद्धहृदसंज्ञायानपात्रशकटवाहिनीनामित्यादि. एकादशशतगजानां, १० सहस्रश्वानां, ११ ब्रह्मा हयानां, १० ब्रह्माः सुन्नटवराणामित्येव सर्वसैन्यमेजापकः इत्यादि ॥ ६५ ॥ षष्ठे त्रते वर्षाकांक्षे श्रीपत्तनपरिसरादधिकगतिनिषेध, सप्तमे जोगोपजोगत्रते मध्यमांसमधुच्छरणवहुवीजपचोडुवरफद्वाऽजहयाऽनतऋयधृतपूरादिनियम ॥ ६६ ॥ देवाऽदत्तवस्त्रफद्वाहारादिवर्जनं, सचिन्तमेक पत्ररूप दिने तद्वीटकाष्टक, रात्रौ चतुर्विधाहारनिषेध, वर्षास्वेका घृतविकृतिः, शादृढशाकनिषेध. ॥ ६७ ॥

पण द्वाव चवदना तथा चण्डा, बुधः अने मग आद्रिक मन्योना दरेरुना पाच पाच द्वाव मुना, एक हजार गोना, हायो तथा उट दरेरु पाचसो पाचसो ॥ ६४ ॥ १२, हाट सना बहाण, गान्नी पानवी इत्यादि, प्रयागसो हाथीत्रो, पचस हजार रयो, अथार द्वात घोरां, अक्षर द्वाव मुन्दे, एरी रीते सर्व सैन्यनो मेजापक हतो इत्यादि ॥ ६५ ॥ उग्र त्रतगा वर्षाकाळया श्री पाटगना सीमानायी अत्रिक गमन करतानो नियेय हतो, सातमा जोगोपजोग त्रतगा मय, मास, मय, मागण, गडुरीजा, पाच जातिप उडुवर फळ, अजन्म्य, अनतऋय तथा वेवर आद्रिकनो तेने नियम हतो, ॥ ६६ ॥ टेरे नहां दीधेजा यत्न, फळ तथा आहार आद्रिकनो त्याग हतो, एक पान रूची सचिन, अने तेना पण एक टियमपा आउ बीजा तेने स्वपता, रात्रिण् चोर प्रकारना आहारलो निषेय हतो. वर्षाकाळया एक मीनो विगय उट हतो, शास्त्रव शाकनो त्याग हतो, ॥ ६७ ॥

एकाशनं सदा, पर्वस्वप्नविभ्रुतिसचित्तवर्जन, अष्टमव्रते ससव्यसनाना देशात्कर्षणं
समुद्भूतते द्वेषणं ॥ ६७ ॥ नवमे व्रते उन्नयकालसामायिककरणं, तस्मिन् कृते
श्रीह्रिमसूरीन् विनाऽन्यैर्जल्पननिषेधः, प्रत्यह १२ प्रकाश २० वीतरागस्तवयुणं
॥ ६८ ॥ दशमव्रते चलुर्मासीकटककाऽकरण, गाजणीसुरत्राणागमेऽपि नियमादऽ-
ज्ञोनादि वाच्य, एकादशे व्रते पौषधोपवासे रात्रौ कायोत्सर्गकरणे मर्कटोदकं पा-
दे द्वग्नो जनैरुत्सार्यमाणोऽपि कोपान्न मुचति ॥ ७० ॥ तन्मृतिशक्या स्वपाद-
त्वचा सह तस्य दूरीकरण, पारणके सर्वपौषधग्राहिजोजनं, अतिथिसंविनाग-
व्रते तु खिसार्धमिकथ्रावकद्वोकाना ७२ लङ्कञ्जव्यकरमोचनं ॥ ७१ ॥

हमेशां एकासणु करता, पर्वने दिवसे मैयुन, विप तथा सचित्तनो तेने त्याग हतो; आठमां व्रतां
तेणे साते व्यसनं देशार्थी कदाही सद्गुरुमा फेंत्यां ॥ ६७ ॥ नवमा व्रता वने बलत सामायिक करु, तथा
ते करते व्रते श्री ह्रिमचंद्रार्च्य विना वीजाओ साये वोजवानी तेने त्याग हतो, हपेशां यार मकाश (योग शासना)
तथा वीस वीतरागस्तवनी पाठ करता ॥ ६८ ॥ दशमां व्रतां चोमासामां रणसग्राम न करवो, गीजनीनो सुद्वता-
न आवते छते एण नियमथी चद्यापमान नहोता थया; अग्रगरमा व्रता पौषध उपवास करते व्रते रात्रिप काउ-
सग ध्याने रखा हता, ते बलते एणे मर्कटो चोड्यो, माणसो तेने उलेफ्वा द्याग्या, परतु क्रोधथी ते चोटीज
रतो ॥ ७० ॥ ते बलते ते मर्कटो परी जवाना शकाथी पोताना पानी चावनी सहित तेने दूर कर्यो, पारणने
दिवसे सयब्बा पोसातीओने ज्ञान कराना, अतिथि सवेनाग व्रतां दुखी एवा साथमी थारकोनो नहोतेर
खाब द्रव्यनो कर मर्कटी दीशे ॥ ७१ ॥

श्रीहेमसूरिभगवान्मुत्सृज्यस्त्रिकामप्रतिप्रसक्त्या॥१००॥
 तित्प्रदान, सर्वमुत्सृज्यस्त्रिकामप्रतिज्ञेयकानां १०० ग्रामदानादि च ॥ ७२ ॥ ए-
 तन्मनेरुत्रिधास्तस्य त्रिनेत्रिशिरोमणोरन्येऽपि पुण्यमार्गः कियंतोऽत्र लेखितु शक्यं-
 ते; इत्येव तस्य स्वयं सम्यग्धर्मनिष्ठानेन स्वात्मन उपकारो न्नप्रच्छयावशेषसं-
 साररूपादिरूपः ॥ ७३ ॥ साधर्मिकादीनां यथाहदानमानधर्मसाद्विध्यकरणकर-
 मोचनसीदत्समुच्छरणादिजिरष्टादशदेशेऽप्यसाम्प्रिप्रवर्तनादिजिश्च परोपकारोऽपि स्फु-
 ट एव ॥ ७४ ॥ इत्यंतर्बहिश्च सारत्रयमिति साधुश्रीपृथ्वीधरसाहजगसिंहसाहसुद्वण-
 सिंहादयोऽपि दृष्टान्ता योजनीया यथाहमत्र, इत्युक्ता श्रावणानाश्रित्य चलुर्भंगी ॥ ७५ ॥

श्री हेमचन्द्रसिना धर्मशास्त्रिणा मुह्यन्ति पद्मिन्देहनार धर्मिने पंचसो योना, तथा नार गामं अग्नि-
 तिणु आयु; तथा सख्यी मुह्यन्ति पद्मिन्देहनारोते पंचसो गामेनं दान आयु; ॥ ७२ ॥ एवी रीते तिकी-
 ओपां शिरोमणि सरगा एत ते दुमारणल राजाना रीजा एण अनेक प्रारत्ता पुण्यमार्गो हुता, तेमधी अहो
 नेऽकाक हावी शरण ? एवी रीते उत्तम धर्म क्रियाधी तेणे फलक पोताना तकी ने जेजे रहैग आदिक रूप
 पोतानो उपकार क्यो ॥ ७३ ॥ तेमज साधर्मिओने योग्यं दान, मान, धर्मनी सहायता, तरोनुं बोधं, तथा
 दुनीओनां उरार आदिकधी, तथा अडार देशोपां प्रमारीना प्रार्त्न आदिकधी तेनो परोपकार एण प्रगटन
 देवाए, हे ॥ ७४ ॥ एवी रीते तेनु अदरधी तथा रहारधी एण सारणु जाणुं; एवी रीते साधु श्री पृथ्वीधर
 जगसिंहसाह, तथा सुद्वणसिंहसाह आदिनां ऋतेण एण अहो यथायोग्य रीते जोनी जेग, एवी रीते नारतो-
 ने प्राथीने चोर्भंगी कही ॥ ७५ ॥

अथ अष्टादशस्तरंगः

पुन प्रकारांतरेण श्रीगुर्वादिस्वरूप प्ररूपयति—॥ मूढः ॥—वयणकिरिआ हि
सारा—ऽसारा जहा हुंति चउविद्धकवाडा ॥ तह गुरु सीसा सावय । वाया-
विणयाइरुमेहि ॥ १ ॥

बळी प्रकारातरी श्री गुरु आदिकोतु स्वरूप कहे ठे—॥ मूढनो अर्थः॥—जेम वचन अने क्रियावने
करिने सारवाळी तथा सारविनानी एम चार प्रकारानी सोपरीओ होय ठे, तेम गुरु, शिष्य अने श्रावको वचन तथा
विनय आदिक क्रियाओथी चार प्रकाराना होय ठे ॥ १ ॥

યથા વચનક્રિયાઞ્ચા સારાણ્યસારાણિ ચેતિ ચતુર્વિધાનિ કપાલાનિ, તથા ગુરવઃ શિષ્યા- શ્રાવકાશ્ચ ધાચા વિનયાદિક્રિયાન્નિશ્ચ સારા અસારાશ્ચેતિ ચતુર્વિધા. સ્થુરિતિ સટંક ॥ ૨ ॥ તત્ર કપાલાનીતિ કરોટિકા ઉચ્યન્તે, તાશ્ચ કાશ્ચન સા-ધિદાયકાઃ સ્યુર્મહાપુરુષસંબંધિન્યઃ, તાસુ ચ કાશ્ચન કેનચિદ્ધિવિવૃજિતા વદન્તિ પંચશતીં રત્નાનિ શ્હાણેતિ ॥ ૩ ॥ સઘસ્તાન્યર્પયન્તિ ચેતિ ધાચા ક્રિયા યા ચ દ્ધિ-ધાપિ સારા ઇતિ પ્રથમ. ॥ ૪ ॥ કાશ્ચિચ્ચ તથૈવ વદતિ, ન ત્વર્પયન્તિ કિચિદ્ધપીતિ ધા-ચા સારાઃ, ક્રિયા ત્વસારા ઇતિ દ્ધિતીય ॥ ૫ ॥ અપરા. પુનર્ન ધૂયુ. કિમપિ, પરં પ્રાગ્વત્સૂજિતા. પૂર્યંત્યર્થિતાનીતિ ધાગસારાઃ ક્રિયાસારાશ્ચેતિ તૃતીયઃ ॥ ૬ ॥

જેમ વચન અને ક્રિયાથી સારવાલી તથા સારવિનાની એમ ચાર પ્રકારની સોપરીયો હોય છે, તેમ ગુરુઓ, શિષ્યો અને શ્રાવકો વચનથી તથા વિનય આદિક ક્રિયાઓથી સારવાળ તથા સારવિનાના એમ ચાર પ્રકારના હોય છે, એવો સંબંધ છે ॥ ૨ ॥ ત્યા કપાલ એટલે સોપરીઓ કહેવાય છે; તેમની કેટલીકો મહાપુરુષ સંબંધ આધિષ્ઠ્યકવાલી હોય છે; તેમની કેટલીકે વિધિપૂર્વક પૂજાથી કહે છે કે, પાવસો રત્ન ધ્યો ? ॥ ૩ ॥ તેમજ તુરત તેઓ આપે પણ છે, માટે તેઓ વચનથી અને ક્રિયાથી પણ એમ વલ્લે રીતે સારવાલી છે, એવી રીતે પેહેલો જાગો જાણવો ॥ ૪ ॥ વલી કેટલીક સોપરીઓ તો તેમ વોલે છે, પરતુ કઈ પણ આપતી નથી, માટે તેઓ વચનથી સારવાલી છે, પરતુ ક્રિયાથી સારવિનાની છે, એ વીજો જાગો જાણવો ॥ ૫ ॥ વલી કેટલીક કંઈ યોલ્લતી નથી, પરતુ પૂર્વની પેઠે પૂજવાથી ઇચ્છિત પૂરે છે, માટે તેઓ વચનથી સારવિનાની પરંતુ ક્રિયાથી સાર-વાલી છે, એ ત્રીજો જાગો જાણવો ॥ ૬ ॥

या पुन सामान्यपुरुषसंबन्धिन्यो निरतिशयास्ता न वदति न च वितरति किञ्चिद-
पीति द्विधाप्यसारा इति चतुर्थश्च विकल्पः ॥ ७ ॥ तथा युवादीनप्याश्रित्य चतुर्न-
गी, तत्र गुरुणा वाकूसारत्व सङ्गपदेशकौशलवचराराया, विनय पचमहायतादिसम्पग-
नुष्ठानरूपः, तदादिमत्तया क्रियासारत्व च ज्ञाव्य ॥ ८ ॥ ततश्च केचिद्गुरवो द्विधा-
पि सारा, श्रीवज्रस्वामीप्रभृतितिवत् ॥ ए ॥ अपरे तु वाचा सारा, क्रियया त्वसारा-
स्तादृगुपदेशकौशलभृत्याश्वस्याद्याचार्यवत् ॥ १० ॥ अन्ये वाचा असारा क्रियया
पुन. सारा मूककेवढ्यादिवत् प्रत्येकबुद्ध्यादिवच्च देशनाऽनासेवक. प्रत्येकबुद्ध्या
दिरित्यागमवचनात् ॥ ११ ॥

बळी जे खोपरीओ सामान्य पुरुषोनी तथा अतिशयो विनानी होय डे, तेओ वोजती पण नथी, तेम
व६ आपती पण नथी, माटे वने रीते सारविनानी डे; एम चोथो विकल्प जाणवो ॥ ७ ॥ बळी एवी रीते गुरु
आदिकोने आश्रीने पण नीचे मुनच चोचगी थाय डे, तेम गुरुजीतु वचन समधि सारपणु उत्तम उपदेशनी कुश-
लतायी होय डे, तथा विनय पच महाप्रतौने सम्पक् प्रकारे पढान तरवारूप होय डे, अने इत्यादिकपणायें
करीने क्रिया सबधि सारपणुं पण जाणो हेतु ॥ ८ ॥ माटे केदनाक गुरुओ वने रीते सारवाळा डे, (कोनी
पेते? तोंके) श्रीवज्रस्वामि आदिकनी पेते ॥ ए ॥ बळी केदनाको वचनथी तो सारावाळा होय डे, परतु क्रियायी
सारविनाना होय डे (कोनी पेते? तोंके) तथा उपदेशनी कुशलतावाळा पासया आचार्य आदिकनी पेते ॥ १० ॥
बळी केदनाको वचनथी सारविनाना होय डे, परतु क्रियायी सारवाळा होय डे (कोनी पेते? तोंके)
मूक खंडो आदिकनी पेते, तथा प्रत्येक बुद्ध आदिकनी पेते; केमके आगममां कळ डे के प्रत्येक बुद्ध आदिन.
देशना नही सेवनारा डे ॥ ११ ॥

उत्तयथाव्यसाराश्च केचित्, उपदेशाऽकुशलाप्राश्रस्थायाचार्यवदिति ॥ १२ ॥ अथ
 शिष्यानधिकृत्य ज्ञाव्यते, तत्र त्रिनयो गुरुगोचरबहुमानः, यथाहंप्रतिपत्स्यादिविनयाध्यय-
 नाद्युक्त ॥ १३ ॥ तथाहि—परिणीत्र च बुद्ध्याणं वाया अडुवकमुणा ॥ आची-
 वा जइ वा रहसे । नेवकुळाकयाइवि ॥ १४ ॥ न परखओ नं पुरओ । नेवविचाणं
 पिठओ ॥ न जुजे उरुणाउरं । सयणे नो पन्निस्सुणे ॥ १५ ॥ नेव पद्धथिअंकुळा ।
 परखपिन्निवसजण ॥ पाएपसारिए वावि । न चिठ्ठे गुरुणंतिए ॥ १६ ॥ इत्यादि,
 अपि च, अह अट्टहिं ठाणेहि । सिग्खसीइत्ती बुच्चइ ॥ अहस्सिरे सया इत्ते । न य
 मम्ममुदाहरे ॥ १७ ॥

बकी केन्द्राको तो उपदेश देवामं अकुशल एवा पास्तथा आदिक आचार्यनी पेडे वने प्रकारे सार-
 विनाना डे ॥ १२ ॥ हवे शिष्योने आश्रीने कहे डे; त्यां वित्तप एड्ठे गुरु प्रत्ये बहुमान, यथायोग्य रीते तेमनी
 वैषावच आदिक. के जे सबधि वर्णन (उत्तरायणनर्मा) वित्तप आयपन आदिकमां कथु डे ॥ १३ ॥ ते कहे
 डे—हे साधु ! तु ज्ञानाओ प्रत्ये प्रतिकुडपणु नहीं आचरने तेमज (तमो पण थोहुज जाणो डो) इत्यादिक वच-
 ने करीने, तेमज गुल्ना सयारा आदिकने कचरवात्म्य कर्म करीने प्रगट रीते अथवा गुप्त रीते तु कदापि पण गुरनो
 अविनय नहीं करजे ॥ १४ ॥ बली आचार्य आदिकोनी पन्नेवे, अगानी, तेम पठानी वेस्तु नहीं, तेम-
 ज गुल्ना साथळ साथे पोतानो साथळ अग्रहीने वेस्तुं नहीं, तथा वीडानापर सुतां थका अथवा वेडा थकां-
 ज 'अमो आम करीये डीये' इत्यादिक न कहवुं । १५ ॥ बली गुरु समक पदांठी नहीं बालवी, तेम वने पन्-
 खाने पिंकरुप नहीं कवा, तेम पण पण पसारवा नहीं तथा गुरना निकटपर-पण वेस्तु नहीं ॥ १६ ॥ बली पण नीचे
 मुजब आठ स्थानको वने करीने शिक्षाशास साधु कह्यै; हास्य न करे, हमेशां इद्रियानं बरेम, परना मर्मो प्रगट
 न करे ॥ १७ ॥

नासीद्धे न विसीद्धे । न सित्र्या अद्दोद्युए ॥ अकोहणे सच्चरइ । सिख्वासीद्धत्ति
 बुच्चइ ॥ १८ ॥ तथा, अह पनरसद्धिवाणेहि । सुविणी इत्तिबुच्चइ ॥ नीत्रावत्ती
 अचवत्ते । अमाई अकुतूहत्ते ॥ १९ ॥ अप्प वा हिल्लिअई । पवय च न कुच्चइ
 ॥ मित्तिजमाणो जयइ । सुअ द्वाच्छु न मज्जइ ॥ २० ॥ न य पावपरिख्खेमी । नय
 मित्तसु कुप्पई ॥ अप्पियस्सावि मित्तस्स । रहे कट्ठाण जासइ ॥ २१ ॥ कत्तहम्म-
 रवज्जए ॥ बुद्धे अज्जिजायए ॥ हरिम पत्तिसद्धीणो । सुविणी इत्ति बुच्चइ ॥ २२ ॥
 इत्थादि, एवविध विनय वाचा प्रतिपद्यते, पाद्वयंति चेति छिथापि सारां केचित्त
 शिष्या श्रीचक्षुरुहाचार्येशिष्यवत् श्रीसिंहगिरिसूरिशिष्यवच्च, तदुक्त—‘सिंहगिरिसु-
 सीसाण नद्धं’ ॥ २३ ॥

श्रीव रहित नहोय, अतिचारवाळा चारित्रवाळो नहोय, अति रसत्त न होय, क्रोध रहित होय, तथा
 सत्यार्थ रक्त होय, एवी रीतनो साधु शिक्षाशील कहेवाय ॥ १८ ॥ बळी, हुवे नीचे मुजव पत्तर स्थानको वने
 करीने सुविनीत साधु कह्यो, उच्छ्वाइ विनानी वृत्तिवाळो, मारनेनां कार्यमां अस्थिरपणा विनानो, कष्ट विनानो,
 कुतूहल विनानो ॥ १९ ॥ कोइनो पण अधिक्केप (तिरस्कार) न करे, कोइने क्रोधित न करे, मित्राइ कत्तापर प्रत्युत्कार
 करे, तथा ज्ञान पामिने मद न करे ॥ २० ॥ पोतनो अपराध बीजापर नाखे नहीं, मित्र मत्तये क्रोध करे नहीं,
 अप्रिय एवा पण मित्रनु श्रेयज कहे ॥ २१ ॥ वनेश तथा विग्रहने वंके, बुद्धिवान तथा कुञ्जीनपणु धारण
 करे, दडजानुपणु धारण करे, कार्य विना आनी अक्की चेष्टा न करे, एवी रीतना गुणवाळो शिष्य सुविनीत
 कहेवाय ॥ २२ ॥ एवी रीतना निनयने वचनथी जेओ स्वीकारे ठे, तथा पाळे पण ठे, तेओ केटवाक वळे
 रीते साखाळा शिष्यो छे, (कोनी पेडे ? तोके) श्रीचन्द्र आचार्यना तथा श्री सिंहगिरिस्थिरिना शिष्यनी पेडे,
 क्यु ठे के—‘सिंहगिरिना शिष्य मत्तये चद्र’ ॥ २३ ॥

अपरे विनयं वाचा प्रतिपद्यते न च समाचरति, ततो वाचा साराः, क्रियाया त्वसारा इति युगप्रधानश्रीकालवसूरिशिष्यवत् युगप्र गानोपधातिकुशिष्यवच्च । तथाहि—
 ॥ १४ ॥ कश्चिदुत्तुर्गुगप्रधान उद्यतविहार्यपि द्वीणजंघावन्न एकत्र स्थाने तस्थौ ।
 तत्र श्राद्धैर्याधरोज्यमित्थर्द्धन्निग्धमधुराहारादि तस्मै सदावदे ॥ १५ ॥ तच्छि-
 प्यास्तु गुरुकर्मत्वात्कदापि दध्युः कियच्चिरमयमजगमः पाठ्य इति ततस्तेनाऽनशन
 जिग्राहयिषवो नक्तश्राच्छदत्तार्हाहारं तस्मै न दडु ॥ १६ ॥ अंतप्राताद्या-
 नीय विषण्ण इव तरुरे उचुः, किं कुर्मो यदीदृशानामपि बोऽर्हाद्वाद्यविवेकाः श्रा-
 ष्टाः सदपि दातुमशक्ता ॥ १७ ॥

बळी केट्टडाक शिष्यो वचनयी तो विनयने स्वीकारे ठे, परतु ते मुजम आचरण करता नयी, माटे तेओ वचनयी तो सारवाळा ठे, परतु क्रियायी सारविनाना ठे; कोनी पेटे? तोके, युग प्रधान श्रीकालकसूरिना शिष्यनी पेटे, तथा युगप्रगानेओ उपगत करुनारा कुशिष्योनी पेटे । ते कहे छे— ॥ १४ ॥ कोडक युगप्रधान गुरु उग्रविहारी हला, छला पण पणोतु कौवत द्वीण यवायी एक स्थाने रहेना दाग्या; त्यां 'आ तीर्थना आधार वृत ठे' एम विचारि श्रावको तेमना माटे योग्य वृत्तादिक सहित मिष्टान्न आदिक ह्मेशां देवा दाग्या ॥ १५ ॥ एक दिवसे तेमना शिष्यो चारे कर्मी हेवायी एवो विचार करवा दाग्या के, आ स्थिर नास करी रहेवा अण्ण गुरने ते आपणें केट्टडोक वखत पाळ्या? एम विचारि गुरले अनशन करावानी इच्छावाळा एवा ते शिष्योए नक्तवत श्रावकोए दीधेओ योग्य आहार तेमने आप्यो नहीं ॥ १६ ॥ जेवो तेवो स्वाद विनानों आहार दावीने तेओ गुरले कहेवा दाग्या के, अमो शु करीधे? अविक्की श्रावको आप सरीवाने पण योग्य आहार आदिक हेवा वतां आपी शक्ता नयी ॥ १७ ॥

आधाश्रोत्रुदेह मुमुक्षुव. निग्धाहारमार्यां नेच्छति, सञ्ज्ञेखनामेव चिकीर्षेव ॥१७॥ तत्
 श्रुत्वा सक्रोपा श्राद्धा गुह्यमेव सगद्गदं जगु, जगवन् विश्वकैर्ज्वहस्तु चिराती-
 तेष्वपि प्रत्ययत्सु जवत्सु शासनं ज्ञाति, तत्किमकाले संज्ञेखनारब्धा ॥ १८ ॥
 न त्रयमेवा निर्वेदायेति चिन्त्यम्, यत शिरःस्था अपि यूय न ज्ञाराय न शिष्या-
 णा च कदापि ॥ ३० ॥ ततस्तेरिगितैर्ज्ञात, यथाऽऽस्मत्शिष्यकृतमेतत् तत् किमत्रोऽ-
 प्रीतिदायुषा, न धर्मिणा कस्याप्यप्रीतिरुपपद्येति ध्यात्वा मुकुञ्जितमेतत्पुरं उचु
 ॥ ३१ ॥ कियञ्चिरमजगमैरस्मान्निर्वेदायुष्य कार्या साधवो यूय च, तदुत्तमाश्र-
 मेव स्वीकुर्म इति तानसौ सस्याप्य जक्त प्रत्याख्यादिति ॥ ३२ ॥

पढी तैत्रो श्रावकोने एम कहेवा ज्ञाप्य के. शरीरले डोफवानी इच्छवाळा गुरु महाराज हरे भिन्य
 आहारने इच्छता नथी, तैत्रोनी इच्छा मनेखना करवानी हुये डे ॥ १७ ॥ ते सानळी गुरसे थयेवा श्रावको
 गुरु पासे आवी गद्गद कडे कहेवा ज्ञाप्य के, हे जगवन् जगत्सर्ग जगत्सर्ग एवा श्रीअरिहत मनुओ यणो
 काळ थयां जोके अतीत थया हे, तो एणं आप सोहेव रिसजेते छे शासन शोने डे, माटे अनवसरे आप
 साहेवे सजेखना ज्ञामाटे करवा धारी छे ॥ १८ ॥ वळी आप साहेवे एम एण नहीं विचारु, के आमारायी
 श्रावकोने हवे कयाळो उपजे डे, केमके अपमारां मस्तकपर रहेडा एवा एण आप साहेव अयोने के शिष्योने रुद
 कदापि एण नाररूप थड फता नया ॥ ३० ॥ ते सानळी आचार्यनी महाराजे ते इगितोयी जाएतु के, आ
 कार्य आपणा शिष्योतु डे, माटे हवे अमीति उपजावे एवां मारां जीवित्तु मारे शु प्रयोजन छे? धर्मी मनुये
 कोइने एण अमीति न उपजाववी जोइये, एम विचारि गुरु महाराजे ते श्रावकोने कथेच वचनज नीचे मुजव कशु
 ॥ ३१ ॥ हवे अपण एवा अमो तमारी पासे तथा सावुओ पासे केन्द्राक वखत वैयारुच करवीये? माटे हव
 उच्चमार्थज अमो सापीशु, एम कही तैत्रोने स्वीर करी तेमये आहारनां पचखाण ल्यां ॥ ३२ ॥

केचिच्च वाचा विनय न प्रतिपद्यते, पर यथाहं समाचरति ततो न वाचा सारा,
 क्रियया पुन सारा., दृष्टातः स्वयमभ्युद्य ॥ ३३ ॥ अन्ये पुनरुचयथाप्यसाराः,
 कूटवादाकादिश्रमाणवत्, श्रीउत्तराध्ययनप्रसिद्धश्रीगर्गाचार्यकुशिल्यवच्च ॥ ३४ ॥
 यद्वा विनय वाचा परेभ्य उपदिशन्ति इति वाचा सारा, स्वयमपि समाचरंतीति
 क्रियासाराश्चेति ॥ ३५ ॥ एवं शेषजगत्रयेऽपि वाच्य । अथ श्राद्धानाश्रित्य ज्ञा-
 व्यते; तत्र श्राद्धाना विनय. सम्यस्वमूढपचाणुव्रतत्रिणुव्रतचलु.शिक्षाव्रतादिह-
 प, श्रीदेवगुप्तसावर्निकाद्वियथोचितप्रतिपत्तिरूपश्च ॥ ३६ ॥

बली वेदज्ञाक शिष्यो वचनधी विनयने स्वीकारता नधी, परतु यथायोग्य रीति विनय आचरे डे,
 माटे तेओ वचनधी सारवाला नधी, परतु क्रियाधी सारवाला डे, तेतु दृष्टांत पोतानी मंळज जाणी केतु ॥ ३३ ॥
 बली रीजा वेदज्ञाक शिष्यो तो वने रीते सारविनाना डे, कृववादाक आदि साधुनी पडे तथा श्री उत्तराध्ययनमां
 प्रसिद्ध एवा श्रीगर्गाचार्यना कुशिल्यनी पडे ॥ ३४ ॥ अथवा वचन वने करिने परमते विनय उपदेशे डे, माटे वचनधी
 सारवाला डे, तेम पोते पण आचरे डे, माटे क्रियावने करिने पण सारवाला डे ॥ ३५ ॥ एवी रीते वाकीना वणे
 जागाओमा पण कहेतु, हवे श्रावनेने आश्रीने कहे डे; त्यां श्रावकोनो विनय एतडे समकीत मूळ पांच आणुनत,
 तण गुणव्रत, तथा चार शिक्षाव्रत आदिक रूप, तेमज श्रीदेवगुरु तथा सार्थिक आदिकोनी यथोक्ति सेवारूप जा-
 णवो ॥ ३६ ॥

ततश्च केचित् श्राद्धा यथोक्त विनयं परेभ्य उपदिशति, आदिशब्दाद्यथाहं यथा-
 वसर तद्विषयस्मारणादि च परेभ्यः कुर्वति श्रीगुरुमुखश्रुतानुसारेणेति वाचा-
 सारा ॥ ३७ ॥ स्वयं च सम्यक् समाचरंतीति क्रियासाराश्च, श्रीवीरजिनसेवक-
 पुष्कङ्गीश्राद्धादिवत्, आधुनिकपत्तनीयं "म" हेमादिवच्च, ॥ ३८ ॥ वाचोपदिशंति न
 तु स्वयं समाचरति केचित्, गुणिकाएदस्थनदियेणवत्, नोपदिशंति तथाविधो-
 पदेशशक्त्यऽज्ञावात् स्वयंतु समाचरत्यपरे, दृष्टान्ता सुज्ञाना ॥ ३९ ॥ उभय-
 थाप्यसाराश्चान्ये श्रावकनामधारिणे विषयादिव्यासगव्यामूढा दुर्गतिपतयाज्ञवो ब्र-
 ह्मदत्तचक्रितापसश्रेष्ठ्यादिवदिति ज्ञावितास्तिस्त्रोऽपि चतुर्भ्यः ॥ ४० ॥

हवे तेथी केट्टाक श्रावको उपर वर्षेनो विनय पर्यते उपदेशे ठे, आदि शब्दथी यथा योग्य, योग्य
 अस्सरे ते सवधि याददास्ती आप्त्वा आदि क रुप पर्यते श्रीगुरु मुखथी जेप सन्नञ्जु होप ते मुञ्ज करे ठे, माटे
 तेअत्रोने वचनथी सारवाळा जाण्वा ॥ ३७ ॥ तेज पंते पण सम्यक् प्रकारे ते आचरें ठे, माटे तेअत्रोने क्रियाथी
 पण सारवाळा जाण्वा, (कोनी पेंडे? तोके) श्रीवीरमञ्जुना सेवक पुष्कङ्गी श्रावक आदिकनी पेंडे, तथा ह्यणा
 (अयकारना समयमा) पाटण निवासी भेहेला हेमा आदिकनी पेंडे ॥ ३८ ॥ वळी केट्टाक श्रावको वचनथी तो
 उपदेशे छे, परतु पंते समाचला नथी, गणिकाने घेर रहेजा नदियेणनी पेंडे, केट्टाक तेवा प्रकारो उपदेश देवाने
 अशक्त होवाथी उपदेशला नथी, परतु पंते आचरे ठे, ते सवधि दृष्टान्तो सुतज ठे ॥ ३९ ॥ हेने केट्टाक फक्त नाम
 धारी श्रावको वझे रीते सारविनाना हाप ठे, केफे तेअत्रो विषय आदिकना सगमां म्ह घयेजा ह्येठे, अने तेथी दु-
 र्गतिमां पदवानी इच्छावाळा देखाय छे, अने तेवा ब्रह्मदत्त चक्री तापस श्रेष्ठो आदिकनी पेंडे जाण्वा; एवी रीते ज्ञाने
 जोडणीअण् वळी ॥ ४० ॥

तंत्रोन्नयथा सारा केवलक्रियासाराश्चेति छयेऽपि योग्याः, शेषास्त्वयोग्या ॥४१॥
 इति योग्याऽयोग्यत्व । विभाव्य विबुधाः करोद्विद्वष्टांतात् ॥ यत्न योग्यगुणासौ ।
 विमोहविजयश्रिये विधत् ॥ ४२ ॥
 ॥ इति तपागच्छे श्रीमुनिमुंदरस्मृतिरिचिते श्रीउपदेशरत्नाकरे कपाळदृष्टातेन गुर्वा-
 दिस्वरूपनिरूपी अष्टादशवस्तरंगे समाप्तः ॥ श्रीरस्तु ॥

हृये तेषां यत्ने रीते सारवाळा, तंज क्रिय,वने करीने केवल सारवाळा ए वने योग्य डे, अने तानी-
 नात्रो अयोग्य डे ॥ ४१ ॥ एवी रीते ज्योपरीना दृष्टतयी योग्य अयोग्यनो निवार करीने हे पन्तिने' मोहन
 जित्तवानी लक्ष्मी माटे योग्य गणनी प्राप्तिमा तपो यत्न करो ? ॥ ४२ ॥

॥ एवी रीते तपागच्छमा श्रीमुनिमुंदरस्मृतिरिच रचंद्वा श्रीउपदेशरत्नाकर ग्रथमां कयादना दृष्टते कर्त्तने गुरु
 आदिकना स्वरूपने निरूपण करनारो प्रद्वारणो तरा समाप्त थगो ॥ श्रीरस्तु ॥

इति आष्टादशस्तंभः समाप्तः ॥

अथ नवदशस्तरंगः

पुनर्दृष्टान्तात्तैर्गुर्वादिगत योग्याऽयोग्यस्वरूपमाह—॥ मृद्वाम्—सप्पा मोसग उग व-
गि—वंजराची नमय धेणु सहिवंधू ॥ पिय माय कवतरणो । गुरु सायव विसय-
द्विष्टता ॥ ? ॥

वली पण बीजां दृष्टान्तं करीति गुरु आदिक स्वधि योग्य अंगान्तु स्वरूप कहे ठे—मूळको अर्थः—
सर्प, चोर, उग, वणिक, नया गाय, नड, गाय, मित्र, बधु, पिता, माता तथा कल्प वृक्ष, पट्ट्यां दृष्टान्तो गुरु तथा श्रावकना
संबधर्मा जाणची ॥ ? ॥

पदघटना सुगमैव, जावना चेष, त्रयाहि सप्यत्ति, यथा सर्पाः स्वनावादपि क्रूरकर्माणः
 क्रोधनैकप्रकृतयो जीषणाकृतयश्च स्युः, स्फुरिः फुल्लकारैर्जापयति च वाज्ञादीन, स्वयेऽप्यप-
 राधे द्वाभवावकाशास्तज्जीवितान्यऽप्यऽपहरति च, तडुक्तं—॥ ३ ॥ सर्पाणां च खज्ञाना
 च । चौराणां च विशेषतः ॥ अग्निप्राया न सिद्ध्यति । तेनेदं वर्तते जगद्, ॥ ३ ॥
 इति, तथा केचन द्यौकिका द्योकोत्तराश्च कुयुरवो रागध्रेयादिविषविषमा केवलमैहि-
 कार्थसमर्थनपरा ॥ ४ ॥ सर्वथापि जीवदयादिमूर्धर्ममपराङ्मुखा बहुविधमत्रतत्र-
 योगप्रयोगमोहनोच्चाटनवशीकरणहोमशातनपातनादिकर्मनिर्माणशीलतया क्रूरकर्मा-
 ण ॥ ५ ॥

आ गायत्री पठ रचना सुगम न ठे, ते रूढे ठे, सप्य ण्टने जेम सर्पा स्वनापयीज क्रूर कार्यो करनारा,
 क्रोध युक्त मन्त्राववाला तथा जपकर आकृतिवाला होय ठे, तेमज तेओ मोटा फुल्लानाओयी बानक आन्तिकोने
 वीचरावे ठे, वडी स्वप्न अपराय हेते ठते पण तेओना जीवितने पण हरे ठे, कतु ठे के—॥ ३ ॥ सर्पांना,
 बुच्चाओना तथा चोरोना अग्निभायो विशेषे करीने सिद्ध थता नथी, अने तेयीज आ जगत् नजी शके ठे
 ॥ ३ ॥ इति, पृथी रीते केट्ट्याक व्यैकिक तथा द्योकोत्तर कुगुरुओ राग हेप आदिक जेरथी विषम थयेना, तथा
 केनळ आ द्योक सर्वपि स्वार्थ साधनामाज तत्पर थयेवा ॥ ४ ॥ तथा मर्वेथा प्रकारे जीव दया आदिक मूलवाला
 धर्मना मर्मथी पराङ् मुख थया थका, घणा मर्करना मत्र तनना योग तथा प्रयोग, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण
 होम, शानन तथा पातन आदिक तार्था कस्याभां तत्पर थयेवा होनाथी तेओ नूर मर्मावाञ्छ होय ठे ॥ ५ ॥

सुविहितगुर्वाङ्गिचोराऽनुब्रमत्सरप्रसरवशाप्रोन्मिपञ्चोपन्नजीपणाः शुद्धधर्मसार्गप्रवृ-
त्तान् स्वावर्जनप्रसत्तान् वा ज्ञापयति ॥ ६ ॥ वाङ्मिशजनास्तादृक्कुक्षुप्तसत्वजयोऽिक-
विधायिवाशुम्भिसाम्भवे स्वद्वेषेऽप्यपराधपदे च स्वमनोऽनुकृद्वाचरणादिरूपे शा-
पाङ्गिनि कार्मणाङ्गिनिर्वा सद्योऽप्यपहृरति तज्जीविताद्यपि निश्चिहाहृदया ॥ ७ ॥
एवविधा द्वौकिका बह्व्योऽपि महर्षयः प्रसिद्धाः, परिवाजकश्चात्र निदर्शयते, तथाहि
—॥ ८ ॥ यत्रचिरसन्निवेशे रोहीतकनामा परिवाजकस्तप्यते स्म तपः, सोऽन्यदा
म्वचिदुपब्रुव्यतेजोद्वेग्याद्ब्रुव्युपायः सस्यगनुष्ठिततट्टिधर्तृब्रुव्यस्तेजोद्वेग्यां ॥ ए ॥

तेमत्र बळी उत्तम आचारवाळा गुरु आदिकरपर घणोज मत्सर धारयाधी उठळता एवा रोपना समूहधी
जयकर थयेद्वा होय डे, तथा शुद्ध धर्म मार्गमा प्रवर्तनारात्रोने त्रयवा पोताने शिवायण आपनारात्रोने तथा
जोळा लोकाने तेत्रो मरावे डे ॥ ६ ॥ तेमत्र गूर हृदयमाळा थया थका तेवी रीतना कुट्ट माणीत्रोने जयनो उडालो
करानारा वचनोरूपी भिन्दिपना आम्वगेवने करीने पोताना मनने अमुब्रुवन न पने तेवा आचरण आदिकरूप स-
द्वेष अपराध होते उते पण शाप आदिकोधी अथवा मसण आदिमोने करीने नुस्त तेत्रोना जीवित आदिकोने
पण हरी वे डे ॥ ७ ॥ एवी रीतना घणा द्वौकिक महर्षिओ प्रसिद्ध छे, अही तेवा एक परित्राजकनुं पृथत
वेरसाडे डे, ते नीचे मुजव डे ॥ ८ ॥ कोइक सन्निवयमा गह्वीतर नामे परित्राजक तप तपतो हत्ये, तेने एक
बळते त्यांक तेजोद्वेग्यानी ब्रुव्यनो उपपय मळी जवाधी तेनी विधि सारी रीते आराधिते तेणे तेजोद्वेग्या
मेळवी ॥ ए ॥

अन्यदा तरुतज्ञस्थस्य तस्य शिरसि तरुशिर.स्यवज्ञाकया पुरीषव्युत्सर्जनं कृतं,
ततो ह्येन तेन तेजोशयया सा जसमसाचके ॥ १० ॥ अन्यदा स जिज्ञासै पुरम-
विद्यत्, प्राप्तो जिनदासश्रेष्ठिष्टह, तत्र श्रीमदाहृतधर्मजावितहृदया नाम्नाऽर्थतोऽपि
च शीघ्रवती गृहस्वामिनी पतिशुश्रूषाव्यया ॥ ११ ॥ कियच्छिद्ववेन जिज्ञां जलुमुद्यता
यावत्सावन्महाक्रोधनप्रकृतिर्विज्ञवदानरुष्टः स परिव्राट् वनाकागतिगोचरीकर्तुं तेजो-
द्वेषया मुमुक्षुर्धूमज्जगार मुखात् ॥ १२ ॥ तत्स्वरूपं च दृष्ट्वा सम्यक्श्रीजिनधर्मनिर्म-
दशीघ्रगुणाऽवाप्तऽत्रिज्ञानज्ञातवज्ञाकादाहव्यतिकरा सर्वांगहृदशीघ्रकवचा स्माह सा
त प्रति, जह्र नाह सा वज्ञाकास्मीति ॥ १३ ॥

एक वक्षते तं एक वृद्ध नीचि वेजो हतो, एष्टवामां ते वृद्धनी दोषपर वेडेही एक वाग्नीए तेना मस्तकर
वीड करी, तेथी क्रोधायमान थइ तेणे तेणीने तेजेनेश्यायी वाली नाबी ॥१०॥ पडो एक सपेय ते जिज्ञा माटे
नगरमां गये, तथा त्या जिनदास शेठने घेर पईचयो, त्या श्रीमद्वेदन धर्मयो चाविन डेह्म्य जेशुनु, तथा नामयी
अने अर्थथी पण शीघ्रवती गेजाली पोताना स्वामिनी सेवमां गुयेयेनी हती, ॥११॥ अने तेथी जरा वित्त-
वयी जेष्टवामां ते जिज्ञा देवाने तैपार थइ, तेष्टवामां महा क्रोधिष्ट प्रकृतिवालो ते पश्चिनाजक विज्ञवदानयी रोपयुक्त थइने
तेणीने वगनीनी हानते पडोचान्ताने तेजेनेश्यां पुष्टवानी इच्छायी मुखमायी बुवाका कट्टाका दाग्यो, ॥१२॥ ते
स्वरूप जइने सम्यक् एवा श्रीजिनधर्म तथा निर्मन एवा शीघ्रगुपयी प्राप्त थयेना अविधिज्ञानयो जाणेश्व डे
वगनीना दाहसवधि घुचाल जेणीए, तथा सर्वे अगे हट दाज्ञरूपी कवचवाळी एवो ते शीघ्रवती तेने कहेवा जगो
के, हे जह्र! हु कर ते वगनी नयी ॥ १३ ॥

तद्वचनचकितश्च स मनाशुपशात इवाऽप्राङ्गीक्षां, कथं वेत्सि वदामकाव्यतिकर ? साऽ-
 न्नाणीत्, एतत्ते वाणारसीवासी कुद्वान्नः कथयिष्यति ॥ १४ ॥ ततो विस्मितः स
 वाणारस्यां गत, मिद्वितमात्रस्तेन कुद्वान्नेन प्रथममेव ज्ञापितश्च नञ् शीद्विवत्या प्रे-
 पितोऽसि संगयप्रश्नार्थ ॥ १५ ॥ तत् श्रुत्वा भृशं चमस्कृतः सः तत. पुनरुक्त कुद्वान्-
 न्नेन, शीद्वियुणेन शीद्विवत्या अवधिज्ञानमुत्पन्न, ममापिच, तेन यथास्थित वदामकादि-
 खरूपं जानीम. ॥ १६ ॥ तत् प्रतिबुद्ध. स सम्यक्त्वशीद्विसुन्नय धर्म प्रत्यपद्यते-
 ति, एवं लोकोत्तरानाश्रित्यापि निदर्शनानि स्वय ज्ञेयानि ॥ १७ ॥

ते वचनयी आश्चर्य पामीने तं परित्राजक जरा जाणे उपशात ययो ह्यंग नहीं, तेम तेणनि पृठवा द्वाग्यो
 के, ते ते वगनीनु वृचात श्री रीते जाण्यु ? त्पारे तेणीए वबु के, ते हकीकत तने वाणारसी नगरीनो वासी कुचार
 कहेंगे ॥ १४ ॥ ते साजळी आश्चर्य पामीने ते वाणारसीमा गयो, त्या मळताज ते कुचारं पेहेलेथीज तेने कबु के,
 हे नञ् ! तने गीद्विवतीण सजय पृठवा मोटे मोक्यो छे नी ? ॥ १५ ॥ ते साजळी ते अत्यत आश्चर्य पाम्यो,
 त्पारे कुचारं फरिने तेने कबु के, शीद्वियुणे करिने शीद्विवतीने अवधिज्ञान उत्पन्न थयु ठे, तेम मने पण उत्पन्न
 थयु ठे, अने तेथी ते वगदिवु यथास्थित वृचात अमो वने जाणीये ङीये ॥ १६ ॥ ते साजळी ते परित्राजके
 प्रतिबंध पामी सम्यस्त्व तथा शीद्विवती मनोहंरु धर्म स्वीकांयो; ण्वी रीते लोकोत्तर गुप्तोने आश्रीने पण
 दृष्टांतो पोतानी मेळेज जाणी होंवां ॥ १७ ॥

यद्याऽपहरति शुद्धधर्मजीवितानि जनाना स्वार्थसिद्ध्यनुसारिस्वेद्याग्ररूपितधर्मनासोप-
वेशयर्शनक्रियादिति, इति सर्पसहशा केचन गुरव ॥ १८ ॥ उक्तच—सर्पो
इह मरण । कुगुरु अणताणि कृणुइ मरणाइ ॥ तोवरि सर्प गहिउ । मा कु-
गुरुसेवाण चइ ॥ १९ ॥ इत्युक्ता सर्पदृष्टातज्ञावना । अथ आमोसगति, आमो-
पकाश्वोरनिशेषास्ते हि शम्नादिनिर्जापयिवा झोकाना धनानि मुण्णति ॥ २० ॥
एव केचित् कुडगुरुत्वाद्यजिमानभृत केवद्वेद्विकार्यप्रतिवद्धा शापकार्मणपक्त्वहि-
करणशिरोजवरस्फोटादिनियो विविधा प्रदर्श्य शुद्धधर्मनान्यामुण्णति सुग्धज-
नाना, वसुराजस्येव पर्वतक, तथाहि—॥ २१ ॥

अथवा स्वार्थनी सिद्धिं अनुसारे पोतानी इच्छा मुज्ज प्ररूपेना एवा र्मानासूर्य उपदेशना देवा-
मवापणा तथा त्रिया आदिकवदे कर्मीने लोकाना शुद्ध धर्मरूप नीयित्ते तेओ हरी ने डे, माटे एवा केट्टाक
गुरओ सर्प सरखा होयडे ॥ १८ ॥ र्द्यु डेके—सर्प तो एक वखत मरण करे डे, परत कुगुरु अन्ता मरणो
करे डे, माटे सर्पने ग्रहण करयो सागे, परत दुगुग्गने सेववा सारा नर्हा ॥ १९ ॥ एनी रीते सर्पना दृष्टतनी
जावना र्हनी हवे आमोसग एग्ने चोर विशेषे, तेओ इत्थ आदिकोयी नरायीने लोकाना धन हरी डे डे,
॥ २० ॥ एवी रीते केट्टाक तुवना गुणणा आदिमना अजिमानयी नरेनाओ तथा केवव आ लोक सब-
धिज स्वार्थमा मचेला यइने शाप, कामण, इतिमहार करवापण, तथा मत्तक पेट कोरुया आदिमना विवि-
ध प्रकारना जयो देखादीने झोळ्य लोकाना शुद्ध धर्मरूपी बनोने तेओ हरी डे डे, (कोनी पेडे ? तौके)
बसु मजा मरये जेम पर्वत, ते र्हडे डे—॥ २१ ॥

शुभ्रितमतीपुर्या द्वीरकठंबोपाध्यायपुत्र पर्वतक. पितर्युपरते पत्पट्वीमारूढडडात्रान् ज्ञा-
णयति ॥ २२ ॥ तस्य सहा-यायिनौ वसुर्नाम राजा नारदश्च, तत्र वसुनृपः स;
त्ववादी गगनतद्वावद्वविस्फाटिकपीडस्थ सिंहासनमध्यास्ते ॥ २३ ॥ सत्यवादि-
महिम्ना नृपस्य सिंहासनं गगनस्थायीति जने प्रसिद्धि. ॥ २४ ॥ अन्यदोपा-
ध्यायपुत्रद्वान्नामध्यापयन्नैर्यैष्टव्यमित्यत्राजैडवागैरिति व्याख्यानयस्तदा तत्रागतेन
नारदेन मेवं वादीरूपाध्यायेनाऽजशब्देन त्रिवार्षिका त्रीहय. प्रोक्ता, इति प्रति-
षिद्ध ॥ २५ ॥

शुक्तिमती नामनी नगरीमा क्षीरद्वक्क नामना उपा यायनो पुत्र पर्त, (पोतानो) पिता मृत्यु प्राप्तं
ज्जे तेनी पट्टनीपर वेसीने जिय्योने जणववा द्वाग्यो ॥ २२ ॥ वसु नामे राजा तथा नारद तेना सहा यायिञ्चो
एट्ठे साथे जणनारात्रो हुता, तेमाथी वसुराजा सत्यवादी होयायी आकाशशब्दमा अधर र्हेदी स्फटिदनी
पाटपर र्हेवा सिंहासनपर वेसतो हुतो ॥ २३ ॥ सत्यवादीना माहात्म्यथी राजानु सिंहासन आकाशमा स्थिर
रहेनाए ठे, एम दोकोमा ग्याति थड हुती ॥ २४ ॥ एक दहानो उपा यायनो पुत्र (पर्वत) जिय्योने जणारतो
थको 'अजोवने करीने होम करवो' ए पाठनो 'अज' एट्ठे 'वकरात्रो' एवो अर्थ करवा द्वाग्यो; ते वग्ते
त्या ओर्यां नारदे तेने प्रतिपेव वर्यो के, तु तेनो एवो अर्थ नही कर? उपायायजीए तो 'अज' शब्दनो
अर्थ जण वर्योनी (जुनी) शाल (चावन्न) कतो ठे ॥ २५ ॥

मित्रो विवदमानौ च तौ शिरपण चक्रतुर्वपुनृप च साक्षिण, तत पर्वतो वसु-
 नृप स्वपङ्क प्रतिपादयितु पूर्वं गत्वा विविधोपरोधनीतिदर्शनादिचंगिति पर्यवास-
 यत् ॥ १६ ॥ ताञ्जिरप्यप्रतिपद्यमान त मत्वा स्वमातुरग्रे तत्स्वरूप न्यरूपयत्
 तदनु सा तज्जननी वसुनृप स्माह, देहि मे गुरुपत्न्या पुत्रजीवित, यद्वा प्रती-
 ङ्गाधुनैवेमा गुरुपत्नीहत्या ॥ १७ ॥ इत्युक्त्वा यावत्सा मरणोद्यताऽनूत् तावद्
 नीतिस्तद्वच प्रत्यपद्यत नृप ॥ १८ ॥ ततो विवदमानौ प्राप्तौ तत्र नारदपर्वतौ,
 तत्र पर्वतकपक्ष कुर्वन्तृप सद्यो देवतया चपेटाहतौ नृमौ नरके चापतदिति
 ॥ १९ ॥ एवमपरेऽपि दृष्टाता ज्ञेया, इत्यामोपक्रमावना ॥ ३० ॥

एवी रीते परस्पर विवाद करता एया तेओ वक्षेण मस्तक आपयानी शरत करी, तथा ते माटे वसुराजने
 साक्षी रथो, तेथी पर्वत वसुराजने पोतानो पद्म अमीकार करावया माटे प्रथमयीज तेनी पासे जट, विविध मगराचा
 आग्रह तथा जय देखारुना आदिकृथी समजाववा लाग्यो ॥ १६ ॥ एतु तेथी एण तेने नर्हा स्वीकार करतो जाणनि,
 तेणे पोतानी माता पासे ते वृचात म्हु, त्यारे तेनी माता वसुराजा पासे जट कहेवा लागी के, मने गुरुपत्नीने पुत्रतु
 जीवित दे? अथमा तो अत्यारेज गुरुपत्नीनी हत्या स्वीकार? ॥ १७ ॥ एम म्हनि जेद्वामा ते मरण पापयाने
 (आपयात करयाने) तेयार थद, तेदनामा राजाए करीने तेणीतु वचन स्वीकार्यु ॥ १८ ॥ एवामा नाद अने पर्वत
 वक्षे विवाद करता थका त्या आख्या, त्या पर्वतनेो पद्म करता एया राजने तुल देताए उपाट मार! गृचीपर तथा नरकमा
 पाज्यो ॥ १९ ॥ एवी रीते वीजाएण दृष्टतो जाणी देया, एवी रीते आमोपक समधि जायना जाणयी ॥ ३० ॥

उगति, उका नाम धूर्त्ता, मधुपिधानविपकुत्रसमानाः, केदारमार्जारारदिसदृशा, यथा
 ते कपटकोटिपटुतया मुग्धजनाना धनान्यपहरति जीवितान्यपि च ॥ ३१ ॥
 तथा केचिद्गुर्वाजासा हृदि नास्तिका; वहिः क्रियादंजमधुरवचनादिभिर्जनान् विप्र-
 दास्य स्वैष्टसिद्ध्यनुसारेण धर्मान्नासेशानादिभि सुविहितसाधुसगनिवारणादिभि-
 श्च तेषा शुद्धधर्मधनानि शुद्धधर्मजीवितानि चाऽपहरति ॥ ३२ ॥ तदुक्तं—पी-
 यूपधारामिव दानिका प्राक् । प्रद्वजनीया गिरमुद्गिरति ॥ पुनर्विपयोकेऽखिलद्वे-
 पधानी । सैवातिशेते वत काङ्कट ॥ ३३ ॥ अपि च,—जटामौढ्यशिखानसम्-
 वदक्रानान्यादिधारणे ॥ मुग्ध जन गर्धयते । पाखना हृदि नास्तिका ॥ ३४ ॥

उगो एतद्दे वृत्तौ, तेऽत्रो मधवी दार्ढ्या केरना यना सरावा, केदारानी मालावाळा वीद्वाना आदिक्ली
 पंके होय डे, तेऽत्रो जेम कपःनी रीतिनी चुराड्या चोळा द्वाकोला धनो तथा जवितेने पण हरे डे ॥ ३१ ॥ तेष
 केटनाक गुर्वाजासो हृदयमा तो नास्तिक होय डे, परतु महारथी क्रियाना दन तथा मधुर रचन आदिकथी द्वाकोले
 उगीने पोतानी इच्छित सिद्धिने अनुसारे धर्मना आनास सरथी देवाना आदिशेथी तथा उत्तम साधुना संगतु
 निवारण करमा आदिकथी तेऽत्रोला शुद्ध धर्मरूप धनोने तथा शुद्ध धर्मरूप जीवितेने हरी डे डे ॥ ३२ ॥ क्लु
 डे के—कपटीऽत्रो प्रथम तो अमृत धारा सरथी उगाड्याळी वाणी बोड्डे डे, परतु वियाक रगते (अन्ते) समस्त दोपोने
 उत्सन्न कर्त्तीयकीते कानकूट केर करता पण अधिक थाय डे. ए ग्वेदनी वात डे ॥ ३३ ॥ चली पण, हृदयमा नास्तिक एवा
 पाखनीऽत्रो गत्र, मुंनपण, शिखा, जजप, तथा नग्नपण आदिक्ले धारवतने करीने मुग्ध दोखले उगे डे ॥ ३४ ॥

मिथो विवदमानौ च तौ शिरपण चक्रतुर्वपुनृप च साङ्गिण, तत पर्वतो वसु-
 नृप स्वपङ्क प्रतिपादयितु पूर्व गत्वा विविधोपरोधक्षीतिदर्शनादिभ्रगिनि पर्यवास-
 यत् ॥ २६ ॥ तान्निरयप्रतिपद्यमान त मत्वा स्वमातुरग्रे तत्स्वरूप न्यरूपयत्
 तदनु सा तजननी वसुनृप स्माह, देहि मे गुरुपत्न्या पुत्रजीवित, यद्वा प्रती
 द्वाधुनैवेमा गुरुपत्नीहत्या ॥ २७ ॥ इत्युक्त्वा यावत्सा मरणोद्येयताऽञ्चूत् तावद्
 क्षीतस्तच्छच प्रत्यपद्यत नृप ॥ २७ ॥ ततो विवदमानौ प्राप्तौ तत्र नारदपर्वतौ,
 तत्र पर्वतकपय कुर्वन्नुप सद्यो देवतया चपेटाहृतौ नृमौ नरके चापतदिति
 ॥ २८ ॥ एवमपरेऽपि दृष्टाता ज्ञेयाः, इत्यामोषकभावना ॥ ३० ॥

एनी रीति परस्पर विवाद करता एवा तेओ वनेए मस्तक आप्तानी शरत करी, तथा ते मोटे वसुराजाने
 साङ्गी वर्या, तेथी पर्वत वसुराजाने पोतानो पङ्क अगीशर रूपाया मोटे प्रथमयीज तेनी पासे जन्, विविध प्रकारना
 आप्रह तथा नय देवाना आदिकक्षी समजावया द्वाग्यो ॥ २६ ॥ पतु तेथी एण तेने नही स्वीकार करतो जाणीनि,
 तेणे पोतानी माता पासे ते दृचान वधु, त्यारे तेनी माता वसुराजा पासे जद् कहेम द्वागी के, मने गुरपत्नीने पुत्रनु
 नीहित दे? अथय तो अत्यारेज गुरपत्नीनी हत्या स्वीकार? ॥ २७ ॥ एम कहीने जेट्तामा ते मरण पामयाने
 आप्यात कराने) तयार थद्, तेट्तामा राजाए नरीने तेणीनु वचन स्वीकार्यु ॥ २७ ॥ एट्तामा नारद अने पर्वत
 विवाद करता थमा त्या आब्या, त्या पर्वतनो पङ्क करता एया राजाने तुस्त देताए उपाट मारो पृत्रीपर तथा नरकमा
 २८ ॥ एनी रीते वीजापण दृष्टातो जाणी देवा, एनी रीने आमोषक सन्धि भावना जाणवी ॥ ३० ॥

उगति, उका नाम धूर्ता, मद्युपिधानविपकुत्रसमाना, केदारमार्जारदिसदृशा, यथा
 ते कपटकोटिपटुतया मुग्धजनाना धनान्यपहरति जीवितान्यपि च ॥ ३१ ॥
 तथा केचिद्गुर्वीजासा हृदि नास्तिका, वहिः क्रियादन्तमधुरवचनाद्विजिर्जनात् विप्र-
 द्वास्य स्वेष्वसिद्धयनुसारेण धर्मान्नासेशनाद्विचि सुविहितसाधुसगनिवारणाद्विचि-
 श्च तेषा शुद्धधर्मधनानि शुद्धधर्मजीवितानि चाऽपहरंति ॥ ३२ ॥ तदुक्त—पी-
 यूपधाराभिव दानिका प्राक् । प्रद्वन्ननोया गिरमुद्गिरति ॥ पुनर्विपाकेऽखिद्वजे-
 पयान्नी । सैवातिशेते वत काद्वकूट ॥ ३३ ॥ अपि च,—जटामौल्यशिखाचस्म-
 वद्वन्नागन्याद्विधारणे ॥ मुग्ध जन गर्धयते । पाखना हृदि नास्तिकाः ॥ ३५ ॥

उगो गच्छेत्तुर्वीजासो मयथी दकैवा जेना यना सरस्वा, केदारनी माळावाळा वीद्वाना आदिकनी
 पंजे होय डे, तेओ जेम कपटनी रीतिनी चतुराव्यो नोळा दोकोना धनो तथा जाचितेने पण हरे डे ॥ ३१ ॥ तेप
 केव्नाक गुर्वाचासो हृदयमा तो नास्तिक होय डे, परतु महाराथी क्रियाना दन्न तथा मधुर रचन आदिकथी दोकोने
 उगीने पोतानी इच्छित सिद्धिने अनुसारे धर्माना आनास सरसी देशना आदिकेथी तथा उचम साधुना सगटु
 निवारण करमा आदिकथी तेओना शुद्ध धर्मस्व धनोने तथा शुद्ध धर्मस्व जीवितोने हरी डे डे ॥ ३२ ॥ कळु
 डे के—कपटीओ मयम तो अप्रमृत धारा सरस्वी उगाव्वाळी वाणी वोजे डे, परतु विपाक यमते (अत्रे) समन्त दोपोने
 उत्पन्न करती थकी ते काद्वकूट जेर कना पण अधिक थाय डे. ए खेदनी वात डे ॥ ३३ ॥ वळी पण, हृदयमा नास्तिक एवा
 पाखनीओ जटा, मुग्धपणुं, शिखा, जग्म, तथा नमपण आदिकने धारवावने करीने मुग्ध दोकोने उगे डे ॥ ३५ ॥

केदारमार्जारसंबंध पुनरय, तद्यथा—म्वचिद्धृक्षाधस्तिचिर्विसति, अन्यथा तस्मि-
न् प्राणयात्रायै पञ्चशाब्दिक्षेत्रेषु प्राप्ते शशकस्तटावासमरुधत् ॥ ३५ ॥ किय-
द्विद्धिने स्वाश्रय प्राप्त शशक प्रत्याह, शीघ्र निर्गच्छ, ममायमाश्रमः, शशोऽ-
वक् ममैवायमिति ॥ ३६ ॥ तित्तिरि—पृच्छयता प्रातिचेडिमका, उक्तच—
वापीकूपतन्नागना । गृहस्योपवनस्य च ॥ सामतप्रत्यया सिद्धि—रित्येव मनुरत्र-
वीत् ॥ ३७ ॥ शश—मूर्ख किं न श्रुत स्मृतिवचः ? प्रत्यक्ष यस्य यद्भुक्त ।
केनाद्य दशवत्सरान् ॥ प्रमाण नाङ्गराण्यत्र । साङ्गी वा तस्य तद्भुजेत्
॥ ३८ ॥

वेदास्ती मालवाद्या विनामातु श्रुत तो नीचे मुजर डे—कोईरु वृद्धनी नीचे एक तेत्तपद्मी रहेतु
हत्तु, एक यत्ने ते चरवा मटे पाकेवा चानना क्षेत्रेमा गयु, ते ययते एक ससवे आवीने तेलु स्थान दया-
य्यु ॥ ३५ ॥ केनेक द्विसे ते तित्तिरि पोताने स्थानके आवीने ससलाने कहेया लागु के, तु अर्हार्थी
जनदी चायो जा ? आ मार म्यान डे, त्यारे ससवे म्यु के, आ स्थान तो मारज डे ॥ ३६ ॥ तित्तिरे कहुं
के, ते मटे तु पामेशीत्रोने पूढी जो ? कहु डे के—यान, क्रया, तलाव, घर, तथा रगीचानी मालिकीनी मातरी
पामेशीघारा थाय डे, एम मरुद्रुपि कहे डे ॥ ३७ ॥ त्यारे ससवे कहु के—अरे ! मूर्ख ! त शु स्मृतिनु वचन
सानच्यु नयी ? क्षेत्र आनिक प्रत्यङ्क रीते जेणे दश यो मुपि जोगयु डे, ते तेनुज कहेवाय छे, तेमा दस्तावेज
के साङ्गीनी कइ जर रहेती नयी ॥ ३८ ॥

तथा च नारदमते—मानुषाणां प्रमाणं स्याद्ब्रह्मिणो दशवार्षिकी ॥ विदुर्गानां
 त्रिंशत् ॥ यावदेव समाश्रयः ॥ ३ए ॥ ततो यद्यपि तवाश्रयस्तथापि शू-
 न्यो मयाश्रित इति ममेवाय, तित्तिरि—स्मृति चेत्यमाणयति तस्मात्तान् पृ-
 न्नामस्ते यस्मै ददति तत्यायमिति ॥ ४० ॥ ततो गगापुत्रिने केदारककणान्न-
 रणस्तपोनियमव्रतस्थो दृष्टो दधिकर्णो नाम मार्जारः, धर्मास्माय विवाहं विनन्वि-
 त्युक्ते, शश—ब्रह्ममेनेन कुञ्जए,—न हि विश्वसनीय स्यात्तपश्चन्द्र स्थितेऽधमे ॥
 दृश्यते चैव तीर्थेषु । गङ्गवर्त्तास्तपस्विन ॥ ४१ ॥ तत् श्रुत्वा दञ्चनिधिस्तद्विश्वासनाया-
 दित्याग्निमुखो द्विपादावस्थित उर्ध्वबाहुर्निमीलितनयनो धर्मदेशनामकरोत्सः ॥ ४२ ॥

कली नारदनो मत एण नीचे मुजर डे— मनुष्येना समथमा दश वर्षेनो जोगरने प्रमाणचूत डे, अने
 पत्नी तथा निषेचनी माविकी न्यामुपि तेओ रहेता होय त्यामुजिनी डे ॥ ३ए ॥ माटे जोके आ तारु स्थान
 डे, एतु ते शून्य पनेनु होयायी, तेमा हु रबो, माटे ते हरे माग्न डे; ते सानळी तित्तिरे कलु के, आ गग-
 तमा जो तु स्मृतिने प्रमाणचूत गण्डे डे, तो चाडो अपणे ते स्मृति जाणनाराओने प्रडीये, तेओ जेने अपणे,
 तेनु आ म्यान ॥ ४० ॥ पडी तेओए गगाना क्कणना आचपणालो, तपनियम तथा त्रतमा
 म्भिय थयेने दधिकर्ण नामनो विज्ञानो जोयो, आ थर्मात्या विवाह कपणे, एम कहते डेने सप्तशो कहेवा
 द्वाराथे के अरे! आ नीचयी तो सधुं, केमके कशटी तथा अपणनो तप विवास करा जायक नयी, केमके
 एग गलु कापनारा वण तपस्वीओ तीथामा देखाय डे ॥ ४१ ॥ ते सानळी कथना जमार सरबो ते विज्ञानो
 तेओने विवास उपजापरा माटे सूर्य समुख ते एने उर्जीने, तथा श्वे हाथो उचा करीने अने आंखो मीचीने
 नीचे मुजेन थपोपदेश करवा लाग्यो ॥ ४२ ॥

अहो—असारोऽय ससार, स्वप्नसदृशा प्रियसगमा, तच्छर्मादन्या गतिर्नास्ति ॥४३॥ उक्तच—यस्य धर्मविहीनस्य । दिनान्यायाति याति च ॥ स लोहकारज्ञ-
 खेत्र । श्वसन्नपि न जीवति ॥ ४४ ॥ इत्यादिदेशना श्रुत्वा विश्वस्तौ तावाहत्, न-
 पस्मिन् धर्मदेशक आत्रयोर्विवाद धर्मशास्त्रेण जम्त्वा निर्णय देहि ॥ ४५ ॥ यो मि-
 व्यावादी स ते जडय इति, मार्जार—आ शात पाप शात पाप, निर्विषोऽह नर-
 ककारणाच्छिसाया ॥ ४६ ॥ अहिसापूर्वको धर्मो यस्मात् सर्वहिते रत ॥ यू-
 कामच्छुणद्गदादी—स्तस्मान्नानपि रज्जयेत् ॥ ४७ ॥ हिसकान्यपि नृतानि । यो हिन-
 स्ति सुनिर्गुण ॥ स याति नरक घोर । कि पुनर्य शुद्धानि च ॥ ४८ ॥

अहो! आ ससार तो असार डे, भ्रमिओना सगमो रम सरला डे, माटे र्म शिमाय वीजो (ससा-
 रयी तरगनो) उपाय नयी ॥ ४३ ॥ कतु डे के—धर्म रहित एवा जे माणसना दिगसो आवे डे, अने जाय डे,
 ते बहारानी यमणी फेड श्रास वेतो यको पण जीप्तो नयी (अर्थात् मृत्यु पापेना सम्वो डे) ॥ ४४ ॥ इत्यादि
 देशना साजळीने पिश्यास पापेना एरा तेओ म्भे (तिविर अने ससत्रो) तेने कहेगा वाग्या के, हे तपस्वी धर्मा-
 पदेशक! अमारो विबान् धर्मशास्त्र पूर्वक जागिने तु तेनो निर्णय करी त्राप ॥ ४५ ॥ जे मियावाडी थाय, तेने
 तारे जइण करयो, ते साजळी विबानो मोत्या के, अरे! पाप शात थयु! शात थयु! (राम! राम! राम!)
 नरकना कारणरूप हिसायी हु तो कटाडी गयो डु' ॥ ४६ ॥ अहिसारूप धर्म सर्वोत्कृष्ट डे, केमके ते धर्म
 सर्वने हितकारी डे, अने तेडवा माटे जू, माकर, तथा नरत आदिकेतु रइण करु ॥ ४७ ॥ हिमक प्राणीओने
 पण जे कोइ निरन्य थडने मारे डे, ते घोर नरकमा जाय डे, त्यारे उचम प्राणीओने मारनाराओनी तो गतज शु
 करी? ॥ ४८ ॥

तद्वेदं वाच्य, पर दृष्टोऽहं दूरान् युवयोर्चापोत्तरं शृणोमि, तत्कथं न्याय कुर्वे,
तत्समीपे शूचा निवेद्यता ॥ ४ए ॥ यथा विज्ञातपरमार्थं वदतो मे परलोक-
वाधा न स्यात्, उक्तं च—मानाक्षा यदि वा क्रोधा—ल्लोनाक्षा यदि वा
जयात् ॥ यो न्यायमन्यथा व्रूते स याति नरक नर. ॥ १० इत्याद्युक्त्वा तथा
निश्चासितौ यथातिक्रमागतौ, तावदेक पाठेन छितीयो दृष्ट्याक्रम्य हताविति,
इति उक्तशंभुवचना ॥ ११ ॥ वणिक्ति, वणिजो यथा मूढ्येनैव जनाना क्रया-
णकार्थपर्ययति, नान्यथा, आवर्जयति च ग्राहकान्मायामधुरवचनादिन्निर्यथा ते ना-
ऽन्यत्रापणादौ व्रजंति, सुखेन च वचयितु शम्या स्यु. ॥ १२ ॥

माटे ते हिसानी तो यातज रुखी नहीं, परतु हु टुफ़ुडु, माटे रूखी तपारु गेड्डवु हु सानळी शक्तो
नथी, माटे न्याय केवी रीते करी शकु? माटे मारी पासे आनीने तपारे जे रुड रुहेवु होय, ते कहो? ॥ ४ए ॥
के जेथी परगार्थ जाणुनि तपोने उत्तर देयाथी भने परलोक समीपि याथा न थाय, रुखु ते के—मानयी अथवा
कोथयी अथवा लोकोथी अथवा जयथी जे अन्याय रुहे डे, ते मरुय नरके जाय डे. ॥ १० ॥ इत्यादिक कहनिं तेओने तोणे एयो
तो विनास उपजच्यो, के जेथी तेओ वझे नजीक आख्या, के तुल एरुने पाथी तथा रीजोने दाढयी दापीने तोणे
मारी नाग्या, एरी रीते दगना दृष्टातनी जानना जाणरी ॥ ११ ॥ हरे वणिजो जेप मूढ्य दोडनेज दोकोने
करियाणा आदिक आपे डे, परतु मूढ्य हीम विना आपता नथी, तपज कष्ट युक्त मीठा वरतो वने
करिने ग्राहकोने तेओ एवा तो खुशी वरे डे के, जेथी तेओ वीजानी दुकान आदिकमा जता नथी, अने
तेम करी मुग्गेथी तेओने उगी शके डे. ॥ १२ ॥

तदुक्त—दृष्टे. कूटप्रयोगेण । चण्डिगिज कूटचेष्टिते. ॥ विप्रे. कूटक्रियारूपे—सु-
 भ्योऽय वच्यते जन ॥ ९३ ॥ एव केचित् कुशुखो मूढ्येनैव सम्यग्वालोचनादि द-
 दते, प्रतिष्ठादि वा कुर्वते ॥ ९४ ॥ चिकित्सादि कृत्वा विद्याप्रागड्य तच्चमत्कारादि-
 विधिमंत्रयंत्राद्यर्पणकार्मणवशीकरणदिवाजावाजादिनिमित्तशकुनमुहूर्त्तादि च प्र-
 काश्य दानादि श्लक्ष्णाति ॥ ९९ ॥ विविधावर्जनादिचिर्वशीकुर्वति च धर्मार्थिनोऽपि
 जनारतथा, यथा नान्यान् सुविहितगुरुन्याश्रयति, प्रत्युत हसति तास्तदनुसारिण-
 श्र ॥ ९६ ॥

गुरु छे के राजाओ मोला लोकने खोग आठ आदिक प्रयोगेथी यणिको खोडी चेषाओथी तथा वा
 क्षणो वृथा नियासामोथी ठगे ॥ ९६ ॥ एवी रीते पेटव्याक गुरुओ मित्त दोदनेज समकीत, आव्योग्य आ-
 दिक दीये ३, अप्पवा प्रतिष्ठा आदिक करे ३ ॥ ९४ ॥ तेमज वेधक (ओपध) आदिक करीने तथा विद्यानी व-
 माद, ते सपधि चमत्कार आदिक विधि, मन्त्रय आदिगुरु आपु, कामण, वगीकरण आदिक वाच अज्ञान
 आदिक निमित्त, शकुन, तथा मुहूर्त्त आदिक प्रमाणे तेओ दान आदिक ग्रहण करे ॥ ९९ ॥ गळी नाना
 प्रकारथी गृही वरवा आदिक वने करीने धर्मार्थि लोकने पण पत्रा तो तेओ वरा करे ठे के, जेथी तेओ बीजा
 उत्तम गुरुओने पण सेवता नी, परतु उदहटी तेवा उत्तम गुरुओनी तथा तेओला सेमकेनी हासी करे ठे
 ॥ ९६ ॥

तथा चाह—कष्ट नष्टविशां नृणा यददृशा जात्यध्वेदेशिक । कातारे प्रद्विश्यञ्जी-
 प्सितपुराध्वान किञ्चोत्कंथर । एतत् कष्टतर तु सोऽपि सुदृश । सन्मार्गगास्तच्छिद
 —स्तच्छास्यानुवृत्तिनो हसति यत्सावज्ञमज्ञानिव ॥ ५७ ॥ दुष्यमायामेवविधा
 बहवोऽपीति न दृष्टतोपन्यास, एते च निजाजीविकामात्राद्यर्थ धर्मस्य श्रुतस्य
 च विक्रयकारिण. परलोकपराङ्मुखा स्वय ससारे मज्जति ॥ ५८ ॥ स्वाश्रितान्
 सन्मार्गग्रंथकुमार्गप्रवर्त्तनादिजिर्मज्जयति च, उक्त च द्वौकिंकरि, —सत्रचेष्टी पृथ-
 क्पाकी । आदेशी वेदविक्रयी ॥ तस्मिन्ना योपितस्त्यागी । पचैते ब्रह्महा. स्म-
 ता. ॥ ५९ ॥

बळी क्यु ठे के—विशा घृशी गंगजा एवा अथ मनुष्योने जमाध परदेशी उची नोक करीने, तेओना
 इच्छित नगरनो मार्ग जे नमा भंगामे ठे, ते गेन्द्रायक यस्त ठे, परतु आ तो तेषी पण वारे रैदकारक ठे के,
 उत्तम दृष्टियाळा तथा उत्तम मांग जनाग, तथा ते मार्गने जाएनारा, अने ते जाल्यना वाक्येने नही अनुसरनारा
 एवा लोकानो ते जे अबज्ञा सहित अज्ञानीओनी पते जाणीने हासी करे ठे ॥ ५७ ॥ आ दुःखमकालने त्रिये
 एवा गणाओ देखाय छे, माटे अर्ही तेओतु दृष्टात क्यु नथी, एवा कुगुरुओ मात्र पतानी आनीधिकानेज अर्थ
 धर्म तथा ज्ञानने वेचे ठे, तेमज परलोकथी पराङ्मुख थया थका पतिे तसार सागरया वृत्ते छे ॥ ५८ ॥ तेमज
 योताना आश्रितोने पण उत्तम मार्गथी पानीने तथा कुमार्गमा प्रवर्त्तयिआ आदिके करीने नृमाने ठे, अन्य दर्श
 नीओए पण क्यु ठे के—मन्नेद करनार, जूही रसोद करनार, तेने वेचनार, तथा युवान खीनो त्याग करनार
 ए पाचेने ब्रह्महत्या करनारा तथा ठे ॥ ५९ ॥

इति त्रिणिगूढघातज्ञावना वंजनीति, यथा वया गौश्वारि मार्गयति निरंतर, न तु प्रसूते दुल्लते वा, एवं केचन कुद्वगुर्वीघ्ननिमानमात्रप्रतिवद्धा नित्य विशिष्टाहार-
वच्चप्रूजादिकमर्थयते ॥ ६० ॥ तदकरणे श्रूयति, वद्धादपि यल्लति च, न पुनर्वि-
शिष्यागमानुसारिपुण्यक्रियाद्याचारमुज्ज्वलतर दृपोपम प्रसुवते ॥ ६१ ॥ नापि तथा-
विधपुण्योपदेशादिना श्राद्धजनानुपकुर्वतेऽपि, तथा चोक्त—यैर्जातो न च वर्धितो
न च न च क्रीतोऽधमर्णो न च । प्राग् दृष्टो न च वाक्वो न च न च प्रेयाद्वा
च प्रीणित ॥ तैरेवात्यधमार्थमे कृतमुनिव्याजैर्वद्धाच्छते । नस्योतपशुवज्जनोऽयमनिशं
नीराजक हा जगत् ॥ ६२ ॥

एवी रीते वणिकता ह्यस्तनी ज्ञानना ज्ञानवी ह्ये जेम वया गाय चारो तो हुमेशा माणे डे, परतु
ते व्यानी नयी अथवा इगनी पण नयी, एवी रीते केव्याक कुवगुण आदिकनु मात अजियान धारण करीने
हंमशा उत्तम आहार, वल्ल तथा पूजा आदिक माणे डे, ॥ ६० ॥ अने जो तेम करामा न आयो तो तेओ रोप
पामे डे, अने नळाकरे पण ते ग्रहण करे रे, परतु विशेष रीते आगमने अनुसरनारी पत्रि क्रिया आदिकना
दृपन्न सरया उमरे उज्ज्व एवा आगमने उत्तन्न करी शकता नयी ॥ ६१ ॥ तेम तेवी रीतना पत्रि उपदेश
आदिके करीने श्रापक दोषने लपकार पण करता नयी, वतु डे के—जेओण उत्तन्न कर्षा गयी, पोपेनो नयी,
वेचती वीधो नयी, त्रैणे रागेवो नयी, प्रवे डीट्टनो नयी, समधि नयी, यहाडो नयी, खुजी करेनो नयी, एवा
पण महा नीचमा नीच तथा करेव डे मुनिपणानो मेल जेओण एवा कुणुओरामे करीने नाथना पशुनी पडे
नजान्तरे आ लोक वहन करप डे. माणे हाय' हाय' आ जगत् नायक विनातु डे ॥ ६२ ॥

चौतिकशियाश्चात्रोदाहरण—गोदग्रामे सरको नाम
 चौतिकाचार्यः, तस्य नृयास
 शिष्या, पर न ते किमपि पठति, गणयति, क्रियां वा कुर्वते ॥ ६३ ॥ किं तु निष्ठावा-
 र्त्तौ विक्रमप्रतिपत्ति, तथापि तत्रत्यो भृश मूर्खो
 लोकस्तदगुणरजितोऽहमहमि-
 तीति नृश यथेवाहारविहारा-
 कार्पुर्वं तेषा जोजनवस्त्रादिवह्नादरेण ददाति ॥ ६४ ॥ तेनानिश्च
 यथेवाहारविहारा-
 दिना पुष्टवपुषो महिपप्रायास्तेऽनूचन्, ततोऽन्यदा
 तद्ग्रामवासिना ग्राम्यकविना
 द्विजेन ग्राममध्ये बहुयाचनेऽपि ॥ ६५ ॥ किमप्यज्ञमानेन तान् दृष्ट्वा
 विस्मयापन्नो नैव
 साश्चर्यमुपश्लोकितस्ते, नरटकतवचदा
 झवपुष्टा समुद्रा । न पठति न गुणति नैव
 कव्य कुण्ठते ॥ वयमपि च पत्रामो किं पि कव्य कुणामो । तदपि
 नुख मरामो कर्मणा
 कोऽत्र दोष ॥ ६६ ॥

अर्हा चौतिक शिव्योनु दृष्ट्वा कहे डे—गोद ग्राममा सरक नामे एरु चौतिक आचार्य हुते, तेने यणा
 शिव्यो हुता, परतु तेओ नही कड जणता, गणता के जिया करता, ॥ ६३ ॥ परतु निश्च, वार्त्ता तथा विरुथा-
 ओमा तत्पर थडने रहेता, तो एण त्याना अत्यंत मूर्ख लोक तेना गुणोची खुनी थडने हु प्रथम आपु, हु प्रथम
 आपु, एम मानीने तेओने जोजन तथा बल्ल आदिक बहु मानयी आपता हुता ॥ ६४ ॥ अने तेथी इन्त्र मुजर आहार
 विहार आदिकची पामा जेवा मानेचा शरीरवाला तेओ थड गया, पडी एक दहानो ते गाममा यसरानारा तथा
 गामनीया कवि, एवा एक ब्राह्मणे गाममां यणी याचना करी, परतु ॥ ६५ ॥ कड एण नही मळवाचो ते चौतिक
 शिव्योने जोइने आश्चर्य पामी तेओपर एक कविता करीके, जरना, उगारा तथा चडना एवा आ दोको नयी
 जणता, नयी गणता, के नयी कविता करी जाणता, उता एण रष्टुए थडने फरे छे, अने अमो जणिये डीये, तेम कडक
 काव्य एण करी जाणये डीये, उता एण चूखे मरिये डीये, माटे तेमा कर्मोने शो दोष डे? ॥ ६६ ॥

इति लोकानां पुर कथयति, लोकेश्वरश्चर्यमिति ॥ ६७ ॥ एव लोकोत्तरगुरुविषयोऽपि
दृष्टात् स्वयम्सूक्ष्मः, एतेषु ब्रह्माहारादिदानमपि सर्वं तस्मिन्नि हुतायते बध्याया ग-
वि सरसचर्यादिदानवत् ॥ ६८ ॥ एते च कुसुरव स्वय महाप्रमादपकनिमग्ना कय
स्वाश्रितान् ब्रह्मनिस्तारयतु? किं तु तेर्जायता अधिकतर स्व पराश्र तत्रैव निमज्ज-
यतीति, इति बध्याग्रीदृष्टातज्ञावना ॥ ६९ ॥ ननुति, यथा हि नटा वाचिकाशिक-
सास्त्रिकादिनानाविधाञ्जिनयत्रिधिकुशलास्तेर्विज्ञानादिभि स्वस्मिन्नसतमपि बहि सा-
क्षात् स्फुरतमिव सर्वांगमाद्विगतमिव चर्मणगोचरमिव च शृगागादिरस सद्योऽवतार-
यति, रजयति च पर्यज्जनान्, हतहृदयाश्च तंऽनर्गद्वर्षदानादिभि प्रीणयति ता-
निति ॥ ७० ॥

एवी रीति क्षेत्रेनी पासे कहें डे, अने तेथी क्षेत्रीने आर्थ्य थाय डे ॥ ६७ ॥ एवी रीते लोकेश्वर गुरु
सबधि दृष्टव एण पोतानी मेळेंज जाणी वेतु, एवाओने यख तथा आहार आदिस्तु जे दान देवु, ते एण राखमा
वी रेनुवा योवर डे, तेमज व या गायने रसयुक्त चारो आपवा बरोवर डे ॥ ६८ ॥ यळी ते कुसुरओ पोते महा
ममादम्पी कादय्मा हुयेना डे, तो पळी पोताना आशितोने केवी रीते तेओ ससाखी तारी जने? परतु तेथी
उदय वयारे जाखाळा थडने पोताने अने परने तेमान रुवाने डे, एवी रीते व या गायना दृष्टतनी जावना
जाणवी ॥ ६९ ॥ हुये नये जेप्र वचन सपधि, अग सपधि तथा सच सबधि आदिक विविध प्रकारनी कसस्तनी
निधिमा, कुगव होय डे, अने ते विजाव आदिमोथी पोताना नही एवा एण शृणार आदिक रसेने बहारी जीणे
साक्षात् स्फुरायमान थतो होय नही, सर्व अंगोने जाणे आश्रयन करतो होय नही, तथा त्रारी त्रारीने जाणे तेने
कुचो मरी नागयो होय नही, तेम सुरत ते रसेने उतारे डे, अने सना जनेने खुशी करे डे, अने तेथी खुग मन

एव गुरुव्रोऽपि केचिच्छर्माद्बहि प्लवमानमनसोऽपि सागारिकादिसमङ्क तत्साहकृत्क्रि-
याकदापादिप्रकटनपरा विविधाश्वेपिण्यादिप्रकारधर्मकथाञ्चि. ॥ ७१ ॥ स्वस्मिन्नस-
तमपि दर्शयति पुर स्फुरतमिव सवेगवैराग्यादिरसं, रंजयति च सस्यजनान्, रजि-
ताश्च ते नानाविधाहारवस्त्रपुस्तकादिन्निरुपचरति तानिति ॥ ७२ ॥ तदुक्तं—पड्डइ
नमो वैरग ॥ निन्विज्जिजा बहुओ जणो जेण ॥ पढिऊण तं तह सद्धो ।
जद्धेण जद्धण समोअरइ ॥ ७३ ॥ अगारमईकाचार्यश्चात्र निदर्शनं, तथा ये च
नदृवद्विजाजीविकार्यै श्राद्धादीन् दातवन् स्तुत्वा तद्दानानि शुद्धंति ॥ ७४ ॥

एवी रीति केट्टदाक गुरओ पण धर्मधी जोकं याव मनवाळा होय डे, तो एण गृहस्थी आदिकोनी समङ्क
तेवी रीतना क्रिया कदाप आदिकोने मगट करीने विविध प्रकारनी समुजी धर्मरुथा आदिकोधी ॥ ७१ ॥ पोता-
मा नहीं एवा पण सवेग तथा वैराग्य आदिक रसने जाणे अगामी मगटी निकळतो होय नहीं तेम देसाने डे,
तथा सत्राजनेने खुशी खुशी मरी दे छे, तथा एवी रीति खुग थयेवा ते सत्राजनो विविध प्रकारना आहार वस्त्र
तथा पुस्तक आदिकोवने करीने तेओनी चत्ति करे डे ॥ ७२ ॥ कणु डे के—नट वैराग्य जणे डे, के जेथी यणा
दोको सवेग पामे डे, तेवी रीति श्रावक पण (कुगुरुओ पामेथी) वैराग्य साजळीने सवेग पामे डे, अने ते जळयी
अग्नि ओढाया सखुं थाय डे ॥ ७३ ॥ अहाँ अगार मईक आचार्यने दृष्टारुपे जाणवा, कळी जेओ चाटनी पेते पोतानी
आजीविका मटे, देनारा एवा श्रावक आदिकोनी स्तुति करीने तेमनी पामेथी दान ग्रहण करे छे ॥ ७४ ॥

उक्तच—गुरुणो भद्रा जाया । सहे शुण्डिण द्विति दण्ड ॥ इन्द्रि वि अमुण्डित्तता
 । इसससमयमि बुद्धति ॥ ७१ ॥ तेयेतेखेवांतर्जवतीति, एवमेते पडूजगीसगिनो-
 ऽपि गुर्वातासाश्चरणकरणगुणवाह्या, केवन्न जवाञ्जिनडितया प्रमादोत्सूत्रप्ररूपकत्वा-
 द्विजि स्वय नद्या शुद्धधर्मापहारेण परानपि नाशयतीति सर्वथा दूरतर परिहर-
 णीया ॥ ७६ ॥ तडुक्त—किमितोऽपि महापाप—मज्ञानात्पालुक स्वय ॥ पातय-
 त्यधकूपे यन् । मूढ सहचरानपि ॥ ७७ ॥ इति नददृष्टातजावना ॥ अथ धे-
 णुत्ति, वेतुनवसूतिका गौ., सा हि यत्तत्तणादि उपजीवति दुग्ध धृत च करोति प-
 रोपकारार्थमेव, प्रतिवर्ष प्रसूते च ॥ ७८ ॥

बहु डे के—गुरो चो चाद सरया थया, के नेओ थारमोनी रुति रूनि दान आदिक द्वीये डे, अने
 एवी रीते तेओ मने तल जाल्या मिया आ ट. १म काल्मा बुने डे ॥ ७१ ॥ एवा बुगुरओमो पण आ जागानी
 अदर समावेश थाय डे, एवी रीते आ डण जागायाळा गुरओ चण करणना गुणोधी रहित थया थका
 गुर्वातास सरया डे, तथा फक्त जयाचिनिणाय करिने प्रमाद अने उत्तय प्ररूपया आदिक रूनि पोते
 नष्ट थया डे, तथा शुद्ध धर्मना अपहार रूनि अन्योने पण नष्ट करे डे, शेटे तेओने तो सर्वथा प्ररूरे रूज
 होमया ॥ ७६ ॥ रबु डे के—शु आधी पण बोड वारो माड पाप डे ? के अज्ञानधी ते मूढ पोते तो पने डे,
 एअनुज नही, पण पोताना सोमतीओने पण अथ कृपामा पाने डे ॥ ७७ ॥ एवी रीते नदना दृष्टतनी जाना
 जाणनी ॥ हरे धेतु एदने नमी वीथवेवी गाय, ते जे ते तणादिक चरे डे, तथा दृथ अने घी करे डे, तेपज दरमं
 फक्त परोपकार मटेज वीयाय डे ॥ ७८ ॥

एव केचन ग्रामुकनीरसजक्तपानादिमात्रोपजीविन सुविद्युच्छप्रकृतय शुद्धधर्ममा-
 गोपेदेवैर्दुग्धधृताद्युपमे सततमुपकुर्वते परान् ॥ ७ए ॥ सम्यक्चरणकरणाणानुष्ठाना-
 दिवत्सकाद्युपम प्रसुवते च श्रीप्रदेशिनृपप्रतिबोधकश्रीकेशिगणधरवत् योग्याश्चेते,
 यदुक्त—महाव्रतवरा धीरा । ज्ञेह्यमात्रोपजीविन ॥ सामायिकस्था धर्मोप—डे-
 शका गुरवो मता ॥ ७० ॥ यथा च धेनोर्दत्त तृणाद्यपि दुग्धादितया परिणम-
 ति, एवमेतेषु दत्त स्वल्पमप्यनंतफलाय च कल्पते ॥ ७१ ॥ श्रीऋषज्जेदेवप्रयत्नम-
 जववनसार्थवाहसार्थविहृतश्रीधर्मधोयसूरिप्रभृतितवत्, इति धेनुदृष्टातज्ञावना ॥ ७२ ॥

एवी रीते वेद्व्याक गुरत्रो ताजा तथा रसविनाना एवा मात्र ज्ञात पाणी आदिकथी आजीविका चत्रा-
 वीने शुद्ध प्रकृतिवाळा यथा यका, दूध अने नी आदिक जेया शुद्ध धर्ममार्गना उपदेगोवने करीने एने उपकार
 करे डे, ॥ ७ए ॥ तथा यारना आदिक सरखी उत्तम चरणकरणनी क्रिया आदिक उत्पन्न करे डे. (कोनी
 पेडे ? तोके) श्रीप्रदेशी राजाना प्रतिबोधक श्रीकेशिगणभरनी पेडे, अने तेवा गुरत्रो योग्य डे, कहु डे के—
 महात्रोने धारण करनारा, धर्मतामाला, तथा फक्त जिहायीज आजीविसा चदावनारा, सामाधिकमा रहेनारा
 एया धर्मोपदेशक गुरत्रो क्या डे ॥ ७० ॥ कळी गायने दीधिलु तण आदिक जेम २२ आदिकरूप परिणमे डे,
 तेम एवा उत्तम गुरत्रोने दीधिलु अट्य दान पण अनत फल करनार थाय डे ॥ ७१ ॥ (कोनी पेडे ? तोके)
 श्रीऋषज्जेदेव प्रभुना प्रथम जववाळा धनसार्थवेहना सायमा विहार करनारा श्रीधर्मधोयसूरि आदिकनी पेडे, एवी
 रीते गायना दृष्टातनी ज्ञावना जाणवी ॥ ७२ ॥

अथ सद्वृत्ति, सखा मित्र, स च यथा स्वहार्दिसौहार्दवशंवदतयैव, न पुनर्धना-
द्विद्विप्सयाजीविकाद्विहेतोर्वा प्रवर्त्तयति साम्ना मित्र द्विते, निवर्त्तयति कुप्रवृ-
त्तेः, निस्तारयत्यापद्गत ॥ ८३ ॥ अथगूहति तदपराधान, प्रकटयति तद्गुणादि-
च, तदुक्त—पापोन्निवारयति योजयते हिताय । गुह्य निगूहति गुणान् प्रकटी-
करोति ॥ आपद्गत च न जहाति ददाति काले । सन्मित्रद्वङ्गणमिदं प्रवद-
ति सत ॥ ८४ ॥ परं यथाऽवसर बहुमानदानान्युपचारमपेक्षते, प्राय अथहुमा-
नितस्तु स्वल्पस्नेहो नि स्नेहोऽपि वा ज्ञेयत्, तथा चाहु—॥ ८५ ॥

हवे सपि एवमि मित्र, ते जेम पोताना मित्रं पोताना हृदयनी मित्राङ्गेन वग यद्भेजेन, नाहं के नन आ-
दिकनी इञ्जायी के आजीविका आदिक हेतुयी पण समपणायी हितमा प्रवर्त्तो डे, तथा कुमार्गयी अटक्रो
डे, दु खयी वचोँ डे ॥ ८३ ॥ तेना अपराधोने दके डे, तथा तेना गुण आदिकोने प्रगट करे डे, बहु डे के-
पायी निवारे डे, हितमा जोने डे, तेनी गुप्त यातने दके डे, गुणोने प्रगट करे डे, दुःख समये डोरुतो नयी,
तथा अवसरे द्रव्यादिक आपे डे, एवी रीतनु उचय मित्रनु दक्षण विद्वानो बहे डे ॥ ८४ ॥ परतु ते मित्र उचि-
त अवसरे बहु मान तथा दान आदिक उपचारनी अपेक्षा राते डे, अने ते वरते तेने जो बहु मान देयामा न
आवे तो प्राये करीने ते ओठा स्नेहबालो अथवा स्नेहनिनानो पण यह जाय डे, बहु डे के—॥ ८५ ॥

अइसणेण अइदं—सणेण विठ्ठ आणाद्वतेण ॥ साणेण पत्रासेण य पचविह
 जिऊए पिम्म ॥ ८६ ॥ ततश्च तादृकार्यविसरादाबुदास्तेऽपीति, एव केचिद्बु-
 रवः सर्वसत्त्वेषु परममैत्रीपवित्रचित्ततथैव, न तु धनाद्विद्विप्सयाजीविकादिहेतो-
 र्वा जद्वधर इव साधारणोपकारप्रवृत्तय ॥ ८७ ॥ तादृगवसराद्युचितमनोजिह्वचित-
 मधुरदेशानाञ्जिनुशासंति हितं, प्रकाशयति विवेकं, निर्मानशयंति मोहतिमिरपट-
 लं प्रबोधयति प्रमादनिजामुद्धितविवेकदोचन ॥ ८८ ॥ नव्यजन, प्रकटयंति स-
 स्यक्त्वादिगुणान्, रुंधंति दुर्गतिमार्गान्, निस्तारयंति चाऽपारससारपारारारप्रस्फुर-
 छिद्विधापत्परंपराभ्यः ॥ ८९ ॥

नहीं मळवायी, अतिशय मळवायी, मळवा उता नहीं बोद्धावयायी, अजिमानधी तथा पदेदेश प्रवास-
 थो, एम पाच प्रकारे स्नेह घटे ठे ॥ ८६ ॥ मोटे तेवा कार्य अक्सर आदिकमा रीसाड एण जाय ठे, ण्वी
 रीते वेदद्वाराक गुरुओ धनादिकनी लाजचयी नहीं, अथवा आजीविका मोटे एण नहीं, परतु सर्व प्राणीओपर
 परम मित्राशुथी पवित्र शयेता चित्तपणयें करीने वसनादनी पेडे साधारण उपकारनी प्रवृत्तियाळा होय ठे, ॥ ८७ ॥
 तथा तेरा अक्सर आदिकमा उचित तथा मनने रचे एवा मधुर उपदेशोथी हित शिद्धा तेओ आपे ठे, विवे-
 कने प्रकाले ठे, मोहूरुपी अधकारानो समूह मरणे ठे, तथा प्रमादरुपी निद्राथी बीमायेद्या विवेकरुपी दोचन
 ॥ ८८ ॥ नव्यजन प्रत्ये सपकीत आदिक गुणोने प्रगट करे छे, दुर्गतिना मार्गोने रोके ठे, तथा अपार एवा ससा-
 ररुपी समुद्रमा उठळती एवी नाना प्रकारानी आपदाओनी श्रेणिओथी तारे पण ठे ॥ ८९ ॥

पर तेऽपि यथोचितबहुमानादि यथावसरमपेक्षते, अबहुमानिता पुनरुदासतेऽपीति, यथा वपुनक्षत्रिसूर्य, तथाहि—॥ ९० ॥ गुर्जरदेशे पाटद्वारत्ये नगरे श्रीसिद्धसे-
नसूरि, सोऽन्यदा श्रीवीर नतु मोढेरं प्राप्तो निशि स्वप्न ददर्श ॥ ९१ ॥ यथा
उत्फाङ्ग केसरिकिशोरश्चङ्गशृगमारूढ इति, प्राप्तस्त स्वप्न शिष्यान् श्रावयामास,
तेर्विनयपूर्वं तत्फङ्ग पृष्ट ॥ ९२ ॥ कोऽप्यन्यवादिदतिमददत्तनो महामति
शिष्योऽद्य समोयतीति, ततश्चैत्ये देवान् वदमानाना तेषां पुर पड्वापिको वाङ्म-
णक प्रापत् ॥ ९३ ॥ पृष्ट. स्व स्वरूपमुवाच, अहं पचाद्धदेशकुवाञ्छधीभामवा-
स्तव्यवप्यारयजनकज्जहीनामजननीसुत सुरपाद्मार्ग्य शत्रून् हतु सन्नह्यन्, विक्रम-
हेतुर्वयो नेति पित्रा निवारित ॥ ९४ ॥

परतु तेषां गुरुरत्रो पण यथा अस्मरे यथोचित बहु मान आत्किली अपेक्षा रावे डे, अने ते समये
जो तेओने यहू मान देनामा न आवे, तो तेओ रीसाइ पण जाय डे, जेम वपुनक्षत्रिसूरि, तेमनु उदाहरण कहे
डे ॥ ९० ॥ गुजरात देशमा पाटना नामना नगरमा श्रीसिद्धसेनसूरि होता, ते एक बखते श्रीवीरमज्जने बादवा
गाट गाढग गाममा गया, त्या रात्रिण तेमने स्वप्न आयु के ॥ ९१ ॥ केसरिनु वरुनु डेक मारीनि चट्टना जिव
रण गम्यु, पत्नी मजाति ते स्वप्न तेमणे शिष्योने सज्जळ्यु, तेओण विनय पूर्वक पुठयायी तेनु फळ तेमणे कळ्यु
के ॥ ९२ ॥ कोडक अन्य वाडीओम्पणी हाथीना मटने दळनारो महा बुद्धिमान् जिय्य आने आवने, पत्नी
मदिसमा देववदन मरता थका तेओनी पासे एक छ वर्षनो बालक आव्यो ॥ ९३ ॥ पृत्राची ते पोतानु वृत्तात
कहेबा हाथ्यो के, पचाव देशमा आयिवा कुगाञ्छी गामनो रहेवासी वपु नामे मारो पिता तथा चट्टी नामे मारी
माता डे, तेमणो हु सुरपान नामे पुत्र बु, शत्रुओने हणवा माटे ज्यारे हु तथार थतो हतो, त्यारे माग पिताये
मने निवारणे के, हुमणा पराक्रम करानी तारी उमर नयी ॥ ९४ ॥

पिता स्वयं शत्रुघ्नं हन्ति, मामपि च तान् मृत
 च्छ्यात्रागम ॥ एए ॥ अस्याऽमानुष्यक तेज इति ध्यात्वा गुरुणोच, अस्म-
 त्पाश्र्वे त्तिष्ठ, मद्भ्रातॄन्वे. फलितमित्युक्त्वा स तत्र स्थित ॥ ए६ ॥ एकश श्रु-
 तमात्रेणाऽनुष्ठुजा सहस्र धारयतीति प्रज्ञा विभाव्य तुष्टो गुरु पितरौ प्रार्थ्य त-
 मदीक्षयत् ॥ ए७ ॥ पित्रोरभ्यर्थनया वषपचट्टीति नाम चाऽकरोत्, श्रीविक्रमाद्-
 वर्षाणां शताष्टके सप्ताधिके वैशाखशुक्लतृतीयाया गुरो तस्य तपस्या वचूव ॥ ए८ ॥
 अन्यदा श्रीगुरुस्तस्य सारस्वतमदात्, तस्य त मत्र स्मरतो गगाश्रोतसि अनाव-
 रणा निशीथे स्नाती सरस्वती तन्मत्रजापमाहात्म्यात् तद्भूवैवोपतद्दमायौ ॥ एए ॥

हवे मारो पिता पोते तो शत्रुघ्नोने हणी शक्तो नयी, अने तेघोने हणता एव मने एण ते अट्काणे
 ने, माटे ते जेदधी मारी माने एण कदा विना हु अहीं आत्री पहँल्यो बु ॥ एए ॥ आ गळकनु तेज मनुष्य
 सचधि नयी, अर्योव दैविक छे, एम विचारिने गुरुए तेने करुं के, हु अपारी पासे रहे? अहो! मारा जाण्य
 फण्या! एम म्हँने ते त्या खो ॥ ए६ ॥ एकवार फक्त सानळवाथीज एक हजार अनुष्ठुश्लोकोने धारी राख
 गनी तेनी बुद्धि, जेइने खुशी थयेना गुर महाराजे तेना माणपनी रजा छेड तेने दीक्षा आपी ॥ ए७ ॥ तथा
 तेना माणपनी प्रार्थनाथी तेनु वषपचट्टि नाम पाण्यु, श्रीविक्रम पडी आणसेने सात वर्ष वैशाख शुद्धि तीज अने
 गुरुवार तेमनी तपस्या एट्ठे वर्षी दीक्षा थइ ॥ ए८ ॥ पडी एक वखते श्रीगुर महाराजे तेमने सारस्वतमत्र
 आयो, ते मत्रु स्मरण करवाथी तेना माहात्म्ययी मध्य रात्रि ए गगा नदीमा वत्र रहित स्नान करती सरस्वती
 देवी, तेज हादातमा त्या तेमनी पासे आत्री ॥ एए ॥

* तस्य समीपमुपतदम् ।

ईपद् दृष्टा च ता वमत्र । परावर्त्तयति स्म स स्वरूपं विस्मरतीव प्राह, वत्स
 कथं मुख ॥ १०० ॥ व्यावर्त्तयो वमत्र-जापात् तुष्टाहमागता ॥ वरं वृण्वति
 तत्प्रोक्तो । वषट्प्रद्विराच च ॥ १०१ ॥ मातर्विसदृश रूप । कथं वीक्ष्ये तद-
 ज्ञा ॥ स्व तत्त्वं पश्य निर्वह्न—मित्युक्ते स्व ददर्श सा ॥ १०२ ॥ अहो निविन्-
 मेतस्य ब्रह्मव्रतमिति विचिन्त्य मन्त्रमाहात्म्याद्द्विगद्वित्वेद्याताराऽत्रागताहमित्याह च,
 वरदानेऽपि नि स्पृहत्वात्त्वयि तुष्टा, तवेन्वयगन्धिप्यामीति वरं दत्त्वा तिरोऽथात्
 ॥ १०३ ॥ अन्यदा वर्षति मेघे देवकुञ्जस्थस्य वषट्प्रदे कोऽपि देवोपम पुमान् सम-
 गस्त, प्रशस्तिपट्टिकायां च काव्यान्वयाचयत् ॥ १०४ ॥

तेणीने जरा जोडने जरा जोडने वषट्प्रद्विनीए पोतातु मुल फेखी नारपु, ते बवते जाणे ते पोताना स्वरूपने वूडी
 जती होय नहीं, तेम तेने रहेय ज्ञानी के, हे वत्स' ॥ १०० ॥ तं मुखं शामष्टे फेरवु ? नारा मन्त्रा जापयी हु
 तुष्टमान थडने आवी हु, मष्टे तु वर माग ? एवी रीते तेणीए कहेवायी वषट्प्रद्विनी बोध्या के ॥ १०१ ॥
 हे माताजी' हु आपतु आतु विसदृश रूप केम जोड हु ? आप पोतातु नत्र रूप जुओ. एम तेणे रहे-
 वायी ते सम्वन्ती देवी पोताने खर रहित जोवा ज्ञानी ॥ १०२ ॥ अहो' आतु नम्रचर्षं व्रत दृढते, एम
 विचारि तेणीए कलु के, तमारा मन्त्रा माहात्म्ययी वीतु सयखु जान वूडी जडने हु अही आवी हु, तथा
 बढानमा एण तमोने निभूही जाणीने हु तमारापर तुष्टमान थड हु; हवे तमो ज्यारे इन्डा करशो त्यारे हु
 हाजर थडश, एम बढान आपीने ते अहोप थड गः ॥ १०३ ॥ एक ववने वरसाढ वरस्ते छे वषट्प्रद्विमुरि
 देवमद्विर्मा, हता, ते बवते जोडक देव सरवो पुग्य, त्यां आथ्यो, तथा त्यां रहेखा निनाडेवमायी प्रशस्तिना
 काव्यो वचिवा ज्ञायो ॥ १०४ ॥

वप्पन्नद्विना व्याख्यायच्च, ज्ञाते वर्षे वप्पन्नद्विना सहोपाश्रयं प्राप, गुरुजिः कस्य पु-
त्रोऽस्तीति पृष्टः प्रोचे ॥ १०ए ॥ सूर्यवशीयश्रीचन्द्रगुप्तचूषवंशाढंकारस्य कन्यकुब्जदे-
शाधिपयशोवर्मचूपतेः सुतोऽहं, पित्रा शिक्षावशात् किचिदुक्तः कोपादिद्वागम
॥ १०६ ॥ अद्भेखीच्च खटिकया खं नाम आमेति, ततो गुरुणेक्त, वत्स निश्चितो
वप्पन्नद्विसुहृदा सम शास्त्राणि गृहाण ॥ १०७ ॥ ततस्तत्र तिष्ठतस्तस्य वप्पन्नद्विना
सम दृढा मैत्र्यज्जवत् ॥ १०८ ॥ अन्यथा वप्पन्नद्वि प्रोचे स, राज्य चेद्व्यस्ये तदा
तुज्य दास्ये, कियता काङ्क्षेन च तज्जानकेन पट्टान्निषेककृते प्रधानाः प्रहिताः
॥ १०ए ॥ वप्पन्नद्विसापृच्छय ते. सह कन्यकुब्ज प्राप्त., पित्रा राज्येऽप्यपिच्यत ॥ १०॥

वप्पन्नद्विनीए तेने योग्याव्यो; वत्साद ग्य पन्ते जे वप्पन्नद्विनीनी साथे ते उपश्रये आव्यो, तथा तु
नेनो पुत्र जे ? एम गुर महाराजे पृष्ठथायी ते कहेवा दाग्यो के ॥ १०ए ॥ सूर्यवंशी श्रीचन्द्रगुप्त राजाना वत्सा
आचरणे ममान एवा कन्यकुब्ज देशना अधिपति यशोवर्म राजानो हुं पुत्र हुं, पिताए शिखाएण छारा कञ्ज
कहेवायी क्रोधयी हु अर्हा आवेलो हु ॥ १०६ ॥ पत्नी तेणे पैलाहु 'आम' एवु नाम मन्नीषी छग्यु, पत्नी
गुरए तेने कहुं के, हे वत्स ! तु निश्चित यद्दने वप्पन्नद्विपित्रनी साथे शास्त्रो गृहण कर ॥ १०७ ॥ पत्नी त्या
रेहेतां वप्पन्नद्वि साथे तेने दृढ मित्राइ थर ॥ १०८ ॥ एक दिवसे तेणे वप्पन्नद्विनीने कहुं के, जो मने राज्य मळसे,
तो हुं तपोने ते आपीण. पत्नी केद्वेकेक काळे तेना पिताए पट्टान्निषेक माटे प्रधानोने मोकट्या ॥ १०ए ॥ त्यारे
वप्पन्नद्विनीने पृष्ठीने ते प्रधानो साथे ते कन्यकुब्ज गयो, तथा पिताए तेनो राज्यान्निषेक कर्या ॥ १० ॥

लङ्कितयमश्वाना । चतुर्दशशतानि च ॥ रथाना हस्तिनां पत्ति—कोटी राज्येऽस्य जङ्गिरे
 ॥ १११ ॥ अन्यदा आमराजा स्वसुहृद्वपपत्तद्विमांकारयितु—स्वमथानान् प्रेषीत, ते-
 पामत्यादराद्गुरुस्त प्रेषितवान् ॥ ११२ ॥ स च धर्मोन्नत्ये आमपुर गतः, तदागमन
 लष्ट स सर्वान्वरेण समुग्रमागल्य प्रवेशे गजारोहणप्रार्थनां चक्रे ॥ ११३ ॥ वपपत्त-
 द्वि प्राह, शमिना गजारोहण विरुध्यते, राजाह पूर्व मया वो राज्यदान प्रतिपन्न,
 राज्यस्याद्य चिन्ह गज ॥ ११४ ॥ वपपत्तद्विराह, सत्य, एव तत्र प्रतिज्ञा न पूर्यते,
 पर सर्वसगमुचा न प्रतिज्ञा हीयते ॥ ११५ ॥

तेना राज्यमा ने ब्याल घोडा, चादसो रथ तथा हाथी, तथा एक नौरु पाजा हता ॥ १११ ॥ एक दहानो
 आम राजाए पेताना मिय वपपत्तद्विने बोवावया माटे पोताना प्रधानेने मोक्क्या, तथा तेओना अत्यत आदरथी
 गुणए पण वपपत्तद्विजीने मोक्क्या ॥ ११२ ॥ वपपत्तद्विजी पण र्मनी उद्वचि माटे आम राजाना नगर प्रत्ये
 गया, तेमना आवभाथी खुशी थयेनो आम राजा सर्व आमवरथी समो आवीने प्रवेश माटे हाथीपर चरु-
 यानी गुणने प्रार्थना करवा हाण्यो ॥ ११३ ॥ त्यारे वपपत्तद्विजीए कटु के, मुनि माटे हाथीपर चरुतु विरोध-
 चाळु डे, त्यारे राजाए कटु के, पुंसे में आपने राज्य आपवातु करु यु डे, अने राज्यतु पेहेतु चिह्न हाथी डे, ॥ ११४ ॥
 त्यारे वपपत्तद्विजीए कटु के, ने सत्य डे, पतु तमारी प्रतिज्ञा गयी रीते कइ सपूर्ण थाय नहीं, पण उद्वडु सर्व
 सगने त्याग करनारा एवा जे अमो, तेओनी प्रतिज्ञानो जग थाय ॥ ११५ ॥

चमत्कृतो राजा, प्रवेशानतर साँघात इमामुजा सिंहासन मन्त्रित, तदवसरे वपुन्न-
 हिराह, अस्माक सूरिपदे जाते सिंहासनमासन कटव्यं ॥ ११६ ॥ ततो राजा खिन्न
 आसनांतरममन्यत्, दिनानि क्रियति तत्र तमवस्थायाचार्यपढार्थी राजा प्रधाने
 सह गुरुपार्श्वे प्रेषीत् ॥ ११७ ॥ प्रधाना गुरु विज्ञपयति, चञ्च विना चकोर इव वपुन्न-
 द्वि विनाऽऽस्तस्वामी रति न लज्जते ॥ ११८ ॥ अतोऽस्याचार्यपठ इत्वा पश्चादिम
 प्रेषयंतु, यथास्योपदेशाद्वाजा धर्मोन्नति कुर्वते ॥ ११९ ॥ गुरुः प्राह ज्ञोन्नो एतस्य
 शिष्यस्यासत्तिविनाऽऽस्माकमपि न रति, ते प्राहुः—तरवस्तरणेस्ताप । स चाज्ञो-
 ह्यधनह्वम ॥ पाथोविनोश्रम सोढा । वोढा कूर्म श्रितेभर ॥ १२० ॥

पक्षी प्रवेश कराव्या याद भेहेदानी अडर राजाए भिहासन मनायु, त्पारे वपुन्नद्वित्रीए वयु के, त्पारे
 क्रमोने सूरिपद मळे, त्पारे अमोने सिंहासननु आसन कपे ॥ ११६ ॥ पक्षी राजाए खेड पामीने वीशु आसन
 मनायुं, पक्षी केडवाक शिक्सो सुपि तेमने त्या राखीने, तेमना आचार्यपठना अर्थो पवा राजाए प्रानो सहि-
 त तमने गुरु पासे मोक्रत्या ॥ ११७ ॥ प्रधानाए त्या ऋ तेमना गुम्ने निनति करी के, चद्रविना जेप चकोर, तेम
 वपुन्नद्वित्री विना अमार स्यामीने चेन परतु नथी ॥ ११८ ॥ मोडे तेमने आचार्यण आपीने पाडा मोकडापो
 के जेवथी तेमना उपदेशवी राजा धर्मोन्नति करे ॥ ११९ ॥ त्पारे गुरुण वयु के, हे प्रधानो ! आ शिष्यनी हारो
 विना अमोनेण एण चेन परतु नथी, त्पारे प्रधानाए वयु के, दृक्षो जे सूर्यो तोप सहन करे ठे, अने ते सूर्य
 एण जे आकाशोने उंबयानो वक्षेण सहन करे ठे, समुद्र जे बहुाणोने थारु खमे ठे, तथा रावथो जे पृथ्वीने
 थार वहे ठे, ॥ १२० ॥

वारिदो वर्षणक्लेशं । क्षितिर्विश्वासुमतक्लम ॥ लपकारादहेऽमीया । न फल्य किञ्चि-
दीद्वयते ॥ १२१ ॥ इति तद्गिरा श्रीसघकृतोत्सवेस्त गुरुराचार्यपदेऽस्थापयन्, एका-
दशधिके तत्र । जाते वर्षशताष्टके ॥ विक्रमात्सोऽन्नवसूरि । कृष्णचैत्राष्टमीदिने
॥ १२२ ॥ अथानुशिष्टो गुरुणा । विधिवद् ब्रह्मरक्षणे ॥ ताम्राय राजपूजा च ।
वत्सानर्थेऽयं ह्यद ॥ १२३ ॥ तच्छ्रुत्वा श्रीवृष्णजट्टिसूरिष्विदकरोन् तान् श्लोकेनाह,
ऋक्त ऋक्तस्य लोकस्य । विकृतीश्रान्तिविद्या अपि ॥ आजन्म नैव भोक्तव्येऽह—समु-
नियममग्रहीत ॥ १२४ ॥

वत्साद जे वत्सवानो क्लेश सहन करे डे, तथा पृथ्वी जे सयल प्राणीत्रोना (जारो) क्लेश सहै
छे, तेओ सयलामां उपकारविना वीशु कऽ एण फल्य देखातु नथी ॥ १२१ ॥ तेओना एरी रीतना
वचनथी श्री सगे कोहा उत्सव पूर्वक गुरु महाराजे श्रीवृष्णजट्टीजनि आचार्यपदपर स्याप्या, विक्रमथी आउसो
अग्यार वर्षो जाते डेते चैत्रवदी आठमने दिवसे ते आचार्य थया ॥ १२२ ॥ पड्डी गुरु महाराजे तेमने गित्ताम-
ए आपी के, विधिपूर्वक ब्रह्मचर्य व्रतनी रक्षा करवी, कळी हे वत्स ! तरणता तथा राजमान्यपणु ए रत्ने अन
थोनां मूल डे ॥ १२३ ॥ ते सान्जळी श्रीवृष्णजट्टीजिण जे कंस कर्यु, ते श्लोकथी कहे डे, ऋक्त लोकानो आहार
पाणी, तथां सयळी विगयो डेक ए मपर्यंत हु खांडश नहीं, एवु तेमणे नियम ग्रहण कर्यु ॥ १२४ ॥

ततो नृपाग्रहाङ्गोपगिरौ प्रासास्तडुपदेशाच्छाज्ञा एकशतहस्तोन्नत प्रासादः कारि-
 तः, तत्र जाल्यसुवर्णाष्टादशज्ञारमिता श्रीवीरप्रतिमा स्थापिता ॥ १२९ अन्यदा
 राज्ञा पूज्यद्विजानुवर्तनयाऽन्यदासनं श्रीगुरुणासमरुपत्, प्राक् तु सिंहासनं ॥ १३६ ॥
 तत प्रतिबोधाय सूरिर्जगौ, मर्ह्य मानमतंजडर्ष्य । विनयशरीरविनाशनसर्ष्य ॥
 द्वीणो दर्पाद्विशवदनोऽपि । यस्य न तुड्यो युवने कोऽपि ॥ १३७ ॥ इति शु-
 त्वां राज्ञाऽवधेपं परिदृत्य पुनः सिंहासनमेवाऽमंड्यत सदापि ॥ १३८ ॥ अन्य-
 दांत पुरे स्नानमुखी बह्वृत्ता दृष्ट्वा राजाह समस्या सूरये, अज्जत्रि सा परितप्प-
 इ । कमज्जमुह्नी अत्तणो पमाएण' ॥ १३९ ॥

पत्नी राजाना आग्रहथी ते गोर्षागिरे प्रये पहेच्छ्या, त्या तेम्ना उपदेशथी राजाण एकसो हाथ लड्डे
 जिनमंदिर बथाब्यु, तथा तेमा उत्तम सुवर्णेनो द्वार चारना ममाणवाळी श्रीवीरप्रभुनी प्रतिमा स्थापन करी
 ॥ १२९ ॥ हवे एक दिवसे राजाए राजगोए ब्राह्मणनु बहु मानिने श्रीगुरु महाराज माटे वीजु आसन मरुपत्,
 पेहेत्वां तो सिंहासन मनावता हता ॥ १३६ ॥ त्यारे राजाने प्रतिबोध माटे आचार्यजीण बहु के, विनयरूपी
 शरीरिनो नाश करुमां सर्प सरला एवा मानरूपी मदनमत्त हाथी जेवो दर्पतुं मर्दन करो? केमके जेना सरबो
 जगत्मा कोइ पण नहेतो, एवां रावण पण अहकारथी नष्ट थ्यो ॥ १३७ ॥ ते सांजळी राजा अहकार बोधी
 फरीने हमेका सिंहासन मनाववा लाग्यो ॥ १३८ ॥ एक वरुते अतःपुरमा पोतानि राणीने उतेत्वां सुखवा-
 ली जोऽने राजाए आचार्यजने समस्या बही के, 'दुशु पण ते वमळमुखी पोताना प्रमादथी परितप पाय्या
 करे डे' ॥ १३९ ॥

सिद्धस्मारस्तसूरि — 'पुब्वविबुद्धेण तण । जीसे पच्चाइअ अंग' ॥ १३० ॥ पुन-
रन्यदा पट्टराज्ञी सचरतीं पट्टे पदे व्यथमानामिव दृष्टपूर्वीं स्माह नृप'; 'बाझा
चरुम्मती । एण एए कीस कुणइ मुहन्गं' ॥ १३१ ॥ सूरि — 'नूण रमाण-
पणसे । मेहल्लिआ विवधनहपति' ॥ १३२ ॥ तच्चुत्वा नृपतिर्विकृतमुखोऽद्युत,
निरादरश्च, त ताहश दृष्टा श्रीशरुहपाश्रये गत्वा किचिन्मिप दृत्या छारकपाट-
यो काव्य लिखित्वा व्यहार्पीत् ॥ १३३ ॥ तच्चेद—याम स्वस्ति तवास्तु रो-
हणगिरे मत्त स्थिति प्रच्युता । वर्त्तिष्यत इमं ऽधुना कथमिति स्वप्नेऽपि मैव कृथा
॥ श्रीमतो मणयो वय यदि जवह्वब्धप्रतिष्ठास्तथा । के शृगारपरायणा क्किति-
दुजो मौढी करियति त. ॥ १३४ ॥

त्यारं सिद्ध करेण डे सारस्वत मन जेणणे एवा आचार्यजीए कळु के 'पूर्वें जागी उठवाचो शरीर
दारयु, तेदां माटे' ॥ १३० ॥ बळी एक दहानो राजाए चातती एवी पोतानी पट्टराणीने पाह्ले पाह्ले ज्ञाणे
व्यथा गमती होप नर्हा, तेप पेहेदा देखवाची समस्या कही के, 'चातती यकी वाळा पाह्ले पाणे गामाटे
मुबजग करे हे ?' ॥ १३१ ॥ न्यारं आचार्यजीए कळु के, 'बरोबर तेणीना गुंथस्थद्वे मेलना पोसे नखेनी श्रणि
बोगेटी डे' ॥ १३२ ॥ ते साजळीने राजाहु मुख उतरी गयु, तथा आचार्यजी प्रत्ये आदर रहित ययो, पडो
तेने तेंवी रीतनो जोइने गुए महाराजे उपाश्रये जद, कसक भिप करीने, तथा वागणाना वने कमाओपर काव्य द्वार्वीने
त्याची विहार कया ॥ १३३ ॥ ते काव्य नीचे मुजम हतु हे रोहणचतन! तु स्वप्नां पण एवो विचार नर्हा करजे
के मारी पासेची खसी जवाची तेओना हवे शु हाव यशे ?' केमके जो अमो मणियो किमती उदये, तथा त्पाराची
जो अमोने प्रतिष्ठा मळेजी डे, तो केवळाकें शृगारना इच्छक राजाओ अमोने मन्तके पण चत्ताबसे, माटे हवे ताए
कट्याण थाओ ? अमो जस्ये हीप ॥ १३४ ॥

श्रीगुरुगौरुदेशे प्राप, तत्र धर्मरूप, तदाप्रहाद्यावत् श्रीआमरूप, स्वयमाकारणाय
 नायाति तावन्न विहार्यमिति प्रतिज्ञाय स्थिताः ॥ १३५ ॥ अन्यदा श्रीआम-
 नृपे राजपट्टिकार्ये गतः, स्वचित् कृष्णसर्पं दृष्ट्वा मुखे सुहृद तं गृहीत्वा मुष्टिम-
 ध्ये कृत्वा, बाहुवस्त्रेणाच्छाद्य च 'शस्त्र शस्त्रं कृषिविद्या। अन्यो यो येन जीवति' इ-
 तिसमस्यामप्राङ्गीत् ॥ १३६ ॥ न कोऽपि नृपान्नित्रायेण पूरयति, तदा श्रीगुरु भू-
 शमस्मार्थीत्, ततः पटहो, य एता ममान्नित्रायेण पूरयेत्तस्य स्वर्णटकद्वन्द्वमर्षये, इत्य-
 वाद्यत ॥ १३७ ॥ द्यूतकारेण गौरुदेशे गत्वा श्रीगुरु पृश्नाऽपूरि 'सुग्रहीतं च कर्त्तव्यं
 । कृष्णसर्पसुख यथा' ॥ १३८ ॥

पत्नी श्रीश्वपचट्टिनी गौरुदेशे गत्वा, त्या धर्म नामे राजा हुतो, तेना आग्रहथी त्या ते रत्ना, तथा एवी
 प्रतिज्ञा करी के, ज्यांसुधि आम राजा पोते मने बोझाववाने न आवे, त्यासुधि मारे अर्हाथी विहार करयो
 नहीं ॥ १३५ ॥ एक दृष्टान्तो श्रीआम राजा रयवाचण गया त्या वयाक एक काला सर्पने जेइने, तथा तेहु मुख
 दृष्ट रीते पकळीने अने मृडीमां देखेने तथा हाय वक्षयी ढाकीने 'शस्त्र, शस्त्र, खेती, तथा विद्या के जे जेनाथी
 जीवे हे' एवी रीतनी समस्या पृश्नवा द्याचो ॥ १३६ ॥ परतु कोइये पण राजाना अन्नित्राय मुगम ते सप्रणे
 करी नही, ते वखते राजण श्रीश्वपचट्टिनीने प्रणा सचार्या, तथा पत्नी तेणे पने वजमवयो के, जे कोइ आ
 समस्या अन्नित्राय पूर्वक प्रश्ने, तेने एक दाख सुर्णटक हु आपीश ॥ १३७ ॥ पत्नी एक जुगारीण गौरुदे-
 शमां जेइने श्रीगुरु महाराजने प्रछीने ते समस्या प्ररी के, 'जेम कृष्ण सर्पं सुग्रहीत कातु ॥ १३८ ॥

केनाऽपूरीति निर्मथपूर्वं राज्ञा प्रथो गुरुस्वरूप व्याख्यायित्यादि बहुविस्तरार्थिना एत-
 स्ववधादि विद्वोक्तय ॥ १३ए ॥ ततोऽनुतापपर प्रेषीत् प्रधानान् काव्यानि च श्रीधम्प-
 नद्विशुरुन् प्रति, तथाहि—॥ १४० ॥ जयाकारणि सिरि धरिश्च । पञ्चवि चूमिप-
 रुति ॥ पत्तद् एहु पत्तत्तण । वरतरु काइ करति ॥ १४१ ॥ न गगा गागेय सुशुवति-
 कपोद्वस्थज्ञगत । न वा शुक्ति मुक्तामणिरुसिजास्वादरसिक ॥ न कोटीरारूढ स्म-
 रति च सवित्रा मणिचय—स्ततो मन्ये लोक स्वसुखनिरत स्नेहधिरत ॥ १४२ ॥

कोणे ते पूरी ? एम आग्रहपूर्वक राजण पञ्चाशती तेणे गुरुतु वृत्तात बहु, इत्यादि जेने घणो विस्ता-
 र वाचयानी इच्छा होय, तेणे तेमना प्रथम त्राटिक जोय ॥ १३ए ॥ पठी पथात्तापमां पकेना राजाए श्रीवि-
 प्पन्नदि गुरु प्रसे- प्रथानेने काव्यो आपी भोक्तव्या, ते कहे ठे—॥ १४० ॥ हे उचम वृक' प्रथम तो तु ज्ञायने
 कारणे पादनात्रोने मस्तकपर धारण करे ठे, अने पाळां तेत्रोने पृथ्वीपर पावे ठे. माटे एवु हृदयकु कायि तु आ-
 माटे करे ठे ? ॥ १४१ ॥ बीना म्पोद्वस्थज्ञने प्राप्त थोयतु (गणिय) मुवर्ण गगाने याद करतु नथी, तेमज स्त्रीना
 स्तनना स्वादनो रसीयो मुक्तामणि डीपने याद करतो नथी, तथा मुकुटपा चंद्रजो मणि समह पोतानी जयतू-
 मिने याद करतो नथी, माटे हु एम मानु लु के, जोको फक्त पोताना मुवर्षांच रक्त ठे, तथा स्नेह विनाना
 ठे ॥ १४२ ॥

इत्यादीनि प्रधानेभ्यो गुरुकारण्यह, आमनृपस्येमा गाथाः श्राव्याः, तथाहि—॥ १४३ ॥
 विजेण विणावि गया । नरिंदन्नवणेसुहुंति गारविआ ॥ विज्जे न होइअगओ । गए-
 हि बहुएहि विगए ॥ १४४ ॥ माणसविणा सुहाइं । जह्य न वपुंति रायहसेहि ॥
 तहतस्सवि तेहिविणा । तीरुडंगं न सोहति ॥ १४५ ॥ परिसेसिअहसज्जपि ।
 माणस माणस न सदेहे ॥ अन्नत्य विजत्य गया । हसावि वग्गा न जणंति
 ॥ १४६ ॥ मन्नओसचदणुडिच अ । नइ मुहहीरंतचदणुदुमोहो ॥ पप्पहंति हु मन्न-
 याओ । चदण जायइ महग्घ ॥ १४७ ॥

इत्यादिक काव्यो प्रयानो पासेयी सांचळीनि गुरु ऋहेवा द्याग्या के, तमार आम राजने नीचे मुजय गाथाओ
 मनळाववी ते कहे ठे —॥ १४३ ॥ हायीओ विंयाचळ विना पण राज जुक्नोभां जड गौरवाळा यया ठे, तेमज य-
 ण हायीओ चाही जयायी पण विंयाचळ पण कंड हायी विनाने नयी थइ गयो ॥ १४४ ॥ जेम मानससरोवर
 विना राजसोने मुग्ग मळतु नयी, तेमज राजहंसोविना मानससरोवरना किनाराओ पण जोन्नता नयी ॥ १४५ ॥
 चळी हसोविना पण मानससरोवर ते मानसज ऋहेवाप ठे, तेभां कंड सदेह नयी, तेम हसो पण ज्यां जाशे, त्यां
 हसोज कहेवाशे, परंतु बग्लां नही कहेवाशे ॥ १४६ ॥ मद्दयापचत्त चट्टनयुक्त कहेयाप ठे, अने तेभां रहेतां चट्टनना
 धुओ नदीवाटे जेके एगइ जाय ठे, तथा एवी गति मद्दयापचवयी जेके तेओ मद्दष्ट थाय ठे, परंतु ते चट्टनची किमत
 ओडी पती नयी ॥ १४७ ॥

धक्षेण । कोट्युद्घेण । विणावि रयण्यकञ्चिच्चञ्चसमुदो ॥ कोट्युद्घरयणपिंडर । जस्स
 विञ्च सोवि डु महग्घो ॥ १४८ ॥ पद्धमुक्काहवि वरतरु फिद्ध पत्तत्तणं न पत्ताणं ॥
 लुह पुण गया जद्धोह । तारिस्सी तेहि पत्तेहि ॥ १४९ ॥ जे केवि पद्धमहिंसक-
 झंमि । ते उच्चुवकत्तारित्था ॥ सरस्सा जग्गणज्जे । विरत्ता पत्तेसु वीसति ॥ १५० ॥
 तत्त, अम्मञ्चिर्यदि कार्यं व-स्तदा धर्मस्य नृपते । सत्ताया वृत्तमागत्य । स्वय-
 मापृच्छयता हुत ॥ १५१ ॥ जाते प्रतिक्रानिर्वहि । यथायामस्तवांतिकं ॥ प्रधाना,
 प्रहिता-पृब्धै-रिति शिक्षापुस्सर ॥ १५२ ॥

एक कौस्तुभ मणि क्वा एण स्सुट्ठ रत्ताकर कहेवाय ठे, तेषज जेत्ता षट्ठस्यञ्जणं कौस्तुभ मणि भेत्त ठे,
 ते एण महा मुद्ध्यवान् कहेयाय ठे ॥ १४८ ॥ हे उचम वृत्तं तं पवोने तन्वी दीयां, तोएण एवोतु एवपणु जालु नयी,
 एतु तने एव ज्यारे तेकं एवो शोसे, त्यारेज गया यशे ॥ १४९ ॥ इया पृथ्वी ममञ्जपर जेत्ता मोहोग कहेयाय ठे,
 तेओ सेवनीना सांठा सरिखा ठे, केमके तेओ जग्गोनी अंदर (पद्मे-काल्डीओनी अंदर) रत्ताळा ठे, तथा पाजोनी
 अंदर (पद्मे-पजोनी अंदर) रत्ताविना देवाय ठे ॥ १५० ॥ माटे, तयारे जो अमारी सोमे मयोजन होय तो धर्म
 राजानी सत्तामां गुप्त आबीने तयारे पेताने अहाँ तुरंत एही ज्हु ॥ १५१ ॥ अत्रे एवी रीते अमारी प्रविज्ञ स-
 पूर्ण थपेथी अयो तमारी पासे आबीञ्चु; एवी रीते शिक्षार्थक आचार्यजीणः मयानोने मोरुझा ॥ १५२ ॥

ते कन्यकुञ्जचूप प्रासा गुरुसदेशादि प्राहुः, राजा उत्कंडया कृणात्करनीनि.शको ग-
च्छन् गोदावरीतीरे ग्राममेकं प्राप ॥ १५३ ॥ तत्परिसरे खंरुदेवकुञ्जे रौत्रिसुवास, त-
द्रूपमूढा तदेवी तमर्थनापूर्वं बुभुजे, प्रातस्तामनापृच्छ्यैव करनारूढः श्रीगुरुपादांति-
कं प्राप ॥ १५४ ॥ विरहव्यजकैः काव्यैः स्तौति स्म च, ततो गाथार्थं प्राह, 'अ-
जधि सा सुमरिज्जइ । को नेहो एगराईग' ॥ १५५ ॥ गुरुराह—'गोदानईतीरे । सु-
भ्रजत्वे जंसितीसिम्बो' हृद्ये राजा शम्भुगोष्ठ्यादिजिदिनेशेषाद्यतिचक्राम ॥ १५६ ॥

तेओप एण कन्यकुञ्जना राजा पासे जइ गुरुना सदेशा आदिक कहु, त्यारे राजा उत्कंडिय थइ
कृणायमां उंटरप वेसी निशंकणणे जतो थको गोदावरीनि किनारे एक गाममां पहुँस्यो ॥ १५३ ॥ तेना पाद
मां रह्येमां एक खंन्ति देवमंदिरमां ते रात्रि राधो, त्यां तेना रूपथी मोह गमेझी ते मंदिरनी देवीए प्रार्थना-
पूर्क तेनी साये चांग जोगल्यो; पथी प्रजाते तेथेनि पुछया विनाज ते उंटरप चर्चने श्रीगुरु महाराजना
चणोपयें पहुँस्यो ॥ १५४ ॥ तथा विह देसामनारां काव्योथी तेमनी स्तुति करसा थाप्यो; पछी तेणे एक
नीचि मुजब झरथी गाथा कही, 'हलुसुधि ते थद आवे ठे के, अहो ! एक गक्किमान केवो स्नेह ॥१५५॥
त्यारे गुरोपेण कहुं के, 'गोदावरी नदीनि कंठे सुना देवकृष्णमां विश्राम कर्यो तेउथां माटे'; पछी राजाए खुशी
गुहनें पाकीनी विवेक्ये शात्र वांचो आदिकेथी संपुण्यं कर्यो ॥ १५६ ॥

प्रातः स्थगीधरवेपजाय् आमनृपश्च सूरिश्च वर्मनृपास्थानं प्राप्तौ ॥ १५७ ॥
 आमविज्ञप्ति धर्मराजस्य गुरुदर्शयद्, विरहृष्यजिकां तां वाचयित्वा दूतः पृष्टः, तत्र
 नृप कीदृशः ? स प्राह, अस्य स्थगीजर्जस्तुद्वयोऽसावेव बुध्यतां ॥ १५८ ॥ मालुङ्गिणं
 करे विद्वत् । संप पृष्टश्च सूरिणा ॥ करे ते किं स चावादीत् । वीजञ्जोरा इति स्फुट
 ॥ १५९ ॥ दूतेन चाढकीपत्रे दर्शिते गुरुराह स ॥ स्थगीधर पुरस्कृत्य । तूञ्जरि-
 पत्तमित्यय ॥ १६० ॥

प्रजाते आमराजा *स्थगियत्नो वेप लेहने, तथा आचार्य महाराज पण धर्म राजानी सजाया आया
 ॥ १५७ ॥ पडी गुण धर्मराजने आमराजानी विज्ञप्ति देयानी, स्थारे विहने मगट करनारी ते विज्ञप्ति
 वाचीने राजाए इत्ने पुरयु के, तारो राजा केने डे ? त्थारे दूते क्यु के, आ स्थगीधर सरसो जाणे तेज जाणवो
 ॥ १५८ ॥ पडी वीञ्जोर जेणे हाथगो धारण कोवु डे, एवा तेने आचार्यनीए पुरयु के, तारा हाथमां शु डे ?
 त्थारे तेणे मगट रीते क्यु के, 'व मञ्जोरा' ॥ १५९ ॥ पडी तेने आढकीपत्र देयाने डते गुण मणीधले
 आगानी करीने क्यु के, आ तो 'तुञ्जरिपत्त' छे ॥ १६० ॥

* स्थगी पानदानीयु तेथा स्थगीधर ण्टक्षे पान वीनांदातीयाने राखनाए गायत्र पाननीनां राखनाए तथा
 आपनाए एवो अर्थे थय डे.

ततो नृपाग्रहाद्गौगिरौ प्रासास्तदुपदेशाद्वाङ्मा एकशतहस्तोन्नत प्रासाद कारि-
 त., तत्र जाल्यसुवर्णोष्णवदानामिता श्रीवीरप्रतिमा स्थापिता ॥ १२९ अन्यदा
 राज्ञा पूज्यछिजानुवर्त्तनयाऽन्यदासन श्रीगुरुणाममंभयत, प्राक् तु सिंहासनं ॥ १३६ ॥
 तत प्रतिबोधाय सूरिर्जगो, मईय मानमतगजदर्ष्य । विनयशरीरविनाशानसर्प ॥
 द्वीणो वर्षाद्दशवदनोऽपि । यस्य न तुट्यो जुवने कोऽपि ॥ १३७ ॥ इति श्रु-
 त्वा राज्ञाऽवज्ञेयं परिहृत्य पुनः सिंहासनमेवाऽमंड्यत सदापि ॥ १३८ ॥ अन्य-
 दांत.पुरे म्दानमुखीं बह्वन्ना दृष्ट्वा राजाह समस्यां सूरये, 'अज्ञावि सा परितप्प-
 इ । कमदामुही अचणो पमाएण' ॥ १३९ ॥

पत्नी राजाना आग्रहथी ते गोपनिगि प्रत्ये पहेंच्या, त्यां तेकना उपदेशथी राजाए एक्सो हाथ उलु
 जिनमदिर वंधाब्यु; तथा तेमा उत्तम मुखनेनो अठार चारना प्रभाषवाळी श्रीवीरमचुना मतमा स्थापन करी
 ॥ १३९ ॥ हवे एक दिवसे राजाए राजगोर माळणतु वट्ट मारनि श्रीगुरु महाराज मोटे वीजु आसन मकाव्यु,
 पेहेदां तो सिंहासन ममावता हता ॥ १३६ ॥ त्यां राजाने प्रतिबोधवा मोटे आचार्यने ए महु के, विनयरूपी
 शरीरानो नाश करामां सर्प सग्या एया मानरूपी मदीमत्त हाथी जंभोदर्ष्ये मदन करो? केमके जेता सरखो
 जगत्मा कोइ पण नहोतां, एवो रावण पण अटकारथी नष्ट दयो ॥ १३७ ॥ तं साचळी राजा अहुवार जेमी
 फरीने हमेसां सिंहासन ममावता, दाव्यो ॥ १३८ ॥ एक वरते अत.पुरमा पंतानी राणनि इत्तेदा मुखवा-
 ली जोइने राजाण आचार्यने समदया नही के, 'दजु एण ते वग्ळमुखो पेताना प्रमादथी पारवाप पाय्या
 करे ते' ॥ १३९ ॥

सिद्धनारस्मत्सरि—‘पुब्वविवुक्तेण तए । जीसे पच्चाइअ अग’ ॥ १३० ॥ पुन-
रन्यदा पट्टराज्ञी संचरंती पटे पदे व्ययमानामिव दृष्टपूर्वां स्माह नृप, ‘वावा
चकम्मती । पण पण कीस कुणइ मुहजंग ॥ १३१ ॥ सूरि—‘नूण रमण-
पणसे । मेहद्विआ अिवइनहपति ॥ १३२ ॥ तच्चूत्वा नृपतिर्विकृतमुजोऽचूत्,
निरादरश्च, त तादृश दृष्ट्वा श्रीयत्तुपाश्रये गत्वा किञ्चिन्मिपं कृत्वा छारकपाट-
यो काव्य द्विखित्वा व्यदर्शात् ॥ १३३ ॥ तच्चेद—याम स्वस्ति तवास्तु रो-
हणगिरे मत्त. स्थिति प्रच्युता । वर्त्तियत इमे ऽधुना कथमिति स्वप्नेऽपि मेव कृथा
॥ श्रीभंतो मणयो वय यदि अह्वब्यप्रतिष्ठास्तादा । के शृंगारपरायणा इति-
श्रुजो गौडो करिष्यति न. ॥ १३४ ॥

त्यारे सिद्ध रत्न ठे सारस्वत मत्र जेण्णे एवा आचार्यजीए कबु के ‘पुं जागी उअवाथी शरीर
दारथु, तेददा माटे’ ॥ १३० ॥ कळी एक दहाओ राजए चावती एवी पोतानी पटराणीनि पण्हे पण्हे जाणे
व्यथा पामती होय नहीं, तेप पेहेडां देवराथी समस्या कही के, ‘चावनी थकी वाला पण्हे पण्हे गमाटे
मुखनग करे हे?’ ॥ १३१ ॥ त्यारे आचार्यजीए कतु के, ‘खरेखर तेणीना गुणस्थवे मेखला पामे नवोनी श्रेणि
डांगडी हे’ ॥ १३२ ॥ ते साजळीनि राजानु मुख उतरी गयु, तथा आचार्यजी प्रत्ये आदर रहिन थयो, पडी
तेने तेरी रीतनो जोइने गुर महाराजे उपाश्रये जइ, कडक म्पि करीने, तथा वागणाना वने कमानेपर काव्य दाम्बिने
त्याथी बिहार क्या ॥ १३३ ॥ ते काव्य नीचे मुजव हतु हे रोहणाचन’ तु न्यममा एण णवो विचार नहीं करजे
के मारी पामेथी खसी जयाथी तेओना हने शु हान थरो?’ केमके जो अमो मणियो किमती उर्ये, तथा तमाराथी
जो अमोने प्रतिष्ठा मळेडी ठे, तो केट्टाक-शृंगारना उच्छक राजाओ अमोने मम्तके एण चकवणे, माटे ह्ये तार
कत्राण थाओ? अमो जइये छीय ॥ १३४ ॥

श्रीगुरुगोन्देशं प्राप, न च धर्मच्युत् . तदा महाद्यावत् श्रीआमच्युत् स्वयमाकारणाय
 नायाति तामन्न विहार्यमिति प्रतिज्ञाय स्थिता ॥ १३५ ॥ अन्यदा श्रीआम-
 च्युतो गजपट्टिकायै गतः, स्वचिन्तु कृष्णसर्पं दृष्ट्वा मुने मुहुरङ्गं त एहीत्वा मुष्टिम-
 ध्ये कृत्वा, बाहुभ्रंशेणाच्छाद्य च शन्न शास्त्रं कृषिर्विद्या । अन्यो यो येन जीवति । उ-
 तिमन्म्यामप्राप्तीति ॥ १३६ ॥ न कोऽपि चूपाग्निप्रायेण प्रस्यति, तदा श्रीगुरुं भृ-
 गमस्मार्यति, न त पटहो, य एता ममाग्निप्रायेण प्रस्येत्तस्य स्वर्णटकरुज्जमर्ष्यये, इत्य-
 ताद्यत ॥ १३७ ॥ अतः करेण गौन्देशे गत्वा श्रीगुरुन् प्रयाप्सूरि 'सुगृहीतं च कर्तव्यं
 । कृणामर्ष्यमुपं यथा ॥ १३८ ॥

पत्नी श्रीरत्नद्विनी गौन्देशं गत्वा, त्या धर्म नामे राजा हुतो, तेना आग्रह्यो त्या ते रथा, नया एवी
 प्रतिज्ञा करी के, जामुषि आप राजा गौत मने चोत्तराचने न आये, न्यामुषि मां अंजी विहाग स्त्रो
 नई ॥ १३५ ॥ एक च्छान्ने श्रीआम राजा म्यराकोण गया न्या म्यरु एक कळ्य सर्पने जान्ने, तथा तेनु मुत्त
 दृष्टीने परुमीने अने मुत्तीनां चोडने तथा हाय परवी दहीने 'शन्न, शास्त्र, सेवी, तथा पिशा के जे भेनायी
 जीने दे' एवी गिनी मपव्या पडवा जागयो ॥ १३६ ॥ परतु कोदये एण राजाना अजिनाय मुत्तर ते सगुणे
 रती गई; ते रतने गमाण नीरत्नद्विनीने तथा सनार्थी, तथा पति तेणे पना रत्नरथो के, जे केते आ
 मपव्या अजिनाय परिक पडो, तेने एक ज्ञान पुत्रपुत्रका हु आयीत ॥ १३७ ॥ पत्नी एक जुगरीण गौन्दे-
 शं पडने श्रीगुरु महागमने परनि ते मपव्या परी के, 'जेम ऋण सर्पेनु मुत्त, तेपते मुत्तुहीत कातु ॥ १३८ ॥

केनाऽपूरीति निर्वधपूर्वं राज्ञा प्रष्टो गुरुस्वरूप व्याख्यायित्वादि बहुविस्तरार्थिना एत-
 स्त्रयथादि विद्वोम्य ॥ १३ए ॥ ततोऽनुतापपर. प्रेपीत् प्रधानान् काव्यानि च श्रीवप्प-
 चद्वियुरुन् प्रति, तथाहि—॥ १४० ॥ ज्ञायाकारणि सिरि धरिश्च । पञ्चवि चूमिप-
 नति ॥ पत्तह एहु पत्तत्तण । धरतरु कांइ करति ॥ १४१ ॥ न गगा गागेय सुयुवति-
 कपोदस्यन्नगत । न वा शुक्ति मुकामणिहरसिजास्वादरसिक ॥ न कोटीरारूढ स्म-
 रति च सवित्री मणिचय—स्ततो मन्ये लोक स्वसुखनिरत स्नेहविरत ॥ १४२ ॥

कोणे ते पूरी ? एम प्राग्रहर्षक राजए पृग्वायी तेणे गुरुन् वृत्तात वदु, इत्यादि जेने वणो विस्ता-
 र बांभवती इच्छा होय, तेणे तेमना प्रथ आदिक गोवां ॥ १३ए ॥ पडी पथाचामां पंकेना राजए श्रीम-
 प्तद्वि गुरु मत्ये मथानेने काव्यो आपी मोक्या, ते कहे डे—॥ १४० ॥ हे उत्तम वृक्क' मथम तो तु ज्ञायने
 कारणे पादनाश्राने मस्तकपर धारण करे डे, अने पाछां तेअने पृ-त्रीपर पांके डे. मोडे एवु हद्वक्कु कार्य तु ज्ञा-
 मोडे करे डे ? ॥ १४१ ॥ स्त्रीना कपोदस्यजने मात थयेनु (गागेय) सुवर्ण गंगाने याद स्तु नथी, तेमज स्त्रीना
 स्तनना स्वादने रसीयो मुक्तामणि डीपने याद करतो नथी, तथा मुकुटमा चक्रुडो मणि समूह पोतानी जन्मचू-
 पिने याद करतो नथी, मोडे हु एम मातु तु के, दोफो फक पोताना मुखमान रक्तडे, तथा स्नेह विनाना
 डे ॥ १४२ ॥

इत्यादीनि प्रधानेभ्यो गुरुराकर्ण्योह, आमनृत्यमेवमा गाथा. श्राव्या; तथाहि-॥ १४३ ॥
 विक्रमेण विर्णांवि गया । नरिन्दनवणेसुहुंति गारविआ ॥ विंजो न होडप्रगओ । गए-
 हिं चहुएहिं विगए ॥ १४४ ॥ माणसविणा मुहाडं । जहय न द्वापंतंति रायहसेहि ॥
 तहतम्सवि तेहिविणा । तीरुडगा न सोहति ॥ १४५ ॥ परिसेसिअहसजडंपि ।
 माणसं माणस न सदेहो ॥ अन्नत्य विजत्य गया । हंसावि वग्गा न जणति
 ॥ १४६ ॥ मन्नओसचदणुच्चि अ । नइ मुहहरीरंतचदणुदुमोहो ॥ पञ्चदंपि हु मल्ल-
 याओ । चंइणं जायइ महग्य ॥ १४७ ॥

इत्यादिक श्राव्यो प्रगनो पासेयी सांजळीने गुरु कहेरा द्वाग्या के, तपारे आम गजाने नीचि मुन्नर गाथाओ
 मन्नळवती ते कहेडे-॥ १४३॥ हायीओ विंयाचळ विना पण राज चूनोमां जड गौखाला थया डे, तेमज व-
 णा हायीओ चायी जवायी पण पिंयाचळ पण कइ हायी विनाने नथी चइ गये ॥ १४४ ॥ जेप मानससरोवर
 विना राजसोनें मुख मळतु नथी, तेमज राजहंसेविना मानसमगेवरना किनाओ पण शेजता नथी ॥ १४५ ॥
 हंसोविना पण मानससरोवर ते मानसज कहेवाय डे, तेमां कइ संदेह नथी; तेम हंसो पण ज्या जाशे, त्या
 हंसोज कहेवाशे, परतु गढां नही कहेनां ॥ १४६ ॥ मन्नयाचन्न चदमयुक्त ऋत्राय डे, अने नेमां रहेला चदनां
 वडो नदीवाटे जेके बराइ जाय डे, तथा एवी रीते पन्नयाचवयी जोके तेओ मन्नए थाथ डे, परतु ते चदनानी किमत
 ओडी घती नथी ॥ १४७ ॥

द्धकेण कोट्युहेण । विणात्रि र्यणय्यरुच्चिञ्चसमुद्धो ॥ कोट्युहरयणपिउरे । जस्स
 विअ सोवि हु महग्घो ॥ १४८ ॥ पइमुक्काहवि वरतरु फिट्ठइ पत्तणं न पत्ताणं ॥
 तुह पुण अया अइहोइ । तारिसी तेहि पत्तेहि ॥ १४९ ॥ जे केवि पइसहिंसंरु-
 ब्बमि । ते उच्चुइरुसरित्था ॥ सरसा जरुणमज्जे । विरसा पत्तेसु दीसत्ति ॥ १५० ॥
 नत, अस्मान्निर्वदि कार्यं व-स्तवा धर्मस्य चूपते ॥ सत्ताया उन्नमागत्य । स्वय-
 मापृच्छयता हुत ॥ १५१ ॥ जाते प्रतिज्ञानिर्वहि । यथायामस्तवातिक ॥ प्रधाना
 ग्रहिता पूज्ये-रिति शिक्षापुरस्सर ॥ १५२ ॥

एक कौमुज मणि विना पण समुद्र रत्नाकर कहेबाय डे, तेमज जेना यइस्यनर्मा कौस्तुज मणि रहेन डे,
 ते पण महा मूढमान् कहेबाय डे ॥ १४८ ॥ हे उत्तम वृद्ध तं पयोनि तज्जी दीया, तोपण पयोनु पनपणु जातु नयी,
 पतु तने पण ज्यार तेर्षा पयो होजे, त्यारेज ज्ञाया थये ॥ १४९ ॥ आ पृथ्वी मरुत्तर जेइना मोहेश कहेबाय डे,
 तेओ सेनानीना सांडा सरिखा डे, केमके तेआ नरुमानी अदर (पङ्के-कातळीओनी अदर) रमवाळा डे, तथा पात्रोनी
 अदर (पङ्के-पयोनी अदर) रसजिनाला देखाय डे ॥ १५० ॥ माडे, तमारे जो अमारी सोध प्रयोजन होय तो धर्म
 रागानी सजामां गुप्त आवीने तमारे पेताने अहाँ तुस्त पृठी जवु ॥ १५१ ॥ अने एवी रीते अमारी प्रतिज्ञा स-
 पूर्ण थयेथी अमो तमारीं पसे आवीशु, एवी रीते शिक्षार्थक आचार्यजीण मथानेने मोकस्य ॥ १५२ ॥

ते कन्यकुञ्जचूप प्राप्ता गुरुसद्वेशादि प्राहुः, राजा उत्कथया द्वाणाल्करजैर्नि शको ग-
च्छन् गोदावरीतीरे ग्राममेकं प्राप ॥ १५३ ॥ तत्परिसरे खनदेवकुड्डे रात्रिमुवास, त-
दूपमृढा तद्देवी तमर्थनापूर्वं बुचुजे, प्रातस्तामनापृच्छ्येव करचारुढ. श्रीगुरुपादाति-
कं प्राप ॥ १५४ ॥ विरहव्यंजनैः काव्यैः स्तौति स्म च, ततो गाथार्थं प्राह, 'अ-
जवि सा मुमरिज्जट । को नेहो एगरार्द्रिण' ॥ १५५ ॥ गुरुराह—'गोदानईदतीरे । मु-
न्नउदो जंमिबीसमिओ' ल्हष्टो राजा शान्त्रगोष्ट्यादित्रिदिनेशेषाद्यतिचक्राम ॥ १५६ ॥

तेओए पण रन्यकुञ्जना राजा पासे जट गुन्ना सदशा आटिक कटु; त्यारे राजा उत्कथित थ-
दणगरमा उंटपर बेसी निमंशकणणे जतो कको गोदावरीने किनारे एक गाममा पहंच्यो ॥ १५३ ॥ तेना पाट
रमा रहेला एक स्वर्नित देवमंदिरमा ते रात्रि रात्रो, त्या तेना रूपथी मोह पावथी ते मडिरनी देवीए मारथना-
पूर्वक तेनी साथे जोग जोगव्यो, पत्नी प्रजाते तेणीने पृष्टया किनाज ते उटपर चर्मने श्रीगुप्त महाराजना
चरणप्रान्ये पहंच्यो ॥ १५४ ॥ तथा रिस्ट देवाफनारा काव्योथी तेमनी स्तुति करवा दाय्यो; पत्नी तेणे एक
नीचं मुजरा अरणी गाथा कहल 'हजुमुधि ते याट आये डे के, अहो! एक रात्रिमाज केवो स्नेह ॥ १५५ ॥
त्यारे गुरुजीए कहु के, 'गोदावरी नदीने काडे सुना देववृढामा विश्राम क्या तेंदवा गटे', पत्नी राजाण खुशी
थइने वाकीनो दिवस गात्र वाची आटिकथी संपुर्ण कर्यो ॥ १५६ ॥

॥ १७३ ॥
 प्रातः स्थगीधरवेपञ्चाङ्गं आमनृत्यश्च सूरिश्च धर्मनृपास्थानं प्राप्नोति ॥ १६७ ॥
 आमविज्ञप्तिं धर्मराजस्य गुरुरदर्शयत्, विरहव्यंजिकां ता वाचयित्वा दूतः, तव
 नृत्यं कीदृशं ? स ग्राह, अस्य स्थगीचर्तुस्तुल्योऽसावेव बुध्यता ॥ १६८ ॥ मातुञ्जिग
 करे विव्रत् । नैपं पृष्टश्च सूरिणा ॥ करे ते किं स चावादीत् । वीजत्रोरा इति स्फुट
 ॥ १६९ ॥ दूतेन चाढकीपत्रे दर्शिते गुरुराह सः ॥ स्थगीधर पुरस्कृत्य । तूत्ररि-
 पत्तमित्यय ॥ १६८ ॥

मन्त्राते आमराजा *स्थगिधरानो वेप लेखने, तथा आचार्य महाराज पण धर्म राजानी सनामा आख्या
 ॥ १६७ ॥ पडी गुण्य वर्गगजाने आमराजानी विज्ञप्ति देवान्, त्पारे विरहने प्रगट करनारी ते विज्ञप्ति
 वंचने राजाए दूतेने पृठयु के तासे राजा केवो डे ? त्पारे दूते कलु के, आ स्थगीधर सरलो जाणे तेज जाणवो
 ॥ १६८ ॥ पडी वीजोफ जेणे हाथगा धारण करेडु डे, एवा तेने आचार्यजीए पृठयु के, तारा हाथमां हुं डे ?
 त्पारे तेणे प्रगट रीते कलु के, 'बीजत्रोरा' ॥ १६९ ॥ पडी दूते आढकीपत्र देवाफते डते गुण्य स्थगीधरने
 अगानी करीने कलु के, आ तो 'तूत्ररिपत्त' डे ॥ १६८ ॥

* स्थगी पानदानीयु तेथी स्थगीधर पड्डे पान बीजादानीयाने राखनार यावत् पानर्हीजं राखनार तथा
 आपनार एवो अर्थ थाय डे.

इत्थेव श्लिष्टेऽर्थे उक्तेऽपि ऋजुणा धर्मचूषेन न ज्ञात, तत उत्थाय श्रीआमो
 वारवेक्ष्यायहेऽवसत् ॥ अमूढ्य ककणं दत्त्वाऽस्या प्रातर्निर्गाद् गृहात् ॥ १६१ ॥
 छितीयं राजसौधद्वारेऽश्वकीद्वके मुक्त्वा ततो निर्गतो बह्निहोवनेऽस्थात्, तत
 प्रातर्गुरुपसन्ना गत्वा कन्यकुब्जप्रस्थानाय नृपमापपृच्छे ॥ १६२ ॥ तेनोक्तं प्रति-
 ज्ञा किं विस्मृता? गुरुणोक्तं सा पूर्णा कथमिति राज्ञोक्ते, आमागमाद्विस्वरूप
 यथास्थ जातमवदत् ॥ १६३ ॥ तावद्धारवध्वा आमनामाकितं ककणं राज्ञोऽऽग्रे
 मुक्तं, छितीयं च द्वारपादोन, ततो जातप्रत्यय राजानमापृच्छ्य कन्यकुब्जं
 प्रति गुरु प्रतस्ये ॥ १६४ ॥

एवी रीते श्लेष्युक्त अर्थ कहेते अते पण सरढ एवा धर्मराजाए तेनो नावार्थे जाण्यो नही ;
 पडी त्यावी उडीने श्रीआमराजा वारागनाते घेर रबो, तथा तेणनि अमूढ्य ककण आपीने प्रजाते तेणनि
 घेरवी ते निकळी गयो ॥ १६१ ॥ पडी वीजु ककण राजमहेदना दरवाजाना गोननापर मूकीने त्यांची
 बहार निकळी ते गुप्त रीते वनां रबो; पडी प्रजाते गुरु महाराज धर्मराजानी सजामा जेदने कन्यकुब्ज
 प्रत्ये जवा माटे रजा मागवा दाग्या ॥ १६२ ॥ त्यारे धर्मराजाए कथु के. शुं तमाए प्रतिका विसारी
 मूकी? त्यारे गुरूप कथु के, ते तो सपूर्ण धर, केवी रीते? एम राजाए पूछ्यायी तेणे आमराजाना आगम-
 ननु स्वरूप पयार्थ रीते कथु ॥ १६३ ॥ एद्वामां वारांगनाए आवीने आमराजाना नामवाळु ककण राजानी
 पासे मूक्यु, तथा वीजुं ककण धारपळे पण दावी मूक्यु, एवी रीते जेने खातरी घयेही ठे, एवा ते राजानी
 रजा वेदने गुरु-महाराज कन्यकुब्ज प्रत्ये वाढ्या; ॥ १६४ ॥

प्रातः स्थगीधरवेपजागू आमनृपश्च सूरिश्च वर्मनृपास्थानं प्राप्तौ ॥ १५७ ॥
 आमविद्भिति धर्मराजस्य गुरुदर्शयत्, विरहव्यजिका तां वाचयित्वा दूतं पृष्टः, तव
 नृप कीदृशः ? स प्राह, अस्य स्थगीनर्तुस्तुल्योऽसावेव बुध्यता ॥ १५८ ॥ मातृद्विग
 करे विभ्रत् । सेप पृष्टश्च सूरिणा ॥ करे ते किं स चावादीत् । बीजत्रोरा इति स्फुट
 ॥ १५९ ॥ दूतेन चाढकीपत्रे दर्शिते गुरुराह स. ॥ स्थगीधर पुरस्कृत्य । तृत्ररि-
 पत्तमित्यय ॥ १६० ॥

मजाते आमराजा *स्थगिधरनो वेप लेखने, तथा आचार्य महाराज एण धर्म राजानी सत्तामा आवा
 ॥ १५७ ॥ पत्नी गुरु वर्मजाने आमराजानी विद्भिति देवानी, त्यारे विरहने प्रगट करनारी ते विद्भिति
 वाचीने राजाण दूतने पृष्ठयु के तारो राजा केवो डे ? त्यारे दूते कथु के, आ स्थगीधर सरखो जाणे तेज जाणवो
 ॥ १५८ ॥ पत्नी बीजोह जेणे हथगा धारण करेखुं डे, एवा तेने आचार्यजीण पृष्ठयु के, तारा हाथमां कुं डे ?
 त्यारे तेणे प्रगट रीते कथु के, 'वाजत्रोरा' ॥ १५९ ॥ पत्नी दूते आढकीपत्र देखाफते डते गुरुण स्थगीधरने
 आगामी कर्तने कथु के, आ तो 'तृत्ररिपत्त' डे ॥ १६० ॥

* स्थगी पानदानीयु तेथी स्थगीधर एटडे पान बीजान्नामिणने राखनार यावत् पानबीजां गखनार तथा
 आपनार एवो अर्थे थाय डे

इत्येव श्लिष्टेऽर्थे उक्तेऽपि ऋजुणा धर्मरूपेण न ज्ञात, तत उत्थाय श्रीआत्मो
 वारवेक्ष्यापृष्टेऽयसत् ॥ अमूढ्य ककण दत्त्वाऽस्या प्रातर्निर्गाद् गृहात् ॥ १६१ ॥
 द्वितीय राजसौधद्वारेऽश्वकीदिके मुम्त्वा ततो निर्गतो वह्नीरहोवनेऽस्थात्, तत
 प्रातर्गुरुर्नृपसजा गत्वा कन्यकुब्जप्रस्थानाय नृपमापृच्छे ॥ १६२ ॥ तेनोक्त प्रति-
 ज्ञा किं विस्मृता? गुरुणोक्त सा पूर्णा कथमिति राज्ञोक्ते, आमागमादिस्वरूप
 यथास्य जातमवदत् ॥ १६३ ॥ तावद्धारवध्वा आमनामां कितं ककण राज्ञोऽऽग्ने
 मुक्तं, द्वितीय च द्वारपालेन, ततो जातप्रत्यय राजानमापृच्छ्य कन्यकुब्ज
 प्रति गुरु प्रतस्ये ॥ १६४ ॥

एवी रीते श्लेषुक्त अर्थ कहेते बते पण सख एवा धर्मराजाए तेनो चावार्थ जाण्यो नही,
 पवी त्यांची उठीने श्रीआमराजा वारागाने येर खो, तथा तेणीने अमूढ्य ककण आपीने प्रजाते तेणीने
 घेरथी ते निकळी गये ॥ १६१ ॥ पवी नीजु ककण राजमहेदना दर्शवाना गोमनापर मूकीने त्यांची
 वहार निकळी ते गुप्त रीते वनां रबो, पवी प्रजाते गुरु महाराज धर्मराजानी सचामा जइने कन्यकुब्ज
 मत्ये जवा माटे रजा मागवा दाग्या ॥ १६२ ॥ त्यारे धर्मराजाए क्यु के. शु तमाए प्रतज्ञा विसारी
 मूकी? त्यारे गुरूप क्यु के, ते तो सपूर्ण थड; केची रीते? एम राजाए पृच्छयाची तेणे आमराजाना आगम-
 ननु स्वरूप यथार्थ रीते क्यु ॥ १६३ ॥ पृष्टवामां वारांगनाए आवीने आमराजाना नामवालु करुण राजानी
 पासे मूस्यु, तथा वीजु ककण द्वारपाले पण दावी मूस्युं, एवी रीते जेने खालरी थयेजी डे, एवा ते राजानी
 रजा वेइने गुरु-महाराज कन्यकुब्ज मत्ये चाड्या, ॥ १६४ ॥

श्रीआमनृपेण सह गोपाद्वगिरिमापत्, तत्र कदाचित् शास्त्रगोष्ट्या कदाचिद्धर्म-
गोष्ट्या सम्मयो याति ॥ १६५ ॥ श्रीवृषजट्टि साम्ना श्रीआमनृपप्रतिबोधाय
बहूनुपायानकरोत् पर स नाऽबुध्यत धर्म ॥ १६६ ॥ अन्यथा तत्र गायनवृद-
मुस्वरमाययौ, तत्रैका मातंगी राजान रूपेण स्वरेण च रंजयामास १६७ ॥ रा-
जा तद्भूपमोहितो वहिरावासमचीकर्त्. उवाच च—वमत्र पूर्णशशी सुधाधरद्व-
ता इता मणिश्रेणाय । काति श्रीर्गमन गज परिमद्वस्ते पारिजातधुमा ॥ वा-
णी कामडुधा कटाङ्गद्वहरी सा काङ्गकूटच्छटा । तत् कि चञ्चमुखि त्वदर्थमम-
रैरामथि दुग्धोदधि ॥ १६८ ॥

न्यास्तात् ते श्रीआमराजानी साथे गोपावगिरि पत्ये आया, तथा त्या कोइ बलने शास्त्रवार्त्तायी
तथा कोइ कवने धर्मवार्त्तायी तेओनो समय जवा लाग्यो ॥ १६५ ॥ पत्नी श्रीवृषजट्टिओए सामनेदे करीने श्री
आमराजाने प्रतिरोधना मटे गणा उपायो कर्यो, परतु तेने धर्मनो प्रतिरोध लाग्यो नह्यो ॥ १६६ ॥ एक कवने
त्या उत्तम गायनो कलाए गानाराओनु गेह्य आब्यु, तेमानी एक सुवर्नीए राजाने रूप तथा स्वर्यी खुदा
करी ॥ १६७ ॥ तेणीना रूपयी मोहित थयेना राजाए बहार एक मेहेद्व वधाब्यो, तथा कहेवा लाग्यो के
—हे चद्रमुखी! तारु मुख प्रणिमाला चद्र भरखु छे, ओष्ठवता अपृत सरखी छे, दातो मणिओनी श्रेणिओ
सरखा छे, कांति लक्ष्मी सरखी छे, गमन दार्यी सरखु छे, सुगधि क-पट्टक सरखी छे, वाणी कामथेनु सरखी
छे, कगदोनी श्रेणि काङ्गकूटनी (विपनी) उग सरखी छे, मटे शु तारे मटेज देवोए कीरसमुदने पयेदो छे ?
॥ १६८ ॥

जन्मस्थान न खलु विमलं वर्णनीयो न वर्णो । हरे शोभा त्रयुषि निहिता एक-
शंका तनोति ॥ विश्वप्रार्थः सखदसुरनिघ्नव्यदर्पापहारी । नो जानीम. परिमल-
गुण. कस्तु कस्तूरिकाया ॥ १६ए ॥ सूरिणा चितितं, अहो महतामपि कीह-
मतिविपर्यासः, जन्मा काचन चूरिभ्रविगलसन्मल्लक्ष्णेदिनी । सा सस्कारशतैः
क्षणार्थमधुरा बाह्यामुपैति द्युति ॥ अंतस्तत्त्वरसोर्भिधौतमतयोऽप्येतां तु कांताधिया
। श्रुष्यंति स्तुवते नमति च पुर. कस्यात्र प्लक्ष्महे ॥ १७० ॥ उत्थिता सजा,
त्रिनिर्दिनेर्चूपाेन पूर्वहि. सौघ कारित, मातगीसहितोऽत्र वत्स्यामीतिधिया, तद्व-
गत वप्पन्नद्वियुक्ता ॥ १७१ ॥

कस्तूरीतु जन्मस्थान निर्मल नथी तेष तेनो रा पण प्रशसा द्वायक नथी, शोभा तो तेनी दूर रही,
परतु शरीरपर दोषन कस्वाथी पण कादवनी शंका विस्तारे डे, पश्यु उतां पण अमोने नथी मातुम परतु के,
तेमा केवोक मुगधिनो गुण रहेदो डे ? के जेथी आखु जगत तेनी प्रशसा करे डे, तथा ते सयळा मुगधि द्रव्यो-
ना अहकारने हरे छे ॥ १६ए ॥ त्यास्वाद आचार्यजीए विचार्यु के, अहो ' महान् पुरयेनी पण केवी बुद्धि
फरी जाय डे ? यणा जिदोथी गजता एवा ते ते भेदथी मझीन थयेदी, तथा सेंकनो गमे संस्कारोथी अस्था
इए मुधि जे महारानी मनोहर कातिने धारण करे डे, एवी कोष्क थपण सरथी खीने पण, हृदयमा तत्त्व-
सना भोजात्रोथी जेनी मति निर्मल थयेदी डे, एवा मनुष्यो पण कालानी बुद्धिथी तेणने आदिगन करे छे,
स्ते डे, तथा नपे पण डे, गटे हवे अमो कोनी पासे पोकार करिये ॥ १७० ॥ पढी सजा उठथा गट
राजाए त्रण दिवसोमा नगरनी बहार भेहेल तैयार करावणे, एनी बुद्धिथी के, ते सुवनी सहित हु त्या रहीग,
पढी ते गजत वप्पन्नद्विजी गुरने मातुम फकी ॥ १७१ ॥

ततो मासौ कुर्मणा नरक गप्सीदिति कृपया गुरुणा निष्पद्यमानसौधचारपट्टे नि-
 शि खटिकया प्रतिबोधकाल्यानि द्विखितानि ॥ १७२ ॥ यथा,--शैल्य नाम गुणस्त-
 न्नेव जवत- स्वाज्ञाविकी स्वच्छता । किं त्रूम- शुचिता जवति शुचयस्त्वत्सगतोऽप्ये-
 यत ॥ किं चात परमस्ति ते स्तुतिपदं त्व जीवित देहिना । त्व चेन्नीचपथेन गच्छ-
 सि पय कस्त्वा निरोष्ठु क्रम. ॥ १७३ ॥ सधृतसद्गुणमहार्थमहार्हकात--काता-
 घनस्तनतटोचितचारमूर्ते ॥ आ पामरीकठिनकंडविलग्नजन । ह्य ह्यार हारितमहो
 जवता गुणित्व ॥ १७४ ॥ जीअ जलविदुसम । सपत्तिओ तरगद्वोद्वाओ ॥ सुविण-
 यसम च पिम्म । ज जाणसि त करिज्जासु ॥ १७५ ॥

त्यारे तेमणे विचार्युं के, कुर्मणी आ रामा नरकमा न पदे तो सार, एवी दया द्यापी तेमणे तैपार यत्ता
 मेहेवना चारदहीयामा रात्रिप खमायी तेना मत्तिवोध माटे नीचे मुजन काव्यो दारपा ॥ १७२ ॥ ते कहे छे-
 हे 'जन' शीतन नामने गुण पण तारामांज ठे, तेम स्वाज्ञाविकि स्वच्छता पण तारामांज ठे, बली वयारे शु कहेयें ?
 तारा सगथी बीजाओ पण पवित्र थाय ठ, बली तेथी पण तारी अमी वयारे स्तुति शु करीये ? केमके तुज माणी-
 आना जीवितरूप ठे, माटे एवु पण तु जो नीच मांगे जणे, तो पडी तने रोक्कवाने कोण समर्थ ठे ? ॥ १७३ ॥
 हे हार' तु केवो छे ? तोके उत्तम दृष्टयुक्त (पळे-गोल आकायुक्त मोतीयाळो) सहृणयाळो (पळे-उत्तम दोरीथी
 गुथेळो) महान् अर्थयाळो दायक तथा मनोहर ठो, तेमज स्त्रीना निमिन्न स्तन तोंपर उचित तथा मनोहर तेज-
 वाळो ठो, एवो पण तु, एक नच रुचनीना कठिन कडवां अचमांजे वयारे चांगी जण्य, त्यारे अरेरे' ते तार
 गुणपणु खोयुज समजवु ॥ १७४ ॥ आ जीवित जतविदु सरखु ठे, तथा सपदाओ मोनाओ सरखी चपन ठे,
 अने मम स्वम सरग्यो ठे माटे जेम उचित जणाय, तेम आचरण करवु ॥ १७५ ॥

द्वज्जिह्वे जेण जणे । मइञ्जिह्वे निअकुञ्जक्रमो जेण ॥ कउट्टिप्पि जीए । त न कु-
 लीणेहि कायञ्च ॥ १७६ ॥ इति, प्रात श्रीआमोऽपि तत्सदन त्रेङ्कितु ययो, अप-
 श्यच्च तानि काञ्चानि यथा यथा, तथा तथा ग्रमो नद्यो दुग्धाच्छत्तूरमोहवत् ॥ १७७ ॥
 तत आमः श्यामास्यो भृशमन्तप्यत व्यसृशच्च, मम मित्र विना कोऽन्य एव बोधयेत्,-
 इदानीं कय स्वमास्यं दर्शये । १७८ ॥ मम वहिरेव शुद्धि विधास्यति, यिमे जन्म
 सकनक, इति ध्यात्वा स तत्रैवादिशच्चित्तयै पार्श्वस्थान् ॥ १७९ ॥ तेऽनिच्छतोऽपि
 त न्रूपादेश व्यधु, इद राज्ञोको ज्ञात्वा शुरोर्ग्रे पूञ्चके, ततो गुरुस्तत्र गत्वाह
 ॥ १८० ॥

ज्येथो करीने दुनीयामा ह्यज्जा पामीये, तथा जेयी पोतानो कुद्धरुम मच्चिन थाय, तेवु कर्यं कुडीनी
 माणसोए कडे प्राण आवे तोपण न करु ॥ १७६ ॥ इति, हरे मन्त्रे आमराजा एण ते मेहेद्व जोवा गयो,
 तथा जेम जेम ते काव्योने जेवा ह्यारो, तेम तेम रूथयी जेम धनुरातु विप, तेम तेनो ज्रम नए थवा ह्यार्यो
 ॥ १७७ ॥ पडी आमराजा जलवाणा मुखवालो थडेने गणो पथात्ताप करवा ह्यार्यो. तथा विचाररा ह्यार्यो के,
 मारा मित्रविना नीजो कोण मने आवी रीते मत्तिवोधे, हवे हु मारु सुख शु यताउ? ॥ १७८ ॥ हवे तो मने
 अग्निन शुद्ध करशे, मारा आ कउक्कित जन्मने धिकार डे; एम विचारि तेणे त्याज नोकरोने चित्ता मटे हुमक
 कर्यो, ॥ १७९ ॥ तेओए इच्छाविना एण रामानो ते हुकम वज्जाल्यो, पत्री ते बालनी राजद्वारीओने खवर
 पन्माथी, तेओए गुरु पासे जइ पोकार कर्यो, त्यारे श्रीवपनहिनी महाराज त्यां जइ कहेवा ह्यार्या के ॥ १८० ॥

राजन् किमिदं योषिदहं प्रारब्धं? राजाह, ममास्य दुष्कृतस्य देहत्याग एव प्रायश्चित्त, यथा दुर्नयलोकास्य । वयं द्रुमकृष्महि ॥ तथा स्वस्यापि किं नैव । कुर्म कर्म-
 डिदं कृते ॥ १८१ ॥ गुरुराह, निवृत्तं कर्म चित्तेन । चित्तेनैव विमुच्यते ॥ स्मा-
 र्त्तादीन् पृच्छ, यत स्मृत्यादियु सर्वेषां पापाना मोक्षोपाय ज्ञेयः ॥ १८२ ॥ राज्ञा
 ते आहूता, स्वमन पापमुक्त, स्मार्त्ता आहु, —आयसीपुत्रिका वृद्धि—ध्याता त-
 छर्णरूपिणी ॥ आश्लिष्यन् मुच्यते पापा—द्वान्नाक्षीसगसन्नवात् ॥ १८३ ॥
 इति श्रुत्वा नृपस्ता कारयामास, तदाक्षिगनाय सजोऽनृत, तदा पुरोधोवप्पन्नद्वि-
 न्ध्यां नृपो नृजयोर्धृत ॥ १८४ ॥

हे राजन्! धीनि ज्ञापक एव आ शु कार्यं कर्त्वा मान्युः? त्वारे राजाए कथु के, मारा आ दुष्कार्यनु
 प्रायश्चित्त गरीर त्याग करतु, एज हे; जेप अन्यायी लोकने अप्पो दद्र करीये ठीये, तेम कर्मोना छेद माटे
 अप्पो अप्पोरो पोतानो दद्र शमाटे न करीये? ॥ १८१ ॥ गुरए कथु के, मनयी गथेनु कर्म मनयीज म्काय ठे,
 वळी ते माटे वु स्मृति जाणनाराअणेने प्रवीजो केमके स्मृति आदिकोमां सर्व पापेयी मुक्त घवानो उपाय कहेवो
 ठे ॥ १८२ ॥ पवी राजाए ते स्मार्त्ताने चोत्राव्या, तथा तेमनी पासे पोताना मननु पाप जाहेर कर्यु, त्वारे
 तेअए कथु के, तेणीना सरवा रा अने रूपवळी लोकमनी पुतळी वनावीने, तथा तेने अग्निमां तपावीने,
 तेणीनु आक्षिगन करवायी, चानावणीनो, सग कल्यायी उत्पन्न घयेनां पापयी प्राणी मुक्त थाप ठे ॥ १८३ ॥
 ते सांचळी राजाए तेवी पुतळी करवी, तथा ज्यारं तेणीने आक्षिगन करवा माटे ते तयार थयो, त्वारे पुरोहित
 तथा वप्पन्नद्विणीए राजाना वने हाथो पकनी राग्या ॥ १८४ ॥

उक्तं च ताञ्च्या, राजन् कौटिल्यरमात्मानं मा मुधा नाशय? हुक्करकरणाग्निभा-
 यादेव तत् पापं नष्ट. तत श्रीगुरुवाग्नि. प्रबुधः स. ॥ १८५ ॥ अमात्याद्यै.
 कृत. प्रौढो नगरप्रवेशमहः, अन्यदा धर्मव्याख्यावसरे श्रीवृष्णद्विजैर्नादियर्मतत्त्वा-
 नि प्राह ॥ १८६ ॥ ततो जैन धर्म परीक्षापूर्व राजन् श्रयेत्याह च, राजा मा-
 द्दार्हतो धर्मो । निर्वहत्येव सादृशां ॥ परीक्षाया पर शैव—धर्मं चेतोऽवगद् हृढ
 ॥ १८७ ॥ तेन त धर्म न मुंचे, इत्यादि, अन्यच्च जगवन् किञ्चिच्छस्त्रि, जवं-
 तोऽपि बालगोपालादिक प्रबोधयति ननु कोविद ॥ १८८ ॥

तथा तेओए क्यु के, हे राजन ' कोफेनु जरणपोपण करनारा एवा तमारा आत्मानो तमो फोसद
 विनाश करो? में आहुक्कर्म क्युं डे, एवा पश्चातापधीज तमारु ते पाप नष्ट थयु डे; पछी एवी रीतना
 श्रीगुरु महाराजना वचनोधी ते राजा प्रतिकोध पास्यो ॥ १८५ ॥ तथा प्रधान आदिकोए मोदा आमरथी तेनो
 नगरमां प्रवेश महोत्सव कर्यां, एक बखते धर्मव्याख्यान अवसरे श्रीवृष्णद्विजैण जैनआदिक धर्मना तस्यो कथा
 ॥ १८६ ॥ तथा पढी क्यु के, हे राजन् परीक्षा पूर्वक तमो हवे जैनधर्म स्वीकारो? त्यारे राजाए क्यु के,
 मारा जेवने जैनधर्म परीक्षामा तो यारन उतरे डे, परतु मारु मन शिवधर्ममा हृढ चोटेनु डे ॥ १८७ ॥ माटे ते
 धर्मनो हु त्याग करु नहीं, इत्यादि, कळी एण हे जगयान' हु आपने कडक कहु बुं के, आप एण बालगोपाल
 आदिकने तो प्रबोधो छे, परतु कोऽ विद्वाने प्रबोधी शकता नथी ॥ १८८ ॥

शक्तिश्चेत्तदा मथुरायामागत, हृदि विष्णु ध्यायत, यज्ञोपवीतालङ्कृत, नासाग्रन्य-
स्तदृश, तुलसीमालया पत्रजीममाद्रया च श्लिष्टवक्ष स्थल, कृष्णगुणगायक, वैष्ण-
ववृद्धत, वराहस्वामिदेवय प्रासादात् स्य, वैराग्याद् गृहीताऽनशन, पर्यकासनस्थ
प्रबोध्य जैनमते स्थापयत् शकूपतिराजसामत् ॥ १८९ ॥ श्रीगुरवस्तप्रतिबोध प्र-
तिज्ञाय चतुरशीतिसामत्त्रिडरसहस्रपरिवृता मथुराया वराहस्वामिमदिर प्राप्नु
॥ १९० ॥ त तथास्य दृश तस्युष्टस्था सूरय पेटु,—सध्यायत्रणिपत्य लोकपुरतो
वञ्जजल्लिर्याचसे । धत्से यच्च परा विद्वज्जशिरसा तत्रापि सोढ मया ॥ श्रीजातामृतमथने
यदि हरे कस्माच्छिप नञ्जित । मा स्त्रीद्वपट मा स्पृशेत्यनिहितो गौर्या हर. पातु
व ॥ १९१ ॥

माटे जो आपनी शक्ति होय तो मथुरामा श्रावणा तथा हृदयमा विष्णुनु यान श्रता, ज्ञानोडयी शोचिता,
नाशिकाना अग्र नागपर लाचनेने धारण करता, तुलसीमाला तथा पञ्जनीदनी मालायी श्लिष्ट वक्षला वद् स्थलवाला,
कृष्णना गुण गानारा, वैष्णवाना समर्थी वीज्येवला, वराहरामिदेवना मदिरनी ड्रदर रदला, दैराग्यधी जेणे ड्रन्डन
ग्रहण करेखु ते परा, पर्यक आसनवाळीने रहेला एवा चार्पति राजाना सामतेने प्रवर्धने चार्प जेन मत्तया रथान
करे ॥ १९० ॥ पत्नी श्रीगुरमहाराज पण तेने मतियोधवा प्रतिज्ञा करिने चौर्यासी सामत तथा एक हजार प्रतिता-
थी परचार्या एका मथुरामा वराह स्वामिना मदिर प्रते पशेंच्या ॥ १९० ॥ त्यां तेने तेथी रीति रहेंवा जाणने, तेना
पाळल मसीने आचार्य महाराज कथ्या दाण्या के, हे शबर ! तु सयाने नमीने हाथ जाभनेने हाकांनी पास याचे वे,
तथा हे निजिज तु मस्तकर वीजी खीने धारण करे छे, ते पण में सहज कर्ये, वळी चामतेने (समुद्रन) मत्तवाधी ल
सन थयेंनी लक्ष्मी ज्यारे विष्णुनी थद, तो ते विप आमटं नक्रण कर्यु ? माट हे स्त्री द्वपट ! मने तु स्परी नहीं
कर ? एवी रीति पास्तीथी कहेचोयेंता महोत्त तमार रक्षण करो ॥ १९१ ॥

एकं ध्याननिमीलनान्मुकुलितं चक्रुर्द्वितीय पुनः । पार्वत्या विपुले नितंबफलयके शृ-
 गारभारालये ॥ अन्यद् दूरविकृष्टचापमदनकोथानलोद्दीपित । शंभोज्ज्वररस समा-
 धिसमये नेत्रत्रय पातु वः ॥ १९२ ॥ रामो नाम बभूव हु तदवद्या सीतेति हु तौ-
 पितु—र्वाचा पंचवटीवने विहरतस्तां चाहरश्चावणः ॥ निचार्थं जननीक्यामिति हरे-
 हुंकारिणः शृण्वतः । पूर्वस्मर्तुरंबतु कोपकुटिलभ्रूभंगुरा दृष्टयः ॥ १९३ ॥ दर्प-
 णार्पितमालोभ्य । मायास्त्रीरूपमात्मनः ॥ आत्मन्येवानुरक्तो यः । श्रियं दिशंतु
 केशवः ॥ १९४ ॥

ध्याननी अदर जेभवायी एक चकृतो जेमतु र्वाचायेतु ठे, तथा वीजुं शृगारना समूहना स्थान रूप एवा
 पार्वतीना दिस्तीर्णं नितवदपर स्थिर थयेतु ठे, अने वीजुतो धतुल्य चनामीने रहेदा एवा कामदेवपर क्रोध रूपी
 अग्नियी जाज्वल्यमान थयेतुं ठे, एवी रीते समाधि बलते जिन्र रसोबालां एवा शकरना त्रणे नेत्रो तमार रक्षण
 करो ॥ १९२ ॥ एक राम नामे राजा हतो, तेने सीता नामे स्त्री हती, तेओ वने पिताना वचनयी पंचवटीना व-
 नमा विचरता हता, त्या तेणीने रावणे हरी दीधी, एवी रीते निद्रामाटे मातानी कथाने हुंकारो देइने सांजळ-
 ता अने तेयी पुर्वावस्थानु स्मरण करनारा एवा हरिना क्रोधयी कुट्टिद तथा चक्रुटीयी नगुर थयेदी दृष्टिओ रक्षण
 करो ॥ १९३ ॥ दर्पणमा रहेदा एवा पोताना मायावी स्त्रीरूपने जेइने जे पोतामाज अनुरक्त थया ठे, ते केशव
 दाइमी आपो ॥ १९४ ॥

इत्यादि, तच्चुत्वा वाक्पति संमूखीञ्चूयोचे, सूरिमिश्रा. किमस्मत्पुरत शृंगाररौज्जगं
पद्यपाठ कुरुचे ॥ १एए ॥ सूर्य — युष्मद्देवाशिपः पतंतः स्मः; यथा स च हि
श्रोत्रु पुर पतनीय, वाक्पति — यद्यथेवं तथापि मुमुक्षुवो वयमासन्न निधन ज्ञा-
त्वा इह परमब्रह्म ध्यालुमायाता स्म ॥ १ए६ ॥ सूर्य. — किं तर्हि रुद्रादयो
मुक्तिदातारो जवतीति मनुध्वे? वाक्पति — एव सभाव्यते ॥ १ए७ ॥ सूर्यो वज्रा-
षिर, तद्धि यो मुक्तिदानङ्गमस्तं शृणु पत्राम ॥ १ए८ ॥ ज दिष्टीकरुणातरंगियकु-
ना एयस्स सोम मुह । आयारोपसमागरो परियरो सतोपसन्ना तणू ॥ त मन्ने जरज-
म्ममच्चुहरणो देवाहिदेवो जिणो । देवाणां अवरान् दीसइ जओ नेय सरूवं जए ॥ १एए ॥

इत्यादि हेव ते साजळीने वाक्पति सन्मुख षड् बोद्धवा द्वाप्यो के, हे सूरिमिश्रो अमारो आणळ शृंगार तथा
रौद्रसखाळो पद्यपाठ शा मांटे कोरो ओ ॥ १एए ॥ त्यारे आचार्यनी महाराजे कळु के, तमारा देवोनी अयो आ-
शिप कहीये छीये के जे श्रोतानी पासे कहेवामां आवे ठे, त्यारे वाक्पतिए कळु के जेके एम ठे, तोएण आमोतो सु-
शुक्रु ढीये, अमारु मृत्यु नजडीक जाणने अमो अही एम ब्रह्मसु भ्यान धरवा मांटे आव्या ढीये ॥ १ए६ ॥ ते सा-
जळी आचार्यनी महाराजे कळु के, शु त्यारे रड आदिक देवो मुक्ति आपनारा ठे, एम तमो मानो छो? त्यारे वाक्-
पतिये कळु के, आमोने तो एवो सजव थाय छे ॥ १ए७ ॥ त्यारे आचार्यनी महाराजे कळु के, मुक्ति देवामा जे देव
समर्थे ठे, ते अमो तमोने कहीये ढीये ते साजळो ॥ १ए८ ॥ जेनी दृष्टि दयाना तरगोधी मफुद्धित घयेही ठे,
तथा जेमसु मुल शात सुद्रावाळु ठे, तथा जेमो आकार एण शांततानी ग्वाण रूप ठे तथा जेमनो परिवार एण सज-
नतावाळो, अने जेमसु शरीर एण मसन्नतावाळु ठे एवा देवाधिदेव श्रीजिनेश्वरमनुने जन्म, जरा तथा मृत्युना हरनारा
हु मानसु, केषके बीजा देवोमां एव स्वल्प देवांतु नैयी ॥ १एए ॥

वाक्यति—स जिन क्वास्ते? सूर्य.—स्वरूपतो मुक्तौ, मूर्त्तितत्त्वु जिनायतने ॥ ३०० ॥ ततः श्रीआत्मनृपकारिते प्रासादे श्रीजिनमूर्त्तिं दर्शयित्वा न प्रतिबोध्य जिनधर्मं प्रतिपाद्य कियद्भिदिनैः कन्यकुब्ज प्राप्ता. ॥ ३०१ ॥ चरैः प्रागपि ज्ञात-
बुत्तातो राजा तस्समुखं गत्वा समहं तान् प्रावेशयत् ॥ ३०२ ॥ राजाह जगवन्नद्दुत्तं
किमपि, प्रचूणा वच सामर्थ्यं । सोऽपि यत् प्रतिबोधितः ॥ प्रचु. प्राहाथ का
शक्ति—र्मम यत्त्वं न बुध्यसे ॥ ३०३ ॥ राजाह सस्यग् बुद्धोऽस्मि । त्वच्छर्मो-
ऽस्तीति निश्चितं ॥ माहेश्वरं पुमर्धर्मं । मुंचतो मे महाव्यथा ॥ ३०४ ॥

ते सान्जली वाक्स्पतिए कथु के, एवा जिन क्या डे? त्यारे आचार्यजीए कथु क, स्वरूपयी तो तेओ मुक्ति-
मा डे, अने मूर्त्तिची जिनाद्वयमा विराजे डे ॥ ३०० ॥ पडी श्रीआम राजाए करावेक्षां मदिसमा रहेडी जिनधु-
चि तेने देखादीने, तथा प्रतिबोध पूर्वक तेने जिन धर्म अगीकार करावीने केट्टेक दिवसे आचार्यजी महाराज कन्यकु-
ब्जमा पयार्यो ॥ ३०१ ॥ दूतो मारफते प्रथमयीज ते दृत्तात राजाए जाण्डो होवायी, तेमनी सन्मुख जइ महोरसव
पूर्वक तेमनो तोण प्रवेश कराव्यो ॥ ३०२ ॥ पडी राजाए कथु के, ह जगवन्न! आपना वचनोतु सामर्थ्य तो कसक अ-
दृत्तज डे, केमके आपे ते वाक्स्पति जेवाने एण प्रतिबोध्यो; त्यारे आचार्यजी महाराजे कथु के, ज्यासुधि तपो प्रति-
बोध पाप्मा नयी, त्यासुधि मारी शक्ति शा कामनी डे ॥ ३०३ ॥ त्यारे राजाए कथु के, आपनो धर्म उत्तम डे,
एम हवे हुं सारी रीते जाणुंनु, पंतु शिक्थमने बोफतां मने महादुःख थाय डे ॥ ३०४ ॥

तेन हे जगवन् पृथ्वामि को मे पूर्वजव ? प्रधाना अपि तदा प्राहुः जगवन् प्रसद्य
 नृपपूर्वजन. कथ्यता ॥ १०५ ॥ तत प्रचु प्रश्नचूनामणिशास्त्रवक्षेन त प्राह, शृ-
 णु नृपते, कालिजराव्यस्य गिरे. शालजुमोर्ध्वस्थशाखावच्छुजछयोऽधोमुखो ॥२०६॥
 जटाकोटिसस्पृष्टचूतज्ञो, ब्रह्मे क्ष्वेद्वे मितार्हारी, रागादिरहित., साम्र वर्षशतं घोर
 तपस्तस्त्रायु प्रांते त्व राजाऽनू ॥ १०७ ॥ यदि न प्रत्ययस्तदा सुजटान् प्रेषय,
 अद्यापि तत्तरोरथ स्या जटा आनायय, इति श्रुत्वा नृपो जटा आनाययत्
 ॥ १०८ ॥ मुनींश्रोऽय महाज्ञानी कोऽप्याहृत इति प्रशसा चके च ॥ १०९ ॥

माटे ह जगवन् ! हु आपने पृष्ठु बु के, मारो पूर्व जव शु हतो ? ते वखते प्रथानो एण आचार्यजीने
 कहेवा दाग्या के, हे जगवन् ! आप साहेब कृपा करीने राजानो पूर्व जव कहो ॥ १०५ ॥ त्यारे आचा-
 र्यजी महाराजे प्रश्नचूनामणि नामना शाखना वळधी तेने कयु के हे राजन् ! सचळो काद्विजर नामना
 पर्वतां शाल वृक्षनी लची मळीमां जेणे वे हाय वाधी नीचे मुल कयेु ठे, एवो ॥ १०६ ॥ जेनी जटाना
 वेना नीचे नृमीपर स्पर्श करी रहेवा ठे एवो, वेने दिक्से मित जोजन करनारो, राग आदिकची रहित,
 एवो तु सवासो वर्षे सुधी घोर तप तपीने ठेकटे आयु' इय थवाधी राजा थयो ॥ १०७ ॥ जो तने
 प्रतीति ने आवती होय, तो त्यां तु मुजयेंने मोकन. तथा हयु एण ते वृक्ष नीचे रहेवी तारी जटा
 मगाव. ते सचिळी' राजाए ते जटा मगावी ॥ १०८ ॥ तथा आचार्यजीनी प्रशसा करवा दाग्यो के, आ
 तो कोष्क महाज्ञानी 'मुनींद्र' अर्हो पथार्यो ठे ॥ १०९ ॥

अन्यथा अपचद्वैरपि दुर्ग्रह्य राजगिरिनगरं राजा हरोध, तत्र समुद्रसेनो राजा, स-
 प्रकारः कथमपि ग्रहीतु न शक्यते ॥२१०॥ ततो राजा सूरिं पप्रच्छ, जगवन् कथं प्रा-
 ह्योऽयं प्रकारः ? सूरिः प्रश्नचित्तमणिशास्त्राद्धिचार्यव्रवीत् ॥ २११ ॥ पौत्रस्ते ज्ञेज-
 ष्मं ग्रहीष्यति, ततो हवाञ्जाजा तत्रैव द्वादशवर्षाण्यस्यात् ॥ २१२ ॥ ततो दुन्दुक-
 नाम्न सुतस्य सुतोऽजनि, स च पर्यकिरान्यस्तः प्रधानैर्जातमात्र एव दुर्गासन्नमानी-
 तः, तन्मुख संमुख कृत्वा स दुर्गो गृहीतः ॥ २१३ ॥ परं दुर्गाधिपता यद्गः प्र-
 तोद्वीस्थो जनान् हति, ततस्तत्र गत्वा राज्ञोक्तं यद्गुराजलोकं मुक्त्वा मामेव धात-
 य ॥ २१४ ॥

हवे एक द्वाहाने द्वालो उपयोधी पण ग्रहण न करी शक्य एवा राजगिरि नामना नगरने राजए
 धेरो पाव्यो, पतु त्यां किद्धे वंधी करीने रहेवा समुद्रसेन राजने कोइ पण रीते ते जीती शस्यो नहीं
 ॥ २१० ॥ त्पारे राजए आचार्यनी महाराजने पूठयुं के हे जगवान ! आ किद्धो हवे केवी रीते लइ शक्य ?
 त्पारे आचार्यनी महाराजे पण प्रश्नचित्तमणिशास्त्रयी विचारिने कथु के ॥ २११ ॥ तारो पात्र जोज आ किद्धो
 देवो, पछी हउथी राजा तो वार वर्ष सुधी त्याज पभ्रत नावीने रयो ॥ २१२ ॥ पछी एट्टवामां तेना
 दुन्दुक नामना पुनने पुत्र जन्म्यो, तेज वल्ले प्रधाने ते पुजेने पाद्वार्षीमां वेसाधी ते किद्यानी नजदीक दवाव्या,
 तथा तेतुं मुख किद्धा समुख करीने ते किद्धो वीधो ॥ २१३ ॥ पंतु किद्यानो अधिष्टायक यद्ग दरवाजामां
 रयो थको लोकने हणवा दाय्यो, त्पारे राजए त्यां जइ कथुं के हे यद्गुराज ! लोकने छेभीने भनेज तु
 मारी नाव ॥ २१४ ॥

ततो नृपस्य सत्वेन सत्पुष्टो जनोपपञ्चाद्विद्युत्तो भेत्री प्रपदे, आमो मित्रयक्षपाश्वं
 स्वायुर्मान पप्रह ॥ २११ ॥ पणमास्यामेव शेषायां कथयिष्यामीत्युम्त्वा यङ्गस्ति-
 रोऽश्रूत्, अवसरे च स तदब्रवीत् ॥ २१६ ॥ गगातर्माणेन तीर्थेनावतरतस्ते मृ-
 त्युरस्ति, जज्ञाञ्छूम निर्यत दृष्ट्वा तदजिज्ञान झेय ॥ २१७ ॥ प्रेत्यार्थमाचरेति च,
 ततो राजा श्रीगुरुपदेशान्महता विस्तरेण श्रीशत्रुजययात्रा कृत्वा दिगंबरद्वीत श्री-
 गिरनारतीर्थमवाहयत् ॥ २१८ ॥ तत स्वपुर प्राप्य दुडुक राज्ये निवेश्य प्रजा
 क्लमयित्वा गंगातीरस्थमागधतीर्थं प्रति चञ्चन्नावमारोह स्वरिणा सह ॥ २१९ ॥

पंडी राजाना पराक्रमधी मनुष्ट यह ते लोकने उपद्रव करवायी अटस्यो, तथा मित्ररूप ययो पंडी
 आप राजार ते यक्षरपी मितनी पसे पोताना आयुतु प्रमाण प्रबु ॥ २११ ॥ त्यारे येइ क्यु के, उ
 मास ज्यारे वाकी रहेशे, त्यारे कहीश, एम कही ते अनोप थयो ; तथा अपसर आव्ये नेणे क्यु के ॥ २१६ ॥
 गंगानी अदर मगर नामना तीर्थीयी उतरता तार मृत्यु डे, जळमाधी धुमानो निकळ्जे जोहने तेतु एथाण
 जाणतु ॥ २१७ ॥ माटे हवे परचोक माटे तु सावधान था? पंडी राजाण श्री गुम्हारराजानो उपदेशधी
 मोश विस्तारपूर्वक श्रीशत्रुजय तीर्थनी यात्रा करीने दिगंबरण ग्रहण करेवा श्रीगितार तीर्थने पातु चाणु ॥ २१८ ॥
 पछो पोताना नगरमा आर्वीने तथा दुडुकने गाडीण वेसानेने, अने प्रजाने स्वभावीने गंगाने काठे रहेला मागध
 तीथन मत्ये चावतो एको आचार्य महाराजनी साथे ते राजा नावमां चक्यो ॥ २१९ ॥

तन्मध्ये धूमनिर्गमं दृष्ट्वा व्यंतराख्याते स्मृते सूरिरामनृपमाह, प्रातेऽपि जैन धर्मं प्रपद्यस्व ॥ २२० ॥ ततो राजा जैनं धर्मं प्रपद्योत्तमार्थमसाधयन्नमस्काराराराधनपरः ॥ २२१ ॥ तत. श्रीवप्पन्नद्विगुरु कन्यकुब्ज प्राप्तः, स्वगन्धमपादयदिति ॥ २२२ ॥ एते श्रीवप्पभद्विगुरुव श्रीआमनृप दुष्प्रतिबोधमपि मनोगतसमस्याकवित्वादिगोष्ठ्या यथा तन्मनोऽनुवृत्तित. तस्यैहिकापक्षिस्तारणतदुपायप्रकटनादिसमाचरणेन च प्रीणयतो मैत्रीवृत्त्या प्रत्यबोधयत् धर्मं मनाक् ॥ २२३ ॥ नृपस्याऽनानुकूल्यं ज्ञात्वा च दूना देशात्तेऽपि व्यहार्युस्तेन मित्रतुल्याः, एवमन्येपीति कृता मित्रदृष्टांतजावना ॥ २२४ ॥

पड्डी तेमाथी गुमानो नीकळतो जोऽने व्यतरतु वचन याद दात्री आचार्यजी महाराज आम राजाने कहेवा लाग्या के, हेव हेकडे पण तु जैनधर्म अंगीकार कर ॥ २२० ॥ पड्डी राजाए जैन धर्म अंगीकार करीने नवकारना आगधममा तत्पर थइ उच्यार्थ सांयो ॥ २२१ ॥ पड्डी वप्पन्नद्विजी महाराज कन्यकुब्जमां पथारी पोताना गच्छेने सनाळवा लाग्या ॥ २२२ ॥ आ श्री वप्पन्नद्विजी गुरु महाराजे श्री आमराजा के जेने प्रतिबोधो मुक्केइ हतां, तेने पण तेना मननी सपण्या परीने, तथा काव्य आदिकनी गोष्ठियो, तथा तेना मन सुजन कर्तीने, तेमज तेने आ लोक सर्वधि दुःखयी निवारीने, तथा दुःखयी बुटवानो लपाय देवान्वा आदिकवदे करीने खुशी करीने मित्रवृत्तियो धर्ममा प्रतिबोयो ॥ २२३ ॥ तेमज राजाने जराक अनानुदर जोऽने पण रीसाऽने देशातरमां तेमणे विहार, कर्षो, माटे तेऽने मित्रसमान गुरु जाणवा, एवी रीते बीजात्रोने पण जाणवा, एवी रीते मित्रना दृष्टतनी जावना कही ॥ २२४ ॥

बंधुन्ति, यथा बंधु सदापि सस्नेहहृदय एव, निजबंधुं शिङ्गयति ह्यितादि यथा-
 वसरं, पर तथा विनयोपचारादिकर्मस्वनादर. ॥ ३३५ ॥ नापि तदपेक्षी परस्मादपि,
 विशिष्य पराजवे सकटादौ च जवत्येव तस्य सहाय ॥ ३३६ ॥ तथा केचिद्गुरुवः
 श्रद्धाब्रुपु जनेष्वकृत्रिमाऽनुब्रवात्सव्यभृत सदाप्युपदिशति परमार्थहित धर्मं, न पुन-
 स्तच्छ्रियगुणसस्तवावर्जनादिविशेषोपचारक्रियासु तथादरजाज ॥ ३३७ ॥ नापि ते-
 न्यस्तादृग् वाहीकोपचाराद्याकांक्षिणो, विशिष्य परपराजवे रोगातकादौ सकटेऽप्येहि-
 केऽपि धर्मस्थिरीकरणार्थं ॥ ३३८ ॥

हवे जैत वधु हमेशां स्नेहयुक्त प्रव्यवालो ज होय ठे, तथा पोताना वधुने योग्य अवसरे हितशिवामण
 आदिक पण आपे ठे, परतु तेवी रीतना विनय उपचार आदिकना कारणोंमां आदरवालो न होय ॥ ३३५ ॥
 तेमज सामो तेनी पासेयी तेनी अपेक्षा राखतो नयी, परतु तेयी आगळ वधीने, वधुने पराजव तथा सकट
 आदिक आदिकमां ते मदद करे छे ॥ ३३६ ॥ एवी रीते केट्ट्याक गुरुआं श्रद्धाब्रु लोको प्रत्ये खरा दिहयी
 अत्यंत वत्सलतावाळा थया थका हमेशां परमार्थवालो हितकारी धर्म उपदेशे ठे, परतु तेओना गुणेली प्रगसा
 कारवाया, के तेओने खुशी करवा मांठे बीजा उपाय आदिकोमां एवा आदरवाळा होता नयी ॥ ३३७ ॥
 तेम तेओ तरफथी वाढ उपचार आदिकनी आशा राखता नयी, पण तेयी आगळ वधीने उबट्या पराजव
 समये, तेमज रोग, आदिक आ लोक सवधि सकट वलते पण तेओने धर्ममां स्थिर करवा आदिक मांठे ॥ ३३८ ॥

पारात्रिकेऽपि च धर्मोद्विगोचरे चवंत्वेव तेषां साहाय्यः कृतः सर्वदावत्यापि यथा
 श्रीहेमचंद्रगुरव श्रीकुमारपादानुरं प्रति, तथाहि—॥ ११ए ॥ अन्यदा श्रीजय-
 सिहदेवे गुर्जरथात्र्या राज्यं शासति, तद्भयान्नष्टवृत्त्या ग्राम्यन् श्रीकुमारपाल. स्त-
 चतीर्थे प्राप्त. ॥ १३० ॥ तत्र जिघासुतया प्राप्तराजनरेज्यः परित्रातः श्रीहेमसू-
 रिभिः शालास्थग्रूहनिद्वेषादिना ॥ २३१ ॥ कथमपि तत. कमाञ्जाज्यप्राप्तौ प्रत्त-
 ने श्रीहेमचन्द्रगुरवो विद्युच्छिन्नात्रिस्तारयांचक्रुस्त, तद्यथा—॥ २३२ ॥ अन्यदा श्री-
 गुरवोऽष्टबन्धुदयनमंत्रिणां, राजास्माकं स्मरति न वा ॥ २३३ ॥

तेम परलोक संशुधि धर्म आदिक कार्यमा तेअने ज्यांशुधी बने त्यांशुधी सहाय करारा थायज छे,
 जेम श्रीकुमारपाल राजा मत्ये श्रीहेमचंद्राचार्य, तेमनु वृत्तांत नीचे मुजव ठे ॥ ११ए ॥ एक वखते सिध्दराज
 जयसिंह गुर्जरक्षमिपर ज्यारे राज्य करता हुता, ते वखते तेना नयथी नासता फरता कुमारपाल खजातमां
 आल्या ॥ १३० ॥ त्यां तेने मारखानी इच्छायी ज्यारे रागना माणसो आबी पहांच्या, त्यारे श्रीहेमचंद्रजीए
 तेमने पौषशालापा रहेला चांगपामा सतामचा आदिकथी तेमनु रक्षण करुं हतु ॥ १३१ ॥ त्यारवाद अनु-
 क्रमे कोइक रीते तेने राज्य मळया बाद पाटणमां श्रीहेमचंद्रजीए तेमनु विजळीना विजयी रक्षण करुं, ते
 नीचे मुजव ठे ॥ १३२ ॥ एक दर्शानो श्रीहेमचंद्रजी गुरमहारजे उदयनमत्रीने पृच्छु के, राजा अमोने कइ
 याद करे ठे ? के नही ॥ १३३ ॥

मत्रिणोक्तं नेति, ततोऽप्यदोषे श्रीगुरुनि मत्रिन्नद्य भ्रूपं रहो भ्रूया अद्य त्वया
 नव्यराज्ञीयहे न गतव्य न सुसव्य, रात्रौ, सोपसर्गत्वात् ॥ ३३४ ॥ केनोक्तमिति
 पृष्ठेचेत्तदाऽत्याग्रहे मन्नाम वाच्यमिति ॥ ३३५ ॥ ततो मत्रिणा तथोक्ते राज्ञा तथा-
 कृते निशि विद्युत्पातात्तस्मिन् गृहे दग्धे, रक्ष्या च मृताया चमस्कृतो राजा जगाद
 सादर ॥ ३३६ ॥ मत्रिन् कस्येदमनागत ज्ञान ? महत्सरोपपकारित्व चेत्यतिनिर्वधे मं-
 त्रिणोचे श्रीगुरुस्वरूप ॥ ३३७ ॥ प्रमुदितो नृपस्तानाकारयामास सदसि, श्रीगुरुन्
 दृष्ट्वाऽसनाडुत्थाय वदित्वा प्राजद्विरुवाच ॥ ३३८ ॥ जगवन् तदा स्तजतीर्थे रङ्गि-
 तोऽह श्रीपूज्यै, सप्रति चास्माडुपसर्गात् ॥ ३३९ ॥

त्यारे मर्त्रीए कबु के, नथी याद करता, पडी एक दहानो श्री आचार्यजी महाराजे उदयनमूर्तिने कबु के, हे
 मर्त्री ! आने त्तारे राजाने एकात्म कहेतु के, आने त्तारे नवी राणनि महोत्ते जनु के सुबु नहीं, केमके रात्रि त्या उपसर्ग
 धवानो डे ॥ ३३४ ॥ कळी त्ताने ते पृडे के, आम कोणे कबु ? त्यारे अर्थत आग्रह जो करे, तो त्तारे मारु नाम
 देवु ॥ ३३५ ॥ पडी मर्त्रीए तेम कर्वाथी, तथा राजाए ण तेम कर्वाथी, अने रात्रिये विजळीना पन्वथी
 ते घर वळते डते, अने राणी मृत्यु पांते डते आर्थ्य पांतेडो कुमारपाळ राजा आदरसहित कहेवा द्वाग्यो
 के ॥ ३३६ ॥ हे मत्रि ! आतु नविष्यज्ञान तथा महान् परोपकारीणु कोतु डे ? एवी रीते घणा आग्रहपूर्वक
 पूज्यथी मत्रिण गुणमहाराजनु स्वरूप कबु ॥ ३३७ ॥ त्यारे राजाए खुशी धरने तेमने सजामा वोडाव्या,
 तथा गुरु महाराजने जोरने आसन धकी उठनि बंदना करनि हाथ जोडी ते कहेवा द्वाग्यो के ॥ ३३८ ॥
 हे जगवन् ! तेकलतेस्तजतीर्थमा आपसाहेवे मार रक्षण कर्युं डे, तेमजहमणं आ उपसर्गथी आपे मारु रक्षण कर्युं छे ॥ ३३९ ॥

ततो निष्कारणप्रथमोपकारिणा पूज्याना कथचनाप्यह नाऽनृणो जवामि, ततो राज्यमिदं गृहीत्वा मामनुग्रहाणेति ॥ ३४० ॥ ततः सूरिब्राह्म, राजन्नि.संगानामस्माकं किं राज्येन, कृतज्ञत्वेन राजेद्भ्र । चेत् प्रत्युपचिकीर्षसि ॥ आत्मनीनि तदा जैनधर्मे धेहि निज मन. ॥ ३४१ ॥ ततो राजाह, नबहुक्तं करिव्येऽहं । सर्वमेव ज्ञानै. शनै. ॥ कामयेऽहं परं संग । निधेशिव तत्र प्रज्जोः ॥ ३४२ ॥ इत्यादि, ततः श्रीगुरुर्नृपस्य यथावसर धर्मं दिशति, नृपश्च कदाचिद् गुरुर्याश्रये आयाति, कदाचिदाकारयत्यास्थाने श्रीगुरुं ॥ ३४३ ॥ अन्यदा श्रीकुमारनृप, सोमेश्वरयात्रायै चञ्चन् श्रीगुरुन् सहाकारयामास ॥ ३४४ ॥

माटे निष्कारण प्रथम उपकारी एवा आप सोहवने हु कोइ पण रीते अट्टणी थः शुकु तेम नयी, माटे हुवे नो आ राज्य तमो ग्रहण करीने मारापर अनुग्रह करो ॥ ३४० ॥ तारे आचार्यजी महाराजे कहु के, हे राजन् ! नि'सण एवा अमोने राज्यनी शी नहर ठे ? बळी हे गजन् ! जो तमो कृतज्ञपणायी प्रत्युपकार करवाने इच्छता हो, तो तमारा आत्माने हितकारी एवा जैन धर्ममां तमार मन जोनो ॥ ३४१ ॥ तारे राजाए कहु के, तमोए कहेंहुं सखळ हु धीरे धीरे करीश, परतु हु नियानी पेठे हे प्रभु ! आपनो सग इच्छु बु ॥ ३४२ ॥ इत्यादि, त्यास्वाद श्रीगुरुमहाराज योग्य अवसरें राजने धर्मनो उपदेश करे ठे, तथा राजा पण कोइ कोइ समये गुल्ने उपाश्रये आंन ठे, तथा कोइक वक्ते गुरु महाराजने पण सनामा बोझावे छे ॥ ३४३ ॥ एक वक्ते श्रीकुमारपळ राजाए सोमनाचनी यात्रा माटे चञ्चता थका श्रीगुरुमहाराजने साथे दीया ॥ ३४४ ॥

क्रमात्तीर्थं प्रातः कृतसकलकृत्यश्च रात्रौ सोमेश्वरप्रासादगर्जयुद्धे श्रीसूरीनाकार्यं स्माह
 ॥ २४५ ॥ हेजगवन् देवः सोमेशः; महर्षिर्जवान्, तत्त्वार्थी च माहश इत्यस्मिस्ती-
 र्थं त्रिकयोगस्त्रिवेणीसगम इवाद्य जज्ञे ॥ २४६ ॥ मिथो विरुद्धसिद्धातवादिदर्श-
 नैर्देवयुतरुतत्त्वानिजिन्नश्चिन्नतया प्रोच्यते स्म, तदद्य रागद्वेषौ विमुच्य प्रसद्य सम्यग्-
 देवादितत्त्व प्रसादय ॥ २४७ ॥ ततः किञ्चिच्छिचार्योचु श्रीगुरव, राजन् शास्त्रसवा-
 देनाह, शिव प्रत्यङ्गयामि तव पुर; धर्मं वा देवतं वापि । यदयं वक्ति शंकर. ॥
 तडुपास्तिस्त्वया धेया । मृषा न खलु देवगी ॥ २४८ ॥

अतुक्रमे नीर्यमा पढौच्या, तथा त्यां सयलु कार्य करीने रात्रिने सोमेश्वरला मदिला गचारामां आचार्यजी
 महागजने बोधार्थिने तेमणे कलु के ॥ २४५ ॥ हे जगवन् ! सामादव, तमां महान् ऋषि, अने मारा सरलो
 तत्वानो अर्थी, पथी रीते आ तीर्थमां त्रिवेणीना सगमनी पेटे आजने त्रिकयोग धयो छे ॥ २४६ ॥ परस्पर विरुद्ध
 सिद्धांतिने केहेनारा दर्शनो देवगुर सवधि तत्वो जिन्न जिन्न रूपे कहे अने, माटे आजने रागद्वेषने ओर्धने तथा मारा-
 पर कृपा करीने सम्यक् प्रकारे देव आदिक तत्व समजाववानी कृपा करो ॥ २४७ ॥ त्पारं श्रीगुरमहाराजे जरा
 विचार करीने कलु के, हे राजन् ! शास्त्र संपधि सवादयी तो हवे सयुं, हवे तमारी अगल ह्यु आ शिवनेज प्रत्यङ्ग
 करु लु, अने ते शकर जे धर्म आयवा देवता कहे, तेनी त्पारं सेवा करवी, केमके देववाणी मिध्या होय नहीं
 ॥ २४८ ॥

ततोऽस्मरन्मंत्र श्री-सूरयः अर्धरात्रे द्विगमध्याज्ज्योतिस्तन्मध्ये महेशो गंगाजटा-
शशिकंठादकृत्रयाद्युपलक्षितः प्रत्यङ्गीबभूव ॥ १४ए ॥ श्रीगुरवो ध्यान मुक्त्वा
राजानं स्माहुः, नृपपश्य पुरं. शिवं, एनं प्रसाद्य प्रष्टा च सम्यक्तत्त्वविदा कुरु ॥१५ण॥
राजापि हृष्ट प्रणम्य तं पप्रब्ध, इशा उवाच, हेकुमार ! चेत्त्वं श्रुक्तिमुक्तिप्रदं धर्म-
मिच्छसि ॥ १५१ ॥ तदा सर्वदेवानवतारोऽजिह्मब्रह्मभृदपगुरुर्ब्रह्मैव द्दमातद्वेऽधुना
जयतीत्यितदादिष्ट तन्वन् स्वष्टमाप्त्यसीत्युक्त्वा तिरोऽधात ॥ १५२ ॥ ततो विस्मे-
रो नृपः सूरिसूचे, त्वमेव मेऽसीश्वरो यस्येश्वरोऽपि वश्य, अतःप्रभृति मे देवो । गु-
हस्तात. सच्चिद्व्यपि ॥ सहोदरो वयस्यश्च । त्वमेवैकोऽसि नाऽपरः ॥ १५३ ॥

पत्नी आचार्यनी महाराजे मंत्रवृत्त स्मरण कर्तुं, जेथी अर्थे रात्रिये द्विगमाहेथी ज्योति प्राष्ट यद्, अने तेनी
अदर जटामा गंगावाला, चंद्रकलावाला, तथा नण नेत्र आदिकोथी उपलक्षित थयेना महेश्वर प्राष्ट थया ॥ १४ए ॥
त्यारे गुरुमहाराजे ध्यान मूर्काने राजाने कर्तुं के, हे राजन् ! आ त्पारी पासे शिवने जुओ ? तथा तेपनी सेवा
करीने अने पूछीने सम्यक् तत्वहं निराकरण करो ॥ १५० ॥ त्यारे राजाप पण खुशी यईने, तथा तेने नमीने
पूछथु, त्यारे महादेव कर्तुं के, हे कुमारपाळ ! जो तयो जोग अने मोक्ष देनारा धर्मेने इच्छता हो तो ॥ १५१ ? ॥
मर्वे देवोना अवताररूप तथा आत्मन ब्रह्मने धारण करनारा आ गुरु पृथ्वीतद्वपर हपणा ब्रह्मानी पेजेज ज्यक्ता
वर्चे ठे, माटे तेमना कहेवा मुजम वर्त्तवाथी तयो इच्छित प्राप्ति मेळवी शक्यो, एम कहतीने ते अहोप थया ॥ १५२ ॥
पत्नी आर्थापे पापेओ राजा आचार्यनी महाराजने कहेवा ब्राम्हणे के, आपज मारा इश्वर ओ, के जेने इश्वर पण
वरा थयेना ठे ; माटे आजनी तो एक आपज मारा देव, गुरु, पिता, माता, सहोदर तथा मित्र ओ, बीजे कोइ नथी ॥ १५३ ॥

इह लोक, पुराऽद्यापि । मह्य जीवितदानतः ॥ शुष्कधर्मोपदेशेन । परलोकोऽद्य वी-
यता ॥ १५४ ॥ ततः क्रमात्सूरिवचसा सम्यक्त्वान्निमुखोऽभूत् श्रीशांतिप्रतिमां दे-
वतावसरेऽतिष्ठिपत् ॥ १५५ ॥ अथ नृपं श्रीजिनधर्मानुरक्त ज्ञात्वा विप्रैराकारितं न-
त्यङ्गसरस्वतीको महेन्द्रजाढ्यादिविद्याचूरुमणयादिशास्त्रैरतीतानगतादिवेत्ता पूरकरेचक-
कुंजकपवनसाधनापटुश्चतुरशीत्यासनकरणप्रवण आमंतंतुवच्छकमदानालकदलीपत्रास-
नाद्यधिरोह्नी यथार्हैरूपक्रियापटुदेववोधिः पत्तने प्रापत् ॥ १५६ ॥ राज्ञा समहं प्रवे-
शितः, कमदानाद्बद्धमामततुवच्छ कदलीपत्रमयासन अष्टवर्षिकशिशुसुधुन्यस्तमारु-
ह्य नृपसदस्यागात् ॥ १५७ ॥

बळी आप सोहवे प्रथमज मने जीवितदानयी आ ढोक तो आपेढो ठे, अने हवे आज शुद्ध धर्माना उपदेशयी
परलोक पण आपो ? ॥ १५४ ॥ पढी अतुक्रमे ते राजा आचार्यजी महाराजना वचनयी समकित सन्मुख
थयो, तथा युजा समये श्रीशांतिनायजी महाराजनी मूर्ति ते स्थापन करावा द्याग्यो ॥ १५५ ॥ हवे राजाने श्री जिनधर्मां
रक्त थयेवो जाणीने ब्राह्मणोये नोनवेत्तो देववोधि पाटणमां आब्यो, ते देववोधि केयो ठे ? तोके, मत्यङ्ग
ठे सरस्वति जेने एवो महा इन्द्रजाढ्यादि विद्या तथा चूरुमणि आदिक शास्त्रोयी चूत नचिप्य आदिक जाण-
नारो, पूरक, रेचक तथा कुञ्जक वायुनी साधनामां चतुः, चौर्यासी आसनो वाळवामा तत्पर, काचा सुतरयी वाधेवो
कमळनी दान्नी तथा केळना पानना आसन आदिकपर चरुनारो, अने यथायोग्य रूपक्रियामा पण ते समर्थ
हते ॥ १५६ ॥ पढी राजाप तेने महोत्सवपूर्वक प्रवेश कराब्यो, तारो ते पण कमळना दन्वळनां काचा सुतरयी
वाधेमां, केळनां पाटनानां वनावेत्तां, तथा आठ वर्पना वाळकनी खाये मुकेत्तां आसनपर वेसीने राजसजामा आब्यो ॥ १५७ ॥

सर्वेषां विस्मय, आसने निवेशित आशी.पुरस्सर तत्तदद्भुतकलाविज्ञानाऽपूत्रप्रबधा-
दिचिर्नृप परिकरं चाऽऽजयत् ॥ १५८ ॥ ततो विसृष्टसज्ज- द्भापो देवतायसरणा-
य प्राप्तः, देववोधिरपि वयमायद्य राज्ञो देवपूजाविधिं विद्वोकपिप्यास इत्यादिवादी
राज्ञाऽकारितस्तत्रागात् ॥ १५९ ॥ राजापि काचनपट्टे शंकरादिदेवान् श्रीशा-
तिप्रतिमा च निवेश्य पूजयामास ॥ १६० ॥ तदा जिनप्रतिमां दृष्ट्वाऽवादी देव-
वोधिः, राजन्नयुक्तं तवैतत्पूजनादि, यतः—‘अवेदस्मृतिमूलत्वा—जिनधर्मो न सत्त-
मः’ ॥ अपि च ‘नोद्धंघनीयाः कुलदेशधर्माः’ ॥ १६१ ॥

तेने जोइ सर्वे लोकोंने घणुं आश्रय्य द्वाण्यु. पढी आसनपर बेसास्य वाद आशिर्वादपूर्वक तेणे ते
ते अद्भुत कलाओंनी चतुराईची तथा अपूर्व मध आदिकोधी राजाने तथा परिवारने खुशी कर्षी ॥१५८॥
पढी राजा सत्ता विसर्जन करीने देवपूजा करवा मोटे चाढ्यो, त्यारे देववोधिं कबु के आने अमो पण राजानी
देवपूजानी विधि जोड्यु, तेथी राजाण बोलाववाची ते पण त्या आढ्यो ॥ १५९ ॥ ते कवले राजा पण सुवर्णना
पाट्यापर शकर आदिक देवोंने तथा श्री शान्तिनाथ मजुनी प्रतिमाने स्थापीने पूजा करवा द्वाण्यो ॥ १६० ॥
त्यारे त्यां जिन प्रतिमाने जोडने देववोधि बोढ्यो के राजन्’ आ तमार पूजन आदिक अयुक्त छे, केमके वेद
अने स्मृति रहित होवाची जैनधर्म सत्य नथी, तेमज कळी कुळधर्म तथा देवार्थमनु उद्धंघन न करवु जोइए
॥ १६१ ॥

किंच,—। निदत्तु नीतिनिपुणा यद्विवा स्तुवतु^० इत्यादि ॥ २६२ ॥ ततो नृपोऽवो-
चत्, हे देववोधे श्रोतो धर्मो हिंसाक ह्युपत्वेनाऽसर्वज्ञाणितत्वेन च मम मनसि न
प्रतिज्ञाति, जैनस्तु सर्वजीवदयासवादसुदरत्वेन भृश स्वदत्ते ॥ २६३ ॥ पुनर्देववोधि
प्रोचे, राजन् यदि न प्रत्येधि तदा मद्देश्वरादिदेवान् स्वपूर्वजांश्च मूर्तिमतोऽत्रागतान्
स्वमुखेन पृच्छेति निगद्य विद्याशक्त्या तानदीदृशत् ॥ २६४ ॥ अत्र मद्देश्वरादि-
देवत्रयपूर्वजसवादो देववोधिवचनानुसारेण ज्ञेय, यावदस्मत्प्रतिकृतिरेप देववोधिर्म-
हायतिर्युस्तया स्वीकार्य इत्याद्युक्त्वा ते सर्वे तिरोदधुः ॥ २६५ ॥ ततो नृपो विस्मित
सोमेशोक्त तच्छुक्त च स्मरन् जगद्वाऽजनि ॥ २६६ ॥

कवी ' नीतिनिपुणो निन्दे अभवा स्तुति करे ' इत्यादि ॥ २६२ ॥ त्पारे राजाये कथु के, हे देववोधि ।
वैदिक धर्म हिंसायी कनुषित धयेवो डे, तेमज सर्वज्ञ मनुनो रचेवो नयी, माटे मारा मनने ते रुचलो नयी, अने
जैनधर्म तो सर्व जीवो मत्से दयावालो मुदर होवायी मने बहु रुचे डे ॥ २६३ ॥ त्पारे कवी देववोधिये कथु के,
हे राजन् ! जो तमोने खतरा न धती दोय, तो अर्हा साझात् मूर्तिरूपे आवेवा मद्देश्वर आदिक देवोने
तथा तमारा पूर्वजोने तमारा मुखयीज पृत्रे ? एम कही पोतानी विद्याशक्तियी तेणे तेअत्रोने देवारुया ॥ २६४ ॥
अर्हा मद्देश्वर आदिक त्रणे देवो तथा पूर्वजो समधि सवाद देववोधिना वचन प्रमाणेज जाएणी देवो, ते
एअत्रे सुधिके, आ देववोधि महायति अमारीज मूर्ति छे, तथा तेने तारे गुरु रूपे स्वीकारवो, एम कही तेअत्रो
सगळा अज्ञोप धया ॥ २६५ ॥ ते जोड विस्मय पामेवो राजा सोमेशे कहेवु अने तेअत्रोए कहेवु याद कालो
यको जन जेवो थड गयो ॥ २६६ ॥

अथ मंत्रिवचसा ज्ञाततत्स्वरूपा. श्रीहेमसूरय. क्रमापते साशयिकमिथ्यात्वापदो
निस्तारयितु प्रातर्नित्तितो दूरे सप्तगण्डिकमासनमध्यास्य स्थिता ॥ १६७ ॥ ततो
देववोधे समः कदावान् गुरुने दृश्यते कोऽपि, परं निजगुरौ श्रीहेमाचार्ये किञ्चित्कदा-
कौशलं सञ्जाव्यते नवेत्यादिवदन्तुपः स्वामिन् प्रातर्देववोध्यादिसमङ्ग पृच्छयते गुरव इ-
त्यादि मंत्रिवचसा देववोध्यादियरिष्टत. प्रातर्गुरुन्ननाम ॥ १६८ ॥ ततोऽध्यात्मशक्त्या पचा-
पि मारुतान्निरुध्यासनात् किञ्चिदुच्छस्यव्याख्यातुमारोन्निरे गुरव ॥ १६९ ॥ तावता पूर्व-
सकेतित शिष्योऽधरासनमाकृपत्, ततो निराधारा एवाऽऽस्वद्वितवचनेनः सार्धप्रहर
व्यारयात्सिम् ॥ १७० ॥

हेवे मन्त्रिना वचनयी राजानु ते स्वरूप जणाय वाद श्रीहेमचन्द्रजी राजाने सणयवाळा मिथ्यात्वरूप दुःखयी
निवर्तन करवाने मन्त्राते नीतयी डेटे सात गाढीवाळु आसन वीगायी तेपर केवा ॥ १६७ ॥ पठ्ठी राजा मन्त्रिने कहेवा द्वाग्यो
के, हे मन्त्रि ! देवयोगि सरखो कळावान् वीजो कोऽ गुरु देखतो नयी, तोपण आपणा गुरु हेमचन्द्राचार्यमा पण कइ
कळासोशब्द ठे के नही ? त्यारे मन्त्रिये क्यु के, हे स्वामी ! मन्त्राते आपणे ते माटे देवयोगिनी समक गुरमहाराजने
पृच्छीशु, इत्यादि मन्त्रिना वचनयी राजाए देवयोगि अधिक परिमार सहित मन्त्राते श्रीहेमचन्द्रजी महाराजने नमस्कार कर्यो
॥ १६८ ॥ त्यारे पोतानी आभ्यात्मशक्तियी पांच वायुने रोकीने, तथा आसनयी कइक उचा रहीने, गुरमहाराज व्या-
ख्यान वाचवा दाम्या ॥ १६९ ॥ एतद्वामा पूर्वयी संकेत करेवा शिष्ये नीचेनु आसन खेची दीडु, अने तेयी
आधाररहितज गुरमहाराजे अधर रहीने दोढ पहोर सुधी अस्वद्वित वचनोयी उपदेश आप्यो ॥ १७० ॥

अथ देवबोधेरपि रत्नासनमासीत्, मौनेन च कायवायव. सुजया स्यु, परं व्याख्यान-
यतोऽस्य स्थितिरतिकोटुककरीति चितयन्तृप. श्रीगुरुनासने निवेशयोवाच ॥ १७१ ॥
तिरोहिता सर्वकदा कदावता । कदाविद्यासैस्तव सूरिशेखर ॥ तेजस्विना कि प्रस-
रति दीप्तय । समततो ज्ञास्वति ज्ञास्वति स्फुट ॥ १७२ ॥ सूरयोऽपि मम देवतावसर
पश्येयुदीर्य श्रीचौबुम्यमपवरकेऽनेषु, तत्र च पुरापि हेमासनेषु निविष्टाश्चतुर्मुखानऽ-
ष्टमहाप्रातिहार्योदिविराजितान्, चतु पष्टिसुरैरुचसेष्यान् साक्षाच्चतुर्विंशतिजिनेषान्
श्रीचुञ्चुम्यादीनेकविशति स्वपूर्वजांश्च रत्नाजरणादिविश्वातिशाशिसपदाख्यान श्रीजि-
नाम्रे योजितपाणीन् दृष्ट्वाऽनमत् ॥ १७३ ॥

हृदये ते यत्रते राजाए विचार्युं के, देवबोधितु एण केळतु आसन दहु, तेमज मौनपणायी तो शरीरानां
वायु सुखे नीती शकाय, परतु व्याख्यान करला यकां आधी रीति अथर र्हेहु, ए वधोर आश्चर्यवाळु डे,
एम विचारी राजाये गुरुमहाराजने आसनपर वेसादी वळु के ॥ १७१ ॥ हे सूरिशेखर ! आप साहेबनी
कळा कुठळताए तो कळावावोनी सगळी कळाओने ढाकी दीधी डे, केमके चारे वाळुधी मगट रीते सूर्य
प्रकाशते अते (तारा आदिक) तेजस्वीओनी कांतिओ श्रु प्रकाशी शके छे ॥ १७२ ॥ पढी आचा-
र्यजी महाराजे राजाने वळु के, आमारी एण देवप्रजन्निधि तमे जुओ एम कहने तेओ राजाने एक
ओरमाभा दाइ गया, त्या प्रथमधीज सुवर्णेना सिंहासनपर वंटेडा, चार सुलोवाळा, आठ महामानिहार्योदिकाधी
विराजित थयेडा, चोसठ इंद्रोधी सेवायेडा, एवा साक्षात् चोवीसे जिनेश्वराने तथा चुळुक्य आदिक पोताना
एकनीस, पूर्वजो के, जेओ रत्नाना आचूरणो आदिकधी जाम्या अतिशयोवळी सपदावाळा हला, तेओने श्री-
जिनेश्वरपञ्चओ पासे हाथ जोडी रहेडा जोइने ते राजा नम्यो ॥ १७३ ॥

तत् श्रीगुरुसाहाय्यान्निस्तीर्णस्ता मिथ्यात्वापद, दृढसम्यग्त्वो वचूव क्रमादिति
 ॥ २७८ ॥ अथान्यदा नवरत्नेषु देवतार्चका ज्ञेयं व्यजिज्ञपन् हेनरेड कटेश्वर्या-
 षिकुञ्जदेवीना वद्विहेतो ७-८-ए दिनेषु क्रमात् ७-८-ए शतान्यजमहिषा दी-
 यते, नोर्वैवता विद्वकागिण्यां चवतीत्यादि ॥ २७९ ॥ ततो राजा श्रीगुरुवच-
 सा दिनत्रय चोगादि अकुर्मन् जिनेश्वर्यार्थनेरुतानो, नमोरात्रौ यावदास्ते, तावत्क-
 देश्वरी त्रिशूलहस्ता साङ्गाद्भूयाऽवक् ॥ २८० ॥ राजन् एतद्वचो अस्मद्देय, कस्मा-
 रमया नाऽडायि त्वत्पूर्वजे प्राग्दत्तमित्यादि ॥ २८१ ॥

त्यारत्रद एमी रीतना श्रीगुरुमहाराजनी सहायधी ते मिथ्यात्वरपी आपदले तरी गयो, तथा अनु-
 क्रमे दृढ समकती ययो ॥ २७८ ॥ हवे एक दहानो नररात्रिमा देवीपूजको राजने विनिति कवा दाय्या
 के, हे राजन् ! कटकश्वरी आदिक कुलदेवीत्रोना वळिदान पाटे सातेम, अत्रिम अने नोमणे दिवस अनुक्रमे
 सात्सो, आठसो अने नवसो नकरां तथा पामाओ आपवाभा ओपे ठे, अने जो तेम नहीं करो तो ते
 देवीओ विघ्न करेसो इत्यादि ॥ २७९ ॥ ते साजळी राजा तो श्रीगुरुमहाराजना वचनधी गण दिवसो गुथो चोग
 आदिक नहीं करेने एक श्रीजिनेश्वरमनुनाज ध्यानमा लाग्यो. पडी ज्यारे नोमनी रात्री थद, त्यारे हाथमा
 त्रिशुलवाळी वटकेश्वरीदेवी मत्यह थद कहेवा लागी के ॥ २८० ॥ हे राजन् ! अमार वळिदान ते केम न
 आणु, तारा पूर्वोपे पण प्रथम अमेने आपणु ठे. इत्यादि ॥ २८१ ॥

राजा स्माह, हेकुददेवते विश्ववत्सले सप्रति जीवदयार्थमर्मज्ञो नाह जीवान् ह-
न्मीत्याद्यत्र जीवदया स्थापना देवीप्रति तद्भुयदेशश्च ॥ १८१ ॥ ततो रुधा देवी
त्रिशूलेन नृप मूर्ध्नि हत्वा तिरोऽभूत्, तेन दिव्यघातेन सद्यो नृप सूर्यागीण्डुष्टकुशा-
दिरोगप्रस्तोऽजनि ॥ १८३ ॥ ततो मंत्रिणमाकार्य देवीव्यतिकरमाचख्यौ, देहस्वरूपं
चाऽदर्शयत्, ततो वज्रहत इव जज्ञे मंत्री ॥ १८४ ॥ राजाऽवक् मंत्रिन्नमे कुशादि
वाधते, किंतु मच्छेतुक जैनधर्मे लांभनं जावीति यावत् कोऽपि न वेत्ति, तावद्रात्रावेव-
चद्वौ प्रवेदयामीत्यादि वदत नृपं निषेच्य श्रीगुरुणां तत्स्वरूप ज्ञापितवान् ॥ १८५ ॥

त्यारे राजार कष्ट के, हे कुळदेवता ! हे जातलें वत्सल कानारी ! हयणां तो में जीवदयारूप धर्मने
मर्म जाणेहो छे, माटे हवे हु जीवहिंसा करीश नहीं, इत्यादि अहाँ जीवदयानी स्थापना, तथा देवी मत्ये राजार
करेह्या उपदेशानु वर्णन जाएी देवु ॥ १८१ ॥ ते सात्तळी कोथायमान थयेली देवी राजाने मत्तकमां त्रिशुळ
मारी अब्रहोप थड गड, तथा ते दिव्ययातपी राजाना सर्व शरीरमां कुष्ट आदिक रोगेनी उत्पत्ति थड ॥ १८३ ॥
पक्षी तेणे मंत्रिने बोद्धावी देवीतु ह्वात कष्ट, तथा पोतानु शरीर पण देखाभ्यु, ते जाइ मंत्रि जाणे वज्रयी
ह्वाणयो होप नहीं, तेतो थयो ॥ १८४ ॥ पक्षी राजाने कष्ट के, हे मंत्रि ! मने आ कुष्ट आदिकनी तो
पीना नयी फलु मारे बीथे जैनधर्मने कदाक जागने माटे ज्यासुधी आ बावत कोइ जाणतु नयी, त्यासुधीमां
हु अग्निमां बळी मरु, एम कहेता राजाने निषेधने ते स्वरूप मंत्रिये श्रीगुरुमहाराजने जणव्यु ॥ १८५ ॥

ततो गुरुदत्ताग्निमन्त्रितवारिणा सिद्धरसेनेव जाल्यहेमद्युतिर्नृपदेहोऽभूत्, महान् हर्षो
 जिनधर्मप्रभावना ॥ १८६ ॥ प्रातर्गुरुवदनायागवन् शालाप्रवेशे स्त्रीकरुणस्वर शु-
 श्राव भूप; ततस्ता कटेश्वरीं निशि दृष्टा प्रत्यग्निज्ञासीत् ॥ १८७ ॥ श्रीगुरुन् प्र-
 साद्य मन्त्रवधादमोचयच्च, तदन्वधादशदेशेषु जीवत्कृतलारकृता कुर्वती सा राजन्व-
 नच्छरेऽस्यात् ॥ १८८ ॥ अथ श्रीकुमारभूपोज्यदा वर्षासु श्रीपत्तनप्रतोलीभ्यो बहि-
 निर्गमननियम जग्राह, त नियम चरेभ्यो ज्ञात्वा गुर्जरदेशजनाय गर्जनेशो महानीक.
 प्रयाणमकरोत् ॥ १८९ ॥

पत्नी श्रीगुरुरमहाराजे आपेता मयेता पाणीवने करीनि ते जाणे सिद्धरसवने करीने होय नही, तेप रा-
 जातु शरीर उत्तम सुवर्ण जेवी कातिबालु यइ गधु, अने तेथी मोशे हर्ष तथा जैनधर्मी प्रभावना यइ ॥१८६॥
 प्रजाते गुरुरमहाराजने वांदा माटे ज्यारे राजा आब्यो, त्यारे पौपशालामां प्रवेश करती बलते तेणे कोइक स्त्रीने
 करुणस्वर सांनळयो, तथा रात्रिये जेएही कटकेश्वरीदेवीने रस्ता यकी तेणे ओळखी कहाणे ॥ १८७ ॥
 पत्नी तेणे गुरुरमहाराजने प्रसादित करीने तेणीने मंत्र वधनी ओमवी, अने ते चार पत्नी अदारे देशोमां जीवत्ता
 माटे चोकी करती यकी ते राजचुवना घासां रहेवा हागी ॥ १८८ ॥ हेत्रे एक बलते श्रीकुमारपाळराजाए वर्षो-
 काळमां पाटणना दरवाजाची बहार नीकळवातु नियम दीधु, तेना ते नियमने गुप्त मनुज्येथा जाणीने गीजनीना
 सुद्धनेने गुर्जरादेश चांगवा माटे मोटी सनासहित प्रयाण करुं ॥ १८९ ॥

तत्स्वरूपं चरेभ्यो ज्ञात्वा, एकतो देशजगे लोकपीना, अन्यतो व्रतजग इत्यतो व्याघ्र-
 दुस्तटीसकटे पतित साऽमात्य. श्रीकुमारपालनृप, श्रीगुरुणां ज्ञापितवास्तस्वरूपं
 ॥ ३९० ॥ तत. श्रीगुरवो राजन् त्वदाराधितधर्म एव सहायस्तव, चितां मा कृथाः
 समर्थेत्याश्वास्य नृप, ध्यानमारूढाः ॥ ३९१ ॥ गते मूढूत्ते गगनाध्वनाऽयांतं पटयं-
 कमञ्चाङ्गीन्नुप; स च सुप्तैकपुरुषः क्षाणादागत्य गुरो. पुरस्तस्थौ पट्यकः ॥ ३९२ ॥
 कोऽयमित्यादिप्रश्नपरे ऋषे सगर्जनाधीशोऽय पट्यकः, सुतो यस्तवोपर्यागन्नृपभूदित्यवो-
 चन् सूर्यः ॥ ३९३ ॥

ते वृत्तात् गुप्त मनुष्यो मारफले जणावाधी कुमारपाल राजा, एक वाजुधी देशनो जग यवाधी लोकाने
 पीना थाय, तथा बीजी वाजुधी न्तनो जग थाय, व्याघ्रतटी न्याय जेवा सकटर्मा पर्यो, अने तेवी तेणे ते वृत्तांत
 मत्सिंहित श्रीआचार्यजी महाराजने जणाब्यो ॥ ३९० ॥ त्यारे गुरुमहाराजे कहु के हे राजन् ! त्तमारे आराधेजो
 धर्मन त्तमोने सहाय करशे, माटे कोइ पण जातनी त्तमो चिता न करो, एवी रीते राजाने दिव्यासो दक्षने
 गुरुमहाराज ध्यान धरवा दाय्या ॥ ३९१ ॥ वे घनी जाते ठेते राजाए आकाशमार्गे आबता एक पद्मगने जोयो
 ते पद्मगपर एक पुरप सुतेबो हते, तथा ते पद्मग तुस्त आवीने गुरुनी पासे स्थिर चयो ॥ ३९२ ॥ आ कोण
 छे ? एम राजाए पृठवायी गुरुमहाराजे कहु के, आ गीजनीना सुदतान पद्मगसहित्ठे, तथा जे तारापर चर्भने अहीं
 आबतो हते, ते गिजनीनों सुदतान आनी अदर सुतेदा ठे ॥ ३९३ ॥

ततो जजागार शकाधीशस्तन्महिमान तदैश्वर्यं देवतासाहाय्यं श्रीगुरुवद्व च विमृश्य
 श्रीकुमारपादोन्न सह त्यक्तवैरः, स्वदेशे प्रतिपन्नपाणसासिक्सर्वजीवाऽमारिः सत्कृत्य
 राज्ञा विसृष्ट ॥ ३९४ ॥ अथान्यदा निशि सुखसुप्तस्य श्यामांगा क्रूररूपा काचिद्वेवी
 प्रत्यङ्गीवभूव, नृपपृष्ठाऽवदब्धूताधिष्ठायिकाह, पूर्वशापात्त्वदगे प्रवेष्टयामीत्युक्त्वा गता
 ॥ ३९५ ॥ प्रातस्तत्स्वरूप नृप श्रीसूरिन्यो ज्ञापयामास, तैर्धर्मोपदेश. प्रतन्यते स्म,
 राजन् धर्मं कुर्वित्यादि ॥ ३९६ ॥ रात्रौ भूपस्य महाव्यथाऽजनि, राजिकाकण्णमान
 पृष्टे पिटकोऽनृत, प्रतीकारैर्य्यनुपशमे श्रीगुरुव प्राप्ता, राजान दु खार्त्तं दृष्ट्वाऽवसरो-
 चित्तमुपदिश्य मन्त्रिण स्माहु. ॥ ३९७ ॥

पटनापा ते मुद्वतान जागी उठ्यो, तथा त्यां तेंण तेतो महिमा, तेनी प्रभुता, देवतानो सहाय, तथा गुरुम-
 हाराजनु वळ जोडने कुमारपाळ सायेंतु कै बोनी आप्तु, तथा पोताना देशमां उ मास पर्यंत सर्व जीवोनी हिंसा नही
 करवानु तेनी पासे स्वीकारी, राजाए सत्कारपूर्वक तेने विसर्जन कर्मां ॥ ३९४ ॥ हवे एक दहानो राजा रात्रिये सुत्वे
 सुतो हतो, पटनापा श्याम शरीरवाळी तथा नयकर स्वरूपवाळी कोडक देवी प्रत्यङ्ग थद, राजाए पृष्ठवार्थी ते कहेवा
 लागी के, दु द्दतानी अधिष्ठायिकादेवी दु, पूर्वता शापना कथवी हु तारा शरीरमां प्रवेश करु दु, एम कही ते चांदी
 गइ ॥ ३९५ ॥ मचाते ते दृत्तात राजाए श्रीगुरुमहाराजने जणाथु, त्यारे गुरुमहाराजे पण राजाने उपदेश आप्यो
 के, हे राजन् ! तपो धर्म करो. इत्यादि ॥ ३९६ ॥ पत्नी रात्रिये राजाने घणी वेदना थद, वासामां राडना कण जे-
 वने एक फोडतो थयो, थारा उपायो कर्मां, पंतु उ 'ल आत न थयु. पटवामां श्रीगुरुमहाराज त्यां पथार्थां, तथा
 राजाने दु ली जोडने-अवसरोचित उपदेश देडने मन्त्रिने कहेवा लाग्या के ॥ ३९७ ॥

मन्त्रिन् अपायाना उपयाः स्युः, बहुरत्ना वसुधरा, मन्त्र्याहादिशत, श्रीगुरुभ्यथा-
 त नात्र मन्त्रादीनां प्रज्ञावप्रसर. ॥ ३९८ ॥ परं यद्यन्यस्य राज्यं दीयते, तदा राज्ञः
 कुशलं, परं नायं धर्मः श्रीअर्हतानां, ततोऽस्माकमेव राज्यमस्तु ॥ ३९९ ॥ राजोए
 जगवन् को नाम कीलिकाहेतोः प्रासादोद्भेदमिब्रतीत्यादि, गुरवोऽभ्यशुः, राजन् युक्त यदि
 मे शक्तिर्न स्यात्, पर—शक्तो हनुमान् मदबंधयत्स्व । विष्णुर्दधौ यच्च शिवास्वरूपं ॥
 सैरश्रिकाकारधरश्च ज्ञीम—स्तथाहमप्यत्र कृतौ समर्थः ॥ ३०० ॥ ततः क्रमाच्छून्य-
 चित्ते श्रूये सर्वसामंत्येन श्रीसुरीराज्ये उपविष्टः, तद्दणमेव राज्ञो व्यथा सूरिवपुषि स-
 क्राता ॥ ३०१ ॥

हे मन्त्रि ! दुःखेना उपायो घणा ठे, केमके पृथ्वी बहु रत्नोवाळी ठे. त्यारे मन्त्रिये कर्तुं के, आप
 साहेव उपाय बतावो. त्यारे गुरुमहाराने कर्तु के, आ वावतमा मत्र आदिकोनो मचाव तो चाही शके तेम
 नवी ॥ ३९८ ॥ परंतु जो बीजा कोइने राज देवामा आवे, तो राजाने कुशल थाय, परंतु तेम कहेवानो
 जैनीओनो धर्म नवी, माटे अमोनेज राज्य मळे तो सार ॥ ३९९ ॥ त्यारे राजाये कर्तु के, हे जगवन् !
 एक खीहीने माटे आखो मेहेब पानवाने कोण इच्छे ? इत्यादि, त्यारे गुरुमहाराने कर्तु के, हे राजन् !
 जो मारामा शक्ति न होय, तो तो तेम कर्तु युक्त ठे, परंतु जेम शक्तिवान् हनुमाने पोतानेज वधाव्यो,
 तथा विष्णुये जेम शिवतुं स्वरूप धारण कर्ये हतु, तथा ज्ञीमे एण जेम सैरतीतु स्वरूप धारण कर्ये हतु,
 तेम हु एण आ कार्यमा समर्थ हु ॥ ३०० ॥ पडी अनुक्रमे राजा ज्यारे शून्य चित्तवाळो थयो, त्यारे
 सर्वनी सम्मतिपूर्वक आचार्यजी महाराज राज्यगदीए वेठा, केतुल राजानी व्यथा आचार्यजी महाराजना शरीरमा
 दाखव थइ ॥ ३०१ ॥

गुरुव्यथां ज्ञात्वा राजा वज्राहृत इव, गतमर्षस्व इव स्वेदमेडुरो वभूव ॥ ३०३ ॥ त-
 त, पन्त्र कुमानमानाय्याप्रविश्यात स्वयं गुरु ॥ तत्र न्यवीविशद्भृता ॥ तदेवाभूत्तद-
 न्यथा ॥ ३०३ ॥ उत्पाट्याधप्रधो क्रिस । कश्चिन्नोह्वधते यथा ॥ एव स्वस्य-
 मभूत्सर्व । राज्ञो जन्मोत्सव पुन ॥ ३०४ ॥ इति । इह यथैहिकसकटेपु धर्म-
 गोचरेदेवयोध्यादिदृष्टसंकटेपु च साहाय्यकारिन्नात्परमार्थार्थहितोपदेशकत्वाद्बहुत्रिमस्ने-
 हादिमत्त्वाच्च ब्राह्मणसमा श्रीहिमसूरयोऽभूवन् श्रीकुमारपालभूषणप्रति, तथान्येऽपीति
 ब्राह्मणदृष्टातन्नावना ॥ ३०५ ॥

ते बलते गुरने व्यथा यती जाणीने राजा जाणे वन्नधी हणायो होय नर्हा, तथा जाणे तेलु सर्वस्व
 गयु होय नर्हा तेम पसीनावाळो थइ गयो ॥ ३०३ ॥ पत्नी गुरुमहाराजे एक पाकु कोळु मगावीने तेनी
 अडर पोते दाखव यथा, अने तेमां लुताने मुकी दीधी, तेज बलते गुरुमहाराज पण पीनारहित थया ॥ ३०३ ॥
 पत्नी ते कोळु उपर्निने अथारा कुवामा नाख्यु, के जेने कोइ ओळगी शके नर्हा, एवी रीते सपळु शांत थयु
 तथा राजानो फरीने अन्मोत्सव थयो ॥ ३०४ ॥ इति ॥ अर्हा जेम श्रीहिमचंद्राचार्य, देवबोधि ब्राह्मिकोये कोला
 धर्म सबधि आ लोकना सकटर्मा कुमारपाल राजाने सहायकारी थया, तथा परमार्थ हितना उपदेश देवायी
 अने अपूर्व स्नेह देखान्वायी भावसमान थया, तेम वीजात्रोने पण जाल्वा एवी रीते नाइ सबधि द्यष्ट-
 तनी चाकना जाणवी ॥ ३०५ ॥

पिञ्जति, पिता यथा एकांतवत्सलहृदय. पुत्र सान्ना तामनादिनापि च शिक्ष-
यति, परा प्रतिष्ठां चारोपयति, एव केचन गुरुवोऽपि श्राद्धजनप्रति पितृसमाः,
शुवराजर्षिवत् तथाहि—॥ ३०६ ॥ अचलपुरे जितशत्रुपुत्रो युवराजः, श्रीरो-
हाचार्यपार्श्वे प्रव्रजितः, क्रमात्सकलागमपारदृश्वा विविधद्विधमांश्च जे ॥ ३०७ ॥
बिहारक्षेत्रे कदाचलपुरे समागत पृच्छति, अत्र केऽपि साधवः? सागारिका ज्ञानति, न
शान्नुवति साधुपञ्चकृतो राजपुरोधः पुत्रयोरग्रे ॥ ३०८ ॥ ततस्तत्प्रतिबोधं मनसिक्क-
ल, तयोर्यहे लोकैर्हमानुषैश्च भृश वारितोऽपि जिज्ञार्थं प्राप ॥ ३०९ ॥

हवे पिता जेम एकांत वत्सलतावाला हृदययुक्त थया थका पुत्रने मीडे वचने अने तामना आदिकथी
पण शिष्यापण आपे ठे, तथा मोठी प्रतिष्ठये वचने ठे, तेम केतदाक गुरओ पण युवराजकृपिनी पेडे श्राक
दोको प्रत्ये पिता समान होय ठे, ते युवराजकृपिणुं दृष्टत नीचे मुजव ठे ॥ ३०६ ॥ अचलपुरमा जितगदु
राजानो युवराज पुत्र हतो, तेणे श्रीरोहाचार्य पासे दीक्षा लीधी हती, अनुक्रमे ते सगळा प्रागसोमा पारगामी
तथा नाना प्रकारनी द्विधत्रोगळो थयो ॥ ३०७ ॥ एक दहाने बिहार करता थका ते अचलपुरमा आला,
अने पूजया दाण्या के अही कोऽ साधु ठे के नहीं? ल्यारे श्रावकोए कथुं के, अहीं रागानो तथा पुरोहिताने
पुत्र साधुअने यहु गजने ठे, तेथी तेनी आगळ कोऽ साधु अहीं रही शकता नथी ॥ ३०८ ॥ पडी तेने
प्रतिबोधवानु मनमा थारिने, दोकोये तथा थलां माणसोये यण वार्या जना पण ते कृपि जिज्ञा मोडे ते कुमारोने
वेर गया ॥ ३०९ ॥

ततो मास्मदृष्टौ महर्षेर्वज्ञाभूदित्यतो ज्ञीतभीताञ्जितं पुरनारीञ्जिर्महर्षे मंदं मद वद,
 उपरिभूमिस्थौ कुमारौ श्रोष्यत. ॥ ३१० ॥ इत्यादि निवार्यमाणोऽपि गाढगाढ-
 स्वर धर्माशिपु दत्ते, श्रुत्वानागतौ कुमारौ उचतुश्च, ऋषे नर्चितु वेत्सि ॥ ३११ ॥
 ऋषिरज्ञापत बाढं, पर युवा सम्यग् वादयत, ततो मुनिरनृत्यत्, तौ च वादय-
 त, पर न सम्यग् जानीत. ॥ ३१२ ॥ ततोऽवकाशं लब्ध्वा विसृज्य नृत्यं, शि-
 ङ्कितौ महर्षिणागान्युत्तार्य, च क्रंदतौ मुस्ता स्वपद प्राप महर्षि ॥ ३१३ ॥
 ज्ञात राज्ञा, प्राप्तः गुरुपाश्वे, उपद्वङ्कितो मुनि क्रमिन्तश्च, ततो नृपाऽत्याग्रहाद्विद्वां
 प्रतिपाद्य शिरसि द्योच प्रथम कृत्वा च प्रयुणीकृतो प्रत्राजितौ च ॥ ३१४ ॥

त्यारे जनानां स्त्रीत्रयो विचार्युं के, आपणी नगर आगल आ महर्षिनी अर्चना न थाप तो सार
 एष विचारी नस्ती एवी ते स्त्रीत्रयो मुनिने क्यु के, हे महर्षि ! तपो धीरे धीरे बोलो ? केमके माल उपर
 रहेला तने कुमारो र्यार्क साजलशे ॥ ३१० ॥ एवी रीते निवारण कलां छां एण ऋषि तो मोहोटे मोहोटे
 सदीयी धर्माशिपु देवा दाग्या, ते सांनळी ते वने कुमारो आषीने कहेवा दाग्या के, हे ऋषि ! तपोने नाचतां
 आवने डे ॥ ३११ ॥ त्यारे ऋषि क्यु के, खूब आवने डे, एतु तपोरे सारी रीते वगान्तु पश्ये, पत्नी
 मुनि तो नाचवा दाग्या, अने ते वने कुमारो वगान्वा दाग्या, एण तेअने सारी रीते (मृदंग आदिक)
 वगान्तां आवन्तु नही ॥ ३१२ ॥ पत्नी अर्चकास मेळवीने, नाचतु छोनी दर, मुनि ए तेअने एवी तो शिङ्गा
 करी के तेअनां हाफके हाफकां उतरी गया, पत्नी तेअने त्यां रफता ओमीने, मुनि पोतने स्थानके गया ॥ ३१३ ॥
 पत्नी ते वाचनी ज्यारे राजाने खबर पकी, त्यारे ते गुरु पासे आव्यो, अने मुनिने ओळखीने तेणे स्वभाव्या,
 पत्नी राजाना अत्यंत आग्रह्यी ते वने कुमारोने दीक्षा आपीने, तथा प्रथमपीन मस्तकपरपी द्योच करी तेअने
 सावधान करीने तेणे महज्जा आपी ॥ ३१४ ॥

यतः—ब्रह्माहत्तानि वाढानां । विद्याज्ञोजनसौपथं ॥ गवा नालिकया चाज्यं ।
 तथा धर्मोऽपि पुष्टये ॥ ३१५ ॥ इति, यथाऽसौ शुभराजर्षिर्ब्रतृजं पुरोहितपुत्रं
 च तानयित्वापि धर्मं प्रत्यपादयत्, एवं केचिद्गुरवोऽपि पितृसंसाः, इति पितृदृष्टांत-
 ज्ञावना ॥ ३१६ ॥ मायत्ति, माता हि पितुरप्यधिकतरैकांतिकात्यंतिकवात्सल्य-
 भृद्भवेत्, तदुक्त—सुधामधुविधुज्योत्स्ना—मृष्टीकाशर्करादिभिः ॥ वेधसा सार-
 मादाय । जनितं जननीमनः ॥ ३१७ ॥ शिङ्गयति च पुत्रं त्रिविधलोभप्रदर्शना-
 द्यतुकूडाचरणान्छुपायशैतरपि साम्नेवेति, तथा केचिद्गुरवोऽपि सति नव्यानिति मा-
 तृसमाः, कमलश्रेष्ठिसुतप्रतिबोधकतृतीयाचार्यवत्, तद्यथा—॥ ३१८ ॥

केसके—बालकोने विद्या, ज्ञाने औपथ जेम बलात्कारे आपवासां आवे ठे, तेमज मायने पण
 जेम नाल्थी ग्लात्कारे घी पवामां आवे छे, तेम बलात्कारे आपदो धर्म पण पुष्टिकारक छे ॥ ३१५ ॥ इति,
 जेम आ शुभराजर्षिण नत्रिजाने तथा पुरोहितना पुत्रने मार मारीने पण धर्म पमानयो, तेम केट्टाक गुरुओ
 पण पिता समान होय, एवी रीते पिताना दृष्टांती चावना जाणवी ॥ ३१६ ॥ हवे माता ठे ते, पितायी
 पण अधिक रीते एकांत अत्यत वत्सलतावाळी होय ठे, क्यु छे के—अमृत, मध, चद्र, चादनी, द्राक्ष तथा साकर
 आदिकमाथी पण सत्व खैचीने ब्रह्माये मातानु मन वनावेळुं ठे ॥ ३१७ ॥ बळी ते मात्रा पुत्रने त्रिविध
 प्रकारने दोन देवान्वा आदिकथी, तेम तेना मनने पसद परे तेवा संकनगणे उपायो तथा आचरणयोची मीठे
 बचनेग शिखापण आपे ठे, तेम केट्टाक गुरुओ पण, कमलशेठना पुत्रने प्रतिबोधनारा त्रीना आचार्यनी पेठे
 नव्यो मत्ये माता सररीखा होय ठे, ते त्रीना आनर्थनुं दृष्टांत नीचे सुजव ठे ॥ ३१८ ॥

ततो मास्महृष्टौ महर्षेर्वशाभूदित्यतो श्रीतमीताञ्जितपुरनारीन्निर्मह्यै मंदं मद वद,
 उपरिभूमिस्थौ कुमारौ श्रोष्यत ॥ ३१० ॥ इत्यादि निवार्यमाणोऽपि गाढगाढ-
 स्वरं धर्माक्षिप दत्ते, श्रुत्वानागतौ कुमारौ उचतुश्च, ऋपे नर्त्तितु वेत्सि ॥ ३११ ॥
 ऋषिरज्ञापत वाढ, पर युवां सम्यग् वादयतं, ततो मुनिरनृत्यत्, तौ च वादय-
 त, परं न सम्यग् जानीत ॥ ३१२ ॥ ततोऽवकाशं लब्ध्वा विसृज्य नृत्य, शि-
 ङ्गितौ महर्षिणागान्युत्तार्य, च ऋदतौ मुस्ता स्वपद प्राप महर्षि. ॥ ३१३ ॥
 ज्ञात राज्ञा, प्राप्त-गुरुपाश्वे, उपलङ्गितौ मुनि-ङ्गमितश्च, ततो नृपाऽत्याग्रहाद्दीक्षा
 प्रतिपाद्य शिरसि द्वांच प्रथमं कृत्वा च प्रयुणीकृतौ प्रवाजितौ च ॥ ३१४ ॥

त्यारे जनानानी स्त्रीत्रांये विचार्युं के, आपणी नजर आगळ आ महर्षिनी अवज्ञा न थाय तो सार
 एय विचारी मत्ती एवी ते स्त्रीत्रांये मुनिने क्यु के, हे महर्षि ! तमो धीरे धीरे बोहो ? केमके माळ उपर
 र्हेह्या वने कुमांगे म्याक साजळशे ॥ ३१० ॥ एवी रीते निवारण कर्तां छतां एण ऋषि तो मोहंते मोहंते
 सादेयी धर्माक्षिप देवा दाग्या, ते सांजळी ते वने कुमांगे आवीने क्हेया दाग्या के, हे ऋषि ! तमोने नाचतां
 आवंदे डे ॥ ३११ ॥ त्यारे ऋषिए क्यु के, खूब आवंदे डे, परंतु तमारे सारी रीते चगारु पन्ने, पत्नी
 मुनि तो नाचवा दाग्या, अने ते वने कुमांगे वगारुवा वाग्या, एण तेअने सारी रीते (मृदंग आदिक)
 वागारुता आवरुधु नहीं ॥ ३१२ ॥ पत्नी अवकाश मेळवीने, नाचुं होमी दह, मुनिए-तेअने एवी तो शिङ्गा
 करी के तेअने हांके हांके हांकां उत्तरी गथां, पत्नी तेअने त्यां रमता गोपीने, मुनि पोताने स्थानके गणा ॥ ३१३ ॥
 पत्नी ते वादतनी ज्यारे राजांने खबर पत्नी, त्यारे ते गुरु पासे आब्यो, अने मुनिने अगळवीने तेणे स्वभाव्या;
 पत्नी राजाना अत्यंत आग्रहयी ते वने कुमांगे दीक्षा आपीने, तथा प्रथमचीज मस्तकपरधी द्वांच करी तेअने
 सावधान करीने तेणे महज्जा आपी ॥ ३१४ ॥

युत.—ब्रह्माहत्तानि ब्राह्मणा । विद्याभोजनसौषधं ॥ गवां नाह्निकया, चाज्य ।
 तथा धर्मोऽपि पुष्टये ॥ ३१५ ॥ इति, यथाऽसौ युवराजर्षिर्ब्राह्मण पुरोहितपुत्रं
 च तान्वयित्वापि धर्मं प्रत्यपादयत्, एव केचिद्गुरवोऽपि पितृसमाः, इति पितृदृष्टांत-
 ज्ञाधना ॥ ३१६ ॥ मायत्ति, माता हि पितुरप्यधिकतरैर्कांतिकात्यंतिकवात्सल्य-
 भृद्भवेत्, तदुक्तं—सुधामधुविधुज्योत्सना—मृष्टीकाशार्करादिभिः ॥ वेधसां सार-
 मादाय । जनितं जननीमनः ॥ ३१७ ॥ शिङ्गयति च पुत्रं त्रिविधद्वोज्ञप्रदर्शना-
 द्यनुकूलाचरणानुपायशतैरपि साम्नेवैति, तथा केचिद्गुरवोऽपि सति ब्रह्मयानिति मा-
 तृसमा, कमलश्रेष्ठिसुतप्रतिबोधकतृतीयाचार्यवत्, तद्यथा—॥ ३१८ ॥

केसके—बालकेने विद्या, भोजन, अने औषध जेम बलात्कारे आप्रवामा आवे ठे, तेमज मायने पण
 जेम नाळयी बलात्कारे वी पवामां आरो छे, तेम बलात्कारे आपेद्वो धर्म पण पुष्टिकारक छे ॥ ३१५ ॥ इति,
 जेम आ युवराजकृणिए नत्रिजाये तथा पुरोहितना पुत्रने मार मारीने पण धर्म पमामयो, तेम केद्व्याक गुरुओ
 पण पिता समान होय. एवी रीते पिताना दृष्टांतनी जावना जाणवी ॥ ३१६ ॥ हवे माता ठे ते, पितायी
 पण अधिक रीते एकांत अत्यंत परसत्तावाळी होय ठे; कष्टु छे के—अमृत, मध, चंद्र, चादनी, द्राक्ष तथा साकर
 आदिकायाची पण सत्व खेंचीने ब्रह्मये मातानु मन वनावेदु ठे ॥ ३१७ ॥ बली ते मात्रा पुत्रने विविध
 प्रकारने भोज देलामत्रा आदिकथी, तेम तेना मनने पसद पने तेवा सेंकमेगेमे ठपणो तथा आचरणोयी मीडे
 बक्तेज शिखापण आपे ठे, तेम केद्व्याक गुरुओ पण, कमलश्रेष्ठना पुत्रने मतिबोधनारा त्रीजा आचार्यनी पेडे
 जस्यो मत्ये माता सरीला होय ठे; ते त्रीजा आचर्थनुं दृष्टांत नीचे मुजब ठे ॥ ३१८ ॥

श्रीपुरनगरे श्रीपति श्रेष्ठी, परमसम्यग्दृष्टिः, तस्य कमल सुत, पर धर्मपराङ्मुखो
निर्द्वन्द्वो व्यसनी गुरुदर्शनं उरितिमिति मन्यते ॥ ३१ ए ॥ साधर्मिकान् सर्पोनिव
द्वेषि, देवाधिदेवस्तुतिपाठ शोकाकदमिव गणयति, धर्मत्रिपये बहुधापि पितु शिक्षा
जस्मनि हुतायतेस्म ॥ ३२ ॥ नास्तिक सर्वथोद्धवचनो निरकुश गर्जन्नगरांतश्च-
चार, अन्यदा श्रीशकरसूरीणामागम, श्रेष्ठिना पुत्रस्वरूपविज्ञान, कमलास्य गुरुया-
श्रे प्रेषण, गुरुचिरुपदेशपृष्ठा च ॥ ३३ ॥ वत्स कि विज्ञात, कमल — न किञ्चित्,
कि कारण, मया जगत्ता कथादि कथयता चलती घटिकाऽद्योत्तरशतवारं युणिता,
तत्तश्च पूज्यैश्चरमेरुतोमरादिशब्दा केऽपि गदावदायमाना. शीघ्र शीघ्र पठिता ॥ ३३ ॥

श्रीपुर नामना नगरमां श्रीपति नामे श्रेष्ठ हतो, ते परम सम्यग्दृष्टी हतो, तेने कमल नामे पुन हतो, एतु ते
धर्मधी पराङ्मुख, निर्देज अने व्यसनी हतो तथा गुरुना दर्शनेने तो पाप रूपेज मानतो ॥ ३१ ए ॥ साधर्मिओ मत्ये तो
सर्पोनी फेडे रूपे राखतो हतो, देवाधिदेवनी स्तुतिना पाठने शोकना विज्ञाप सरखो जाणतो हतो, चली धर्मना
सन्धमां तेनो पिता तेने शिखापण आपतो हतो, एतु ते सयली राखमा घी होमवा सरखी धती हती ॥ ३२ ॥
सर्वथा प्रकारे उद्धव वचनवाळो यन्ने नास्तिक थयो थको अकुश रहित धरने गर्जना करतो थको नगरमां ते
जमतो हतो, एक वकने त्या श्रीशकरदृष्टि पथर्या, श्रेष्ठे तेमने पुत्रनु दृचात कथु, तथा पडी कमतने गुरुपासे
तेणे मोकट्यो; गुरए पण उपदेश देइने तेने पुछ्ठु के ॥ ३२ ॥ हे वत्स! तु शु समज्यो? त्यारे कमत्ते
कथु के, हु तो कइ पण समज्यो नथी; गुरए पुछ्ठु के, तेनु कारणं शु? त्यारे तेणे कथु के, ज्यारे आप साहेव
कथा आदिक कहे ॥ हता, त्यारे आपना गळाना घटनी एकसो आठवार चालती में गणी, अने पडीतो आप चपर
पं तोपर आदिक केंद्रनाक शब्दो गुरुवरु गुरुवरु करीने तुरत तुरत चणी गया ॥ ३३ ॥

तत्रातरे घंटिकाचहनसंख्या नाङ्गायीत्यादि, ततोऽयोग्योऽयमित्युपेक्षितस्ते, कमलः
सुन्दुहसितो, जरद्गत्र इति लोके जगर्ज. लोकज्जाततच्छृत्तः श्रेष्ठी द्वजित.
॥ ३२३ ॥ पुनरन्यदा शीघ्रसागरयुवार्गमः, प्राग्वत् सर्वं, नवरं अधःपश्यताऽस्मद्द्या-
स्थान सम्यक् चिन्तनीयमिति गुरुशिञ्जावचः, कमलेन कीटिकादप्रवेशसंख्याक-
रणान्निहित उपेक्षित. सर्वैरपि स. ॥ ३२४ ॥ अथान्यदा केऽप्याचार्या विपश्चि-
जनमनोवसंतास्तत्रैरु. तैरपि श्रुतं कमदास्वरूपं, हितार्थितया मनसि प्रतिज्ञातश्च
तत्प्रतिबोध, श्रेष्ठिनो ज्ञापनं ॥ ३२५ ॥

ते वक्तव्ये गृह्णी चान्नवानी सत्या मनं माद्युम पत्नी नही, इत्यादि पत्नी तेने अयोग्य नाणिते तेऽप्ये
तेनी उपेक्षा करी; पत्नी लोकरोमा पण ते कमळनी 'आ गळीओ वेद छे,' एवी घणी हांसी यइ, पत्नी
लोकरोने महोरुथी तेनु ते वृत्तात जाणवाथी शेउने घणी गरम यइ ॥ ३२३ ॥ वळी एक द्दानो त्या शील-
सागर नामे गुरु पथार्या, सगळ वृत्तात पूर्वनी पडेज नाणवुं, एट्टु विशेष के, तेने गुल्महाराने एवी रीतनु
शिखामणुनु वचन क्यु के, तारे नीचे जोइने अमार व्याख्यान सारी रीते विचारवु, त्यारे कमळे तो दरसा जती
कीर्नीओनी सग्या गणी, अने तेथी तेनी सगळाओए निद्रा तथा उपेक्षा करी ॥ ३२४ ॥ हवे एक द्दानो
त्या विद्वानेना मनने वसत सरखा एवा कोइक आचार्यानी महाराज पथार्या, तेऽप्ये पण ते कमळनु वृत्तान
साचळ्यु, अने तेथी हितार्थीपणये करीने तेने प्रतिबोधवानी तेषणे प्रतिज्ञा करी, अने पत्नी तेषणे ते वात शेउने
जणारी ॥ ३२५ ॥

गुरुणामादरं दृष्ट्वा श्रेष्ठिना गुरुषांश्चै प्रहितः कमल, प्राग्दन्नटनधिया तत्र प्राप्त-
 श्च सः, दुष्टो मूढश्चायमित्यनुकूलाचरणरजनैहिकफडोपदर्शनादिना साम्ना बोध्य
 इति विमृश्यावोचुर्गुरव ॥ ३२६ ॥ नञ् कमल! वेत्सि किमपि वात्सायनशा-
 खरहस्य, कमल प्रोचे नगवन्! किमहं वेद्मि, प्रसद्यादिशतु सार किञ्चिद्,
 गुरु-—पूर्वं स्त्रीरसार्थिना स्त्रीणां गुणा अवगतव्याः, गुणाद्विष्वपि ज्ञावानुविष्कृता-
 प्रधान ॥ ३२७ ॥ यदाह—आकारैः कतिञ्चिद् गिरा कुटिलया काश्चित्कियत्य.
 स्मितैः । स्वैरिण्य. प्रथयति मन्मथशरव्यापारवश्य मन ॥ कासाचिपुनरगकेपु
 मसृणुन्नायेपु गर्जस्थितो । ज्ञाव. काचपुटेपु पुष्करमिव प्रव्यक्तमुत्प्रेक्षते ॥ ३२८ ॥

गुरुमहाराजानो आदर जोडने श्रेते तेमनी पास कमनने मख्यो, अने ते एण पूर्वनी पेंते उगवना विचारथी त्यां
 आब्यो, त्यारे गुरए विचारुं के, आ मनुष्य डष्ट अने मूढ छे, मांटे तेने अनुकूल पने तेवां आचरणेथी तथा आ लोकमा
 मत्यङ्क फळ देलाम्ना आदिकथी मीठे वचने प्रतिबोधो, एम विचारी तेमणे तेने कहु के ॥३२६॥ हे नद
 कमळ ! तु कइ कामशास्त्रु रहस्य जाणो डे ? त्यारे कमळे कहु के, हे नगवन् ! हु शु जाण ? मांटे
 कृपा करीने आप तेनो कइक रहस्य समजावो. त्यारे गुरुनीए कहु के, पहेवां तो स्त्रीरसना अर्थपि स्त्रीओना
 गुणो जाणवा जोइए, गुणोमा एण तेओना जांचिनु जाणइ, ते उत्तम छे ॥ ३२७ ॥ कहुं डे के—केटवीक
 स्त्रीओ आकारथी, कोइक वक वचनोथी तथा केटवीक खेचडाचारी स्त्रीओ हास्यथी, मनने कामदेवना वाणना
 व्यापारमा वश करे डे, तेम केटवीक स्त्रीओनो कोमळ ज्ञायावाळा अगोमां रहेलो हृदयगत ज्ञान, काचना
 व्याज्ञामां रहेला जळनी पेंते मगटन देवाइ आवे छे ॥ ३२८ ॥

इत्यादि कामकथान्निराङ्गिसहृदय प्राह कमद्व. जगवन्! क एवमन्यो वेत्ति, नीरस-
पूर्वसूत्रिवाग्विषदग्ध. पुनरुद्धवास मे मनस्तरुर्नैव च्चचनामृतसारणया, नित्य वदना क-
रिष्यामीति प्रतिशुश्रुवे ॥ ३१ए ॥ ततः प्रत्यहमायाति, कदाचिदर्थकथा, कदाचि-
त्स्त्रीकथा, कदाचिदिच्छजालविद्याविनोद, कदाचित् प्रश्नप्रहेलिकादयः, एवं मासोऽ-
त्यगात् ॥ आसन्ने विहारवसरे श्राद्धा यथार्हं नियमान् प्रपद्यते, कमद्वोऽपि गुरुन्
सविनयमापपृष्ठे ॥ ३३० ॥ गुरव. स्माहु. च्छ विजिह्वीर्विवो वयं, कमपि नियमं श-
द्वाण, धर्मो हि सार. पुरुषार्थेषु स च संयमसाध्य इत्यादि ॥ ३३१ ॥

इत्यादिक कामकथात्रोथी वश श्येज्ञापनयाळो कमळ कहेयाद्वारयो के, हे जगवन्! आनी आनी (उत्तमवाचते)
वीजो कोण जाणी शके ? पूर्तना वन्ने आचार्योनी रस विनानी वाणीरूपी त्रिपथी दग्ध श्येक्षु मार मनरपी द्रुद्र, आने
आपना आ वचनोत्पी अमृतनी नहेरयो फरिने प्रफुल्लित थयु व, माटे हवे तो हु आपने हमेशां वादया आनीश, एतुं तेणे
नियम ग्रहण कर्यु ॥ ३२ए ॥ पडी ते दुमेशा त्या आववा दार्यो, त्या कोइ दिवसे अर्थरूपा, कोइ दिवसे स्त्रीरूपा,
कोइ दिवसे इंद्रजाल सन्धि विद्याविनोद, तो कोइ दिवसे मश्वरामष्टया, एम एक मास व्यतीत थयो. पडी गुरमहाराजने विहार
करानो वरत नजदीक आवयाथी, श्याको ययायोग्य नियमो देवा दार्या, कमळे पण त्रिपथुर्वक गुरमहाराजनी रजा
मागी ॥ ३३० ॥ त्यां गुरुजीण तेने क्यु के, हे चद्र ! हवे अमो विहार कराना जीये, माटे तु कळक नियम ग्रहण कर.
केमके, सर्व पुरपार्थोमा धर्म सारचूत ठे, आने ते संयमथी सथाय ठे, इत्यादि ॥ ३३१ ॥

कमल्लोऽपि त्रिटतापटुरवक्, नृयासोऽपि नियमा प्राक् सति मे, तद्यथा—उपविश्यै-
 व शयनीय, स्ववाञ्छया न मर्त्तव्य, पम्पान्नेषु कवेह्वकेष्टकाटि न नृदय, क्षीरेषु स्तुह्या-
 दिक्षीराणि न पेयानि, अद्भूत नादिकेरं मुखे न निक्षेप्य, परधन गृहीत्वा नाऽर्पणीयं
 ॥ ३३२ ॥ प्रत्यर्पणीय चेत् महाविद्ववेनेत्यादि, गुरवोऽवदन् नृज्ज नाय ह्यस्यावस-
 र, किमपि नियमरत्न गृह्याण ॥ ३३३ ॥ केलीकिन्न. सोऽवक् प्रातिवेदिमकस्य
 रजोरत कुञ्जावस्य गृष्टि दृष्टा मया नोक्तव्य, नान्यथेति मे नियमोऽस्तु ॥ ३३४ ॥
 गुरुचिस्ततोऽपि तस्य धर्माऽवासिं विशाय सर्वसमङ्ग स एव नियमो दृढीचक्रे, पाद-
 यति च स द्वोकलजादिना, किञ्चिदाचार्यसर्पकजर्मथच्छयापि च ॥ ३३५ ॥

त्यारे लुच्चाड्या कुगळ एवो कमळ एव कहैवा दाय्यो के, साहेव ' में तो पहेंदोधीज नीचे मुजव घणा नियमो
 ग्रहण कर्या ठे, ते सांजळो वेसनिज सूवू, पोतानी इन्जाथी भवतु नहीं. पकवाकोमा नळीया तथा इद आदिक खावतु नहीं,
 दूधमा घोर आदिकनु दूध पीवतु नहीं, परधन दाने पावु आपवु नहीं ॥ ३३२ ॥ जो पावु कदाच आपवु पने तो महोत्रो
 बिनन करवो, इत्यादि ते साजळी गुरमहाराने कळु के, हे नदर ! आ कळ हासीनो अवसर नथी, माटे कक्षक पण
 नियमरूपी रत्न तु ग्रहण कर. ॥ ३३३ ॥ ते साजळी महा मङ्करो ते कमळ बोह्यो के, माग मृत्तिकारक्त पनोही
 कुञ्जानी (माथानी) दाह जोहने मारे खावतु, ते शिषय खावतु नहीं, एवो मने नियम करायो ॥ ३३४ ॥ गुरमहाराने
 तेथी पण तेने धर्मनी मासि जाणीने सधळ्यात्रोनी समङ्ग तेज नियम तेनी पासे दृढ करायो, अने ते कमळ पण द्वोक-
 लजा आदिकथी तथा कक्षक आचार्य महाराजता सगथी उत्पन्न थयेंद्री कर्मथद्वापथी पण पाळवा दाय्यो ॥ ३३५ ॥

अन्यथा राजकुट्टे रूढो गृहमुत्सरेऽगात् जोकतु यावदुपविशति, तावद्विषयम सस्मार, कुडादास्य गृह प्राप्त, पर स न गृहे, तत खनिं प्राप्त, नीचि. खनत. प्राप्त. निधि कुडादास्य दृष्टि दृष्ट्या, दृष्टेति जल्पन् मुष्टि क्त्वा पश्चाच्छोदित. ॥ ३३६ ॥ शक्तिेन कुडादास्यार्थं सर्वं वा तत्र, परं मा गाढ वदेत्युक्त्वा पश्चाच्छादितो निधि प्राप, कुडादास्य पुनर्दयया किञ्चिद्ददौ, तत इहापि दृष्टार्थमफलस्तानेव गुरुन् शरणीचक्रे, तदुक्त धर्मं सम्यगाराध्य स्वर्गमवाप, क्रमाद्विवंगमीति ॥ ३३७ ॥ यथा हि एते गुरुव कमद्व साम्नेवाऽविद्वयस्तन्मनोरंजनप्रकारैरेवं मे गुरवो ब्रह्म्यांस्तन्मनोरंजनादिभिः साम्नेव धर्मं प्रवर्तयते ते मातृसमा, इति मातृदृष्टातजावना ॥ ३३८ ॥

एक दिवसे राजदरवारमा रोकाइ जवाथी ते अगुरो धेर आब्यो, नया जेद्वामा नोजत करवाने जेसे ठे, तेद्वामा तेने ते नियम साजरी आब्यु, तेथी ते कुजारने धेर गयो, परतु कुजार धेर नहोले, तेथी ते माटीखाणे गयो, त्या नीचिथी खोदता ते कुजारने ते वलते निधान मास थ्यु हतु, तेनी दान जोइने, ' जोइ जोइ ' एम बोदलो यको ते मठी गळीने पागे दोरयो ॥ ३३६ ॥ कुजारने शका पन्वाथी, तेणे तेने कथु के, अरे ! अरथु अथवा उथ्ये निधान तुं बोजे, परतु महोटे सादे बोद नहो, एम कही तेने पागे वाळ्यो, अने तेथी तेने ते निधान मर्यु, वळी दया दावीने तेणे कुजारने तेमाथी थोरुकु आयु, पढी त्यारथी मान्नि, अहो एण धर्मतु फळ जोइने, तेणे तेज गुरुन् शरणं वीथुं, तथा तेमणे कहेदो धर्म सम्यक् प्रकारे आराधीने ते स्वर्गे गयो, तथा अलुकमे ते मोडे जणे ॥ ३३७ ॥ माटे जेम ते गुरुमहारजे कमळने तेतु मन जेम खुशी घाय तेवा मकारोथी मीडे वचनेज गिलापण आपी, तेम जे गुरुओ ब्रह्म्योने तेपना पनने खुशी उपजावना आदिकथी मीडे वचनेज धर्ममा प्रवर्तवे ठे, तेओने मातासमान जाणवा, एवी रीते माताना दृष्टतनी जावना जाणवी ॥ ३३८ ॥

कल्पतरुणोत्ति, कष्टपतरुत्वकेचन गुरव सर्वोत्तमज्ञानद्विधिसमृद्धिभृत सुराणामध्या-
 राधाद्विजगतोऽपि स्पृहणीयगुणा दुर्बलदर्शना सकदमनोवाञ्छितफलाप्यणशक्तिभृ-
 तो त्रिकिजलसेकमात्राराधिता निजाश्रिताना मनोऽभिमतार्शोपसुखफलसपादका ज्ञ-
 वृत्ति ॥ ३३ए ॥ श्युत्तरपचदशशत (१५०३) तापसादिप्रतिबोधतत्परमान्नभोजना-
 द्विकेवलज्ञानावधिमनोवाञ्छितफलादायिश्रीगौतमगणधरार्थरादिवत् ॥ ३४० ॥ इत्युक्त्वा
 सर्पादित्रिहृष्टानैर्छादशथा गुरवः, तत्राद्याः पट् सर्वथाऽप्ययोग्याः कुगुरव एवेति
 त्यागमर्हति, अपरे च पट् भवजलधितरणतारणप्रश्नविण्णवो यथोत्तरमधिकाधिकशु-
 चफलाप्रदाश्च सुगुरव, इत्यादरेण सेव्या इति तत्त्व ॥ ३४१ ॥

हवे केवलाक गुरुओ कल्पवृक्षनी पेठे सर्वोत्तम ज्ञान तथा द्वाधनी ऋद्धिवाळा ह्योय ठे, तेमज देवोने पण
 प्रजवा द्यायक, नणे जगत्समा पण जेओना गुणो गवाय ठे एवा, तथा जेमतु दर्शन यहु पण दुर्बलज्ञ ठे, तेमज सयळा
 मनोवाञ्छित फलो देवामा शक्तिवाळा, तथा फक्त चक्रिणी जळ सींचिने त्राराधयथी पोतना आश्रितोने मनवाञ्छित सर्व
 सुखरपी फळोने आपनारा थाय छे ॥ ३३ए ॥ (कोनी पेठे) तो के, पदसो नण तापसादिकोने प्रतिबोधनारा
 तथा ठेकङ्कीना चोजनथी मानीने केवलज्ञान सुधी मनोवाञ्छित फळोने देनारा श्रीगौतमगणधर आदिकोनी पेठे ॥ ३४० ॥
 एवी रीते सर्प आदिकना दृष्टतोवने करीने चार प्रकारना गुरुओ कथा, तेओमां पहेला ठ तो सर्वथा प्रकारे अयोग्य
 कुगुरुओज ठे, माटे तेओ तजना द्यायक ठे, अने वाकीना ठ आ नवरपी समुद्रपार्थी तरवा तारवाने समर्थ छे, तथा
 उत्तरोत्तर अधिक अधिक शुच फळोने देनारा सुगुरुओ ठे, माटे तेओने आदरपूर्वक सेवना, एवो नार्थार्थ ठे ॥ ३४१ ॥

अथेयमेव छादशज्ञगी श्रेतृनऽप्याश्रित्याऽतिदेशेन दर्शते, तत्र केचित् श्रोतार-
सर्पोपमाः स्युः; येषु सुधासूरोपमा अपि सुगुरुपदेशा एकांतिकाहिता अमृतमया
अपि त्रिपतयैव परिणमति ॥ ३४२ ॥ यदाह—सासाईतं जड । पत्तविसेसेण
अंतरं गुरुञ्च ॥ अहिमुहपन्निञ्चं गरुड । सिप्यजेने मुत्तिञ्चं होइ ॥ ३४३ ॥
दृष्टांताः कालकसूरिनागिनियतुरमिणिनगरीशदत्तचतुपादयः ॥ तथा केचिदामोपक-
लुट्या; ये गुरूणा विज्ञान्नेषिणः, पदे पदे सदसत्प्रमादस्वद्विताद्युच्चारयतस्ता द-
ग्निदापराजवादिहेतुदुर्बचनायुधैस्तर्जयतो धर्मोपदेशाद्युपाददते गुरुभ्यो धनमिवा-
मोपका धनिञ्च्य ॥ ३४४ ॥

हवे तेज वारे जागा (साजलनारा) श्रावकोने आश्रीने पण अतिदेशे करीने देखाने ठे, हवे तेओमां केटडाक
श्रावको सर्प सरला होय ठे, के जेओ मत्से अमृतना समूह सरवा पण सुगुरना उपदेशो, के जे उपदेशो एकात हितकारी
तया अमृतमय होय छे, तोपण तेओने ऊररपेज परिणमे ठे ॥ ३४२ ॥ कहु ठे के—स्वाति नकनतु पाणी पण पान-
विजेपमा पनवायी तेना परिणाममा मोये तफावत पदे ठे, केमके सर्पना मुग्वमा पनवायी ते ऊररपे परिणमे छे, अने वि-
पना सपुटमा पनवायी तेज जळ मोतीरूप परिणमे छे ॥ ३४३ ॥ अहीं काढकसूरिना चाणेज तथा तुरगिणी नगरीना
स्वामी दत्ताराजा आदिकोना दृष्टतो जाणवां. बळी केटडाक श्रावको रूढारा जेवा पण होय ठे, के जेओ गुरओना विद्रो जुए छे,
तया पाद्वे पगडे (गुरुओना) साचा खोद मयाद, स्वद्वाना आदिकने प्रकाशीने निंदा पराजव आदिकना हेतुरूप एवां
दुर्बनोरूपी आयुधोवने गुरुओने तर्जना करीने, दृढाराओ जेम धनवाचोतु धन बढी बे ठे, तेप गुरुओ पसेयी धर्मोप-
देश आदिक ग्रहण करे ठे ॥ ३४४ ॥

श्रीगुरवोऽपि तथा तर्ज्यमाना अपि माञ्जूवन्नमी धर्मछेपिण इत्यादिविकट्याहित-
 न्नियस्तेज्यस्ततथात्रिधेय्योऽपि श्राद्धेभ्यो यथाहं धर्मोपदेशादि ददते, ततस्ते आ-
 मोपक्वुड्या ॥ ३४९ ॥ न्निणित्ताश्चैते खरटादितुल्यतयाऽगमेऽपि, यथा—जह
 सिद्धिमसुद्धव्व । नुप्पत पि हु नर खरटेइ ॥ एवमणुसासग पिहु । इसतो
 न्नन्नड खरटो ॥ ३४६ ॥ यच्छोच्छिद्धपेही । पमायखद्विआणि निच्चमुच्चरइ ॥
 सद्धो स वक्किरूपो । साहुजण तणसम गणइ ॥ ३४७ निञ्जइओ मित्थत्ती ।
 खरटतुल्लो सवक्कितुल्लो अ ववहरओ बहुज । जिणगेहाइसु गड्ढति ॥ ३४८ ॥

नेमज गुरओ पण तेही रीते तर्जना पामता ठता पण एम विचारे ठे के, आ कुश्रवको धर्मना हेपी न थाय तो
 सार, एम विचारी नयना मर्यां तेवा श्रावको प्रत्ये पण योग्य धर्मोपदेश आदिक आपे ठे, मोटे तेवा श्रावको दृढारा सरखा
 छे ॥ ३४९ ॥ वळी तेवाओने आगममा पण नीचे मुजव खरट आदिकनी उपमा आपेनी ठे जेम नरम पवु (विष्ट
 आदिक) अशुचि द्रव्य, तेने स्पर्ण करनारा मनुष्यने खरने छे, तेम पोताने उपदेश आपनार प्रत्ये पण जे छेप करे ठे, ते
 खरट कहेबाय छे ॥ ३४६ ॥ कागना सरखो श्रावक दृढ तथा जिद्र जोनारो ययो थको हयेशा साधुओना प्रमाद स्वद्वि-
 तोने प्रकासे ठे, तथा तेओने नृण समान गणे ठे ॥ ३४७ ॥ एको खरट सरखो तथा कागना तुल्य एवोने श्रावक निश्चययी
 भिष्यात्वी होय, तथा व्यवहारथी फक्त यण करीने ते जिनमदिर आदिकमा जाय ठे ॥ ३४८ ॥

इति, यथा च उका मायया परेषा धनाद्यपहरति, तथा केचिच्छ्रद्धास्तादृग्भिन-
यसवेगवैराग्यानासदर्शनसम्यग्श्रद्धाक्रियादेवयुगलसाधर्मिकप्रभृतिभिर्विश्वास्य परे-
षा धनाद्यपहरति ॥ ३४ए ॥ श्रूयते च,—अस्मति दाञ्जिका. केचिद्वेदेवयुर-
धार्मिका ॥ परछीपाडुपतेन । विंकीतौ वणिजा यती ॥ ३५० ॥ तरसवधश्च,
भृशुङ्गेत्रे केचिदाचार्याः, तेषा गङ्गो महान्, वाद्वशैकाद्याकुञ्ज, तत्रान्यथा छीपा-
तरात्प्रवहणमागतं, तन्मध्यादेको वणिग् मायावी कर्पट्याऽधीतश्रावकाचारो अस्मन्
वसति प्राप ॥ ३५१ ॥ ववटे गङ्ग, प्रारंभे परिचय, जङ्गे चाञ्जिमत इव गङ्गस्य,
आवर्जितौ कुङ्ककौ, प्रस्ताविता तयोरग्रे प्रवहणवार्त्ता, जाता तयोस्तच्छिदङ्का ॥३५२॥

वडी जेम उगो कपट्यी परना धन आदिकने हरे डे, तेम केड्दाक श्रावको, तेवा प्रकारना विनय, सवेग तथा
वैराग्यना आज्ञासरप सम्यग्दर्शन, श्रावकनी क्रिया, देव, गुरु तथा सार्थमकोनी जक्ति आदिकवे करीने परले निश्वास उपजवी
तेओना धन आदिकने हरी डे डे ॥३४ए॥ शास्त्रमा सन्नळाय डे के, देव, गुरु तथा धर्म विनाना केड्दाक कपट्यीओ आ
डुनिगमा फरे डे; जेम परछीपथी आवेता एक वणिके रे यतिओने वेच्या डे ॥ ३५० ॥ तेहु दृत्तात नीचे मुजप छे ;
भृशुङ्गेत्रमा कोइक आचार्य वसता हुता, तेओनो गच्छ महोडो हुतो, अने ते गळकोने शिद्धा आदिक देवामा व्याकुळ
हुतो, एक वखते वीजा छीपथी एक वहाण आब्यु, तेमा एक वणिक हुतो, के जे महा धूर्त तथा कपट्यी श्रावकनो आ-
चार नणोडो हुतो; ते जमते थको उपश्रये आब्यो ॥ ३५१ ॥ तेणे सवळा साधुओने वांछा, तेओनो परिचय कर्यो,
अने तेथी साधुओने पण ते वहाडो घड पड्यो, पडी तेणे वे नानी वयना साधुओने वश कर्यो, तथा तेओनी पासे तेणे
वहाण सवधि कथा कहेवा मानी, अने तेथी ते वाळसाधुओने वहाण जोवानी उत्कटा घड ॥ ३५२ ॥

गुरुनापृच्छ्य त खल पुरस्कृत्य गतावुपसागरं, तदा च वाहनपुराणिकावसर, प्रोत्तञ्जित
 सितपट इत्यादि, आरूढश्च तदाऽसौ दिदर्शयिषामिपाञ्चव स. ॥ ३५३ ॥ ता-
 वत्प्रेरित यान्, प्राप्त चर्वरकूले, विक्रीतौ तत्र तौ, ग्रहीत बहु तन्मूढ्य धन, र-
 ज्यते तत्र डुकूडानि नृशोणितै, तद्व्येते तत्र तौ तीक्ष्णदुरै, आकृष्यते रक्त
 ॥ ३५४ ॥ एव कष्ट सहमानयोगतो बहु समय., अन्यदा श्रृगुरागतपरिचि-
 तश्राद्धनोद्वपद्ध्य मोचितौ, पश्चात्प्रासावाद्बोचितप्रतिक्रान्तौ क्रियापरौ सेवतेस्म गन्ध
 ॥ ३५५ ॥ गतेषु बहुषु वर्षेषु स एव जोही वणिगागत, 'निसीही' इत्यादिप्रक्रिया-
 पूर्वं प्रवृत्तौ वदितु यावदुपद्रवद्विस्तस्तावद्बुद्धकाभ्यां, नतु तेन तौ ॥ ३५६ ॥

तेषी गुरु महाराजनी आज्ञा मार्गानि, तथा ते इष्टने अगानी करी तेओ समुद्र किनारे आब्या,
 ते वरते वहण हुकारवानो समय हलो, अने तेषी सब चरयो, इत्यादि अने ते वरते ते इष्ट वणिक पण
 ते साधुओने देवानचना निपथी तेओन लः तेमा चनी वेओ. ॥ ३५३ ॥ एट्टामा वहण तो चालवा मा-
 न्यु, अने बन्धर काठे पहोच्यु, त्या ते इष्टे ते वने साधुओने वेचीने तेओनी किमतु यणु धन बीडु, हवे
 त्या मनुष्यना रुधिरथी कपना रगामा आवता हुता, अने तेषी ते साधुओना शरीरमा त्या धास्वाळी बरीओ
 योचवामा आवती हवी, अने तेम करी तेओनु रुधिर खेचवामां आवतु हुतु ॥ ३५४ ॥ एवी रीते तेओने
 कष्ट सहन करतो यकां यणो वरत निकळी गयो, एट्टामा एक वरते त्या श्रृगुरथी ओनेवा कोडक ओळखी-
 ता श्रावके तेओने ओळखीने बोनाव्या, अने तेषी पाछा आवी ओतोचना लः तेओ क्रियामा तपर यः
 गन्धनी सेवा करवा लाग्या. ॥ ३५५ ॥ एवी केट्टाक वणो गया वाद तेज इष्ट वणिक पाजे त्या आब्यो,
 'निसीही' आदिक क्रियापूर्वक जेट्टामां ते वादवा लाग्यो, तेट्टामां ते वने साधुओने तेने ओळखी कहाण्यो,
 परतु ते इष्टे तेओने ओळख्या नही ॥ ३५६ ॥

आगतमात्रेण निमत्रितौ कृक्षौ यानदशोनाय, वृत. स्म च तौ,—दिष्टं बन्धुरकूल
 । दिष्टाणि अ सह तुम्ह चरित्राहं ॥ अत्रे चद सुसावय । जे तुम्ह गुणे न
 साणोति ॥ ३५७ ॥ तच्चतुत्वा नष्ट. स., ज्ञाततत्वो गन्धश्चिर नंदतिस्मेति, एवंधिधा
 अन्येऽपि बहव प्रसिद्धा इति ॥ ३५८ ॥ अथ वणिग्भवत, केचन श्रावका औहिकम-
 त्रतत्रनिमित्तचिकित्सादिनोपकुर्वन्तेव गुरुमिति कृत्वा जज्ञते, ब्रह्महारादिनोपचरति
 च, नापरं मुधादायित्येति वणिक्समा., दृष्टांता. प्रसिद्धा ॥ ३५९ ॥ अन्ये च व-
 ध्यगवीसदृशा, येषु सुबह्वपि गुरूपदिष्टं जस्मनि हुतायते, न पुन कस्मैचिद्गु-
 णाय, ब्रह्मदत्तचक्रयादिविधेति ॥ ३६० ॥

पत्नी तो तेणे आचतावेतज ते वन्ने सायुआने वहाण जोग भोटे निमजण क्युं, त्यारं ते सायुओ कहेवा
 द्वाण्या के, हे श्रावक ! अमोए बन्धुरकुळ जोणुं, तेम तारां चरियो पण जोयां, भोटे हे सुश्रावक ! जे तारा गुणो
 नथी जाणया, तेओने जडने तु वाट ॥ ३५७ ॥ ते साजळी त्याथी ते नात्री गयो, अने गन्ठ पण साव-
 चेत् थडने त्यारथी आनंद करावा द्याम्यो. एवी रीतना बीजा पण घणा श्रावको प्रसिद्ध छे ॥ ३५८ ॥ हवे
 केदवाक श्रावको वणिक सरखा होय जे के जेओ आ लोकमा फायदाकारक एवा मन, तज, निमत तथा यैदक
 आदिकवने करीने उपकरण करानारानेज गुर मानेने नेने सेवे छे, तथा तेओनेज बह्व, आहार आदिकथी सतोपे
 छे, पांतु बीजाने नही, केपके बीजाने देयु ते तेओ फोगाट देवु माने छे, भोटे तेओने वणिक सरखा जाणना,
 तेना दृष्टोति प्रसिद्ध छे ॥ ३५९ ॥ पळी केदनाक श्रावको कथा गाय सरखा होय छे, के जेओ प्रत्ये गुरए
 आयेसो यणो उपदेश पण राखमा वी नाखया तुल्य धाय छे, परतु ऊढ पण गुणकारी शतो नथी, कोनी
 पळे ? तो के ब्रह्मदत्तचक्रि आदिकोने पिय जेम ॥ ३६० ॥

अन्ये च पुनर्नटोपमा, ये सुगुरुक्त धर्मोपदेश सरसकथासूक्तादिरूप धारयन्ति, सर्धमपि लोकरजनार्थं कउस्थतयैव, न पुनर्मनागप्यतर्नेदयति, एते च परुऽयत्नव्या दूरचव्या गुरुतरकर्माणो वा सर्वथाप्यत्नव्या इत्युपदेशाऽयोग्या इति ॥ ३६१ ॥ तथा केचन धेनुसदृशा, येषु दत्त स्वल्पमपि धर्मपद महाफलाय कल्पते, धनपतिमहेज्यवत् ॥ ३६२ ॥ तथाहि—नदनुपे राज्यमनुशासति धनपति श्रेष्ठी श्राद्धेषु लब्धरेख स्वक्रियानिष्ठो यथाव्यवहारशुद्ध्या व्यवहरति, अन्यदाऽपूर्ववस्तुप्राभृतीकरणात्तुष्टेन राज्ञा सुग्यो मन्त्री कृत ॥ ३६३ ॥ प्रमादपकनिमग्नो व्यस्मरत् सर्वधर्मकर्म, दूरीकृता व्यवहारशुद्धि, न जानाति साधर्मिकान् नापि गुरुदेवानपि ॥ ३६४ ॥

वली केटनाक श्रावको नट सरवा होय डे, के जेओ सुगुर ए रूहेवा सरसकथा तथा मुत्तापित आदिकरप धर्मोपदेशने धारी राखे डे, तथा ते सखु (धीजा) लोकने खुशी करवा माटे एतेज राखे डे, परतु जरा एण तेओनु हृदय जीजातु नथी, एसी रीति उपर वर्णनेवा ते छए प्रकारना श्रावको अनल्प, दुःखव्य, अथवा जारे तमा होवाथी सर्वग प्रकारे अत्रत्य होवाथी उपदेशने अयोग्य डे ॥ ३६५ ॥ हरे केटनाक श्रावको वली गाय सरवा होय डे, के जेओने आपेनो अत्रप धर्मोपदेश एण धनपति शेजनी एडे महाफलादायक थाय छे । ३६७ ॥ ते कहे डे '—नटराजा राज्य करते डते एक मनपति नामे शेज हुतो, के श्रावकोमा शिरोमणि तथा पोतनी क्रियामा निष्ठ थायो थको व्यवहारशुद्धिची व्यापार करतो हुतो, एक वखते अपूर्व रस्तु नेट करवाथी सखुष्ट भयेवा राजाये तेने मुख्य मनी कया ॥ ३६३ ॥ अने तेथी प्रमादस्पी कादवमा हुवावाथी तेणे सखु धर्मोपदेश जोनी नीडु, व्यवहारशुद्धि एण दूर करी, तेम साधर्मिको तरफ तथा देवगुरु तरफ एण तेणे भ्यान आन्य नहीं ॥ ३६४ ॥

मदिरामच इव गतत्रिविक्रैतन्वयोऽभूत्, ततो गुरुञ्जित्प्रतिबोधाय गाथा श्रेयि ॥३६५॥
 उद्धिन्ना किंतु जरा । नष्टा रोगा य कि गय मरण ॥ पिहिञ्च च नरयदारं । जण
 जणो नां कृणइ धम्म ॥ ३६६ ॥ ता वाचयित्वा सद्य. प्राबुधत्त, सम्भयगुधर्ममारा-
 धयामासेति ॥ ३६७ ॥ अन्ये तु मित्रप्रतिमा, ये गुरुपु प्रीति परा बहमानांस्तडुक्तं
 धर्मोपदेशपदं परमार्थहितबुद्ध्या प्रतिपद्यते, आत्मान च गुरुणा स्वजनादप्यधिकं मन्य-
 ते ॥ ३६८ ॥ परं यथावसर विशेषकार्यादौ प्रश्नादिवहुमानमपेक्षते, अनापृष्टाश्च म-
 नाग् रुष्यंतीति, तथा चागम.—॥ ३६९ ॥ मित्रसमाणो माणो । ईसि रूसइ
 अपुद्धिञ्चो कजे ॥ मन्नतो अप्पाण । मुणीण सयणाञ्चो अज्जहिञ्च ॥ ३७० ॥

जाणै मदिरायी उन्नत थयो होय नहीं, तेम ते निर्विकेरी थइ गयो, त्यारे गुरुमहाराजे तेने प्रतिबोधवा माटे
 तीचे मुजम एक गाथा भोक्कही ॥ ३६५ ॥ शु पन्पण चाब्बु ? शु रोगो नाथ पाम्था ? शु प्रत्यु नष्ट थयु ?
 तथा शु नररुडु छार यम थयु ? के जेयी माणस धर्म नवी कलां ॥ ३६६ ॥ ते गाया वाचीने ते नुरतज
 प्रतिबोध पाम्थो, तथा सम्भय धर्म आराधना दागयो ॥ ३६७ ॥ वकी केऽनाक आवको तो मित्र सखा होय छे,
 के जेञ्चो गुरु प्रत्ये पस्य प्रीतिने थारण रुला थका तेञ्चोण कहेना थर्मोपदेशने परमार्थ हित बुद्धिची स्वीकारे छे,
 तेमज गुरुना आत्मने सज्जनथी पण अधिक माने छे ॥ ३६८ ॥ परतु अवसर पड्ये विशेष कार्य आदिकमा
 प्रश्न आदिकना नहु माननी अपेक्षा राखे छे, अने ते बलते जो तेपनी सनाह न दोषमा आवे, तो तेञ्चो जरा
 रीसाइ पण जाय छे, आगममा पण करु छे ॥ ३६९ ॥ मित्र सभल श्रमरुनी जो कार्य पन्ने सनाह न
 दोषमा आवे तो ते गुरु साथे रीसाइ जाय छे, केमके ते गुरुना आत्मने सज्जनथी पण अधिक माने छे ॥ ३७० ॥

एके पुनर्वधुवत, श्रीगुरुवचन परमार्थहितधियागीकुर्वते मुनिष्वेकातेन हार्थस्नेहभृत,
 पराजवादौ नवत्येव च सहाया, पर विनयकर्मसु तथाऽनादरभृत इति वधुसमा
 ॥ ३७१ ॥ यथाह—हिअण ससिणेहोच्चिअ । मुणीण मदायरो विणयकजे ॥ व-
 धुसमो साहूण । पराजवे होइ सुसहाओ ॥ ३७२ ॥ केचन पुन पितृसमा, मातृसमाश्च,
 ततोऽप्यधिकनात्सद्व्यभृत, उजयेऽपि वैकातवरमज्ञा, प्रमादस्वद्वितादौ शिङ्गयति य-
 थाविधि साधूनपि ॥ ३७३ ॥ न च दृष्टतस्वद्विता अपि मनागपि मनसि नि स्नेहा
 भवति युगप्रधानश्रीकाद्विकसूरिशिष्यशिङ्गक शय्यातरश्रावकवतु श्रीश्रेणिकादिवच्च
 ॥ ३७४ ॥

बळी केटवाक श्रावको गधु सरखा होय डे, केके तेओ पर्यार्थ हितबुद्धिथी गुरमहाराजनु वचन
 स्वीकारे छे, तेमज तेओ प्रत्ये एकते अतरग स्नेहवाळा होय डे, तेमज उपद्रव आदिकमा सहायचूत पण
 थाय डे, परतु विनय बर्यामां तेवा आदरवाळा होता नथी, मांटे तेओ गधु सरखा डे ॥ ३७२ ॥ वधु डे के—हृदयमां
 तो मुनिओ प्रत्ये स्नेहवाळो परतु विनय कार्यमा मद आदरवाळो एवो वधु समान श्रावक साधुओने पराजव समये उत्तम
 सहायचूत थाय डे ॥ ३७३ ॥ बळी केटवाक श्रावको पिला समान तथा माता समान पण होय डे, अने तेथी पण
 अधिक मत्सब्धतावाळा होय डे, ते वने प्रकारना श्रावको एकांते वत्सन होय डे, तेम तेओ प्रमाद तथा
 स्वयना आदिकमा साधुओने पण योग्यतापूर्वक शिवामाण आपे छे ॥ ३७३ ॥ बळी तेओनी स्वतना जोडने
 पण अण तेओ स्नेहहित थता नथी; कोनी पेटे ? तो के युगमथान श्रीकाद्विकसूरिना शिष्यने शिवामाण
 आपनार शय्यातर श्रावकनी पेटे, तथा श्रेणिक आदिकनी पेटे ॥ ३७४ ॥

तदुक्त—चित्तद जइज्जाइ । न दिट्ठखडिआओवि होइ निद्वेहो ॥ एगतवद्धो जइ ।
जणस्स जणणीसमो सद्धो ॥ ३७ए ॥ तत्र पितृसमा ये यथावसर साधुस्तीक्ष्णमपि
शिङ्गयंति बलञ्चरुपवत्, तथाहि—॥ ३७इ ॥ श्रेतां विकापुर्यां श्रीआपाढाचार्यां ।
स्वशिव्यानागाढयोगान् ब्रह्मयंतो निशि हृच्छूद्धेन मृता देवीभ्रूताः, स्नेहास्त्वदे-
हमधिष्टायं योगान् संपूर्णकृतवत् ॥ ३७ग ॥ ततो नव्यमाचार्यं स्थापयित्वा स्वदृतां-
त निवेद्य च स्वस्थानं प्राप्ता ॥ ३७घ ॥ ततस्तद्विव्यास्तस्वरूपं दृष्ट्वा न ज्ञा-
यते कोऽपि कीदृश इत्यव्यक्तमतवादिनो मिथो वदनमकुर्वीणा राजगृहेमूर्धंशोत्पन्न-
वदञ्चरुत्प्रेण सुश्रावकेण साम्नाऽप्रतिबोध्यानां तेषां प्रतिबोधनोपायमपरमविज्ञावय-
ता चौरा इति कृत्वा धृताः ॥ ३७ए ॥

कथु छे के-जे श्रावक यतिना कार्योनी देवरेख राखे ठे, तेम तेनी स्वद्वना जोइने पण स्नेह रहित यतो नथी,
तथा एकात् वत्सज एवो श्रावक साधु मत्ये माला सरखो ठे ॥ ३७ए ॥ तेमां पण पिता समान तेओने जाणवा, के जेओ
यथा अखसेरे वचनद्राजानी पेंते साधुओने आकरी शिक्षा पण अपे ठे ते कहे ठे ॥ ३७इ ॥ श्रेतां विका नगरीमां श्रीआ-
पाढाचार्यं पोताना शिष्योने आगाढा योग बहन करावता थका रात्रिएहदयशहानी व्याधिथी मृत्यु पापीने देवरूपे थया, परंतु
स्नेहथी पोताना ते शरीरमां पेंतीने तेओना ते योगो तेमणे पूरा कराव्या ॥ ३७ग ॥ तथा पढी नवीन आचार्यने स्यापीने
तथा पोतानु वृत्तात् निवेदन करीने तेओ पोताना स्थानके गया ॥ ३७घ ॥ पढी तेमना शिष्यो तेमनु स्वरूप जोइने ' कोइ
पण केवो होय, ते जणांतुं नथी ' एवी रीतना अध्वक्त मतेने स्थापन करता थका परस्पर बदना न करता थका, राजगृहीमां
मूर्धंशमां उत्पन्न थयेइया बलचद्राजा नामना उत्तम श्रावक तेओने मीडे बचने प्रतिबोध्या, परंतु तेओने प्रतिबोध न झाग-
वाथी ते मटे बीजो उपाय न जणावाथी तेओने चौरूपे पकरया ॥ ३७ए ॥

एके पुनर्वधुवत्, श्रीगुरुवचन परमार्थहितधियागीकुर्वते. मुनिनेकातेन हार्थस्नेहभृत,
 पराननादौ नवत्वेव च सहाया, पर विनयकर्मसु तथाऽनादरभृत इति बहुसमा
 ॥ ३७१ ॥ यथाह—हिअए ससिणेहोच्चित्र । मुणीण मदायरो विणयकज्जे ॥ व-
 धुसमो साहूण । परानवे होइ सुसहाओ ॥ ३७२ ॥ केचन पुन पितृसमा, मातृसमाश्च,
 ततोऽप्यधिकवात्सल्यभृत, उन्नयेऽपि चेकातवत्सज्ञा, ममादस्वद्वितादौ शिङ्गयति य-
 याविधि साधूनपि ॥ ३७३ ॥ न च दृष्टतस्वद्विता अपि मनागपि मनसि नि स्नेहा
 नवति युगप्रधानश्रीकाञ्चिकसूरिशिष्यशिङ्गक शय्यातरथावकवत् श्रीश्रेणिकादिच
 ॥ ३७४ ॥

रबी केटनाक श्रावको बहु सरखा होय डे, केके तेओ परमार्थे हितवृद्धिथी गुरुमहाराजनु वचन
 स्वीमरे छे, तेमज तेओ प्रत्ये परति अतसग स्नेहाया होय डे, तेमज उपद्रव आदिकमा सहायचत पण
 थाय डे, परतु विनय कर्ममां तवा आदरवाळा होता नयी, माटे तेओ यधु सरखा डे ॥ ३७१ ॥ ऋतु डे के—हृदयमां
 तो मुनिओ प्रत्ये स्नेहवालो परतु विनय कर्ममां मद आदरवालो एवो बहु समान श्रावक साधुओने परानन समये उचम
 सहायचत थाय डे ॥ ३७२ ॥ रबी केटनाक श्रावको पिता समान तथा माता समान पण होय डे, अने तेथी पण
 अधिक वत्सलतावाळा होय डे, ते वन्ने मकारना श्रावको एकोते वत्सन होय डे, तेप तेओ ममाद तथा
 स्वतना आदिकमा साधुओने पण योग्यतापूर्वक शिखापण अपे छे ॥ ३७३ ॥ रबी तेओनी स्वतना ओइने
 पण जरा पण तेओ स्नेहहित घता नयी, कोनी पेंडे ? तो के युगप्रधान श्रीकाञ्चिकसूरिना शिष्यने शिखापण
 आपनार शय्यातर श्रावकनी पेंडे, तथा श्रेणिक आदिकनी पेंडे ॥ ३७४ ॥

तदुक्त—चित्तं जडकजाड । न दिष्टखद्विभ्रोवि होइ निम्नेहो ॥ एगतवद्धो जड ।
जणस्स जणणीसमो सद्धो ॥ ३७ए ॥ तत्र पितृसमा ये यथावसर साधुस्तीद्विणमपि
शिक्षयंति बलन्नञ्चनृपवत्, तथाहि—॥ ३७इ ॥ श्रेतांवि कापुर्यां श्रीआपाढाचार्या
स्वशिव्यानागाढयोगान् वाहयंतो निशि हृच्छ्र्वेन मृता देवीनृता; स्नेहास्त्वे-
हमधिष्ठायं योगान् सपूर्णकृतवत् ॥ ३७ए ॥ ततो नव्यमाचार्यं स्थापयित्वा स्वदृत्तां-
त निवेद्य च स्वस्थानं प्राप्ता ॥ ३७ए ॥ ततस्तद्विष्यास्तस्वरूपं दृष्ट्वा न ज्ञा-
यते कोऽपि कीदृश इत्यव्यक्तमतवादिनो भियो वदनमकुर्वाणा राजगृहेमौर्ध्वशोत्पन्न-
वद्वन्नञ्चनृपेण सुश्रावकेण साम्नाऽप्रतिबोध्याना तेषां प्रतिबोधनोपायमपरमविज्ञावय-
ता चौरा इति कृत्वा धृताः ॥ ३७ए ॥

कथं छे के-जे श्रावक यतिना कार्योनी देग्वरेख राखे छे, तम तेनी स्वखना जोइने णण स्नेह रहित थतो नथी,
तथा एकात् वत्सन्न एवो श्रावक साधु प्रत्ये माता सरखो छे ॥ ३७ए ॥ तेषां णण पिता समान तेओने जाणवा, के जेओ
पथा अक्सरे न नजद्राजानी पेटे साधुओने आकरी शिक्षा णण आपे छे ते कहे छे ॥ ३७इ ॥ श्वेतांवि का नगरीमां श्रीआ-
पाढाचार्यं पोताना शिव्योने आगाडा योग बहून करावता थका रात्रिहृदयशूलनी व्याधियी मृत्यु पामीने देवरूपे थया, परतु
स्नेह्यी पोताना ते शरीरमां पेशीने तेओना ते योगो तेमणे पूरा कराव्या ॥ ३७ए ॥ तथा पडी नवीन आचार्येने स्थापीने
तथा पोतानु वृत्तात् निवेदन करीने तेओ पोताना स्थानके गया ॥ ३७ए ॥ पडी तेमना शिव्यो तेमनु स्वरूप जोइने ' कोइ
णण केवो होय, ते जणतुं नथी ' एवी रीतना अव्यक्त मतने स्थापन करता थका परस्पर वदना न करता थका, राजगृहीमां
मौर्यवंशमां उत्पन्न थयेडा वदन्नद्राजा नामना उत्तम श्रावक तेओने मीठे बचने प्रतिबोध्य, परंतु तेओने प्रतिबोध न हाग
वाथी ते माटे चीजे उपाय न जणवाथी तेओने चौररूपे पकड्या ॥ ३७ए ॥

पृथ्विकशतत्रय (३६०) वणिक्पुत्रसाधर्मिकस्वसमीकारकसाजगत्सिद्धवत् श्रीश्र-
 पन्नदेवान्वयाद्वकारसाधर्मिके चक्तिनिष्ठश्रीजरतचक्रिश्रीदन्वीर्यनृपाविवत् ॥ ३०ए ॥
 श्रीअन्नयकुमारश्रीवस्तुपाद्वादिमत्रिवच्च, तेषां सगतिरपि महाभ्युदयहेतुद्वायेव क-
 दपत्तणा, यथा श्रीअन्नयकुमारमत्रिण सगतिः श्रीआर्जकुमारस्य कादसोकरिकात्म-
 जसुद्वसादीना चेति ॥ ३ए० ॥ निदर्शनेरित्यवगत्य योग्याज्योग्यान् गुण्न् श्री-
 तृजनाश्च सम्यक् ॥ योग्यादर जो कुरुतेह शुद्धधर्मासितो येन शिव द्वजध्व
 ॥ ३ए१ ॥

(गळी बेनी पेडे ? तोंके) जणसोसात्र साधर्मी वणिकपुत्रोने पोतीनी बरोबर करुना। आ जगतासिंह शेजनी
 पेडे, तेमज श्रीरुपचंदेन मजुना वशर्मा आचूणण समान अने साधर्माके मध्ये चक्तिवान् एगश्री जलचक्री तथा
 दन्वीर्य राजा आदिकनी पेडे, ॥ ३एए ॥ तेमज श्रीअन्नयकुमार तथा श्रीरुपचय मत्री आदिकनी पेडे, गळी
 तेअोनी सगति पण कव्यवृद्धनी ठायानी पेडे महान् अस्युदयना हेतुवाळी होय छे जेम श्रीअन्नयकुमारी सगति
 श्रीआर्जकुमारेने तथा काव्यसौकरिकना पुत्रने सुद्वसाले फळदायक थड छे ॥ ३ए० ॥ एवी रीति ठपर वणवेव्ना दृष्टावो-
 वने कनीने योग्य अयोग्य गुरुअोतु तथा थावकोतु स्वरूप सम्यक मकारे जाणीनि हे जल्य लोको' शुद्ध धर्मनी मासि माटे
 अर्हो योग्योना आदर करो, के जेथी तपो मोडने मेलवो ॥ ३ए१ ॥

